आर्य रक्षित स्थविर संकलित

सचित्र
अनुयोगद्वार सूत्र
(द्वितीय भाग)

मूल पाठ-हिन्दी-अंग्रेजी अनुवाद, विवेचन तथा रंगीन चित्रों सहित

* प्रधान सम्पादक *

उत्तर भारतीय प्रवर्तक भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी महाराज के सुशिष्य

उपप्रवर्तक श्री अमर मुनि

* सह-सम्पादक *

श्री तरुण मुनि

श्रीचन्द सुराना 'सरस'

* अंग्रेजी अनुवाद *

श्री सुरेन्द्र बोथरा

पद्म प्रकाशन

पद्म धाम, नरेला मण्डी, दिल्ली-११० ०४०

सचित्र आगममाला का बारहवाँ पुष्प

■ आर्य रक्षित स्थविर संकलित सचित्र अनुयोगद्वार सूत्र (भाग २)

■ **प्रधान सम्पादक**
उपप्रवर्त्तक श्री अमर मुनि

■ **सह-सम्पादक**
श्री तरुण मुनि
श्रीचन्द सुराना 'सरस'

■ **अंग्रेजी अनुवाद**
श्री सुरेन्द्र बोथरा, जयपुर

■ **चित्रकार**
डॉ. श्री त्रिलोक शर्मा

■ **प्रकाशक एवं प्राप्ति-स्थान**
पद्म प्रकाशन
पद्म धाम, नरेला मण्डी, दिल्ली-११० ०४०

■ **मुद्रण-व्यवस्था**
संजय सुराना
श्री दिवाकर प्रकाशन
ए-७, अवागढ़ हाउस, एम. जी. रोड, आगरा-२८२ ००२
दूरभाष : (०५६२) ३५११६५

■ **प्रथम आवृत्ति**
आश्विन, वि. सं. २०५८
अक्टूबर, ईस्वी सन् २००१

■ **मूल्य**
पाँच सौ रुपया मात्र (५००/– रुपये)

ILLUSTRATED

ANUYOGADVAR SUTRA

Original Compiled by ARYRA RAKSHIT STHAVIR

(PART TWO)

Originally Text with Hindi and Englih Translations, Elaboration and Colourful Illustrations

∗ EDITOR-IN-CHIEF ∗

Up-pravartak Shri Amar Muni

(The Disciple of Uttar Bharatiya Pravartak Bhandari Shri Padma Chandra Ji Maharaj)

∗ ASSOCIATE-EDITORS ∗

Shri Tarun Muni

Srichand Surana 'Saras'

∗ ENGLISH TRANSLATOR ∗

Shri Surendra Bothara

PADMA PRAKASHAN

PADMA DHAM, NARELA MANDI, DELHI-110 040

THE TWELFTH NUMBER OF THE ILLUSTRATED AGAM SERIES

- ILLUSTRATED ANUYOGADVAR SUTRA (PART TWO)
  (Originally Compiled by Arya Rakshit Sthavir)

- ***Editor-in-Chief***
  Up-pravartak Shri Amar Muni

- ***Associate-Editors***
  Shri Tarun Muni
  Srichand Surana 'Saras'

- ***English Translator***
  Shri Surendra Bothara, Jaipur

- ***Illustrator***
  Dr. Shri Trilok Sharma

- ***Publisher and Distributor***
  Padma Prakashan
  Padma Dham, Narela Mandi, Delhi-110 040

- ***Printer***
  Sanjay Surana
  Shri Diwakar Prakashan
  A-7, Awagarh House, M.G. Road, Agra-282 002
  Phone : (0562) 351165

- ***First Edition***
  2058 V.
  2001 A.D.

- ***Price***
  Five Hundred Rupees only (Rs. 500/-)

जैनागम रत्नाकर
श्रमण संघ के प्रथम
आचार्य सम्राट
प्रातःस्मरणीय, परमश्रद्धेय
श्री आत्माराम जी महाराज
की
पावन स्मृति
में
सादर सविनय

समर्पित

गुरुदेव का
चरण-चंचरीक
अमर मुनि
(उप प्रवर्त्तक)
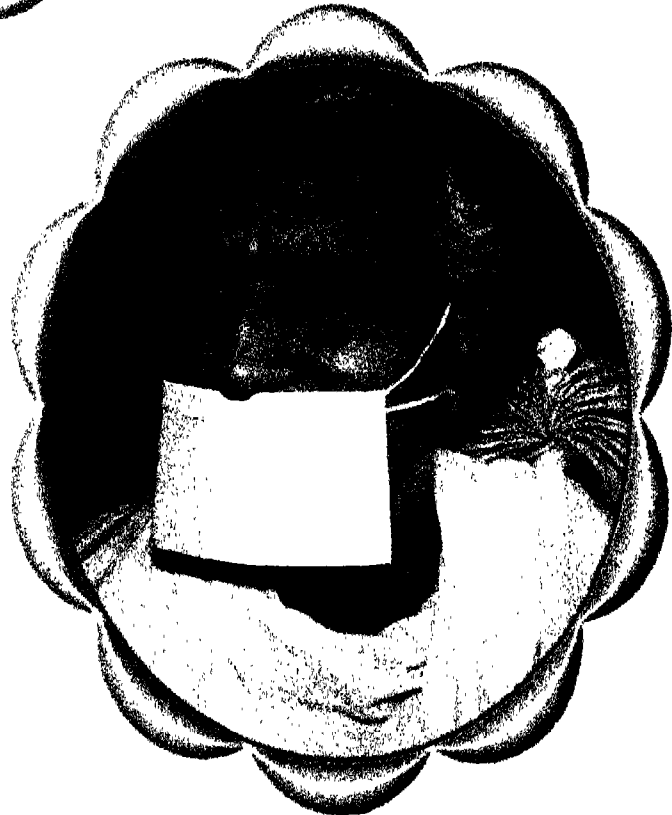
श्रुत सेवा में उदार सहयोग दाता

श्री उग्रसेन सुन्दरी देवी जैन
विवेक विहार, दिल्ली

श्री जय भगवान विद्यावती जैन
योजना विहार दिल्ली

श्री सतपाल प्रेमलता जी गोयल
पेहवा वाले

श्री सुशील कुमार कौशल्या देवी जैन
योजना विहार, दिल्ली

श्री सुभाषचन्द शशि जैन
विवेक विहार, दिल्ली

श्रुत सेवा में उदार सहयोग दाता

श्री रमेशभाई प्रभुलाल शाह श्रीमती मालती बहन
गुजरात विहार, दिल्ली

श्री केतन-सोनल शाह (सुपुत्र श्री रमेशभाई शाह)
गुजरात विहार, दिल्ली

श्री निमेष-नमिता शाह (सुपुत्र श्री रमेश भाई शाह)
गुजरात विहार, दिल्ली

श्री सुभाष सुलोचना जैन
हुड्डा कॉलोनी, पानीपत

श्री अनिल कुमार मंजु जैन
विश्वा अपार्टमेन्ट, रोहिणी, दिल्ली

श्रुत सेवा में उदार सहयोग दाता

वैरागी वरुण जैन (उ.भा. प्रवर्तक भंडारी श्री पदमचन्द जी महाराज एवं उपप्रवर्तक श्री अमर मुनि जी के चरणों में प्रव्रजित)

वैरागिन गुरुवाणी जैन (विदुषी साध्वी श्री स्नेह कुमारी जी महाराज के चरणों में प्रव्रजित)

श्री सुरेन्द्रपाल मायादेवी जैन (मानसा वाले)
शास्त्री नगर, दिल्ली

श्री प्रेम प्रकाश जैन मुखर्जी नगर, दिल्ली

श्री ज्ञातनन्दन जैन रोहिणी, दिल्ली

प्रकाशकीय

"ज्ञानदान सबसे महान् दान है।"–इस वचन के अनुरूप परम श्रद्धेय उपप्रवर्तक श्री अमर मुनि जी ने भगवद् वाणी के रूप में निबद्ध जैन सूत्रों का हिन्दी–अंग्रेजी अनुवाद कराकर चित्र सहित प्रकाशन की महत्त्वपूर्ण दीर्घकालीन योजना बनाई है।

इस योजना में अब तक निम्न आगम प्रकाशित हो चुके हैं–

● आचारांगसूत्र (भाग १, २) ● ज्ञाताधर्मकथांगसूत्र (भाग १, २) ● अन्तकृद्दशासूत्र ● कल्पसूत्र ● उत्तराध्ययनसूत्र ● दशवैकालिकसूत्र ● नन्दीसूत्र ● उपासकदशा एवं अनुत्तरौपपातिकदशासूत्र ● अनुयोगद्वारसूत्र (भाग १) ● रायप्रश्नीयसूत्र

हमारा यह परम सौभाग्य है कि परम श्रद्धेय स्व. उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक महास्थविर गुरुदेव भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी महाराज द्वारा प्रदत्त प्रेरणा और आशीर्वाद से उपप्रवर्तक श्री अमर मुनि जी आगम सेवा के इस महान् पुण्य कार्य में हम सबको प्रेरणा और प्रोत्साहन प्रदान कर युग–युग तक चिरस्थायी रहने वाला ज्ञानदीप प्रज्वलित कर रहे हैं। यह ज्ञानदीप न तूफानों में चंचल होता है और न ही महाकाल के थपेड़ों से बुझ पाता है। वास्तव में 'अमर ज्ञानदीप' जलाकर श्री अमर मुनि जी एक युगान्तरकारी कार्य कर रहे हैं।

सचित्र आगम प्रकाशन योजना में इस अनुयोगद्वारसूत्र का कार्य जो दो भागों में सम्पन्न हो चुका है। पाठकों के हाथों में है।

जैनधर्म–दर्शन के मूल शब्दों का अभिप्राय समझकर उनके भाव के अनुसार अंग्रेजी में उनका अनुवाद करना वास्तव में बहुत ही कठिन और व्यापक चिन्तन–मनन का कार्य है। खासकर अनुयोगद्वार जैसे आगम में तो बहुत ही श्रम करना पड़ा है। फिर भी हमें संतोष है कि विद्वान् अनुवादक ने आगमों के भाव के अनुसार मनन करके अंग्रेजी परिभाषाएँ बनाई हैं और उनको सुन्दर सहज रूप से प्रस्तुत किया है।

श्रीचन्द जी सुराना (अनुवाद, विवेचन व सम्पादन) तथा श्री सुरेन्द्र बोथरा (अंग्रेजी अनुवाद) का सहयोग तो प्रारम्भ से ही हमें उपलब्ध है। इसके साथ ही आगमों के ज्ञाता विद्वान् श्री राजकुमार जी जैन (रिटायर्ड आई. ए. एस., दिल्ली) भी आगम सेवा के इस अभियान से जुड़ गये हैं।

चित्रकार डॉ. त्रिलोक शर्मा ने इस आगम के चित्र बनाये हैं। चित्रों के माध्यम से आगमों का गम्भीर कथन बहुत ही सरल रूप में प्रकट हो गया है, जो सबके लिए सुबोध है। इन चित्रों के रेखांकन आगमों की मर्मज्ञ विदुषी डॉ. सरिता जी महाराज को दिखाये गये हैं और उनके सुझाव अनुसार उचित संशोधन भी किया गया है।

हम सभी सहयोगी बंधुओं के प्रति कृतज्ञ हैं। भविष्य में उनके सहयोग की आशा/आकांक्षा के साथ।

महेन्द्रकुमार जैन
अध्यक्ष
पद्म प्रकाशन

PUBLISHER'S NOTE

"Imparting knowledge to others is the greatest charity." Translating these words into action Shri Amar Muni Ji made a long-term plan for publishing the precepts of the *Jina*, compiled in the form of *Jain Sutras* (Jain Canon), with Hindi and English translations and suitable multicoloured illustrations.

In this project the following *Agams* have already been published—

• Acharanga Sutra (Part 1 and 2) • Jnata Dharma Kathanga Sutra (Part 1 and 2) • Antakrid-dasha Sutra • Kalp Sutra • Uttaradhyayana Sutra • Dashavaikalika Sutra • Nandi Sutra • Upasakdasha and Anuttaropapatikdasha Sutra • Anuyogadvar Sutra (Part 1) • Rajaprashniya Sutra

We are extremely fortunate that, with the inspiration and blessings of highly revered late Uttar Bharatiya Pravartak Gurudev Bhandari Shri Padma Chandra Ji Maharaj, Up-pravartak Shri Amar Muni Ji is inspiring and encouraging us in this noble mission of lighting the everlasting lamp of knowledge. This lamp of knowledge neither flickers in any storm nor gets extinguished by the catastrophic vagaries of time. Actually, by lighting this eternal lamp, Shri Amar Muni Ji is doing an epoch-making work.

In this plan of illustrated publications, the work on this *Anuyogadvar Sutra* has been completed in two parts and is now being placed before the readers.

To understand the concepts contained in the original terminology of Jain philosophy and then translate them into English is really a difficult task and needs careful contemplation and pondering. Specially for an *Agam* like *Anuyogadvar Sutra* real hard work had to be put in. However, we are contented that the translator has put in all the efforts and sources at his command to translate the philosophical terminology and present it in a simple and comprehensible style.

The contributions of Srichand Surana (Hindi translation, elaborations and editing) and Shri Surendra Bothra (English

translation) have been available right from the beginning of this project. Shri Raj Kumar Jain (I.A.S. Retd., Delhi), who is well versed with Jain *Sutras*, has also joined the mission of *Agam* publication.

Dr. Trilok Sharma has made the illustrations for this *Sutra*. Through the medium of illustrations, even the complex concepts have been made simple and easily understandable for all. The pencil drawings of these illustrations have been shown to Dr. Sarita Ji Maharaj, a profound scholar of these *Sutras*. Necessary improvements have been made as per her suggestions.

We are thankful to all those who have extended their co-operation to this project. We wish and hope to get their continued co-operation in future as well.

Mahendra Kumar Jain
PRESIDENT
Padma Prakashan

प्रस्तावना : स्वकीयम्

राज-व्यवस्था या शासन-तंत्र में जो महत्त्व 'शस्त्र' का है, आत्म-शासन या अध्यात्म क्षेत्र में वही महत्त्व 'शास्त्र' का है। शस्त्र के बिना राज-व्यवस्था नहीं चल सकती, शास्त्र के बिना आत्म-ज्ञान या संयम-साधना नहीं हो सकती। शरीर में जो महत्त्व आँख का है, आत्म-कल्याण के लिए वही महत्त्व शास्त्र का है। इसलिए शास्त्र को आत्मा की आँख कहा गया है-"सुयं तइयं चक्खु।"

शास्त्र का अर्थ है जो आत्मा पर, मन पर तथा इन्द्रियों पर शासन करता है या शासन करना सिखाता है अर्थात् इन पर संयम करके अपना अधिकार या स्वामित्व स्थापित करने का उपाय बताता है वह है शास्त्र। जैसे कहा है-"शासनाच्छास्त्रमिदम्।"-आचार्य मलयगिरि का यह कथन वास्तव में शास्त्र को आत्मा पर शासन करने वाला 'शासक' सिद्ध करता है।

वीतराग सर्वज्ञ भगवान की वाणी या उपदेश को 'शास्त्र' कहा जाता है। उन शास्त्रों का स्वाध्याय, अध्ययन, पठन-श्रवण आत्मा को कल्याण के मार्ग पर प्रेरित करता है, आगे बढ़ाता है। जैन परम्परा में 'शास्त्र' के लिए 'आगम' शब्द अधिक प्रचलित है। वर्तमान समय में जो आगम उपलब्ध हैं, उनकी गणना ४५ या ३२ आगमों के रूप में की जाती है। श्वेताम्बर मूर्तिपूजक आम्नाय में ४५ तथा स्थानकवासी व तेरापंथी आम्नाय में ३२ आगम की मान्यता प्रचलित है। बत्तीस आगम इस प्रकार हैं- ११ अंगसूत्र, १२ उपांगसूत्र, ४ मूलसूत्र, ४ छेदसूत्र और आवश्यक सूत्र। प्रस्तुत अनुयोगद्वार मूल सूत्रों की गणना में आता है। चार मूल सूत्रों में उत्तराध्ययन, दशवैकालिक, नन्दी और अनुयोगद्वार का नाम है।

जिनेश्वर भगवान ने मोक्ष के चार मार्ग बताये हैं-

"नाणं च दंसण चेव, चरित्तं च तवो तहा।
एस मग्गु त्ति पन्नत्तो, जिणेहिं वरदंसिहिं॥" -उत्तराध्ययन ३०

ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप मोक्ष के चार मार्ग हैं। प्राचीन मान्यता के अनुसार नन्दीसूत्र में ज्ञान, अनुयोगद्वार में दर्शन, दशवैकालिक में चारित्र तथा उत्तराध्ययन में तप का वर्णन मुख्य रूप में है। यों तो अनुयोगद्वार में दर्शन के साथ श्रुतज्ञान तथा आवश्यक के रूप में पाँच चारित्र का वर्णन भी उपलब्ध है, किन्तु यह सब उपक्रम दर्शन की, सम्यक् दर्शन के रूप में शुद्धि के लिए होने से 'दर्शन' को ही इसका मुख्य प्रतिपाद्य माना है।

अनुयोग का अर्थ

'अनुयोगद्वारसूत्र' को समझने के लिए सर्वप्रथम 'अनुयोग' शब्द का अर्थ समझ लेना जरूरी है। 'अनुयोग' का अर्थ है, शब्द के साथ उसके अनुकूल या उपयुक्त अर्थ का सम्बन्ध जोड़ना। अर्थ के भाषक अरिहंत भगवान होते हैं, अरिहंतों या तीर्थंकरों द्वारा कथित अर्थ या शब्द रूप शास्त्र को उनके अभिप्रेत अर्थ के साथ जोड़कर देखना चाहिए। एक शब्द के अनेक अर्थ होते हैं, इसलिए वहाँ पर किस

प्रयोजन से, किस नय दृष्टि से, किस निक्षेप दृष्टि से यह शब्द कहा गया है, इसका उचित विचार करके उसका वही अर्थ करना—इसी का नाम अनुयोग है जैसा कि आचार्यों ने कहा है—

"अणु ओयण मणुओगो, सुयस्स नियएण जमभिहेएण॥" —आचार्य जिनभद्रगणि

अर्थात् श्रुत के नियत अभिधेय को समझने के लिए उसके साथ उपयुक्त अर्थ का योग करना—अनुयोग है।

अनुयोगद्वारसूत्र में 'अनुयोग' शब्द पर अधिक चिन्तन नहीं किया गया है। परन्तु शास्त्रों के प्रसिद्ध भाष्यकार आचार्य जिनभद्रगणि तथा वृत्तिकार मलधारी हेमचन्द्र आदि आचार्यों ने 'अनुयोग' शब्द पर बड़े विस्तार के साथ चिन्तन किया है और यह स्पष्ट किया है कि किस कारण इस शास्त्र को 'अनुयोगद्वार' कहा है। अनुयोगद्वार का एक सरल-सा अर्थ है—शासनरूपी महानगर में अपने इच्छित तत्त्वज्ञान को खोजने और पाने के लिए प्रवेश का जो द्वार है, उसका नाम यहाँ 'अनुयोगद्वार' समझ लेना चाहिए। शास्त्र को एक महानगर मान लें तो उस महानगर में प्रवेश करने का मार्ग अनुयोगद्वार है। शास्त्र के गम्भीर भाव या अर्थ को समझने के लिए जिस अनेकान्तवादी, नय-निक्षेप प्रधान दृष्टि की जरूरत है उस दृष्टि का उद्‌घाटन अनुयोगद्वारसूत्र करता है।

अनुयोग का अर्थ समझाने के लिए आचार्य भद्रबाहु स्वामी ने सर्वप्रथम आवश्यक निर्युक्ति (गा. १२८-१२९) में गाय और बछड़े का दृष्टान्त दिया है, इसी दृष्टान्त को विस्तृत रूप में आवश्यक निर्युक्ति के भाष्यकार जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण ने (गा. ४०९-४१०) उदाहरण देकर समझाया है, जिसका वर्णन और चित्र हमने सूत्र २ पर दिया है। संक्षेप में जिस गाय का दूध दुहना हो, उसी के बछड़े को उसके पास लाकर उसका स्तनपान कराकर दूध दुहना यह एक प्रकार से 'योग्य संयोग' है। इस दृष्टान्त से अनुयोग का अर्थ सरलता से समझ में आ जाता है।

अनुयोग के चार द्वार

यह जानना चाहिए कि आचार्य आर्य रक्षित ने जैन आगमों के विषयों का चार अनुयोगों में वर्गीकरण किया है। जैसे—धर्मकथानुयोग (दृष्टान्त उदाहरण), चरणानुयोग (आचार विषय), गणितानुयोग (ज्योतिष और समुद्र-पर्वत आदि का वर्णन) तथा द्रव्यानुयोग (जीव-पुद्‌गल आदि का वर्णन)। इनमें प्रस्तुत अनुयोगद्वार की गणना प्रमुख रूप में किसी भी अनुयोग में नहीं की जा सकती, किन्तु इसमें प्रसंगानुसार चारों ही अनुयोग समाविष्ट हो जाते हैं। वास्तव में इसका विषय शास्त्र का अर्थ करने की शैली अर्थात् आगम की व्याख्या पद्धति समझाना है। इसलिए इसके विषयों को 'चार द्वार' के रूप में विभक्त किया है, जैसे—(१) उपक्रम, (२) निक्षेप, (३) अनुगम, और (४) नय।

इन चारों द्वारों में सबसे पहले उपक्रम द्वार है। यह सबसे अधिक विस्तृत है। सूत्र का लगभग ७५% अंश उपक्रम के वर्णन में ही पूरा हुआ है।

किसी के अभिप्राय को समझना और समझकर उसके अनुकूल प्रयत्न करना उपक्रम है। नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव—इन छह द्वारों से उपक्रम की अनेक प्रकार से व्याख्याएँ की गई हैं और अन्त में प्रशस्त भावोपक्रम को उपादेय बताया है। इसके अनुसार शिष्य गुरु से ज्ञान प्राप्त करने

के लिए पहले गुरु को विनय आदि से प्रसन्न करे, उनके भाव-इंगित संकेत आदि को समझकर शास्त्र पढ़ने में प्रवृत्त हो।

उपक्रम के भी आनुपूर्वी, नाम, प्रमाण, वक्तव्यता, अर्थाधिकार, समवतार आदि छह भेद बताकर विभिन्न प्रकारों से उपक्रम को समझाया है। दूसरे निक्षेप द्वार में नाम, स्थापना, द्रव्य और भाव-चार निक्षेप के आधार पर तत्त्व को समझने की विधि बताई है। तीसरा द्वार है अनुगम और चौथा द्वार है नय। अनुगम के मुख्य दो भेद बताकर उसके उपभेदों का वर्णन है। इसके बाद नयद्वार में सात नयों की व्याख्या है।

इस प्रकार अनुयोगद्वारसूत्र में चार द्वारों द्वारा शास्त्र का अर्थ समझने, उसकी व्याख्या करने की तर्क व युक्ति संगत शैली का वर्णन है।

प्रासंगिक सामग्री : प्राचीन ग्रन्थों का उल्लेख

अनुयोगद्वार में चार द्वारों के वर्णन में अनेक प्रकार की रोचक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक सामग्री उपलब्ध होती है। इसके अध्ययन से प्राचीन भारत की धार्मिक, ऐतिहासिक, भौगोलिक तथा सांस्कृतिक सामग्री विविध रूप में मिलती है। धार्मिक और दार्शनिक सामग्री में षड्द्रव्य का विचार, जीव के गुण, शरीर, शरीर की आकृतियाँ, संस्थान, जीवों की आयु आदि विविध प्रकार के विषयों की संयोजना है।

इस सूत्र में जैनेतर साहित्य के १९ प्रसिद्ध ग्रन्थों के नाम भी हैं। (सूत्र ४९) जैसे-रामायण, महाभारत, कौटिल्य, वैशेषिक दर्शन, बुद्ध वचन, लोकायत, पुराण, व्याकरण आदि। महाभारत और रामायण के पठन व वाचन के समय की प्राचीन परम्परा का भी उल्लेख है, किन्तु आश्चर्य है, रामायण एवं महाभारत का उल्लेख करने के बाद भागवत का उल्लेख कहीं नहीं है। इससे यह ध्वनित होता है कि अनुयोगद्वारसूत्र की रचना के पश्चात् भागवत की रचना हुई है।

संगीत एवं स्वर-मंडल

सात स्वरों का सुन्दर और ललित वर्णन इस सूत्र (सूत्र २६०) की एक अपनी विशेषता है। सामवेद में संगीत का वर्णन है। उसी प्रकार इस सूत्र में भी संगीत के स्वर, उत्पत्ति स्थान आदि का विस्तृत और उपयोगी वर्णन है। वर्णन की शैली अपनी स्वतंत्र है।

व्याकरण

अष्ट नाम में व्याकरण की आठ विभक्तियों का तथा सात समासों का वर्णन व्याकरण शास्त्र के अभ्यासियों के लिए उपयोगी है। (सूत्र २२८-२३१)

नवरस

इस सूत्र (२६१-२६२) में काव्य शास्त्र के नवरसों का वर्णन अपनी मौलिक स्थापना लिए है। काव्य नाटक ग्रन्थों में नवरस हैं-(१) शृंगार, (२) हास्य, (३) करुण, (४) रौद्र, (५) वीर, (६) भयानक, (७) वीभत्स, (८) अद्भुत, और (९) शान्त रस। जबकि इस सूत्र में सबसे पहले वीर

रस का क्रम रखा है तथा व्रीडनक रस (लज्जा रस) के रूप में एक नया ही रस बताया है। अन्य किसी काव्यशास्त्रीय वर्णन में 'व्रीडनक रस' का कथन नहीं है। चूर्णिकार तथा टीकाकार हरिभद्र ने इस विषय में कोई स्पष्टीकरण नहीं किया है, परन्तु आचार्य मलधारी हेमचन्द्र का स्पष्टीकरण है कि भयोत्पादक सामग्री देखने से भयानक रस की उत्पत्ति होती है। यहाँ पर 'भयानक' रस को 'रौद्र रस' में ही विवक्षित कर दिया है और 'व्रीडनक रस' को अलग प्रस्तुत किया है।

सामुद्रिक शास्त्र

प्रमाण, मान, उन्मान आदि के भेदों में सामुद्रिक लक्षणों वाले उत्तम, मध्यम, अधम पुरुष के लक्षण बताये हैं। (सूत्र ३३४) जैसे जिसके शरीर की ऊँचाई १०८ अंगुल प्रमाण मात्र हो, उस पर शंख, वृषभ आदि के लक्षण-चिन्ह हों। मष, तिल आदि व्यंजन हों, जिसमें क्षमा आदि गुण हों, वह उत्तम पुरुष है। १०४ अंगुल की ऊँचाई वाला मध्यम पुरुष और ९६ अंगुल की ऊँचाई वाला अधम पुरुष। उस समय के सामुद्रिक शास्त्र की धारणा का पता इस वर्णन से चलता है।

इसी प्रकार सूत्र ६५३-६५४ में आकाश दर्शन, नक्षत्र आदि के आधार पर सुवृष्टि, कुवृष्टि, सुकाल, दुर्भिक्ष आदि का अनुमान होना बताया है।

मान्यताएँ तथा व्यवसाय

सूत्र २१ में उस युग में प्रचलित वेश-भूषा तथा क्रियाकलाप के आधार पर विविध प्रकार की धार्मिक मान्यताओं का उल्लेख है, जैसे-चरक, चीरक, चर्मखंडिक गौतम, गौव्रतिक आदि।

व्यवसाय या कर्म के अनुसार जिन जातियों का नामकरण होता था, उनका उल्लेख यह सूचित करता है कि प्राचीन भारत में 'जाति' जन्मना नहीं, कर्मणा मानी जाती थी। व्यावसायिक जातियों के नाम-**दौसिक**-कपड़ा बनाने वाले, **सौत्रिक**-सूत बुनने वाले, **तांत्रिक**-तंत्री वादक, **मुंजकार**-मूँज की रस्सी बनाने वाले, **वर्धकार**-चमड़े की विविध वस्तुएँ बनाने वाले, **पुस्तकार**-कागज बनाने वाले या पुस्तकें लिखने वाले, **दंतकार**-हाथी दाँत आदि का काम करने वाले आदि। (सूत्र ३०४)

विविध कला निपुण कलाकारों के नामों से पता चलता है, आज की तरह प्राचीन समय में भी शरीर के अवयवों को मोड़ने, घुमाने व विविध प्रकार से जनता का मनोरंजन करने वाले अनेक कलाकार (जिम्नास्टिक) उस समय होते थे। जैसे-**नर्तक**-नृत्य करने वाला, **जल्ल**-रस्सी पर नाचने वाला, **मल्ल**-कुश्ती लड़ने वाला, **प्लवक**-गड्ढे व नदी-तालाब में गहरी छलाँग लगाने वाला, **लंख**-मोटे बाँस पर चढ़कर विविध करतब दिखाने वाला आदि। (सूत्र ३०४)

धान्य, रस, धातु आदि नापने के तोल, माप, बाँट, गज आदि उस युग में अनेक प्रकार के साधन विकसित हो चुके थे। सूत्र ३२० से ३४४ तक से मान, उन्मान, क्षेत्र, प्रमाण आदि का वर्णन उस युग की प्रचलित और विकसित व्यापार विधियों का अच्छा दिग्दर्शन कराती है।

इस प्रकार अनुयोगद्वारसूत्र में जहाँ दार्शनिक व सैद्धान्तिक चर्चा है वहाँ सांस्कृतिक विषयों की भी विपुल सामग्री है जो उस समय की लोक कला, व्यापार कला व साहित्य रचना के विकास की सूचना देती है।

संकलनकर्त्ता का नाम और समय

जैन आगमों में अनुयोगद्वारसूत्र और नन्दीसूत्र सबसे अर्वाचीन शास्त्र हैं।

अनुयोगद्वारसूत्र किसकी रचना है यह प्रश्न आज तक पूर्ण रूप में समाधान नहीं पा सका है। कुछ विद्वानों का अनुमान है कि आर्य वज्रस्वामी तक तो शास्त्रों का अध्ययन अपृथक्त्वानुयोग पद्धति से ही होता था। किन्तु उनके पट्टधर आर्य रक्षित सूरि जो भगवान महावीर के बीसवें पट्टधर थे। (वि. नि. ५७० से ५९७) ने आगम अभ्यासियों की मति-दुर्बलता, धारणा शक्ति की दुर्बलता को समझकर आगमों का चार अनुयोगों में वर्गीकरण किया। इसलिए उन्हें अनुयोग पृथक्कर्त्ता माना जाता है। परन्तु अनुयोगद्वारसूत्र के रचनाकार भी वे थे या नहीं, इस विषय में कोई पुष्ट प्रमाण नहीं है किन्तु साथ ही इसका बाधक प्रमाण भी कुछ नहीं है। इस कारण विद्वानों व इतिहास गवेषकों ने अनुयोग पृथक् आर्य रक्षित को ही अनुयोगद्वारसूत्र का रचनाकार या संकलनकर्त्ता स्वीकार किया है। आर्य रक्षित का समय वीर निर्वाण की छठी शताब्दी है। इस रचना का समय वीर निर्वाण संवत् ५७०-५८४ के मध्य अनुमान किया गया है। अर्थात् विक्रम संवत् ११४ से १२७ के मध्य ईसा की प्रथम शती का अन्तिम चरण ही इसका रचना समय माना जाता है। इस विषय में आगमों के अनुसंधानकर्त्ता मुनि पुण्यविजय जी, मुनि जम्बूविजय जी तथा आचार्य महाप्रज्ञ जी तीनों एकमत हैं।

व्याख्या ग्रन्थ

अनुयोगद्वारसूत्र पर तीन प्राचीन व्याख्या ग्रन्थ उपलब्ध हैं। इस पर कोई निर्युक्ति नहीं है।

चूर्णि–चूर्णि की भाषा प्राकृत है। इसके कर्त्ता जिनदासगणि महत्तर विक्रम की सातवीं सदी में हुए।

हरिभद्रीया वृत्ति–हरिभद्र सूरि आगमों के प्रसिद्ध और गम्भीर टीकाकार हैं। उन्होंने आवश्यक और दशवैकालिकसूत्र पर विस्तृत टीकाएँ लिखी हैं। नन्दी और अनुयोगद्वार पर उनकी संक्षिप्त टीका है। इनका समय विक्रम की आठवीं शताब्दी माना जाता है।

मलधारीया वृत्ति–हरिभद्र सूरि के बाद आचार्य मलधारी हेमचन्द्र ने इस पर बहुत विस्तृत वृत्ति (व्याख्या) लिखी है। इनका समय विक्रम की बारहवीं शताब्दी माना गया है।

द्वितीय भाग

अनुयोगद्वारसूत्र विषय की दृष्टि से बहुत विस्तृत है और गूढ़ भी है। इसके सूत्रों की व्याख्या अथवा विवेचन किये बिना अर्थ समझ पाना कठिन होता है। इसलिए इसका विस्तार भी हो गया है। इसी कारण इस शास्त्र को दो भागों में प्रकाशित किया गया है। प्रथम भाग गत वर्ष प्रकाशित हो चुका है। उसमें नवरस तक का वर्णन है। अब दस नाम प्रकरण से आगे का वर्णन इस भाग में है। इसमें भी अनेक प्रकार के गहन व रोचक विषय सम्मिलित हैं। प्रमाण, नय, निक्षेप का वर्णन इस दूसरे भाग में है।

जैसा मैंने बताया–यह शास्त्र किसी एक ही विषय पर आधारित नहीं है, यह तो शास्त्र की व्याख्या करने की शैली समझाने वाला शास्त्र है। इसमें विभिन्न विषयों का समावेश है। रस, अलंकार, व्याकरण, नक्षत्र ज्योतिष, न्याय शास्त्र, नय, निक्षेप, प्रमाण, काल, भाव आदि अनेक विषय इसमें समाये हुए हैं

और प्रत्येक विषय का बहुत ही सुन्दर तथा सांगोपांग वर्णन इस शास्त्र में है। वर्णन शैली भी इसकी अनूठी है। इसके कुछ विषय अन्य सूत्रों में भी आ गये हैं, जैसे अवगाहना व स्थिति प्रकरण प्रज्ञापनासूत्र में हैं। काल व पल्योपम आदि का वर्णन जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति तथा भगवतीसूत्र में है। किन्तु यहाँ पर प्रसंग आने से वह विषय अनुक्रम में प्रस्तुत है।

प्रमाण प्रकरण, काल प्रकरण का विषय तो काफी विस्तृत है तथा रोचक और ज्ञानवर्द्धक भी है। मैंने ध्यान रखा है जहाँ पर आवश्यक था वहाँ विवेचन में उस विषय का विस्तार भी किया है।

हमारे सम्पादन का आधार

अनेक टीकाओं के अवलोकन पश्चात् हमने अनुवाद व विवेचन की भाषा-शैली सरल, सुबोध तथा मध्यम विवेचन वाली रखी है, क्योंकि अधिक लम्बा विवेचन करने से तो इसका विस्तार और अधिक हो जाता।

अस्तु, अन्य आगमों से अनुयोगद्वारसूत्र की शैली तथा प्रतिपाद्य कुछ भिन्न है। इसमें पारिभाषिक शब्दों की बहुलता होने से अर्थ-बोध इतना सरल नहीं है। इसलिए हमने अनुवाद तथा विवेचन में ही विशेष पारिभाषिक शब्दों को भिन्न टाइप में देकर वहीं पर अर्थ व व्याख्या करने का ध्यान रखा है जिससे कि पाठक को बार-बार पृष्ठ पलटने नहीं पड़ें। अंग्रेजी अनुवाद में भी पारिभाषिक शब्दों के अर्थ वहीं पर कोष्ठक में दिये गये हैं।

इसके अनुवाद विवेचन में हमने निम्नलिखित पुस्तकों को अपना आधार माना है-

जैनागम रत्नाकर श्रमण संघ के प्रथम आचार्यसम्राट् आचार्य श्री आत्माराम जी महाराज ने सर्वप्रथम प्राचीन टीका आदि के आधार पर हिन्दी में अनुयोगद्वार की हिन्दी टीका लिखी थी, जो बहुत ही सरल और सुबोध शैली में है। दो भागों में उसका प्रकाशन हुआ। प्रथम भाग का प्रकाशन सन् १९३१ में श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन कॉन्फ्रेंस, मुम्बई से तथा उत्तरार्ध का प्रकाशन पटियाला से हुआ। परन्तु वर्तमान में उसकी उपलब्धता बहुत ही दुर्लभ हो रही है।

आचार्यसम्राट् श्री आत्माराम जी महाराज के विद्वान् शिष्यरत्न आगमों के गम्भीर अध्येता श्री ज्ञान मुनि जी महाराज ने आचार्यश्री की सम्पादित टीका को अति विस्तृत रूप देकर पुनः सम्पादित किया है, जो एक प्रकार से सर्वथा नया व्याख्या ग्रन्थ ही बन गया है। यह आत्मज्ञान पीयूषवर्षिणी टीका नाम से प्रकाशित है। इसका सम्पादन मुनि श्री नेमीचन्द्र जी महाराज ने किया है। दो भागों में यह ग्रन्थ आज उपलब्ध है और व्याख्याकार के गम्भीर व्यापक ज्ञान का साक्षीभूत है। हमने विवेचन में इस ग्रन्थ को आधारभूत माना है।

आगम समिति, ब्यावर से प्रकाशित युवाचार्य श्री मधुकर मुनि जी के निर्देशन में श्री केवल मुनि जी द्वारा अनूदित तथा पं. शोभाचन्द जी भारिल्ल द्वारा संशोधित अनुयोगद्वारसूत्र भी हमारे लिए मूल पाठ व विवेचन में उपयोगी बना है।

अणुओगदाराइं नाम से आचार्य महाप्रज्ञ जी द्वारा सम्पादित जैन विश्वभारती, लाडनूँ द्वारा प्रकाशित ग्रन्थ भी हमारे विवेचन में काफी उपयोगी तथा सहायक बना है।

ताइकेन हानाकी अनुयोगदाराइं नामक अंग्रेजी अनुवाद का उपयोग विशेष कर अंग्रेजी शब्दावली स्थिर करने के समय किया गया है।

इन सबके अतिरिक्त अभी सद्यः प्रकाशित **'अनुयोगद्वारसूत्रम्' चूर्णि-विवृत्ति-वृत्ति विभूषितम्** (भाग १, २) आगमों के गम्भीर अन्वेषक-अध्येता तत्त्वमर्मज्ञ मुनिराज जम्बू विजय जी महाराज द्वारा अत्यन्त श्रमपूर्वक संशोधित-संपादित ग्रन्थ हमें इस सम्पादन में मूल पाठ संशोधन व चूर्णि-टीका आदि के मूल सन्दर्भ देखने में बहुत ही सहायक बना है। अनेक दुरूह स्थलों को समझने के लिए सह-सम्पादक श्रीचन्द सुराना 'सरस' ने मुनिश्री से व्यक्तिगत सम्पर्क कर इस विषय में समाधान प्राप्त करने का भी प्रयास किया है। मुनिश्री स्वयं ज्ञानाभ्यासी व उदार हृदय हैं। उन्होंने अत्यन्त प्रेम व वात्सल्यपूर्वक सूत्र के गम्भीर अर्थों का स्पष्टीकरण कर संतुष्ट किया है। हम आपके विशेष आभारी हैं। साथ ही उक्त सभी विद्वानों, मुनिवरों के प्रति कृतज्ञ हैं कि इस विवेचन में हम उनके अत्यधिक श्रमपूर्ण सम्पादन से लाभान्वित हुए हैं।

अपना पार्थिव शरीर त्याग देने के पश्चात् भी परम पूज्य गुरुदेव उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक भण्डारी श्री पद्मचन्द जी महाराज का वरदहस्त मेरी प्रत्येक गतिविधि को निर्देशित करता है। उनके प्रति आभार प्रकट करना मेरा विनम्र कर्त्तव्य है।

इस सूत्र के सम्पादन में श्रीचन्द सुराना 'सरस' ने प्रशंसनीय योगदान दिया है तथा कठिन परिश्रम किया है। अंग्रेजी अनुवाद में श्री सुरेन्द्र बोथरा ने इस ग्रन्थमाला के अनेक आगमों के अनुवाद से परिपक्व अनुभव तथा ज्ञान का इसके अंग्रेजी अनुवाद में सराहनीय उपयोग किया है। पारिभाषिक शब्दों के लिए अंग्रेजी में उपयुक्त शब्दों तथा पदों के चयन में पूरी सावधानी रखी गयी है। फिर भी, यह अभी तक एक विकासशील क्षेत्र है। अतः भाषा तथा विवेचन की किसी भी भूल के लिए पाठकों का धैर्य अपेक्षित है। सुश्रावक श्री राजकुमार जी जैन जो आगमों के अध्येता तथा अंग्रेजी के विद्वान् हैं, ने भी अन्तिम प्रूफ पढ़कर संपादकीय तथा अनुवादकीय सुझाव के रूप में महत्त्वपूर्ण सेवा-सहयोग प्रदान किया है। लगभग दो वर्ष के कठोर व सतत परिश्रम पश्चात् यह अनुवाद और अंग्रेजी भाषान्तर तैयार हुआ है। फिर भी कहीं शास्त्र विरुद्ध, परम्परा विरुद्ध कुछ लिखा गया है, तो उसके लिए मैं आत्म-साक्षी से पुनः **'मिच्छामि दुक्कडं'** लेता हूँ तथा विद्वानों से निवेदन करता हूँ कि वे उचित संशोधन आदि सुझाने की कृपा करें।

अनुयोगद्वार के चित्र बनाना भी अन्य आगमों की अपेक्षा कुछ जटिल काम था। विषय को अच्छी प्रकार उदाहरणों द्वारा समझाने में कुछ उदाहरण टीका, भाष्य के तथा अन्य सूत्रों की टीका व अर्थ ग्रन्थ से भी लेने पड़े हैं तथा कुछ लौकिक प्रचलित उदाहरणों का भी प्रयोग किया गया है ताकि सूत्र का भाव पाठक/दर्शक अच्छी प्रकार समझ सकें, फिर भी यदि उन उदाहरणों में कहीं दोष रहा हो तो विशेषज्ञ सूचित करें।

सभी सहभागी बन्धुओं के प्रति पुनः हार्दिक अनुमोदना।

—उपप्रवर्त्तक अमर मुनि

FROM THE EDITOR'S PEN

Scriptures (*shaastra*) have the same importance in the spiritual field that weapons (*shastra*) have in the field of state administration. Administration of a state cannot be run without the help of weapons and spiritual practices and self-discipline cannot be pursued without the help of *shaastras*. The role of *shaastras* in attaining beatitude of the self (soul) is as important as that of eyes in the human body. That is the reason *shaastras* are said to be the eyes of the soul ***(Suyam taiyam chakkhu).***

That which rules over or teaches how to rule over the soul, the mind and the senses is said to be *shaastra*. In other words, that which shows the way to discipline and establish command over these is called *shaastra*. Acharya Malayagiri's statement—***'Shasanacchastramidam'*** affirms that *shaastra* is the ruler who rules over the soul.

The words or teachings of the detached omniscient are called *shaastra*. Contemplation, study, reading and listening to the recital of these *shaastras* inspire the soul to take to the path of beatitude and helps its progress. In Jain terminology the term *'Agam'* instead of *'shaastra'* is in popular use. At present the number of available *Agams* is said to be 45 and 32. According to the belief in Shvetambar image-worshipping tradition this number is 45 and according to that in Sthanakavasi tradition it is 32. The list of thirty two *Agams* is divided into sub-groups as follows—11 *Anga Sutras*, 12 *Upanga Sutras*, 4 *Mool Sutras*, 4 *Chhed Sutras* and the *Avashyak Sutra*. This work, *Anuyogadvar Sutra*, belongs to the sub-group of *Mool Sutras*. The four *Mool Sutras* being *Uttaradhyayan, Dashavaikalik, Nandi* and *Anuyogadvar*.

Bhagavan Mahavir has shown four paths of salvation—knowledge (*jnana*), perception or faith (*darshan*), conduct (*chaaritra*) and austerities (*tap*). According to the ancient tradition *Nandi Sutra* describes knowledge (*jnana*), *Anuyogadvar* describes perception or faith (*darshan*), *Dashavaikalik* describes conduct (*chaaritra*) and *Uttaradhyayan* describes austerities (*tap*). *Anuyogadvar* includes discussions about *Shrut jnana* (scriptural knowledge) and five kinds of

conduct in the form of *avashyak* (essential duties) alongwith ***darshan*** (perception). However, as all these are presented as instruments for refining ***darshan*** (perception) into ***samyak darshan*** (right perception), ***darshan*** is considered to be its central theme.

MEANING OF ANUYOGA

To understand *Anuyogadvar Sutra*, the first essential step is to understand the meaning of the term *anuyoga*. To associate (*yoga*) the intended and appropriate meaning (*anu*) with a word is called *anuyoga*. The concepts (*arth*) are given by *Arihant Bhagavan*. The concepts given by *Arihants* or *Tirthankars* or the scriptures in lingual form should be studied and understood only after associating them with pertinent and appropriate meaning. Each word has many meanings. Therefore, to contemplate that for what purpose, from which viewpoint and with reference to which attribution a specific word has been used and then to arrive at the appropriate meaning is called *anuyoga* (disquisition). As the *acharyas* have said—"To associate (*yoga*) the intended and prescribed meaning (*anu*) with the concept of an aphorism is *anuyoga*. (In other words to elaborate an aphorism in consonance with the concept of the writer is *anuyoga*.)" **—Acharya Jinabhadragani**

In the text of *Anuyogadvar Sutra* nothing much has been said about the word *anuyoga*. However, famous commentators of scriptures, including Acharya Jinabhadragani (the author of the *Bhashyas*) and Acharya Maladhari Hemchandra (the author of the *Vrittis*), have presented detailed discussion on the word '*anuyoga*' in their commentaries. They have explained why this work has been titled *Anuyogadvar*. A simple illustrative meaning of *Anuyogadvar* is—the gate (*dvar*) to enter, search and arrive at the desired part of the knowledge of fundamentals in the great city called Jain order (canon). If we consider *shaastra* (scripture) to be a great city, *Anuyogadvar* is the name of its entrance. The non-absolutist (*anekant-vadi*) approach, with emphasis on multiple perspectives (*naya*) and attribution (*nikshep*), necessary to understand the profound concepts and ideas contained in scriptures is elucidated in *Anuyogadvar Sutra*.

The analogy of a cow and her calf in order to explain the meaning of *Anuyogadvar* was given for the first time by Acharya Bhadrabahu in *Avashyak Niryukti* (verse 128-129). The same analogy with a little elaboration in the form of an example has been used by Jinabhadragani

Kshamashraman, the commentator (*Bhashya*) of *Avashyak Niryukti* (verses 409-410). We have included it with a suitable illustration in elaboration of aphorism 2. In brief, when a cow is to be milked, the calf of that very cow should be brought for pre-milking suckle. In a way, this is a fitting association. This example facilitates grasping easily the meaning of *anuyoga* (disquisition).

FOUR DVARS OF ANUYOGA (FOUR DOORS OF DISQUISITION)

It should be mentioned here that Acharya Arya Rakshit has divided the subjects contained in Jain *Agams* in four *Anuyogas*—*Dharmakathanuyoga* (narrative literature or religious tales), *Charananuyoga* (conduct and praxis), *Ganitanuyoga* (mathematics, astrology, geography and cosmology) and *Dravyanuyoga* (entities including the living and the non-living; metaphysics). This *Anuyogadvar Sutra* does not exclusively belong to any one of these four types. It envelopes all the four types of *Anuyogas* in some context or the other. In fact, it is aimed at explaining the methodology of interpreting the scriptures or the process of elaborating the *Agam* texts. Therefore, the topics it deals have been divided into four segments presented as *dvars* (doors)—(1) *Upakram* (introduction), (2) *Nikshep* (attribution), (3) *Anugam* (interpretation), and (4) *Naya* (viewpoint or aspect).

The first and the most elaborate of these four doors of disquisition is *Upakram*. It takes up almost three-fourths of the total volume of the book.

To understand the viewpoint of a person and to make efforts to act accordingly is *Upakram*. *Upakram* has been described in detail from six different angles namely *Naam* (name), *Sthapana* (notional installation), *Dravya* (physical aspect), *Kshetra* (area), *Kaal* (time) and *Bhaava* (essence). In conclusion, *prashast bhaavopakram* (righteous means of knowing thoughts of others) is termed as the one to be accepted. According to this, in order to gain knowledge from a guru (teacher) a disciple should first please the guru by his qualities including humble behaviour. After that he should understand the feelings and gestures of the guru and should accordingly indulge in studies of scriptures.

Upakram has been further divided into six sub-categories and explained from various perspectives. These sub-categories are—*Anupurvi* (sequence or sequential configuration), *Naam* (name), *Praman* (validity), *Vaktavyata* (explication), *Arthadhikar* (giving

synopsis) and *Samavatar* (assimilation). In the second door of disquisition, *nikshep* (attribution), the method of understanding fundamentals from four angles—*Naam* (name), *Sthapana* (notional installation), *Dravya* (physical aspect) and *Bhaava* (essence or mental aspect) has been explained. The third door of disquisition is *Anugam* (interpretation) and the fourth is *Naya* (viewpoint or aspect). After mentioning two principle categories of *Anugam* their sub-categories have been described. Then in the door of *Naya* seven *nayas* (viewpoints) have been mentioned at length.

Thus, *Anuyogadvar Sutra* describes the method of understanding the scriptures and logical and methodical style of elaborating them with the help of four doors of disquisition (*Anuyogadvar*).

RELEVANT REFERENCES : MENTION OF ANCIENT WORKS

In the description of four *dvars* (approaches) of *Anuyoga,* one finds ample material of cultural and historical importance. Its study provides a variety of information about the religious, historical, geographical and cultural conditions in ancient India. The religious and philosophical material includes description of six *dravya* (entities), attributes of *Jiva* (the living), the body, its shapes, its structure (*sansthan*), life-span of beings and many other such topics.

This work has mentions of 19 famous books of non-Jain literature (aphorism 49). For instance, *Ramayana, Mahabharat, Kautilya, Vaisheshik* philosophy, the precepts of the Buddha, Lokayat, *Puranas*, grammar etc. The then prevailing tradition about the time of reading and reciting *Ramayana* and *Mahabharat* has also been mentioned. But it is strange that though *Ramayana* and *Mahabharat* have been mentioned, there is no mention of *Shrimadbhagavata* with them or otherwise. This indicates that *Shrimadbhagavata* was written after *Anuyogadvar Sutra.*

MUSIC AND MUSICAL NOTES

The description of seven *Svars* (musical notes) in an interesting and lucid style is a special feature of this work (aphorism 260). *Samaved* describes music. Similarly musical notes, their places of origin and other related topics have been mentioned in detail in this work. It employs its own original style of description.

VYAKARAN (GRAMMAR)

The description of eight *Vibhaktis* (declension) and seven *Samasas* (compounding of words) under the title *Ashtnaam* is useful for students of grammar. (aphorisms 225-231)

NAVA RASA (NINE SENTIMENTS)

The description of *nava rasa* (nine sentiments) of poetics (aphorisms 261-262) includes some new concepts and their order. Nine sentiments in poetics and drama are—(1) *Shringar-rasa* (amatory or erotic sentiment), (2) *Hasya-rasa* (sentiment of humour or comic sentiment), (3) *Karun-rasa* (pathos or tragic sentiment), (4) *Raudra-rasa* (sentiment of rage or fury), (5) *Vira-rasa* (heroic sentiment), (6) *Bhayanak-rasa* (sentiment of fear or horror), (7) *Vibhatsa-rasa* (sentiment of disgust), (8) *Adbhut-rasa* (sentiment of wonder), and (9) *Shant-rasa* (sentiment of tranquillity). But in this *Sutra*, first in the order is heroism (*Vira-rasa*). A new sentiment is included as *Vridanak-rasa* (sentiment of shame or bashfulness). This sentiment does not find any mention in any other treatise on poetics. The commentator (*Churni* and *Tika*) Haribhadra has given no clarification in this context. But Acharya Maladhari Hemchandra has explained that horrifying things evoke the sentiment of fear or horror. In this work *Bhayanak-rasa* is included in *Raudra-rasa* (sentiment of rage or fury) and *Vridanak-rasa* is described as a different sentiment.

SAMUDRIK SHAASTRA

With the classification of standard and non-standard structure and dimensions of the human body, signs of good, mediocre or average and bad persons based on body marks have also been mentioned (aphorism 334). For instance, a person whose height is 108 times the finger-width, who has body-marks of conch shell, bullock etc. has moles and spots on his body and who has virtues like sense of forgiveness, is called an excellent person. A person whose height is 104 times the finger-width is average and a person whose height is 96 times the finger-width is a bad type. These details help one know about the information contained in the works of that period on interpreting body marks.

Similarly *Sutras* 653 and 654 include information about how on the basis of the observation of the sky and the position of stars and planets prediction was made about likely rainfall and its intensity, good or poor crops and other such forecasts.

BELIEFS AND TRADES

Aphorism 21 gives names of various beliefs on the basis of ways of dressing and other habitual activities prevalent during that period. Some of these are *Charak, Cheerak, Charmakhandik, Gautam, Gauvratik* etc.

The mention of caste names derived from business or profession indicates that in medieval India caste was based on trade or profession and was not by birth. Some caste names based on trade and profession are—*Dausik* or weavers, *Sautrik* or yarn-makers, *Tantrik* or musicians playing stringed instruments, *Munjakar* or rope makers, *Vardhkar* or cobblers, *Pustkar* or paper manufacturers and writers, *Dantkar* or those working with ivory and other bones. (aphorism 304)

From the names of performing artists it is revealed that, like in present times, there were expert gymnasts and acrobats during that period also. They presented entertaining performances for the masses by their acrobatics and practiced movements of different parts of their body. Some of these were *Nartak* or a dancer, *Jalla* or one who dances on a string, *Malla* or a wrestler, *Plavak* or a diver, *Lankh* or one who shows his acrobatic skills on a thick pole. (aphorism 304)

Many weights and measures were in use during that period to weigh or measure food-grains, liquids, minerals (aphorisms 320 to 344). The description of weights and measures brings out a vivid picture of the fairly developed state of the then prevalent trading practices.

Thus, *Anuyogadvar Sutra* contains not only philosophical and religious informations, but also abundant information on society and culture. This provides information about the highly development state of art, literature, trade and commerce during that period.

THE NAME AND THE PERIOD OF THE COMPILER

In Jain *Agam, Anuyogadvar Sutra* and *Nandi Sutra* are the most recent.

The question as to who is the author of *Anuyogadvar Sutra* has not yet been satisfactorily answered. Some scholars are of the view that till the time of Arya Vajra Swami, the *Agams* were studied without any classification into different *Anuyogas*. But his chief disciple Arya Rakshit Suri, the twentieth head of the order since *Bhagavan* Mahavir (570 to 597 A.N.M.), classified the *Agams* into four *Anuyogas*. He

realized that the understanding and the power of retention of students of *Agams* has considerably decreased and this inspired him to make this classification. Therefore, he is considered to be the person who classified the *Agams* for the first time. But there is no evidence to establish that he was also the author of *Anuyogadvar Sutra*. There is also no evidence even to contradict this. Therefore, historians and research scholars have accepted Arya Rakshit, the *Anuyoga* classifier, as the author of *Anuyogadvar Sutra*. The period of Arya Rakshit is sixth century after the nirvana of Mahavir (A.N.M.). The period of writing of this text is believed to be 570-584 A.N.M. or 114 to 127 Vikram Samvat or 57 to 70 A.D. Renowned scholars and researchers of *Agams*, Muni Punyavijai Ji, Muni Jambuvijai Ji and Acharya Mahaprajna Ji have unanimity on this conclusion.

COMMENTARIES OF ANUYOGADVAR SUTRA

Three ancient commentaries on *Anuyogadvar Sutra* are available. There is no *Niryukti* on it.

Churni—The language of *Churni* is Prakrit. Its author is Jinadasgani Mahattar who lived in the seventh century of the Vikram era.

Commentary (Vritti) by Haribhadra—Haribhadra Suri is a famous and serious commentator of *Agams*. He authored detailed commentaries on *Avashyak Sutra* and *Dashavaikalik Sutra*. His commentaries on *Nandi Sutra* and *Anuyogadvar Sutra* are brief. His period is believed to be eighth century of the Vikram calendar.

Commentary (Vritti) by Maladhari—After Haribhadra Suri, Acharya Maladhari Hemchandra has written a much detailed commentary on *Anuyogadvar Sutra*. His period is twelfth century of the Vikram calendar.

THIS SECOND PART

The subject of *Anuyogadvar Sutra* is very complex. It is very difficult to understand it without elaboration. Even with brief elaboration it is being published in two parts. In the first part, published last year, the portion up to *Sutra* 262, namely *nava rasa*, in the chapter of Nava Naam has been covered. The later portion starting from Das Naam is included in the second part. This also contains discussions on many interesting subjects like, *Pramana* (validation), *Naya* (viewpoints), *Nikshep* (attribution) etc.

As explained, this scripture is not based on just one subject. This is, in fact, a work that explains the system and procedure of elaborating scriptures. This contains a variety of topics including poetic sentiments, rhetoric, grammar, astrology, logics, perspectives, validation, time, physical and mental states etc. Each one of these topics have been discussed in details covering its categories and sub-categories. It also has a unique style of presentation. Some of the topics discussed here are also available in other sources. For example the discussion on *Avagahana* (occupation) and *Sthiti* (duration) is also available in *Prajnapana Sutra;* description of *Kaal* (time) and *Palyopam* (metaphoric time) is also available in *Jambudveep Prajnapti* and *Bhagavati Sutra.* But here all this information is compiled in a well defined order.

The discussions on *Pramana* (validation) and *Kaal* (time) are very wide in scope and are highly informative as well as interesting. I have taken care to provide greater details in the elaboration wherever needed.

BASIS OF THIS EDITION

After studying many commentaries on it, a simple and easily intelligible prose style has been adopted for its translation and elaborations. Further, the elaboration is of a medium order because a detailed elaboration would have made it voluminous.

The theme and style of *Anuyogadvar Sutra* is slightly different from those of other *Agams.* It is not easy to understand this work because it has abundance of technical terms. Therefore care has been taken to provide meanings and definitions of technical terms alongwith the translation and elaboration using different font. As all such terms do not have equivalent terms in English, the original term has been given in roman script with explanatory translation in parenthesis. This may appear cumbersome at first glance but should be more convenient than repeatedly consulting a glossary at the end of the book.

The following books have been consulted for translation and elaboration—

The first head of Shraman Sangh, Jain Agam Ratnakar, Acharya Samrat Shri Atmaram Ji Maharaj was the first author of a Hindi commentary on *Anuyogadvar Sutra* based on ancient commentaries. Its style is simple and can be easily understood. It was published in two parts. The first part was published by Shvetambar Sthanakavasi Jain

Conference, Mumbai in 1931 A.D. and the second part was published from Patiala. But at present, its availability is extremely difficult.

Shri Jnana Muni Ji, the learned disciple of Acharya Samrat Shri Atmaram Ji who is a great scholar of *Agamic* literature, re-edited the commentary of Acharya Shri by elaborating it further. It has thus become almost a new treatise on *Anuyogadvar Sutra*. It was published with the caption—*Atma Jnana Piyush Varshini Tika*. It was edited by Muni Shri Nemichand Ji. It is available in two parts and is an evidence of the profound knowledge of the commentator. This work has been taken as the primary reference book for the present edition.

Anuyogadvar Sutra translated by Shri Kewal Muni under the direction of Yuvacharya Shri Madhukar Muni and revised by Shri Shobha Chand Bharilla, published by Agam Samiti, Beavar, has also been a useful reference work for the text as well as commentary.

The commentary by Acharya Mahaprajna published under the title ***Anuogadaraim*** from Jain Vishvabharati, Ladnu has provided valuable references for the commentary.

The English translation titled ***'Anuogadaraim'*** translated by Taiken Hanaki was also consulted, specially while finalizing English terminology.

In addition to all these, recently published *'Anuyogadvar Sutram, Churni-Vivritti-Vritti Vibhushitam* (Part 1 and 2), corrected and edited by the profound and renowned researcher of *Agams* and scholar of *Agamic* knowledge, saint Jambuvijai Ji Maharaj, has been extremely useful in correcting and properly interpreting the original text and studying the original references from commentaries, *Churni* etc. In order to properly understand the complex portions the associate editor, Srichand Surana 'Saras', personally contacted Muni Ji and sought clarifications. Muni Ji is very devoted to studies of *Agams* and is a broad-minded scholar. He explained the difficult portions of the text with affection and care. We are highly indebted to him. We also express our gratitude to all aforesaid scholars and saints whose laborious and scholarly commentaries and works have been of great help in the editing of this book.

Even after leaving his earthly body, the blessings of my revered Gurudev, Uttar Bharatiya Pravartak Bhandari Shri Padma Chandra Ji Maharaj, have always inspired and directed my activities. To express gratitude to him is my humble duty.

In the editing of this *Sutra*, Srichand Surana 'Saras' has put in admirable efforts and strenuous work. For the English translation Shri Surendra Bothara has made a commendable contribution with all the knowledge and experience he has gained through translating many of the *Agams* published in this series. A great care has been taken to find appropriate words and terminology for the technical terms in English language. However, as it is still an evolving field forbearance of readers is solicited for any mistake and misinterpretation. Shri Raj Kumar Jain, a devoted *shravak* well versed with *Agams* and having a command over English language, has provided valuable services in the form of editorial and translation advise by going through the final proofs of the book. It took hard and continuous efforts lasting over a period of two years to complete this translation and commentary in Hindi and English. Still in case, at any place something has been mentioned against the purport of the scripture or not in line with the tradition, I sincerely feel and convey—**'Micchami dukkadam'** (May my misdeeds be undone). I also request the scholarly readers to oblige us with their advice and suggestions.

To prepare illustrations concerning *Anuyoga* was also difficult as compared to illustrating other *Agams*. In order to properly elucidate the subject with examples, some of them have been selected from commentaries (*Tika* and *Bhashya*) and translations of this as well as other *shaastras* and others from commonly used popular analogies. This should help the reader and the listener properly understand the underlying idea of the *Sutra*. Still in case any example is found unsuitable or improper the experts in the field may kindly send their suggestions to us.

I once again express my heartfelt gratitude for all those who have contributed towards the publication of this work.

—Up-pravartak Amar Muni

अनुक्रमणिका

CONTENTS

दसनाम–प्रकरण

The Discussion on Das Naam

प्रमाण–प्रकरण		The Discussion on Pramana	

अनुयोगद्वार सूत्र

ANUYOGADVAR SUTRA

दसनाम-प्रकरण
THE DISCUSSION ON DAS NAAM

दसनाम

२६३. से किं तं दसनामे ?

दसनामे दसविहे पण्णत्ते। तं जहा–१. गोण्णे, २. नोगोण्णे, ३. आयाणपदेणं, ४. पडिवक्खपदेणं, ५. पाहण्णयाए, ६. अणाइसिद्धंतेणं, ७. नामेणं, ८. अवयवेणं, ९. संजोगेणं, १०. पमाणेणं।

२६३. (प्र.) दसनाम क्या हैं ?

(उ.) दसनाम के दस प्रकार कहे हैं। जैसे–(१) गौणनाम, (२) नोगौणनाम, (३) आदानपद से होने वाला नाम, (४) प्रतिपक्षपद से होने वाला नाम, (५) प्रधानता से होने वाला नाम, (६) अनादिसिद्धान्त से होने वाला नाम, (७) नाम से होने वाला नाम, (८) अवयव से होने वाला नाम, (९) संयोग से होने वाला नाम, तथा (१०) प्रमाण से होने वाला नाम।

विवेचन–वस्तु की पहचान के लिए नाम-संज्ञा की आवश्यकता होती है। नाम रखने के अनेक प्रकार हैं। यहाँ पर दसनाम में उनकी चर्चा की गई है।

DAS NAAM

263. (Q.) What is this *Das naam* (Ten-named) ?

(Ans.) There are ten types of *Das naam* (Ten-named). They are—(1) *Gauna naam* (attributive name), (2) *Nogauna naam* (non-attributive name), (3) *Adanapadena naam* (name derived from the first word or phrase of a text), (4) *Pratipakshapadena naam* (antonymous name or antithetically derived name), (5) *Pradhanápadena naam* (name in accordance with salient features), (6) *Anadisiddhantena naam* (name conforming to eternality), (7) *Namna naam* (name derived from a name), (8) *Avayavena naam* (name derived from a component),

(9) *Samyogena naam* (name derived from association), and (10) *Pramanena naam* (authenticated or validated name).

Elaboration—Name is required to identify a thing. There are numerous ways of deriving a name. These have been discussed here under the title *Das naam* (Ten-named).

(१) गौणनाम

२६४. से किं तं गोण्णे ?

गोण्णे–खमतीति खमणो, तपतीति तपणो, जलतीति जलणो, पवतीति पवणो। से तं गोण्णे।

२६४. (प्र.) गौणनाम क्या है ?

(उ.) गौणनाम अथवा गुणनिष्पन्ननाम (जो नाम किसी गुण के कारण पड़ा हो) इस प्रकार है-जो क्षमा करता है इसलिए 'क्षमण' है, तपता है इसलिए 'तपन' (सूर्य) है, जलता है इसलिए 'ज्वलन' (अग्नि) है और पावन करता है या बहता है इसलिए 'पवन' है। यह गौणनाम का वर्णन हुआ।

(1) GAUNA NAMA

264. (Q.) What is this *Gauna naam* (attributive name) ?

(Ans.) The (examples of) *Gauna naam* (attributive name or name derived or evolved out of and in conformity with the attributes) is as follows—He who forgives (*kshama*) is forgiver (*kshaman*), that which heats (*tapate*) is heater (*tapan*), that which burns (*jvalate*) is burner or fire (*jvalan* or *agni*), that which blows or purifies (*pavane*) is wind or purifier (*pavan* or *pa ıvan*).

This concludes the description of *Gauna naam* or attributive name.

(२) नोगौणनाम

२६५. से किं तं नोगोण्णे ?

नोगोण्णे–अकुंतो सकुंतो, अमुग्गो समुग्गो, अमुद्दो समुद्दो, अलालं पलालं, अकुलिया सकुलिया, नो पलं असतीति पलासो, अमाइवाहए माइवाहए, अबीयवावए बीयवावए, नो इंदं गोवयतीति इंदगोवए। से तं नोगोण्णे।

२६५. (प्र.) नोगौणनाम क्या है ?

(उ.) नोगौण (गुण शून्य) नाम इस प्रकार है–

कुन्त–भाला से रहित होने पर भी पक्षी को 'सकुन्त' कहना।

मुद्ग–मूँग धान्य से रहित होने पर भी पेटी को 'समुद्ग' कहना।

मुद्रा–अँगूठी से रहित होने पर भी सागर को 'समुद्र' कहना।

लाल–लार से रहित होने पर भी विशेष प्रकार की घास को 'पलाल' कहना।

कुलिका–भित्ति (दीवार) से रहित होने पर भी पक्षिणी को 'सकुलिका' कहना।

पल–माँस न खाने पर भी ढाक वृक्ष को 'पलाश' कहना।

माति–माता को कन्धों पर वहन न करने पर भी कीट विकलेन्द्रिय जीवविशेष को 'मातृवाहक' नाम से कहना।

बीज को नहीं बोने वाले जीवविशेष कीट को **'बीजवापक'** कहना।

इन्द्र की गाय का पालन न करने पर भी **'वीर वधूटी'** (बरसात में होने वाला कीट विशेष) को 'इन्द्रगोप' कहना। यह नोगौणनाम के उदाहरण हैं। यह नोगौणनाम का वर्णन हुआ।

(2) NOGAUNA NAAM

265. (Q.) What is this *Nogauna naam* (non-attributive name) ?

(Ans.) The (examples of) *Nogauna naam* (non-attributive name or name not in conformity with the attributes) is as follows—

Kunt (a spear like weapon)—A bird is called *sakunt* (with *kunt*) although it is without a *kunt.*

Mudga (kidney beans)—A casket is called *samudga* (with *mudga)* although it is without *mudga.*

Mudra (finger-ring)—A sea is called *samudra* (with *mudra)* although it is without a *mudra.*

Laala (saliva)—Chaff or a type of grass is called *palaala* (with *laala)* although it is without *laala.*

Kulika (wall)—A bird is called *sakulika* (with *kulika*) although it is without a *kulika* (a wall).

Palash (that which consumes flesh)—A specific tree is called *Palash* (*Butea frondosa*) although it does not consume flesh (*pal*).

Matrivahak (one who carries its mother)—A specific insect is called *matrivahak* (white ant) although it does not carry its mother.

Bijavapak (one that sows seed)—A specific insect is called *bijavapak* although it does not sow seeds.

Indragope (cowherd of Indra, the king of gods)—A specific insect is called *Indragope* (a beetle) although it does not look after the cows of Indra.

This concludes the description of *Nogauna naam* or non-attributive name.

(३) आदानपदेननाम

२६६. से किं तं आयाणपदेणं ?

आयाणपदेणं–आवंती चाउरंगिज्जं आहत्तहियं अद्दइज्जं असंखयं जण्णइज्जं पुरिसइज्जं (उसुकारिज्जं) एलइज्जं वीरियं धम्मो मग्गो समोसरणं जमईयं। से तं आयाणपदेणं।

२६६. (प्र.) वह आदानपदेननाम क्या है ?

(उ.) आदानपद (आदिपद) से होने वाला नाम (संज्ञा), जैसे–आवंती, चातुरंगिज्जं, असंखयं, आहत्तहियं, अद्दइज्जं, जण्णइज्जं, पुरिसइज्जं (उसुकारिज्जं), एलइज्जं, वीरियं, धम्मं, मग्गं, समोसरणं, जमईयं इत्यादि आदि पद से होने वाला नाम आदानपदेननाम है। यह आदानपद का वर्णन हुआ।

विवेचन–जिस आदिपद या गाथा से जो शास्त्र, अध्ययन या प्रकरण प्रारम्भ होता है, उसे 'आदानपद' कहते हैं। उसके आधार से रखे जाने वाले नाम 'आदानपदेननाम' हैं। इसके उदाहरण हैं–

आवंती–यह आचारांगसूत्र के पाँचवें अध्ययन का नाम है। उसके प्रारम्भ में आये **'आवंती केयावंती'** पद के कारण है।

चाउरंगिज्जं–यह उत्तराध्ययनसूत्र के तीसरे अध्ययन का नाम है जो अध्ययन के प्रारम्भ में 'चत्तारि परमंगाणि' गाथा के आधार से प्रचलित है।

असंखयं–यह उत्तराध्ययनसूत्र के चतुर्थ अध्ययन का नाम है।

आहत्तहियं–'जह', 'तह' इन दो पदों के कारण से यह सूत्रकृतांगसूत्र के तेरहवें अध्ययन का नाम है।

अद्दइज्जं–सूत्रकृतांग के द्वितीय श्रुतस्कन्ध के छठे अध्ययन की पहली गाथा के 'अद्दइयं' पद के आधार से इस अध्ययन का नाम 'अद्दइज्जं' आर्द्रकीय है।

जण्णइज्जं–यज्ञीय–उत्तराध्ययन के पच्चीसवें अध्ययन का नाम है।

पुरिसइज्जं (उसुकारिज्जं)–यह उत्तराध्ययन के चौदहवें अध्ययन का नाम है।

एलइज्जं–एडकीय–यह उत्तराध्ययन के सातवें अध्ययन का नाम है।

वीरियं–सूत्रकृतांगसूत्र के आठवें अध्ययन का नाम 'वीरियं' है।

धम्मज्झयणं–नौवें अध्ययन का नाम 'धम्मज्झयणं' है।

मग्गज्झयणं–ग्यारहवें अध्ययन की आदि में 'मग्ग' शब्द होने से उस अध्ययन का नाम 'मग्गज्झयणं' है।

समोसरणं–सूत्रकृतांगसूत्र के बारहवें अध्ययन के प्रारम्भ की गाथा में 'समोसरणाणिमाणि' पद है। इसी के आधार से उस अध्ययन का नाम 'समोसरणज्झयणं' है।

जमईयं–पन्द्रहवें अध्ययन की पहली गाथा में 'जमईयं' पद होने से अध्ययन का नाम 'जमईयं' है।

इसी प्रकार अन्य नामों को आदानपदनिष्पन्नता समझना चाहिए।

(3) ADANAPADENA NAAM

266. (Q.) What is this *Adanapadena naam* (name derived from the first word or phrase of a text) ?

(Ans.) The (examples of) *Adanapadena naam* (name derived from the first word or phrase of a text) are as follows—*Avanti, Chaturangijjam, Asankhayam, Ahattahiyam, Addaijjam, Jannaijjam, Purisaijjam (Usukarijjam), Elaijjam, Viriyam, Dhammam, Maggam, Samosaranam, Jamaiyam* etc.

This concludes the description of *Adanapadena naam* or name derived from the first word or phrase of a text.

Elaboration—The first word or phrase of a book, chapter or section is called *adana pad*. The name that is made up of this first word or phrase is called *Adanapadena naam*. Some examples are—

Avanti—The name of the fifth chapter of *Acharanga Sutra* is *Avanti*. This has been derived from the first phrase of the chapter that reads—*'Avanti keyavanti'*.

Chaturangijjam—This is the name of the third chapter of *Uttaradhyayan Sutra*. The first phrase of this chapter reads—*'Chattari Paramangani'*.

Asankhayam—The name of the fourth chapter of *Uttaradhyayan Sutra*.

Ahattahiyam—Based on the first two words *Jaha* and *Taha*, this is the name of the thirteenth chapter of *Sutrakritanga Sutra*.

Addaijjam—This is the name of the sixth chapter of the second part of *Sutrakritanga Sutra*. This is derived from the word *addaiyam* from the first verse of this chapter.

Jannaijjam—This is the name of the twenty fifth chapter of *Uttaradhyayan Sutra*.

Purisaijjam (Usukarijjam)—This is the name of the fourteenth chapter of *Uttaradhyayan Sutra*.

Elaijjam—This is the name of the seventh chapter of *Uttaradhyayan Sutra*.

Viriyam—This is the name of the eighth chapter of *Sutrakritanga Sutra*.

Dhammajjhayanam—This is the name of the ninth chapter of *Sutrakritanga Sutra*.

Maggajjhayanam—This is the name of the eleventh chapter of *Sutrakritanga Sutra* because it begins with the word *'Magga'*.

Samosaranam—In the first verse of the twelfth chapter of *Sutrakritanga Sutra* there is a phrase—*Samosarananimani*. Based on this the chapter is called *Samosaranajjhayanam*.

Jamaiyam—This is the name of the fifteenth chapter of *Sutrakritanga Sutra*. This is because there is the word *Jamaiyam* in the first verse of this chapter.

The same rule should be applied to find other such *Adanapadena naams* or names derived from the first word or phrase of a text.

(४) प्रतिपक्षपदेननाम

२६७. से किं तं पडिवक्खपदेणं ?

पडिवक्खपएणं नवेसु गामाऽऽगर–णगर–खेड–कब्बड–मडंब–दोणमुह–पट्टणाऽऽसम–संबाह–सन्निवेसेसु निविस्समाणेसु असिवा सिवा, अग्गी सीयलो, विसं महुरं, कल्लालघरेसु अंबिलं साउयं, जे लत्तए से अलत्तए, जे लाउए से अलाउए, जे सुंभए से कुसुंभए, आलवंते विवलीयभासए। से तं पडिवक्खपएणं।

२६७. **(प्र.)** प्रतिपक्षपदेननाम क्या है ?

(उ.) प्रतिपक्षपद (विरोधी गुण) के कारण से होने वाला नाम इस प्रकार है–नवीन ग्राम, आकर, नगर, खेट, कर्बट, मडंब, द्रोणमुख, पट्टन, आश्रम, संबाह और सन्निवेश आदि में प्रवेश करने अथवा बसाये जाने के अवसर पर अशिवा (शृगाली, सियारनी) को 'शिवा' कहा जाता है। कहीं पर अग्नि को शीतल और विष को मधुर, कलाल के घर में 'अम्ल' को स्वादु कहा जाता है। इसी प्रकार रक्त वर्ण से रंगे हुए को अलक्तक–(आलता या महावर), लाबु को अलाबु, जो सुंभक (शुभ वर्णयुक्त चमकदार) है उसे कुसुंभक (खराब रंग वाला) कहना और विपरीतभाषक–भाषक से विपरीत अर्थात् असम्बद्ध प्रलापी को 'अभाषक' कहा जाना। यह सब प्रतिपक्षपदनिष्पन्न नाम जानना चाहिए।

विवेचन–प्रतिपक्षपदेननाम का अर्थ है किसी में वह गुण नहीं होने पर भी अर्थात् उसका विरोधी–विपरीत गुण होने पर भी उसे उस नाम से पुकारना।

उदाहरण–सियारनी का नाम अमंगल सूचक 'अशिवा' है किन्तु ग्राम आदि की बसावट के समय 'अशिवा' शब्द अमांगलिक होने से उसे 'शिवा' कहने की रूढ़ि चल पड़ी है।

मदिरा का स्वाद अम्ल होता है, पर तु माना जाता है कि कलाल के घर में 'अम्ल' कहने से मदिरा विकृत हो जाती है इसलिए उसे 'स्वादु' कहकर पुकारते हैं।

इसी प्रकार लाबु का अर्थ है पात्र, तुम्बा या लौकी, किन्तु तुम्बा पानी आदि रखने के काम आने वाला पात्र होने पर भी उसे 'अलाबु' कहा जाता है।

कोई असम्बद्ध प्रलाप करता है तो लोग कहते हैं यह बोलना नहीं जानता। बोलता तो है, फिर भी उसे 'बोलना नहीं जानता' इस प्रकार भाषक को अभाषक कहना। यह प्रतिपक्षपदेननाम का वर्णन है।

प्राचीन समय में ग्राम आदि शब्दों के अर्थ इस प्रकार किये जाते थे–

ग्राम–चारों ओर से काँटों की बाड़ से घिरी बस्ती।

आकर–जहाँ पर सोने आदि की खानें हों।

नगर–जिस बस्ती में कोई कर आदि नहीं लगता हो।

खेड–खेट (खेड़ा)–धूल के कच्चे परकोटे से घिरी बस्ती।

कब्बड–कर्बट–गन्दी या ऊबड़-खाबड़ बसी बस्ती।

मडंब–जिसके चारों ओर दूर-दूर तक कोई बस्ती न हो।

द्रोणमुख–जहाँ जाने के लिए जल और स्थल दोनों मार्ग हों।

पत्तन–व्यापार की केन्द्र मण्डी।

आश्रम–तपस्वियों का निवास स्थान।

संबाह–पहाड़ी पर बसा किलेनुमा ग्राम।

सन्निवेश–नगर के समीप का उपनगर जहाँ ग्वालों आदि की बस्ती होती थी।

(अनुयोगद्वार मलधारी वृत्ति)

(4) PRATIPAKSHAPADENA NAAM

267. (Q.) What is this *Pratipakshapadena naam* (antithetically derived name or antonymous name) ?

(Ans.) The (examples of) *Pratipakshapadena naam* (antithetically derived name or antonymous name or a name having a meaning opposite to the attributes of the thing bearing that name) are as follows—A she-jackal (which is normally considered inauspicious or *ashiva*) is called *shiva* (which means auspicious) on the occasion of entering or beginning to settle a new *gram* (village), *aakar* (mine), *nagar* (city), *khet* (kraal), *karbat* (untidy and ragged settlement), *madamb* (a remote town), *dronmukh* (a city connected by waterways and roads both), *pattan* (a market city or commercial city), *ashram* (hermitage), *sambaha* (a castle like settlement atop hill), *sannivesh* (a suburb near a city where cowherds and other such families lived) etc. In the same way at some place or on some occasion *agni* (fire) is called *sheetal* (cool) and *vish* (poison) is called *madhur* (sweet), and at a distillers house *amla* (bitter and sour) is called *svadu* (tasty). Also, *laktak* (coloured red) is called *alaktak* (not red), *labu* (gourd or pot made of gourd) is called *alabu* (non-gourd), *shumbhak* (colourful) is called *ashumbhak* (discoloured), and *viparit-bhasi* (chatterer) is called an *abhashi* (one who does not speak, a mute).

This concludes the description of *Pratipakshapadena naam* (antithetically derived name or antonymous name).

Elaboration—*Pratipakshapadena naam* means to call a thing by a name representing some specific attributes in spite of the absence of those attributes or in the presence of opposite attributes (antithetically derived name or antonymous name).

For example, a she-jackal is generally called *ashiva* which means inauspicious. However, in order not to utter an inauspicious word at the time of auspicious occasion like founding a settlement, there is a tradition of calling it *shiva*, which means auspicious.

Beverages have a pungent and bitter taste. However, because of the superstition that if, in the house of the distiller, it is called *amla* (bitter and pungent) it gets spoiled, it is called *svadu* or tasty.

In the same way *labu* means a pot or a gourd. Although a gourd-pot is used to keep liquids, it is still called *alabu* (non-gourd or not a pot).

A person who utters meaningless jumble or speaks incoherently draws a remark that he is unable to speak. Thus although he speaks he is called *abhashak* (a mute). These are some examples of *Pratipakshapadena naam* or antithetically derived name.

In ancient times various terms used for different types of settlements were defined as follows—

gram—a village having a fencing of thorny bushes.

aakar—a settlement near mines of gold or other minerals.

nagar—a large city-settlement where no taxes are levied.

khet—kraal or a settlement surrounded by a temporary mud wall.

karbat—untidy and ragged settlement.

madamb—a remote town far away from any other settlement.

dronmukh—a city connected by waterways and roads both.

pattan—a market city or commercial city.

ashram—hermitage.

sambaha—a castle like settlement atop hill.

sannivesh—a suburb near a city where cowherds and other such families live. (*Maladhari Vritti of Anuyogadvar*)

(५) प्रधानपदेननाम

२६८. से किं पाहण्णयाए ?

पाहण्णयाए असोगवणे सत्तवण्णवणे चंपकवणे चूयवणे नागवणे पुन्नागवणे उच्छुवणे दक्खवणे सालवणे। से तं पाहण्णयाए।

२६८. (प्र.) प्रधानता से होने वाला नाम क्या है ?

(उ.) प्रधानपद-मुख्यता के कारण होने वाला नाम इस प्रकार है। जैसे-अशोकवन, सप्तपर्णवन, चंपकवन, आम्रवन, नागवन (नाग जाति के सफेद फूलों के वृक्ष), पुन्नागवन, इक्षुवन, द्राक्षावन, शालवन। ये सब प्रधानपदनिष्पन्ननाम हैं।

विवेचन-जिस स्थान पर जिसकी प्रचुरता-बहुलता हो वह 'प्रधान' कहा जाता है।

जैसे-किसी वन में अन्य वृक्ष भी लगे हैं, किन्तु अशोक वृक्षों की बहुलता होने से उसे 'अशोकवन' नाम से पुकारा जाता है। इसी प्रकार सप्तपर्णवन, आम्रवन आदि नामों के लिए भी यही कारण जानना चाहिए।

(5) PRADHANAPADENA NAAM

268. (Q.) What is this *Pradhanapadena naam* (name in accordance with salient features) ?

(Ans.) The (examples of) *Pradhanapadena naam* (name in accordance with salient features) are as follows—*Ashoka-vana* (*Ashoka* garden), *Saptaparn-vana* (*Alstonia scholaris* garden), *Champak-vana* (a garden of *Michelia champacca* or a type of sweet plantain), *Amra-vana* (mango orchard), *Naag-vana* (*Naag* garden), *Punnaag-vana* (*Punnag* garden), *Ikshu-vana* (a sugar-cane plantation), *Draksha-vana* (grape garden), *Shaal-vana* (sal garden) etc.

This concludes the description of *Pradhanapadena naam* or name in accordance with salient features.

Elaboration—*Pradhan* means chief or main or predominant. Naming a thing or a place after the predominant feature or attribute is called *Pradhanapadena naam* or name in accordance with salient features.

For example, there are many trees in a garden but because of the abundance of *Ashoka* trees it is called *Ashoka* garden. The same holds good for other names of trees or plants mentioned in this aphorism.

(६) अनादिसिद्धान्तेननाम

२६९. से किं तं अणाइसिद्धंतेणं ?

अणाइसिद्धंतेणं धम्मत्थिकाए अधम्मत्थिकाए आगासत्थिकाए जीवत्थिकाए पोग्गलत्थिकाए अद्धासमए। से तं अणाइसिद्धंतेणं।

२६९. (प्र.) अनादिसिद्धान्तनिष्पन्ननाम क्या है?

(उ.) अनादिसिद्धान्तनिष्पन्ननाम (अनादिकाल से जिसका नाम आगम-सम्मत हो) इस प्रकार है-धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्‌गलास्तिकाय, अद्धासमय। यह अनादिसिद्धान्त से होने वाले नाम का स्वरूप है।

(6) ANADISIDDHANTENA NAAM

269. (Q.) What is this *Anadisiddhantena naam* (name conforming to eternality)?

(Ans.) The (examples of) *Anadisiddhantena naam* (names that are accepted in *Agam* or the canon since time immemorial or name conforming to eternality) are as follows—*Dharmastikaya* (motion entity), *Adharmastikaya* (rest entity), *Akashastikaya* (space entity), *Jivastikaya* (life entity), *Pudgalastikaya* (matter entity), *Addhakaal* (time).

This concludes the description of *Anadisiddhantena naam* or name conforming to eternality.

(७) नाम्नानाम

२७०. से किं तं नामेणं ?

नामेणं पिउपियामहस्स नामेणं उन्नामियए। से तं नामेणं।

२७०. (प्र.) नाम से होने वाला नाम क्या है?

(उ.) जो 'नाम' नाम से प्रसिद्ध होता है, पिता या पितामह अथवा पिता के पितामह (दादा) आदि के नाम से प्रसिद्ध होता है। यह नाम से होने वाला नाम है।

विवेचन-जैसे किसी के पिता, पितामह आदि 'बन्धुदत्त' नाम से प्रख्यात हुए थे। उन्हीं के नाम से उनके पौत्र आदि का भी बंधुदत्त नाम से प्रसिद्ध होना नामनिष्पन्ननाम है। इतिहास प्रसिद्ध नौ नंद, विक्रमादित्य आदि राजाओं के नाम इसी परम्परा को सूचित करते हैं।

(7) NAMNA NAAM

270. (Q.) What is this *Namna naam* (name derived from a name)?

(Ans.) *Namna naam* (name derived from a name) is the name derived from the name of another person including father and grandfather.

This concludes the description of *Namna naam* or name derived from a name.

Elaboration—For example the father or grandfather of a person became famous by his name *Bandhudatta.* Being his son or grandson, when this person and even his descendents are popularly known by the name *Bandhudatta,* it would be called a *Namna naam* or name derived from a name. Historical names like the nine Nandas, king Vikramaditya etc. are examples of this tradition.

(८) अवयवेननाम

२७१. से किं तं अवयवेणं ?

अवयवेणं–(गाहा)

> **सिंगी सिही विसाणी दाढी, पक्खी खुरी णही वाली।**
>
> **दुपय चउप्पय बहुपय, णंगूली केसरी ककुही॥१॥**
>
> **परियरबंधेण भडं जाणेज्जा, महिलियं निवसणेणं।**
>
> **सित्थेण दोणपागं, कविं च एगाइ गाहाए॥२॥**

से तं अवयवेणं।

२७१. (प्र.) अवयव से होने वाला नाम क्या है?

(उ.) अवयवनिष्पन्ननाम (अवयव के आधार पर होने वाले) का स्वरूप इस प्रकार है। जैसे–शृंगी (सींग होने से), शिखी (जटा होने से), विषाणी (नोंकदार दाँतों वाला), दंष्ट्री (दाढ़ों वाला), पक्षी (पाँव या पंख वाला), खुरी, नखी (नुकीले नखों वाला), बाली (बालों वाला), द्विपद, चतुष्पद, बहुपद, लांगुली (लम्बी पूँछ वाला), केशरी (गर्दन पर बाल वाला), ककुदी (कुण्ड या थूई वाला सांड़) आदि॥१॥

इसके अतिरिक्त परिकरबंधन–विशिष्ट रचनायुक्त कवच व बख्तर आदि धारण करने से योद्धा पहचाना जाता है। घघरी आदि वस्त्रों को पहनने से महिला पहचानी जाती है। एक धान्य कण पकने से द्रोणपरिमित (पूरे घड़े का अन्न) अन्न का पकना और लालित्य आदि गुणों से युक्त एक ही गाथा सुनने से कवि की पहचान हो जाती है॥२॥

यह सब अवयव से होने वाले नाम हैं।

विवेचन—किसी वस्तु, भाग, अवयव अथवा अंग के नाम से होने वाले उस पूर्ण वस्तु के नाम को अवयवेन नाम कहते हैं। उपरोक्त उदाहरणों का विस्तार निम्न प्रकार है—

सींग होने के कारण हरिण को शृंगी कहते हैं।

शिखा होने कारण मोर को शिखी कहते हैं।

बाहरी दाँत (विषाण) होने के कारण हाथी को विषाणी कहते हैं।

विशाल दाढ़ें (दंष्ट्र) होने के कारण वराह को दंष्ट्री कहते हैं।

पंख होने के कारण चिड़िया को पक्षी कहते हैं।

खुर होने के कारण घोड़े को खुरी कहते हैं।

नख होने के कारण बाघ को नखी कहते हैं।

बाल होने के कारण भेड़ को बाली कहते हैं।

दो पाँव होने के कारण मनुष्य को द्विपद कहते हैं।

चार पाँव होने के कारण चौपायों को चतुष्पद कहते हैं।

अनेक पाँव होने के कारण कीड़े-मकोड़ों को बहुपद कहते हैं।

लम्बी पूँछ होने के कारण लंगूर को लांगुली कहते हैं।

आयर (केशर) होने के कारण सिंह को केशरी कहते हैं।

ककुद् होने के कारण सांड को ककुदी कहते हैं।

(8) AVAYAVENA NAAM

271. (Q.) What is this *Avayavena naam* (name derived from a component)?

(Ans.) The (examples of) *Avayavena naam* (name derived from a component or a part of the whole) are as follows—*Shringi* (having horns), *Shikhi* (having crest or crown), *Vishani* (having tusks), *Danshtri* (having prominent teeth), *Pakshi* (having wings), *Khuri* (having hooves), *Nakhi* (having nails or claws), *Bali* (having hair or fur), *Dvipad* (having two legs), *Chatushpad* (having four legs), *Bahupad* (having many legs), *Languli* (having long tail), *Keshari* (having mane), *Kakudi* (having hump) etc. (1)

Besides these, a warrior is identified by his waistband (or an armour etc.) and a lady by her dress (skirt etc.). A pot full of grain

is declared perfectly cooked by ascertaining one single grain from the pot having been cooked and a poet is identified just by a single eloquent verse. (2)

This concludes the description of *Avayavena naam* or name derived from a component.

Elaboration—The name derived from the name of a component or a part of the whole is called *Avayavena naam* (name derived from a component). The examples mentioned are explained as follows—

A deer is called *Shringi* on account of having horns (*shring*).

A pea-cock is called *Shikhi* on account of having a crest or crown (*shikha*).

An elephant is called *Vishani* on account of having *tusks* (*vishan*).

A wild boar is called *Danshtri* on account of having prominent teeth (*danshtra*).

A bird is called *Pakshi* on account of having wings (*pankh*).

A horse is called *Khuri* on account of having hooves (*khur*).

A tiger is called *Nakhi* on account of having nails or claws (*nakh*).

A sheep is called *Bali* on account of having hair or fur (*baal*).

A biped (man) is called *Dvipad* on account of having two legs (*pad*).

A quadruped (mammal) is called *Chatushpad* on account of having four legs (*pad*).

A multi-ped (insect) is called *Bahupad* on account of having many legs (*pad*).

A long tailed monkey is called *Languli* on account of having a long tail (*langul*).

A lion is called *Keshari* on account of having a mane (*keshar*).

A bull is called *Kakudi* on account of having a hump (*kakud*).

(९) संयोगेननाम

२७२. से किं तं संजोगेणं ?

संजोगे चउव्विहे पण्णत्ते। तं जहा–१. दव्वसंजोगे, २. खेत्तसंजोगे, ३. कालसंजोगे, ४. भावसंजोगे।

२७२. (प्र.) संयोग से होने वाला नाम क्या है?

(उ.) संयोगेननाम-(दो पदार्थों के संयोग की प्रधानता से) चार प्रकार का है, जैसे-(१) द्रव्यसंयोग, (२) क्षेत्रसंयोग, (३) कालसंयोग, तथा (४) भावसंयोग।

(9) SAMYOGENA NAAM

272. (Q.) What is this *Samyogena naam* (name derived from association)?

(Ans.) *Samyogena naam* (name derived due to association of two or more things) is of four kinds—(1) *Dravya samyoga* (association with a substance), (2) *Kshetra samyoga* (association with an area or a place), (3) *Kaal samyoga* (association with time), and (4) *Bhaava samyoga* (association with an attitude).

(१) द्रव्यसंयोगजनाम

२७३. से किं तं दव्वसंजोगे ?

दव्वसंजोगे तिविहे पण्णत्ते। तं जहा-१. सचित्ते, २. अचित्ते, ३. मीसए।

२७३. (प्र.) द्रव्यसंयोग से होने वाला नाम क्या है?

(उ.) द्रव्यसंयोगनाम तीन प्रकार का है, जैसे-(१) सचित्तद्रव्यसंयोग, (२) अचित्तद्रव्यसंयोग, तथा (३) मिश्रद्रव्यसंयोग।

(1) DRAVYA SAMYOGA NAAM

273. (Q.) What is this *Dravya samyoga naam* (name derived due to association with a substance)?

(Ans.) *Dravya samyoga naam* (name derived due to association with a substance) is of three kinds—(1) *Sachitt dravya samyoga* (association with a life-bearing substance), (2) *Achitt dravya samyoga* (association with a non-living substance), and (3) *Mishra dravya samyoga* (association with mixed substances).

२७४. से किं तं सचित्ते ?

सचित्ते गोहिं गोमिए, महिसीहिं माहिसिए, ऊरणीहिं ऊरणिए, उट्टीहिं उट्टीए। से तं सचित्ते।

२७४. (प्र.) सचित्तद्रव्यसंयोग से होने वाला नाम क्या है?

(उ.) सचित्तद्रव्य के संयोग से होने वाला नाम इस प्रकार है, जैसे-गाय जिसके पास हो वह गोमिक (ग्वाला), महिषी (भैंस) जिसके पास हो वह माहिषिक, ऊर्णि (भेड़) जिसके पास हो वह और्णिक और ऊँट पालने वाला औष्ट्रक-उष्ट्रीपाल कहलाता है। यह सचित्तद्रव्यसंयोग से होने वाले नाम हैं।

274. (Q.) What is this *Sachitt dravya samyoga naam* (nàme derived due to association with a life-bearing substance) ?

(Ans.) The (examples of) *Sachitt dravya samyoga naam* (name derived due to association with a life-bearing substance) are as follows—A *Gomik* (owner of cows) is so called because he owns cows (*gau*), a *Mahishik* (owner of she-buffalos) is so called because he owns she-buffalos (*mahishi*), an *Aurnik* (owner of sheep) is so called because he owns sheep (*urni*), and an *Ushtripal* or *Aushtrak* (owner of camels) is so called because he owns camels (*ushtra*).

This concludes the description of *Sachitt dravya samyoga nama* or name derived due to association with a life-bearing substance.

२७५. से किं तं अचित्ते ?

अचित्ते-छत्तेण छत्ती, दंडेण दंडी, पडेण पडी, घडेण घडी, कडेण कडी। से तं अचित्ते।

२७५. (प्र.) अचित्तद्रव्यसंयोग से होने वाला नाम क्या है ?

(उ.) अचित्तद्रव्य के संयोग से होने वाला नाम इस प्रकार है, जैसे-छत्र के संयोग से छत्री, दंड रखने वाला दंडी, पट (कपड़ा) रखने वाला पटी, घट के संयोग से घटी, कट (चटाई) के संयोग से कटी कहलाता है। यह अचित्तद्रव्यसंयोग से होने वाला नाम है।

275. (Q.) What is this *Achitt dravya samyoga naam* (name derived due to association with a non-living substance) ?

(Ans.) The (examples of) *Achitt dravya samyoga naam* (name derived due to association with a non-living substance) are as follows—A *Chhatri* (owner of umbrella) is so called because he owns an umbrella (*chhatra*), a *Dandi* (owner of stick) is so called because he owns a stick (*dand*), a *Pati* (owner of cloth) is so called because he owns some cloth (*pat*), a *Ghati* (owner of pitcher) is so called because he owns a pitcher (*ghat*), and a *Kati* (owner of mattress) is so called because he owns a mattress (*kat*).

अचित्त द्रव्य संयोगज
छत्र रखने वाला छत्री
रथ चलाने वाला रथिक
1
हल जोतने वाला हालिक

चित्र परिचय १

Illustration No. 1

द्रव्य संयोगज नाम के तीन भेद

द्रव्य के संयोग से प्रसिद्ध होने वाले द्रव्य संयोगज नाम तीन प्रकार के हैं--

(१) **सचित्त द्रव्य संयोगज नाम**–सचित्त वस्तु, जैसे–गाय आदि रखने व पालने के कारण गोपिक (ग्वाला), ऊर्णि (भेड़) रखने के कारण और्णिक कहलाता है।

(२) **अचित्त द्रव्य संयोगज नाम**–अचित्त वस्तु, जैसे--छत्र धारण करने वाला छत्री, दण्ड रखने वाला दण्डी कहा जाता है।

(३) **मिश्र द्रव्य संयोगज नाम**–सचित्त-अचित्त दोनों के संयोग से जो नाम प्रसिद्ध होता है, जैसे–हल और बैल दोनों के कारण किसान को हालिक तथा अश्व के संयोग से रथ को हाँकने वाला रथिक कहा जाता है।

-सूत्र २७४-२७६, पृष्ठ १७

THREE KINDS OF DRAVYA SAMYOGA NAAM

Names derived due to association with substances are of three kinds—

(1) Sachitt Dravya Samyoga Naam—Name derived due to association with a life-bearing substance, for example—owner of cows (*gau*) is called a *Goman* and owner of sheep (*urni*) is called *Aurnik*.

(2) Achitt Dravya Samyoga Naam—Name derived due to association with a non-living substance, for example—one who uses an umbrella (*chhatra*) is called a *Chhatri* and one who uses a stick (*dand*) is called a *Dandi*.

(3) Mishra Dravya Samyoga Naam—Name derived due to association with mixed substances, for example—a farmer is called *Halik* because he drives a *hal* (plough with bullocks) and a charioteer is called *Rathik* because he drives a *rath* (chariot with horses).

—*Aphorisms 274-276, p. 17*

This concludes the description of *Achitt dravya samyoga naam* or name derived due to association with a non-living substance.

२७६. से किं तं मीसए ?

मीसए हलेणं हालिए, सकडेणं सागडिए, रहेणं रहिए, नावाए नाविए। से तं मीसे। से तं दव्वसंजोगे।

२७६. (प्र.) मिश्रद्रव्यसंयोग से होने वाला नाम क्या है ?

(उ.) मिश्रद्रव्यसंयोगनिष्पन्ननाम का स्वरूप इस प्रकार है, जैसे–हल (बैल सहित) के संयोग से हालिक (किसान), शकट (बैल सहित गाड़ी) के संयोग से शाकटिक, रथ (घोड़े सहित) के संयोग से रथिक, नाव (जल पर तैरने) के संयोग से नाविक आदि नाम मिश्रद्रव्यसंयोगनाम के उदाहरण हैं।

(इसमें हल अचित्तद्रव्य है तथा हल खींचने वाला बैल सचेतन है, इन दोनों के संयोग से किसान हालिक कहलाता है। इसी प्रकार शाकटिक आदि मिश्रद्रव्यसंयोग के उदाहरण हैं।)

276. (Q.) What is this *Mishra dravya samyoga naam* (name derived due to association with mixed substances) ?

(Ans.) The (examples of) *Mishra dravya samyoga naam* (name derived due to association with mixed substances) are as follows—A *Halik* (plough-man) is so called because he drives a *hal* (plough with bullocks), a *Shakatik* (cart driver) is so called because he drives a *shakat* (cart with bullocks), a *Rathik* (charioteer) is so called because he drives a *rath* (chariot with horses), a *Navik* (boatman) is so called because he runs a *nava* (boat on water). (Here we find a combination of bullocks and plough. In other words, a mixture of living and non-living substances. The same holds true for other examples.)

This concludes the description of *Mishra dravya samyoga naam* or name derived due to association with mixed substances. This also concludes the description of *Dravya samyoga naam* or name derived due to association with substance.

(२) क्षेत्रसंयोगजनाम

२७७. से किं तं खेत्तसंजोगे ?

खेत्तसंजोगे–भारहे एरवए हेमवए एरण्णवए हरिवस्सए रम्मयवस्सए पुव्वविदेहए अवरविदेहए, देवकुरुए उत्तरकुरुए अहवा मागहए मालवए सोरट्ठए मरहट्ठए कोंकणए कोसलए। से तं खेत्तसंजोगे।

२७७. (प्र.) क्षेत्रसंयोग से होने वाले नाम क्या हैं?

(उ.) क्षेत्रसंयोग से होने वाले नाम इस प्रकार हैं–भरत क्षेत्र में उत्पन्न होने वाला भारतीय या भारत कहलाता है। इसी प्रकार यह ऐरवत क्षेत्रीय है, यह हैमवतक्षेत्रीय है, यह ऐरण्यवतक्षेत्रीय है, यह हरिवर्षक्षेत्रीय है, यह रम्यक्वर्षीय है, यह पूर्वविदेहक्षेत्रीय है, यह उत्तरविदेहक्षेत्रीय है, यह देवकुरुक्षेत्रीय है, यह उत्तरकुरुक्षेत्रीय है। अथवा यह मागधीय है, मालवीय है, सौराष्ट्रीय है, महाराष्ट्रीय है, कौंकणदेशीय है, यह कौशलदेशीय है। ये नाम क्षेत्रसंयोगनिष्पन्न के उदाहरण हैं।

(2) KSHETRA SAMYOGA NAAM

277. (Q.) What is this *Kshetra samyoga naam* (name derived due to association with an area or a place)?

(Ans.) The (examples of) *Kshetra samyoga naam* (name derived due to association with an area or a place) are as follows—A person born in *Bharat kshetra* (Indian sub-continent) is called *Bhaaratiya* or *Bhaarat* (Indian). In the same way it is said that this person is *Airavat kshetriya* (born in *Airavat kshetra*), this is *Haimavat kshetriya,* this is *Airanyavat kshetriya,* this is *Harivarsh kshetriya,* this is *Ramyakvarshiya,* this is *Purvavideh kshetriya,* this is *Uttaravideh kshetriya,* this is *Devakuru kshetriya,* this is *Uttarakuru kshetriya* (These are the names of geographical areas from Jain mythology.). Also, this is *Magadhiya* (born in the Indian state of Magadh), this is *Malaviya* (born in the Indian state of Malava), this is *Saurashtriya* (born in the Indian state of Saurashtra), this is *Maharashtriya* (born in the Indian state of Maharashtra), this is *Konkandeshiya* (born in the Indian state of Konkan), this is *Kaushaldeshiya* (born in the Indian state of Kaushal).

This concludes the description of *Kshetra samyoga naam* or name derived due to association with an area or a place.

२७८. से किं तं कालसंजोगे ?

कालसंजोगे सुसम-सुसमए, सुसमए, सुसम-दूसमए, दूसम-सुसमए, दूसमए, दूसम-दूसमए अहवा पाउसए वासारत्तए सरदए हेमंतए वसंतए गिम्हए। से तं कालंसजोगे।

२७८. (प्र.) कालसंयोग से होने वाले नाम क्या हैं ?

(उ.) काल के संयोग से होने वाले नाम इस प्रकार हैं-सुषम-सुषम काल में उत्पन्न होने से यह 'सुषम-सुषमज' है, सुषम काल में उत्पन्न होने से 'सुषमज' है। इसी प्रकार सुषम-दुषमज, दुषम-सुषमज, दुषमज, दुषम-दुषमज नाम भी जानना चाहिए। अथवा यह प्रावृष्िक (वर्षा के प्रारम्भ काल में उत्पन्न हुआ) है, यह वर्षारात्रिक (वर्षा ऋतु में उत्पन्न) है, यह शारद (शरद ऋतु में उत्पन्न) है, यह हेमन्तक है, यह वासन्तक (वसन्त ऋतु में उत्पन्न) है, यह ग्रीष्मक (ग्रीष्म ऋतु में उत्पन्न) है। ये सभी नाम कालसंयोग से निष्पन्ननाम के उदाहरण हैं।

(3) KAAL SAMYOGA NAAM

278. (Q.) What is this *Kaal samyoga naam* (name derived due to association with time or period) ?

(Ans.) The (examples of) *Kaal samyoga naam* (name derived due to association with time or period) are as follows—A person born in the *Sukham-sukham* epoch is called *Sukham-sukhamaj* and the one born in the *Sukham* epoch is called *Sukhamaj*. In the same way are derived the names related to other epoches—*Sukham-dukhamaj, Dukham-sukhamaj, Dukhamaj* and *Dukham-dukhamaj*. Also, a person born during the first half of monsoon season (*Pravrat*) is called *Pravrishik*. In the same way names related to other seasons are derived—*Varsharatrik* is one born during the second half of the monsoon season (*Varsha*), *Shaarad* is one born during the autumn season (*Sharad*), *Hemantak* is one born during the winter season (*Hemant*), *Vasantak* is one born during the spring season (*Vasant*), *Grishmak* is one born during the summer season (*Grishm*).

This concludes the description of *Kaal samyoga naam* or name derived due to association with time or period.

(४) भावसंयोगजनाम

२७९. से किं तं भावसंजोगे ?

भावसंजोगे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा-१. पसत्थे य, २. अपसत्थे य।

२७९. (प्र.) भावसंयोग से होने वाले नाम क्या हैं ?

(उ.) भावसंयोगजनाम के दो प्रकार हैं-(१) प्रशस्तभावसंयोगज, तथा (२) अप्रशस्तभावसंयोगज।

(4) BHAAVA SAMYOGA NAAM

279. (Q.) What is this *Bhaava samyoga naam* (name derived due to association with an attitude) ?

(Ans.) *Bhaava samyoga naam* (name derived due to association with an attitude) is of two types—(1) *Prashasta bhaava samyogaj naam* (name derived due to association with noble or auspicious attitude), and (2) *Aprashasta bhaava samyogaj naam* (name derived due to association with ignoble or inauspicious attitude).

२८०. से किं तं पसत्थे ?

पसत्थे नाणेणं नाणी, दंसणेणं दंसणी, चरित्तेणं चरित्ती। से तं पसत्थे।

२८०. (प्र.) प्रशस्तभावों के संयोग से होने वाला नाम क्या है ?

(उ.) प्रशस्तभावसंयोग से होने वाले नाम इस प्रकार हैं-ज्ञान के संयोग से ज्ञानी, दर्शन के संयोग से दर्शनी, चारित्र के संयोग से चारित्री।

280. (Q.) What is this *Prashasta bhaava samyogaj naam* (name derived due to association with noble or auspicious attitude) ?

(Ans.) The (examples of) *Prashasta bhaava samyogaj naam* (name derived due to association with noble or auspicious attitude) are as follows—A person having an attitude of indulgence in *jnana* (knowledge) is called *Jnani* (scholar or sage), a person having an attitude of indulgence in *darshan* (perception or faith) is called *Darshani* (one having right perception or faith), and a person

भाव संयोगना के दो भेद

2

चित्र परिचय २

Illustration No. 2

भाव संयोगज नाम के दो भेद

भावों के कारण जो नाम प्रसिद्ध होता है, वह भाव संयोगज नाम कहा जाता है। इसके दो भेद हैं–

(१) **प्रशस्त भाव संयोगज नाम**–जैसे–ज्ञान का अभ्यास करने के कारण ज्ञानी, चारित्र ग्रहण करने के कारण चारित्री कहलाता है।

(२) **अप्रशस्त भाव संयोगज नाम**–जैसे–क्रोध के भावों से क्रोधी तथा लोभ के भावों के कारण लोभी कहलाता है।

–सूत्र २७९-२८०, पृष्ठ २१

TWO TYPES OF BHAAVA SAMYOGA NAAM

Name derived due to association with an attitude is called *Bhaava samyoga naam*, it is of two types—

(1) Prashasta Bhaava Samyoga Naam—Name derived due to association with noble or auspicious attitude, for example—a person indulging in scholarly activities (*jnan*) is called *Jnani* and a person initiated into ascetic conduct (*charita*) is called *Charitri.*

(2) Aprashasta Bhaava Samyoga Naam—Name derived due to association with ignoble or inauspicious attitude, for example—a person having an attitude of *krodh* (anger) is called *Krodhi* (angry) and a person having an attitude of *lobh* (greed) is called *Lobhi* (greedy).

—Aphorisms 279-280, p. 21

having an attitude of indulgence in *charitra* (conduct) is called *Charitri* (one having right conduct). As the inspiring attitudes mentioned here are noble, the names are said to be derived from noble or auspicious attitudes.

This concludes the description of *Prashasta bhaava samyogaj naam* or name derived due to association with noble or auspicious attitude.

२८१. से किं तं अपसत्थे ?

अपसत्थे कोहेणं कोही, माणेणं माणी, मायाए मायी, लोभेणं लोभी। से तं अपसत्थे। से तं भावसंजोगे। से तं संजोगेणं।

२८१. (प्र.) अप्रशस्तभावसंयोग से होने वाले नाम क्या हैं?

(उ.) अप्रशस्त भावसंयोग से होने वाले नाम इस प्रकार हैं-(क्रोध, मान, माया, लोभ आदि अप्रशस्तभाव हैं)-क्रोध के संयोग से क्रोधी, मान के संयोग से मानी, माया के संयोग से मायी और लोभ के संयोग से लोभी कहा जाता है। यह भावसंयोगजनाम का स्वरूप है। यह संयोगनिष्पन्ननाम की वक्तव्यता है।

281. (Q.) What is this *Aprashasta bhaava samyogaj naam* (name derived due to association with ignoble or inauspicious attitude) ?

(Ans.) The (examples of) *Aprashasta bhaava samyogaj naam* (name derived due to association with ignoble or inauspicious attitude) are as follows—A person having an attitude of *krodh* (anger) is called *Krodhi* (angry), a person having an attitude of *maan* (conceit) is called *Maani* (conceited), a person having an attitude of *maaya* (deceit) is called *Maayi* (deceitful) and a person having an attitude of *lobha* (greed) is called *Lobhi* (greedy). As the inspiring attitudes mentioned here are ignoble, the names are said to be derived from ignoble or inauspicious attitudes.

This concludes the description of *Aprashasta bhaava samyogaj naam* or name derived due to association with ignoble or inauspicious attitude. This concludes the description of *Bhaava samyogaj naam* (name derived due to association with an

attitude). This also concludes the description of *Samyogena naam* (name derived due to association).

(१०) प्रमाणेननाम

२८२. से किं तं पमाणेणं ?

पमाणेणं चउव्विहे पण्णत्ते। तं जहा-१. णामप्पमाणे, २. ठवणप्पमाणे, ३. दव्वप्पमाणे, ४. भावप्पमाणे।

२८२. (प्र.) प्रमाण से निष्पन्ननाम क्या हैं ?

(उ.) प्रमाणनिष्पन्ननाम चार प्रकार के हैं-(१) नामप्रमाण से निष्पन्न, (२) स्थापनाप्रमाण से निष्पन्न, (३) द्रव्यप्रमाण से निष्पन्न, और (४) भावप्रमाण से निष्पन्न।

विवेचन-जिसके द्वारा वस्तु का निश्चय किया जाता है तथा जो सम्यग् निर्णय का कारण हो उसे प्रमाण कहते हैं। प्रमाणनाम के नाम, स्थापना आदि चार भेद हो जाते हैं। उनका क्रमानुसार आगे वर्णन किया जा रहा है।

(10) PRAMANENA NAAM

282. (Q.) What is this *Pramanena naam* (authenticated or validated name) ?

(Ans.) *Pramanena naam* (authenticated or validated name or a name that has an evidence of validity from some specific source) is of four kinds—(1) *Naam pramana* (*pramana* as name), (2) *Sthapana pramana* (notional installation as validity), (3) *Dravya pramana* (physical aspect of validity), and (4) *Bhaava pramana* (*pramana* as essence or perfect validity).

Elaboration—That which validates a thing and is the basis of correct conclusion is called *pramana* (evidence of validity). Based on the process of disquisition there are four types of *pramana*, including *naam* and *sthapana*. The description of these follows.

२८३. से किं तं नामप्पमाणे ?

नामप्पमाणे जस्स णं जीवस्स वा अजीवस्स वा जीवाण वा अजीवाण वा तदुभयस्स वा तदुभयाण वा पमाणे त्ति णामं कज्जति। से तं नामप्पमाणे।

२८३. (प्र.) नामप्रमाण से होने वाला नाम क्या है ?

(उ.) नामप्रमाण से होने वाले नाम का स्वरूप इस प्रकार है-किसी जीव का, अजीव का अथवा बहुत से जीवों या बहुत से अजीवों का अथवा तदुभय (जीवाजीव दोनों) का, अथवा तदुभयों (बहुत से जीवाजीवों) दोनों का 'प्रमाण' ऐसा जो नाम रख लिया जाता है, वह नामप्रमाण है।

283. (Q.) What is this name according to *Naam pramana* (*pramana* as name)?

(Ans.) To assign *pramana* as a name to a living being, a non-living thing, many living beings, many non-living things, an aggregate of living and non-living, and many aggregates of living and non-living is called name according to *Naam pramana* (*pramana* as name).

२८४. से किं तं ठवणप्पमाणे ?

ठवणप्पमाणे सत्तविहे पण्णत्ते। तं जहा–

णक्खत्त–देवय–कुले पासंड–गणे य जीवियाहेउं।
आभिप्पाइय णामे ठवणानामं तु सत्तविहं॥१॥

२८४. (प्र.) स्थापनाप्रमाण से होने वाले नाम क्या हैं ?

(उ.) स्थापनाप्रमाण से होने वाले नाम सात प्रकार के हैं, जैसे-(१) नक्षत्रनाम, (२) देवतानाम, (३) कुलनाम, (४) पाषंडनाम, (५) गणनाम, (६) जीवितहेतुनाम, और (७) आभिप्रायिकनाम।

विवेचन–किसी वस्तु की पहचान के लिए उसमें गुण हो या नहीं हो परन्तु व्यवहार के लिए उसका अमुक नाम स्थापित कर देना स्थापना है। अर्थात् अर्थशून्य पदार्थ में उस अर्थ का आरोपण करना स्थापना है। इसके सात भेद हैं, जिनके उदाहरण अगले सूत्र में बताये गये हैं।

284. (Q.) What is this name according to *Sthapana pramana* (notional installation as validity)?

(Ans.) *Sthapana pramana* (notional installation as validity) is of seven types—(1) *Nakshatra naam* (name associated with an asterisms), (2) *Devata naam* (name associated with a deity), (3) *Kula naam* (name associated with family or genealogy), (4) *Pakhand naam* (name associated with a cult or sect), (5) *Gana naam* (name

associated with a group), (6) *Jivit-hetu naam* (name associated with survival), and (7) *Abhiprayik naam* (name associated with choice).

Elaboration—The notional installation of a name in a thing realistically or unrealistically just for the sake of identity is called name associated with *sthapana pramana* (notional installation as validity). They are of seven types detailed as follows.

(१) नक्षत्रनाम

२८५. से किं तं नक्खत्तणामे ?

नक्खत्तणामे कत्तियाहिं जाए कत्तिए कत्तियादिण्णे कत्तियाधम्मे कत्तियासम्मे कत्तियादेवे कत्तियादासे कत्तियासेणे कत्तियारक्खिए।

रोहिणीहिं जाए रोहिणिए रोहिणिदिन्ने रोहिणिधम्मे रोहिणिसम्मे रोहिणिदेवे रोहिणिदासे रोहिणिसेणे रोहिणिरक्खिए। एवं सव्वणक्खत्तेसु णामा भाणियव्वा। एत्थ संगहणि गाहाओ–

१. कत्तिय, २. रोहिणि, ३. मिगसिर, ४. अद्दा य, ५. पुणव्वसू य, ६. पुस्से य।
७. तत्तो य अस्सिलेसा, ८. मघाओ, ९–१०. दो फग्गुणीओ य॥१॥
११. हत्थो, १२. चित्ता, १३. साती, १४. विसाहा, १५. तह य होइ अणुराहा।
१६. जेट्ठा, १७. मूलो, १८. पुव्वासाढा, १९. तह उत्तरा चेव॥२॥
२०. अभिई, २१. सवण, २२. धणिट्ठा, २३. सतिभिसय, २४–२५. दो य होंति भद्दवया।
२६. रेवति, २७. अस्सिणि, २८. भरणी, एसा नक्खत्तपरिवाडी॥३॥
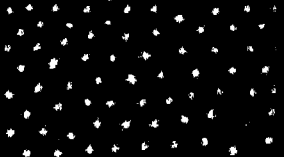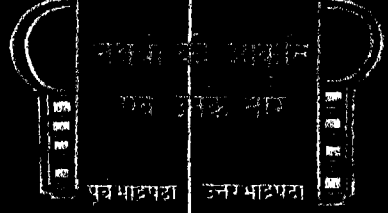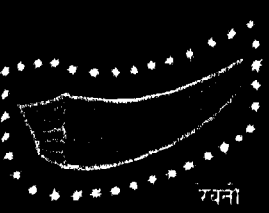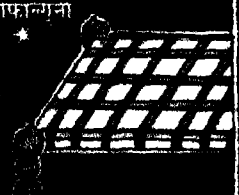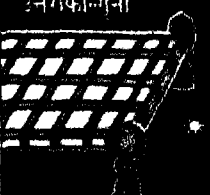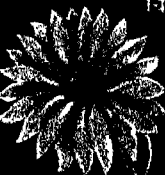
से तं नक्खत्तनामे।

२८५. **(प्र.)** नक्षत्रनाम–नक्षत्र के आधार से स्थापित नाम क्या है ?

(उ.) नक्षत्रनाम का स्वरूप इस प्रकार कहा है, जैसे–कृतिका नक्षत्र में उत्पन्न होने वाला कृत्तिक (कार्त्तिक), कृत्तिकादत्त, कृत्तिकाधर्म, कृत्तिकाशर्म, कृत्तिकादेव, कृत्तिकादास, कृतिकासेन, कृत्तिकारक्षित कहलाता है।

रोहिणी नक्षत्र में उत्पन्न होने वाला रोहिणेय, रोहिणीदत्त, रोहिणीधर्म, रोहिणीशर्म, रोहिणीदेव, रोहिणीदास, रोहिणीसेन, रोहिणीरक्षित कहा जाता है। इसी प्रकार अन्य सभी नक्षत्रों में उत्पन्न होने वाले नामों के विषय में जान लेना चाहिए।

श्रवण
पूर्व भाद्रपदा
उत्तर भाद्रपदा
रेवती
कृत्तिका
भरणी
आर्द्रा
पुनर्वसु
पुष्य
मघा
पूर्वाफाल्गुनी
उत्तराफाल्गुनी
चित्रा
विशाखा
अनुराधा
मूल
3

चित्र परिचय ३ **Illustration No. 3**

नक्षत्रों की आकृति एवं उनके तारे

सूत्र २८५ में २८ नक्षत्रों के नाम बताये हैं। चित्र में प्रत्येक नक्षत्र का नाम, आकृति तथा उनके ताराओं की संख्या दर्शायी गई है। यह चित्र **'जैन दृष्टिए मध्य लोक'** पुस्तक के पृष्ठ २१० के अनुसार बनाया गया है। नक्षत्रों के नाम सूत्र २८५ के अनुसार समझें। *-सूत्र २८५, पृष्ठ २५*

STARS AND SHAPES ASSOCIATED WITH ASTERISMS

Aphorism 285 mentions names of 28 asterisms. This illustration gives name, shape and the number of stars for each asterism. This illustration is based on the illustration given on page 210 of the Gujarati publication—*'Jain Drishtiye Madhya Lok'*. The illustration follows the sequence of names in aphorism 285. *—Aphorism 285, p. 25*

नक्षत्र नामों की संग्रहणी गाथायें इस प्रकार हैं-(२८ नक्षत्रों के नाम)

(१) कृत्तिका, (२) रोहिणी, (३) मृगशिरा, (४) आर्द्रा, (५) पुनर्वसु, (६) पुष्य, (७) अश्लेषा, (८) मघा, (९-१०) पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी रूप दो फाल्गुनी, (११) हस्त, (१२) चित्रा, (१३) स्वाति, (१४) विशाखा, (१५) अनुराधा, (१६) ज्येष्ठा, (१७) मूल, (१८) पूर्वाषाढा, (१९) उत्तराषाढा, (२०) अभिजित, (२१) श्रवण, (२२) धनिष्ठा, (२३) शतभिषग्, (२४-२५) पूर्वभाद्रपदा, उत्तरभाद्रपदा नामक दो भाद्रपदा, (२६) रेवती, (२७) अश्विनी, और (२८) भरिणी। यह नक्षत्रों के नामों की परिपाटी (क्रम) है। यह नक्षत्रनाम का स्वरूप है। *(नक्षत्रों की आकृति के लिए संलग्न चित्र देखें।)*

विवेचन—ज्योतिष शास्त्र के अनुसार राशि मण्डल को मेष राशि के प्रथम बिन्दु से २७ बराबर भागों में विभाजित किया गया है। इन्हें नक्षत्र कहते हैं। भारतीय ज्योतिष में किसी के जन्म समय पर चन्द्रमा जिस नक्षत्र में होता है उसका बहुत महत्त्व होता है। इसे जन्म-नक्षत्र कहते हैं।

वर्तमान ज्योतिष शास्त्र के अनुसार नक्षत्रों की गणना अश्विनी, भरिणी, कृतिका के क्रम से प्रारम्भ होकर रेवती पर समाप्त होती है। वहाँ २७ नक्षत्रों के नाम हैं, अभिजित् को स्वतंत्र नक्षत्र नहीं माना है, किन्तु आगम में अभिजित् की स्वतंत्र गणना करके २८ नक्षत्रों के नाम गिनाये हैं तथा कृतिका से गणना प्रारम्भ करके अश्विनी को २७वाँ तथा भरणी को २८वाँ क्रम दिया है।

(1) NAKSHATRA NAAM

285. (Q.) What is this *Nakshatra naam* (name associated with asterisms) ?

(Ans.) The (examples of) *Nakshatra naam* (name associated with asterisms; to be precise—name based on notional installation of name of an asterism as validity) are as follows—Those born in *Kritika Nakshatra* (name of the first asterism) are called *Krittik (Karttik), Krittikadatt, Krittikadharm, Krittikasharm, Krittikadeva, Krittikadas, Krittikasen, Krittikarakshit* etc.

Those born in *Rohini Nakshatra* (name of the second asterism) are called *Rohineya, Rohinidatt, Rohinidharm, Rohinisharm, Rohinideva, Rohinidas, Rohinisen, Rohinirakshit* etc. The same is true for those born in the remaining asterisms.

The names of *nakshatras* (28 asterisms) (given in the epitomic verses) are as follows—

(1) *Krittika* (Eta Tauri or Pleiades), (2) *Rohini* (Aldebaran), (3) *Mrigashira* (Lambda Orionis), (4) *Ardra* (Alpha Orionis),

(5) *Punarvasu* (Beta Geminorum), (6) *Pushya* (Delta Cancri), (7) *Ashlesha* (Alpha Hydrae), (8) *Magha* (Regulus), (9) *Purvaphalguni* (Delta Leonis), (10) *Uttaraphalguni* (Beta Leonis), (11) *Hast* (Delta Corvi), (12) *Chitra* (Spica Virginis), (13) *Svati* (Arcturus), (14) *Vishakha* (Alpha Librae), (15) *Anuradha* (Delta Scorpii), (16) *Jyeshtha* (Antares), (17) *Mool* (Lambda Scorpii), (18) *Purvashadha* (Delta Sagittarii), (19) *Uttarashadha* (Sigma Sagittarii), (20) *Abhijit* (Lyrae), (21) *Shravan* (Alpha Aquilae), (22) *Dhanistha* (Delta Delphini), (23) *Shatabhishag* (Lambda Aquarii), (24) *Purvabhadrapada* (Alpha Pegasi), (25) *Uttarabhadrapada* (Gama Pegasi), (26) *Revati* (Zeta Piscium), (27) *Ashvini* (Beta Arietis), and (28) *Bharani* (35 Arietis). This is the serial order of the *nakshatras* (asterisms).

This concludes the description of *Nakshatra naam* or name associated with a asterisms. *(See illustration)*

Elaboration—The twelve signs of the Zodiac starting from the first point of Aries are divided into twenty seven equal parts called *nakshatras* or asterisms. In the Indian system the asterism in which the moon is situated at the time of birth has great significance and it is called *Janma Nakshatra* (birth asterism).

In the modern Indian astrology this list starts with *Ashvini, Bharini, Krittika,* and following the same order ends with *Revati.* This list has only 27 *nakshatras* (asterisms) because *Abhijit* is not accepted as an independent *nakshatra* (asterism). But in *Agam, Abhijit* is considered an independent *nakshatra* (asterism) making the number 28. As already mentioned, the *Agam* list starts with *Kritika,* thus making *Ashvini* and *Bharani* to be 27th and 28th.

(२) देवतानाम

२८६. से किं तं देवयाणामे ?

देवयाणामे अग्गिदेवयाहिं जाते अग्गिए अग्गिदिण्णे अग्गिधम्मे अग्गिसम्मे अग्गिदेवे अग्गिदासे अग्गिसेणे अग्गिरक्खिए। एवं पि सव्वनक्खत्तदेवयानामा भाणियव्वा। एत्थं पि य संगहणि गाहाओ, तं जहा–

१. अग्गि, २. पयावइ, ३. सोमे, ४. रुद्दे, ५. अदिती, ६. बहस्सई, ७. सप्पे।

८. पिति, ९. भग, १०. अज्जम, ११. सविया, १२. तट्ठा, १३. वायू य, १४. इंदग्गी॥१॥

१५. मित्तो, १६. इंदो, १७. निरती, १८. आऊ, १९. विस्सो य, २०. बंभ, २१. विण्हू य।

२२. वसु, २३. वरुण, २४. अय, २५. विवद्धी, २६. पूसे, २७. आसे, २८. जमे, चेव॥२॥

से तं देवयणामे।

२८६. (प्र.) देवतानाम क्या है?

(उ.) देवतानाम का स्वरूप इस प्रकार है, जैसे–अग्निदेवता (कृतिका नक्षत्र) में उत्पन्न हुए बालक का नाम आग्निक, अग्निदत्त, अग्निधर्म, अग्निशर्म, अग्निदेव, अग्निदास, अग्निसेन, अग्निरक्षित आदि रखा जाता है। इसी प्रकार से अन्य सभी नक्षत्र के देवताओं के नाम पर स्थापित नामों के विषय में जानना चाहिए।

देवताओं के नाम की भी संग्रहणी गाथायें इस प्रकार हैं, जैसे–

(१) अग्नि, (२) प्रजापति, (३) सोम, (४) रुद्र, (५) अदिति, (६) बृहस्पति, (७) सर्प, (८) पिता, (९) भग, (१०) अर्यमा, (११) सविता, (१२) त्वष्टा, (१३) वायु, (१४) इन्द्राग्नि, (१५) मित्र, (१६) इन्द्र, (१७) निर्ऋति, (१८) अम्भ (अप्), (१९) विश्व, (२०) ब्रह्मा, (२१) विष्णु, (२२) वसु, (२३) वरुण, (२४) अज, (२५) विवर्द्धि, (२६) पूषा, (२७) अश्व, और (२८) यम। यह अट्ठाईस देवताओं के नाम जानना चाहिए। यह देवतानाम का स्वरूप है।

विवेचन–ज्योतिष शास्त्र के अनुसार कृतिका आदि २८ नक्षत्र एक-एक देवता द्वारा अधिष्ठित है। जैसे–कृतिका नक्षत्र का अग्निदेवता। रोहिणी नक्षत्र का प्रजापति। इसी प्रकार प्रत्येक नक्षत्र का एक-एक देवता समझना चाहिए। अमुक नक्षत्र में जन्मे शिशु का नाम अमुक अधिष्ठायक देव के नाम से स्थापित करना 'देवतानाम' है।

इन सूत्रों में नक्षत्रों एवं उनके देवताओं के जो नाम आये हैं यह शुद्ध ज्योतिष शास्त्र का विषय है। ज्योतिष सम्बन्धी धारणाओं में प्राचीनकाल में भी अनेक मतभेद थे। लगता है जैन सूत्रों में उन प्रचलित धारणाओं का ही उल्लेख किया गया है। स्थानांगसूत्र (स्थान २, उ. ३) तथा प्रस्तुत अनुयोगद्वारसूत्रों में नक्षत्रों व उनके देवताओं का उल्लेख संक्षेप में है। इन दोनों सूत्रों में नक्षत्रों की गणना का क्रम समान ही है। जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति तथा सूर्यप्रज्ञप्ति में यह चर्चा काफी विस्तारपूर्वक है। वहाँ नक्षत्रों के नाम व गणना क्रम में भी अन्तर है। जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति में यह भी कहा है, २८ नक्षत्रों की यह

धारणा जम्बूद्वीप में प्रचलित नहीं है, जम्बूद्वीप में अभिजित् नक्षत्र को छोड़कर बाकी २७ नक्षत्रों का व्यवहार होता है। २७ नक्षत्रों की मान्यता वर्तमान ज्योतिष ग्रन्थों में भी उपलब्ध है।

सूर्यप्रज्ञप्ति में यह भी बताया है कि उस समय नक्षत्रों सम्बन्धी पाँच प्रकार की भिन्न-भिन्न प्रतिपत्तियाँ (मान्यताएँ) प्रचलित थीं। वहाँ उनका उल्लेख भी है। उक्त सूत्रों में नक्षत्रों के संस्थान (आकृति) व ताराओं की संख्या का भी उल्लेख मिलता है। जानकारी के लिए चित्र में नक्षत्रों की आकृति व ताराओं की संख्या प्राचीन चित्रों के आधार पर बताई है। इस सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी के लिए गणितानुयोग नक्षत्र वर्णन, पृष्ठ ५९०-६०० देखना चाहिए।

(2) DEVATA NAAM

286. (Q.) What is this *Devata naam* (name associated with deities) ?

(Ans.) The (examples of) *Devata naam* (name associated with deities; to be precise—name based on notional installation of name of a deity as validity) are as follows—Those born under the influence of *Agnidevata* (the god of fire—the presiding deity of *Kritika,* the first asterism) are called *Agnik, Agnidatt, Agnidharm, Agnisharm, Agnideva, Agnidas, Agnisen, Agnirakshit* etc. The same is true for those born under the influence of the presiding deities of the remaining *nakshatras* (asterisms).

The names of *devas* (28 deities) (given in the epitomic verses) are as follows—(1) Agni, (2) Prajapati, (3) Soma, (4) Rudra, (5) Aditi, (6) Brihaspati, (7) Sarp, (8) Pita, (9) Bhag, (10) Aryama, (11) Savita, (12) Tvashta, (13) Vayu, (14) Indragni, (15) Mitra, (16) Indra, (17) Nirriti, (18) Ambh (Ap), (19) Vishva, (20) Brahma, (21) Vishnu, (22) Vasu, (23) Varun, (24) Aja, (25) Vivarddhi, (26) Pusha, (27) Ashva, and (28) Yama. This is the serial order of the *devas* (deities).

This concludes the description of *Devata naam* or name associated with deities.

Elaboration—According to astrology each *nakshatra* (asterism) is presided by a deity. For example, *Agnidevata*, the god of fire, is the presiding deity of *Kritika*, the first asterism. That of *Rohini* is Prajapati, and so on. Thus each of the deities mentioned in the list corresponds to the list of *nakshatras* (asterisms). To name a child born in a particular *nakshatra* (asterism) after the presiding deity of that *nakshatra* (asterism) is called *Devata naam* or name associated with deities.

The names of *nakshatras* (asterisms) and their presiding deities, mentioned in these aphorisms are exclusively the subject of astrology. It appears that even in the ancient times there were many contradictions with regard to astrological beliefs. The Jain scriptures have mentioned only the prevalent popular beliefs. In *Sthananga Sutra* (2/3) and this *Anuyogadvara Sutra* we only find brief mention of names of *nakshatras* (asterisms) and their presiding deities. The serial order of *nakshatras* (asterisms) is same in these two works. In *Jambudveep Prajnapti* and *Surya Prajnapti* this topic has been discussed in greater detail. The names and serial orders also differ. In *Jambudveep Prajnapti* there is also a mention that this concept of 28 *nakshatras* (asterisms) is not popular in *Jambudveep*. There the count comes to only 27 after discarding *Abhijit nakshatra* (asterism). Modern works on Indian astrology also follow this tradition of 27 *nakshatras* (asterisms).

Surya Prajnapti also informs that during that period five different traditions regarding *nakshatras* (asterisms) existed. Details of these five traditions are also mentioned. The configuration of the constellations and number of their stars are also given in this work. An illustration is included here to inform about the shapes of *nakshatras* (asterisms) and number of stars in the relevant constellation according to ancient illustrations. More details on this subject are available in *Ganitanuyoga* (p. 590-600).

(३) कुलनाम

२८७. से किं तं कुलनामे ?

कुलनामे उग्गे भोगे राइण्णे खत्तिए इक्खागे णाते कोरव्वे। से तं कुलनामे।

२८७. (प्र.) कुलनाम किसे कहते हैं ?

(उ.) जन्मकुल के आधार पर जो नाम रखा जाता है वह कुलनाम कहा जाता है। जैसे—उग्रकुल, भोगकुल, राजन्यकुल, क्षत्रियकुल, इक्ष्वाकुकुल, ज्ञातकुल, कौरवकुल। यह कुलनाम का स्वरूप है। *(इन सातों कुल सम्बन्धी अधिक जानकारी के लिए हिन्दी टीका, भाग २, पृ. ४३१ देखें।)*

(3) KULA NAAM

287. (Q.) What is this *Kula naam* (name associated with family or genealogy) ?

(Ans.) *Kula naam* is the name associated with the name or genealogy of the family in which a person is born. The examples of *Kula naam* are—*Ugra kula, Bhoga kula, Rajanya kula, Kshatriya kula, Ikshvaku kula, Jnata Kula, Kaurava Kula* etc. For more details about these seven famous clans of that period refer to *Hindi Tika of Anuyogadvara Sutra,* Part 2, by Shri Jnana Muni, p. 431.

This concludes the description of *Kula naam* or name associated with family or genealogy.

(४) पाषण्डनाम

२८८. से किं तं पासंडनामे ?

पासंडनामे समणे पंडुरंगए भिक्खू कावलिए तावसए परिव्वायगे। से तं पासंडनामे।

२८८. (प्र.) पाषण्डनाम क्या है ?

(उ.) श्रमण, पाण्डुरांग, भिक्षु, कापालिक, तापस, परिव्राजक आदि। यह पाषण्डनाम का स्वरूप है।

विवेचन—मत, सम्प्रदाय, आचार-विचार की पद्धति अथवा व्रत को 'पाषण्ड' कहा जाता है। उनके व्रत या सम्प्रदायों के आधार से स्थापित नाम पाषण्डनाम है। पाषण्डनाम के उदाहरणों में निर्ग्रन्थ, शाक्य, तापस, गैरिक, आजीवक के भेद से श्रमण पाँच प्रकार के हैं—

(१) **निर्ग्रंथ श्रमण**—जिन-प्रवचनानुसार संयम पालन करने वाला।

(२) **शाक्य**—बुद्ध के अनुयायी भिक्षु।

(३) **गैरिक**—भगवाँ वस्त्र पहनने वाले त्रिदण्डी साधु।

(४) **तापस**—जटाधारी जंगलों में रहकर तप करने वाले।

(५) **आजीवक**—गौशालक मतानुयायी।

भस्म से लिप्त शरीर वाले ऐसे शैव-शिव भक्तों को पाण्डुरांग कहा है। इसी प्रकार बुद्ध दर्शन के अनुयायी, भिक्षु, चिता की राख से अपने शरीर को लिप्त रखने वाले श्मशानवासी कापालिक। ये वाममार्गी शैव सम्प्रदाय के अनुयायी होते हैं। तपसाधना करने वाले तापस और गृहत्यागी संन्यासी, सदा भ्रमण करने वाले परिव्राजक कहलाते हैं।

(4) PAKHAND NAAM

288. (Q.) What is this *Pakhand naam* (name associated with cult or sect) ?

(Ans.) The (examples of) *Pakhand naam* (name associated with cult or sect) are as follows—*Shraman, Pandurang, Bhikshu, Kapalik, Tapas, Parivrajak* etc.

This concludes the description of *Pakhand naam* or name associated with cult or sect.

Elaboration—The apparent rituals, concepts, vows and codes of conduct by which a particular sect or cult is identified is called *Pakhand.* A name associated with a cult or sect is called *Pakhand naam* (name associated with cult or sect). The examples of *Pakhand naam* (name associated with cult or sect) include five kinds of *Shraman*—

(1) ***Nirgranth Shraman***—Those who follow the code of conduct told by the *Jina*; Jain ascetics.

(2) ***Shakya***—Buddhist mendicants.

(3) ***Gairik***—The saffron wearing and trident carrying mendicants.

(4) ***Tapas***—Hermits with long hair indulging in penance in jungle.

(5) ***Ajivak***—The followers of Gaushalak.

The Shaivite mendicants who rub ash on their body are called *Pandurang. Bhikshu* is another name for Buddhist mendicants. The followers of *Vamamarg,* another Shaivite sect, who dwell at cremation grounds and apply ash from funeral pyres on their bodies are called *Kapalik.* Hermits who indulge in rigorous penance are called *Tapas.* Those who renounce their household are called *Sanyasi* and those who are ever itinerant are called *Parivrajak.*

(५) गणनाम

२८९. से किं तं गणनामे ?

गणनामे मल्ले मल्लदिन्ने मल्लधम्मे मल्लसम्मे मल्लदेवे मल्लदासे मल्लसेणे मल्लरक्खिए। से तं गणनामे।

२८९. (प्र.) गणनाम क्या है ?

(उ.) गण के आधार से स्थापित नाम को गणनाम कहते हैं, जैसे-मल्ल, मल्लदत्त, मल्लधर्म, मल्लशर्म, मल्लदेव, मल्लदास, मल्लसेन, मल्लरक्षित आदि। ये गणस्थापनानिष्पन्ननाम हैं।

(5) GANA NAAM

289. (Q.) What is this *Gana naam* (name associated with groups) ?

(Ans.) The (examples of) *Gana naam* (name associated with organized groups of people) are as follows—*Malla, Malladatt, Malladharm, Mallasharm, Malladeva, Malladas, Mallasen, Mallarakshit* etc. (*Malla* being a name of a specific group of people).

This concludes the description of *Gana naam* or name associated with groups.

(६) जीवितहेतुनाम

२९०. से किं तं जीवियाहेउं ?

जीवियाहेउं अवकरए उक्कुरुडए उज्झियए कज्जवए सुप्पए। से तं जीवियाहेउं।

२९०. (प्र.) जीवितहेतुनाम क्या हैं ?

(उ.) जीवितहेतुनाम (जीवित रखने के लिए नाम) इस प्रकार हैं–अवकरक, उत्कुरुटक, उज्झितक, कज्ज़वक, सूर्पक आदि। ये सब जीवितहेतुनाम हैं।

विवेचन–जिस किसी स्त्री की संतान जन्म लेते ही मर जाती हो, उस संतान को दीर्घकाल तक जीवित रखने के निमित्त उस बालक को जैसे–अवकर (कूड़े) के ढेर पर छोड़ा जाता है और जीवित बचने पर उसका नाम उसी आधार पर अवकरक रख दिया जाता है। कहीं-कहीं सूर्पक (छाज) में रखकर छोड़ने का रिवाज था, उस कारण उसका नाम सूर्पक रखा जाता था। लोकरूढ़िवश यही नाम रखने की प्रथा थी। जैसे–अवकरक (कचरे पर छोड़ा हुआ), उत्कुरुटक (उकरडा या कूड़े के बाड़े में छोड़ा हुआ), उज्झितक (त्यागा हुआ), कचवरक (कूड़े–कचरे के ढेर पर रखा हुआ), सूर्पक (सूपड़े पर रखा हुआ) आदि। ये सब जीवितहेतुनाम हैं। *(मलधारी हेमचन्द्र वृत्ति, पृष्ठ ३५१ मुनि जम्बूविजय जी)*

(6) JIVIT-HETU NAAM

290. (Q.) What is this *Jivit-hetu naam* (name associated with survival) ?

(Ans.) The (examples of) *Jivit-hetu naam* (name associated with survival) are as follows—*Avakarak, Utkurutak, Ujjhitak, Kachavarak, Surpak* etc.

This concludes the description of *Jivit-hetu naam* or name associated with survival.

Elaboration—A woman whose more than one child died immediately after birth used to perform some ritual, believed to be a good omen, to save her new born. When saved, the child was given a name associated with that ritual. The examples are—A child left on a trash bin (*avakar*)

immediately on birth, if saved, was named *Avakarak*. A child left in a rubbish-yard (*Utkurut*) immediately on birth, if saved, was named *Utkurutak*. A child abandoned (*Ujjhit*) immediately on birth, if saved, was named *Ujjhitak*. A child left on a heap of trash (*Kachavar*) immediately on birth, if saved, was named *Kachavarak*. A child left on a winnowing basket (*Soorp*) immediately on birth, if saved, was named *Soorpak*. (*Vritti* by Maladhari Hemachandra, Ed. Jambuvijai, p. 351)

(७) आभिप्रायिकनाम

२९१. से किं तं आभिप्पाइयनामे ?

आभिप्पाइयनामे अंबए निंबए बकुलए पलासए सिणए पिलुयए करीरए। से तं आभिप्पाइयनामे। से तं ठवणप्पमाणे।

२९१. (प्र.) आभिप्रायिकनाम क्या है ?

(उ.) गुण या क्रिया की अपेक्षा रखे बिना अपनी इच्छा या अभिप्राय के अनुसार मनचाहा नाम रख लेना आभिप्रायिकनाम है, जैसे-अंबक, निंबक, बकुलक, पलाशक, स्नेहक, पीलुक, करीरक। ये आभिप्रायिकनाम कहे जाते हैं। यह स्थापनाप्रमाण का वर्णन है।

(7) ABHIPRAYIK NAAM

291. (Q.) What is this *Abhiprayik naam* (name associated with choice) ?

(Ans.) The (examples of) *Abhiprayik naam* (name associated with choice or name selected on random choice or liking and without any relation to qualities or activities) are as follows—*Ambak, Nimbak, Palashak, Snehak, Piluk, Karirak* etc.

This concludes the description of *Abhiprayik naam* or name associated with choice. This also concludes the description of *Sthapana pramana* (notional installation as validity).

२९२. से किं तं दव्वप्पमाणे ?

दव्वप्पमाणे छव्विहे पण्णत्ते। तं जहा-धम्मत्थिकाए जाव अद्धासमए। से तं दव्वप्पमाणे।

२९२. (प्र.) द्रव्यप्रमाण से होने वाले नाम क्या हैं ?

(उ.) द्रव्यप्रमाण से होने वाले नाम छह प्रकार के हैं, जैसे-धर्मास्तिकाय यावत् अद्धासमय।

यह द्रव्यप्रमाण से होने वाले नाम का स्वरूप है।

292. (Q.) What is this name according to *Dravya pramana* (physical aspect of validity) ?

(Ans.) The (examples of) name according to *Dravya pramana* (physical aspect of validity or the entities that draw validity from their eternal existence as a substance) are as follows—*Dharmastikaya* (entity essential for motion), *Adharmastikaya* (rest entity), *Akashastikaya* (space entity), *Jivastikaya* (life entity), *Pudgalastikaya* (matter entity), *Addhakaal* (time).

This concludes the description of *Dravya pramana* or physical aspect of validity.

२९३. से किं तं भावप्पमाणे ?

भावप्पमाणए चउव्विहे पण्णत्ते। तं जहा- १. सामासिए, २. तद्धितए, ३. धातुए, ४. निरुत्तिए।

२९३. (प्र.) भावप्रमाण से होने वाला नाम क्या है ?

(उ.) भावप्रमाण चार प्रकार का है। जैसे-(१) सामासिक, (२) तद्धितज, (३) धातुज, और (४) निरुक्तिज।

विवेचन-भाव अर्थात् वस्तु में रहा गुण। जो वस्तु के गुण को यथार्थ रूप में प्रकट कर सके उसे भावप्रमाण कहते हैं। वृत्तिकार के अनुसार यहाँ भाव का सम्बन्ध व्याकरण या शब्द शास्त्र से है। वह सामासिक आदि के भेद से चार प्रकार का होता है।

293. (Q.) What is this *Bhaava pramana naam* (name according to validity as essence or perfect validity) ?

(Ans.) *Bhaava pramana naam* (name according to validity as essence or perfect validity) is of four kinds—(1) *Samasik* (formed by compounding), (2) *Taddhitaj* (formed by nominal termination), (3) *Dhatuj* (based on verb roots), and (4) *Niruktij* (etymologically derived).

Elaboration—*Bhaava* means the inherent attributes of a thing. That which expresses the attributes of a thing perfectly is called name according to perfect validity. According to the commentator (*Vritti*) here *bhaava* (essence) is related to grammar or semantics. It has four kinds including compounding.

(१) सामासिकभावप्रमाणनाम

२९४. से किं तं सामासिए ?

सामासिए सत्त समासा भवंति। तं जहा–

१. दंदे, २. य बहुव्वीही, ३. कम्मधारए, ४. दिग्गु य।
५. तप्पुरिस, ६. अव्वईभावे, ७. एक्कसेसे य सत्तमे॥१॥

२९४. (प्र.) सामासिकभावप्रमाणनाम किसे कहते हैं?

(उ.) सामासिकभावप्रमाणनाम सात प्रकार के हैं–(१) द्वन्द्व, (२) **बहुब्रीहि**, (३) कर्मधारय, (४) द्विगु, (५) तत्पुरुष, (६) अव्ययीभाव, और (७) एकशेष।

विवेचन–द्वयोर्बहूनां वा पदानां समसनं समीलनं समासः–दो या दो से अधिक पदों में विभक्ति आदि का लोप करके उन्हें संक्षिप्त करना–एकत्र करना समास कहलाता है।

जिन शब्दों में समास होता है उनका अर्थ या अभिप्राय एक-सा नहीं होता, किन्तु उनमें से किसी का अर्थ मुख्य हो जाता है और शेष शब्द उस अर्थ को पुष्ट करते हैं। समास के द्वन्द्व आदि सात भेद हैं। सातों समास का संक्षिप्त स्वरूप इस प्रकार है–

टीकाकार के अनुसार–**सति समास एकः शिष्यतेऽन्ये तु लुप्यंते**–समास होने पर एक रहता है, बाकी का लोप हो जाता है। जो रहता है वह लुप्त शब्द के अर्थ को भी प्रकट कर देता है। (मलधारी वृत्ति के अनुसार)

(1) SAMASIK BHAAVA PRAMANA NAAM

294. (Q.) What is this *Samasik bhaava pramana naam* (according to perfect validity, a name based on compounding) ?

(Ans.) The *Samasik bhaava pramana naam* (a name based on compounding) is of seven kinds—(1) *Dvandva* (co-ordinative), (2) *Bahubrihi* (possessive), (3) *Karmadharaya* (descriptive determinative), (4) *Dvigu* (numeral), (5) *Tatpurush* (dependent determinative), (6) *Avyayibhaava* (indeclinable), and (7) *Eka shesh* (collective).

Elaboration—To compound two or more words by shortening them according to the rules of Sanskrit or Prakrit grammar is called *samas* or compounding.

The meanings of the compounded words are not necessarily same or similar. However, on compounding, one of these may become prominent and others subordinate. *Samas* is of seven types explained in the following aphorisms.

Explaining briefly the commentator (*Tika*) says—On compounding we are left with just one word, all others disappear. That which remains also conveys the meaning of the word that disappears (on the basis of Vritti by Hemachandra).

(क) द्वन्द्व समास

२९५. से किं तं दंदे समासे ?

दंदे समासे–दन्ताश्च औष्ठोश्च दन्तौष्ठम्, स्तनौ च उदरं च स्तनोदरम्, वस्त्रं च पात्रं च वस्त्रपात्रम्, अश्वाश्च महिषाश्च अश्वमहिषम्, अहिश्च नकुलश्च अहिनकुलम्। से तं दंदे समासे।

२९५. (प्र.) वह द्वंद्व समास क्या है ?

(उ.) द्वंद्व समास (समुच्चयप्रधानो द्वन्द्वः–जिस समास में सब पदों की प्रधानता हो वह द्वन्द्व है) के उदाहरण हैं–दन्ताश्च औष्टौ च–दन्तौष्ठम् (अंग वाचक–दाँत और होठ), स्तनौ च उदरं च–स्तनोदरम् (स्तन और उदर), वस्त्रं च पात्रं च–वस्त्रपात्रम् (वस्तु वाचक–वस्त्र और पात्र), अश्वाश्च महिषाश्च–अश्वमहिषम् (जन्मजात वैरी वाचक–अश्व और महिष), अहिश्च नकुलश्च–अहिनकुलम् (साँप और नकुल)। यह द्वन्द्व समास के उदाहरण हैं।

(A) DVANDVA SAMASA

295. (Q.) What is this *Dvandva samasa* (co-ordinative compound) ?

(Ans.) The (examples of) *Dvandva samasa* (co-ordinative compound or a compound where all components have equal importance) are as follows—*Dantashcha Oshtaucha—Dantaushtham* (teeth + lips = teeth and lips) (compounding of body parts), *Stanau cha Udaram cha—Stanodaram* (breasts + belly = breast and belly) (compounding of body parts), *Vastram cha*

Patram cha—Vastarpatram (cloth + bowls = cloth and bowls) (compounding of things), *Ashvashcha Mahishashcha—Ashvamahisham* (horse + buffalo = horse and buffalo) (compounding of natural enemies), *Ahishcha Nakulashcha—Ahinakulam* (snake + mongoose = snake and mongoose) (compounding of natural enemies).

This concludes the description of *Dvandva samasa* or co-ordinative compound.

(ख) बहुव्रीहि समास

२९६. से किं तं बहुव्वीहीसमासे ?

बहुव्वीहीसमासे–फुल्ला जम्मि गिरिम्मि कुडय–कलंबा सो इमो गिरी फुल्लियकुडय–कलंबो। से तं बहुव्वीहीसमासे।

२९६. (प्र.) बहुव्रीहि समास किसे कहते हैं ?

(उ.) बहुव्रीहि समास (जिस समास में अन्य–तीसरे पदार्थ की प्रधानता हो) का उदाहरण है–जिस पर्वत पर पुष्पित कुटज और कदंब के वृक्ष हैं, वह पर्वत फुल्लकुटजकदंब कहा जाता है। समास होने पर तीनों शब्द मिलकर किसी पर्वत का विशेषण बन गया है।

यह बहुव्रीहि समास का उदाहरण है।

(B) BAHUBRIHI SAMASA

296. (Q.) What is this *Bahubrihi samasa* (possessive compound) ?

(Ans.) The (examples of) *Bahubrihi samasa* (possessive compound or a compound where some other thing acquires possessive importance) are as follows—A hill having *Kutaj* and *Kadamb* trees in blossom (*Phulla*) is called a *Phulla-kutaj-kadamb* hill. The compound of the three terms *Phulla, Kutaj* and *Kadamb* becomes an adjective for some other thing like hill.

This concludes the description of *Bahubrihi samasa* or possessive compound.

(ग) कर्मधारय समास

२९७. से किं तं कम्मधारयसमासे ?

कम्मधारयसमासे–धवलो वसहो धवलवसहो, किण्हो मिगो किण्हमिगो, सेतो पटो सेतपटो, रत्तो पटो रत्तपटो। से तं कम्मधारयसमासे।

२९७. (प्र.) कर्मधारय समास क्या है?

(उ.) कर्मधारय समास–(जिस समास में उपमान–उपमेय तथा विशेषण–विशेष्य का बराबर सम्बन्ध होता है) का स्वरूप इस प्रकार है–'धवलो वृषभः–धवलवृषभः' (श्वेत वृषभ), 'कृष्णो मृगः–कृष्णमृगः' (काला मृग), 'श्वेतः पटः–श्वेतपटः' (श्वेत वस्त्र), 'रक्तः पटः–रक्तपटः' (लाल पट)। यह कर्मधारय समास का उदाहरण है।

(C) KARMADHARAYA SAMASA

297. (Q.) What is this *Karmadharaya samasa* (descriptive determinative compound)?

(Ans.) The (examples of) *Karmadharaya samasa* (descriptive determinative compound or a compound where subject and object of comparison or noun and adjective have determinative relationship) are as follows—*Dhavalo* (white) *Vrishabhah*—(bull) *Dhaval-vrishabhah*—A white bull is white-bull, *Krishno* (black) *Mrigah* (deer)—*Krishna-mrigah*—A black deer is black-deer, *Shvetah* (white) *Patah* (cloth)—*Shvet-patah*—A white cloth is white-cloth, *Raktah* (red) *Patah* (cloth)—*Rakta-patah*—A red cloth is red-cloth.

This concludes the description of *Karmadharaya samasa* or descriptive determinative compound.

(घ) द्विगु समास

२९८. से किं तं दिगुसमासे?

दिगुसमासे–तिण्णि कडुगा तिकडुगं, तिण्णि महुराणि तिमहुरं, तिण्णि गुणा तिगुणं, तिण्णि पुराणि तिपुरं, तिण्णि सराणि तिसरं, तिण्णि पुक्खराणि तिपुक्खरं, तिण्णि बिंदुयाणि तिबिंदुयं, तिण्णि पहा तिपहं, पंच णदीओ पंचणदं, सत्त गया सत्तगयं, नव तुरगा नवतुरगं, दस गामा दसगामं, दस पुराणि दसपुरं। से तं दिगुसमासे।

२९८. (प्र.) द्विगु समास किसे कहते हैं?

(जिस तत्पुरुष समास में पूर्व पद संख्यावाचक होता है, वह 'द्विगु समास' कहलाता है।)

(उ.) द्विगु समास का रूप इस प्रकार का है–त्रीणि कटुकानि–त्रिकटुकम्–(तीन कटुक वस्तुओं का समूह–त्रिकटुक), तीन मधुरों का समूह–त्रिमधुर, तीन गुणों का समूह–त्रिगुण, तीन पुरों–नगरों का समूह–त्रिपुर, तीन स्वरों का समूह–त्रिस्वर, तीन पुष्करों–कमलों का समूह–त्रिपुष्कर, तीन बिन्दुओं का समूह–त्रिबिन्दु, तीन पथ–रास्तों का समूह–त्रिपथ, पाँच नदियों का समूह–पंचनद, सात गजों का समूह–सप्तगज, नौ तुरगों–अश्वों का समूह–नवतुरग, दस ग्रामों का समूह–दसग्राम, दस पुरों का समूह–दसपुर। ये द्विगु समास के उदाहरण हैं।

(D) DVIGU SAMASA

298. (Q.) What is this *Dvigu samasa* (numeral compound) ?

(Ans.) The (examples of) *Dvigu samasa* (numeral compound or a compound where the first component is a numeral) are as follows—*Trini katukani—Trikatukam*—Three bitter (*katuk*) things are collectively called *Trikatuk.* In the same way three sweet (*madhur*) things are collectively called *Trimadhur,* three attributes (*guna*) are collectively called *Triguna*, three cities (*pur*) are collectively called *Tripur,* three sounds (*svar*) are collectively called *Trisvar,* three lotuses (*pushkar*) or ponds (*pushkar*) are collectively called *Tripushkar*, three drops (*bindu*) or points (*bindu*) are collectively called *Tribindu,* three paths (*path*) are collectively called *Tripath,* five rivers (*nad*) are collectively called *Panchanad,* seven elephants (*gaj*) are collectively called *Saptagaj,* nine horses (*turang*) are collectively called *Navaturang,* ten villages (*gram*) are collectively called *Dashagram* and ten cities (*pur*) are collectively called *Dashapur.*

This concludes the description of *Dvigu samasa* or numeral compound.

(च) तत्पुरुष समास

२९९. से किं तं तप्पुरिसे समासे ?

तप्पुरिसे समासे–तित्थे कागो तित्थकागो, वणे हत्थी वणहत्थी, वणे वराहो वणवराहो, वणे महिसो वणमहिसो, वणे मयूरो वणमयूरो। से तं तप्पुरिसे समासे।

२९९. (प्र.) तत्पुरुष समास क्या है?

जिस समास में उत्तर पद की प्रधानता हो वह तत्पुरुष समास कहलाता है।

(उ.) तत्पुरुष समास का उदाहरण इस प्रकार है–तीर्थे काकः–तीर्थ में काक (कौआ) तीर्थकाक, वन में हस्ती–वनहस्ती, वन में वराह–वनवराह, वन में महिष–वनमहिष, वन में मयूर–वनमयूर।

यह तत्पुरुष समास के उदाहरण हैं।

(E) TATPURUSH SAMASA

299. (Q.) What is this *Tatpurush samasa* (dependent determinative compound)?

(Ans.) The (examples of) *Tatpurush samasa* (dependent determinative compound or a compound where the first component is dependent on the second) are as follows—*Tirthe kakah—Tirthakak*—A crow (*kak*) in or belonging to a holy place (*tirtha*) is *Tirthakak.* In the same way an elephant (*hasti*) in jungle (*vana*) is *Vanahasti,* a boar (*varah*) in jungle (*vana*) is *Vanavarah,* a buffalo (*mahish*) in jungle is *Vanamahish* and a pea-cock (*mayur*) in jungle is *Vanamayur.*

This concludes the description of *Tatpurush samasa* or dependent determinative compound.

(छ) अव्ययीभाव समास

३००. से किं तं अव्वईभावे समासे ?

अव्वईभावे समासे–अणुगामं अणुणदीयं अणुफरिहं अणुचरियं। से तं अव्वईभावे समासे।

३००. (प्र.) अव्ययीभाव समास क्या है?

(उ.) अव्ययीभाव समास (जिसमें पूर्व पद की प्रधानता हो) का उदाहरण इस प्रकार है–ग्रामस्य पश्चात्–अनुग्रामम्–ग्राम के समीप या पीछे 'अनुग्राम', नद्याः पश्चात्–अनुनदी–नदी के पीछे होने वाला–'अनुनदिकम्', इसी प्रकार परिखायाः पश्चात् अनुपरिखम्–परिखा के पीछे होने वाला, अनुचरिकम्–चारिका के अनुसार होने वाला–अनुचरिकम् आदि। ये अव्ययीभाव समास के उदाहरण हैं।

(F) AVYAYIBHAAVA SAMASA

300. (Q.) What is this *Avyayibhaava samasa* (indeclinable compound)?

(Ans.) The (examples of) *Avyayibhaava samasa* (indeclinable compound or a compound made with an indeclinable word) are as follows—Near a village is called *anugram* (*anu* is an indeclinable meaning 'after' or 'near' and *gram* means village). In the same way near the river is *anunadi*, near the ditch is *anuparikh*, after (in accordance with) the good conduct is *anucharit*.

This concludes the description of *Avyayibhaava samasa* or indeclinable compound.

(ज) एकशेष समास

३०१. से किं तं एगसेसेसमासे ?

एगसेसे समासे–जहा एगो पुरिसो तहा बहवे पुरिसा जहा बहवे पुरिसा तहा एगो पुरिसो। जहा एगो करिसावणो तहा बहवे करिसावणा जहा बहवे करिसावणा तहा एगो करिसावणो। जहा एगो साली तहा बहवे सालिणो जहा बहवे सालिणो तहा एगो साली। से तं एगसेसे समासे। से तं सामासिए।

३०१. (प्र.) एकशेष समास किसे कहते हैं?

(उ.) एकशेष समास–(जिस समास में समान रूप वाले दो या दो से अधिक पदों का समास होने पर एक पद शेष रहे और दूसरे पदों का लोप हो जाये) के उदाहरण इस प्रकार हैं–जैसा एक पुरुष वैसे अनेक पुरुष और अनेक पुरुष वैसा एक पुरुष। जैसा एक कार्षापण (स्वर्ण-मुद्रा) वैसे अनेक कार्षापण और जैसे अनेक कार्षापण वैसा एक कार्षापण। जैसे एक शालि वैसे अनेक शालि और जैसे अनेक शालि वैसा एक शालि आदि। ये एकशेष समास के उदाहरण हैं। इस प्रकार से सामासिकभावप्रमाणनाम का अर्थ जानना चाहिए।

(G) EKA SHESH SAMASA

301. (Q.) What is this *Eka shesh samasa* (collective compound)?

(Ans.) The (examples of) *Eka shesh samasa* (collective compound or a compound where just a single component acquires the collective meaning of two or more components, which disappear on compounding) are as follows—As is one *purush* (one

man) so are many *purush* (many men); as are many *purush* (all men) so is one *purush* (a man) (Here 'a man' acquires the generic meaning and denotes all men as a class.). In the same way—as is one *karshapan* (one gold coin) so are many *karshapans* (many gold coins); as are many *karshapans* (all gold coins) so is one *karshapan* (a gold coin). Also, as is one *shali* (one corn) so are many *shalis* (many corns); as are many *shalis* (all corns) so is one *shali* (a corn).

This concludes the description of *Eka shesh samasa* or collective compound. This also concludes the description of *Samasik bhaava pramana naam* (a name based on compounding).

(२) तद्धितजभावप्रमाणनाम

३०२. से किं तं तद्धियए ?

तद्धियए—अट्ठविहे पण्णत्ते, तं जहा—

१. कम्मे, २. सिप्प, ३. सिलोए, ४. संजोग, ५. समीवओ, ६. य संजूहे।

७. इस्सरिया, ८. ऽवच्चेण, य तद्धितणामं तु अट्ठविहं॥१॥

३०२. **(प्र.)** तद्धित से होने वाला नाम क्या है?

(उ.) तद्धित से होने वाला नाम आठ प्रकार का है—(१) कर्म, (२) शिल्प, (३) श्लोक, (४) संयोग, (५) समीप, (६) संयूथ, (७) ऐश्वर्य, और (८) अपत्य॥१॥

विवेचन—चूर्णि के अनुसार तद्धित का अर्थ है—**तद् हित प्राप्तिहेतु भूतोऽर्थः**—जो अर्थ जिसके द्वारा जाना जाता है वह उसके ज्ञान का हेतु होने के कारण 'तद्धित' कहलाता है। कृदन्त प्रत्ययों के द्वारा धातु के और तद्धित प्रत्ययों के द्वारा शब्द के अर्थ का निर्माण होता है। तद्धितज आठ नामों का वर्णन अगले सूत्र में है।

(2) TADDHITAJ BHAAVA PRAMANA NAAM

302. (Q.) What is this *Taddhitaj bhaava pramana naam* (according to perfect validity, a name formed by nominal termination)?

(Ans.) *Taddhitaj bhaava pramana naam* (according to perfect validity, a name formed by nominal termination) is of eight kinds—(1) *Karma,* (2) *Shilp,* (3) *Shlok,* (4) *Samyoga,* (5) *Sameep,* (6) *Samyooth,* (7) *Aishvarya,* and (8) *Apatya.* (1)

Elaboration—According to the commentator (*Churni*) *taddhit* is defined as the source of meaning or the letter, sign or word representing a specific meaning called *taddhit*. Grammatically it is an affix imparting specific meaning to a word. The *kridant* (primary) affixes give meaning to verbal roots and the *taddhit* (nominal) affixes give meaning to words. The eight kinds of nominal affixes or terminations are discussed in the following aphorism.

(क) कर्मनाम

३०३. से किं तं कम्मणामे ?

कम्मणामे–दोस्सिए सोत्तिए कप्पासिए सुत्तवेतालिए भंडवेतालिए कोलालिए। से तं कम्मनामे।

३०३. (प्र.) कर्मनाम क्या है ?

(उ.) कर्म (व्यापार के कारण जिसका नाम प्रसिद्ध होता है वह) नाम के उदाहरण इस प्रकार हैं–दौष्यिक (दूष्य–वस्त्र बेचने वाला), सौत्रिक (सूत या धागे का व्यापारी), कार्पासिक (कपास का व्यापार करने वाला), सूत्रवैचारिक (सूत बेचने वाला), भांडवैचारिक (बंजारा), कौलालिक–(मिट्टी के बर्तनों का व्यापार करने वाला)। ये सब कर्मनाम हैं।

(A) KARMA NAAM

303. (Q.) What is this *Karma naam* (name associated with trade or profession) ?

(Ans.) The (examples of) *Karma naam* (name associated with trade or profession) are as follows—*Daushyik* (a person engaged in trading of *dushya* or cloth; a cloth merchant), *Sautrik* (a person engaged in trading of *sutra* or thread; a thread dealer), *Karpasik* (a person engaged in trading of *kapas* or cotton; cotton merchant), *Sutravaicharik* (a person engaged in trading of *sutra* or thread; a thread dealer), *Bhandavaicharik* (a person engaged in trading of *bhanda* or groceries; a grocer) and *Kaulalik* (a person engaged in trading of *kaulal* or earthen pots; an earthen ware dealer).

This concludes the description of *Karma naam* or name associated with profession.

(ख) शिल्पनाम

३०४. से किं तं सिप्पनामे ?

सिप्पनामे–वत्थिए तुण्णाए तंतुवाए पट्टकारे देहडे, वरुडे मुंजकारे कट्ठकारे छत्तकारे बज्झकारे पोत्थकारे चित्तकारे दंतकारे लेप्पकारे कोट्टिमकारे। से तं सिप्पनामे।

३०४. (प्र.) शिल्पनाम क्या है ?

(उ.) (शिल्प के कारण प्रसिद्ध होने वाला शिल्पनाम है) शिल्पनाम के उदाहरण इस प्रकार हैं–वास्त्रिक (वस्त्र बनाने वाला), तुन्नवाय (रफू करने वाला), तंतुवाय (जुलाहा), पट्टकार (दुशाला बनाने वाला), दृतिकार (मशक बनाने वाला), वरुट (छाब बनाने वाला), मुंजकार (मुंज बनाने वाला), काष्ठकार (काठ का काम करने वाला–बढ़ई), छत्रकार (छत्र या छाता बनाने वाला), वर्धकार (बाघचर्म रज्जु अथवा रथ बनाने वाला), पुस्तककार (जिल्दसाज), चित्रकार, दंतकार (हाथीदाँत का काम करने वाला), लेप्यकार (भवन या प्रतिमा बनाने वाला), कुट्टिमकार (खान खोदने वाला या पक्का फर्श बनाने वाला)। ये सब शिल्पनाम हैं।

(B) SHILP NAAM

304. (Q.) What is this *Shilp naam* (name associated with a craft) ?

(Ans.) The (examples of) *Shilp naam* (name associated with a craft) are as follows—*Vastrik* (a dress maker), *Tunnavaya* (a cloth-darner), *Tantuvaya* (a weaver), *Pattakar* (a shawl maker), *Dritikar* (maker of leather water-bags), *Varut* (basket maker), *Munjakar* (maker of hessian ropes), *Kashthakar* (carpenter), *Chhatrakar* (umbrella maker), *Vardhakar* (leather strap maker), *Pustakakar* (book-binder), *Chitrakar* (painter), *Dantakar* (ivory craftsman), *Lepyakar* (an artisan painting or plastering walls; also a sculptor making plaster figures), *Kuttimkar* (a miner; a mason).

This concludes the description of *Shilp naam* or name associated with craft.

(ग) श्लोकनाम

३०५. से किं तं सिलोगनामे ?

सिलोगनामे–समणे माहणे सव्वातिही। से तं सिलोगनामे।

३०५. (प्र.) श्लोकनाम किसे कहते हैं ?

(उ.) (यश-कीर्ति से प्रसिद्धि पाने वाला) श्लोकनाम के उदाहरण हैं-सबके अतिथि, श्रमण, ब्राह्मण। ये श्लोकनाम के उदाहरण हैं।

(C) SHLOK NAAM

305. (Q.) What is this *Shlok naam* (name associated with fame and reverence) ?

(Ans.) The (examples of) *Shlok naam* (name associated with fame and reverence) are as follows—*Shraman* (ascetic or sage), *Brahman* (spiritualist) and *Saravatithi* (one who is a guest of all).

This concludes the description of *Shlok naam* or name associated with fame and reverence.

(घ) संयोगनाम

३०६. से किं तं संजोगनामे ?

संजोगनामे-रण्णो ससुरए, रण्णो सालए, रण्णो सड्डुए, रण्णो जामाउए, रन्नो भगिणीवती। से तं संजोगनामे।

३०६. (प्र.) संयोगनाम किसे कहते हैं ?

(उ.) संयोगनाम के उदाहरण इस प्रकार हैं-राजा का ससुर, राजा का साला, राजा का साढू, राजा का जमाई (जामाता), राजा का बहनोई आदि। ये संयोग से प्रसिद्धि पाने वाले नाम हैं।

(D) SAMYOGA NAAM

306. (Q.) What is this *Samyoga naam* (name associated with a relationship) ?

(Ans.) The (examples of) *Samyoga naam* (name associated with a relationship) are as follows—A king's father-in-law (*sasur*), a king's brother-in-law (*sala* or wife's brother), a king's brother-in-law (*sadhu* or wife's sister's husband), a king's son-in-law (*jamai* or daughter's husband), a king's brother-in-law (*bahanoi* or sister's husband) etc.

This concludes the description of *Samyoga naam* or name associated with a relationship.

(च) समीपनाम

३०७. से किं तं समीवनामे ?

समीवनामे–गिरिस्स समीवे णगरं गिरिणगरं, विदिसाए समीवे णगरं वेदिसं, बेन्नाए समीवे णगरं बेन्नायडं, तगराए समीवे णगरं तगरायडं। से तं समीवनामे।

३०७. (प्र.) समीपनाम क्या है ?

(उ.) समीपनाम-(निकटता के कारण प्रसिद्ध होने वाले के नाम) इस प्रकार हैं–गिरि के समीप का नगर गिरिनगर, विदिशा के समीप का नगर वैदिश (वर्तमान में विदिशा मध्य प्रदेश में है), वेन्ना (नदी) के समीप का नगर वेन्नातट (वैन्न) दक्षिणापथ में कृष्णा और वेणा नदियों के आसपास का प्रदेश, तगरा के समीप का नगर तगरातट (तागर)। ये समीपनाम के उदाहरण हैं।

(E) SAMEEP NAAM

307. (Q.) What is this *Sameep naam* (name associated with proximity) ?

(Ans.) The (examples of) *Sameep naam* (name associated with proximity) are as follows—A *nagar* (town) in proximity of a *giri* (hill) is *Girinagar*, a *nagar* (town) in proximity of *Vidisha* (name of a city now in Madhya Pradesh) is *Vaidish,* a *nagar* (town) in proximity of *Vena* river (a river in South India) is *Vennatat* (literally means on the banks of river *Vena*), a *nagar* (town) in proximity of *Tagara* river is *Tagaratat.*

This concludes the description of *Sameep naam* or name associated with proximity.

(छ) संयूथनाम

३०८. से किं तं संजूहनामे ?

संजूहनामे–तरंगवतिकारे मलयवतिकारे अत्ताणुसट्ठिकारे बिन्दुकारे। से तं संजूहनामे।

३०८. (प्र.) संयूथनाम क्या है ?

(उ.) संयूथ (ग्रन्थ रचना) से प्रसिद्धि पाने वाला नाम, जैसे–तरंगवतीकार (ईसा की दूसरी शताब्दी में राजा सातवाहन के काल में आचार्य पादलिप्तसूरि ने तरंगवती की रचना

की है), मलयवतीकार, आत्मानुषष्ठिकार, बिन्दुकार आदि। ये नाम संयूथनाम के उदाहरण हैं। (ये ग्रन्थ वर्तमान में अनुपलब्ध हैं।)

(F) SAMYOOTH NAAM

308. (Q.) What is this *Samyooth naam* (name associated with authorship) ?

(Ans.) The (examples of) *Samyooth naam* (name associated with authorship) are as follows—*Tarangavatikar* (the author of the book *Tarangavati,* this is a famous work by Padaliptasuri of 2nd century during the reign of king Satavahan), *Malayavatikar* (the author of the book *Malayavati*), *Atmanushashthikar* (the author of the book *Atmanushashthi*), *Bindukar* (the author of the book *Bindu*) (All these works are still available).

This concludes the description of *Samyooth naam* or name associated with authorship.

(ज) ऐश्वर्यनाम

३०९. से किं तं ईसरियनामे ?

ईसरियनामे–राईसरे तलवरे माडंबिए कोडुंबिए इब्भे सेट्ठी सत्थवाहे सेणावई। से तं ईसरियनामे।

३०९. (प्र.) ऐश्वर्यनाम क्या है ?

(उ.) ऐश्वर्य सूचक शब्दों से बनने वाला ऐश्वर्यनाम है, जैसे–राजा, ईश्वर (समर्थ या शक्तिशाली), तलवर (कोतवाल), माडंबिक (ग्राम नायक), कौटुम्बिक (कुल का मुखिया), इभ्य (धनपति या बड़ा व्यापारी), श्रेष्ठी (साहूकार), सार्थवाह (सार्थ, व्यापारियों के समूह का नायक या संचालक), सेनापति आदि। यह ऐश्वर्यनाम का स्वरूप है।

(G) AISHVARYA NAAM

309. (Q.) What is this *Aishvarya naam* (name associated with wealth or power) ?

(Ans.) The (examples of) *Aishvarya naam* (name associated with wealth or power) are as follows—*Rajeshvar* (king), *Talavar* (noble or knight of honour), *Madambik* (landlord or governor), *Kautumbik* (head of the family), *Ibhya* (rich man or wealthy

merchant), *Shreshthi* (businessman), *Sarthavaha* (caravan chief) and *Senapati* (army chief).

This concludes the description of *Aishvarya naam* or name associated with wealth or power.

(ग) अपत्यनाम

३१०. से किं तं अवच्चनामे ?

अवच्चनामे–तित्थयरमाया चक्कवट्टिमाया बलदेवमाया वासुदेवमाया रायमाया गणिमाया वायगमाया। से तं अवच्चनामे। से तद्धिते।

३१०. (प्र.) अपत्यनाम किसे कहते हैं ?

(उ.) अपत्य-पुत्र के कारण प्रसिद्ध होने वाला नाम, जैसे-तीर्थंकरमाता, चक्रवर्तीमाता, बलदेवमाता, वासुदेवमाता, राजमाता, गणिमाता, वाचकमाता आदि। ये अपत्यनाम हैं। यह तद्धित प्रत्यय से बनने वाले नाम की वक्तव्यता है।

(H) APATYA NAAM (Name Associated with Progeny)

310. (Q.) What is this *Apatya naam* (name associated with progeny) ?

(Ans.) The (examples of) *Apatya naam* (name associated with progeny) are as follows—*Tirthankar-mata* (the mother whose son is a *Tirthankar*), *Chakravarti-mata* (the mother whose son is a *Chakravarti*), *Baladev-mata* (the mother whose son is a *Baladev*), *Vasudev-mata* (the mother whose son is a *Vasudev*), *Raaj-mata* (the mother whose son is a *Raaja* or king), *Gani-mata* (the mother whose son is a *Gani* or leader of a group of ascetics), *Vachak-mata* (the mother whose son is a *Vachak* or a scriptural scholar).

This concludes the description of *Apatya naam* or name associated with progeny. This also concludes the description of *Taddhitaj bhaava pramana naam* (according to perfect validity, a name formed by nominal termination).

(३) धातुजनाम

३११. से किं तं धाउए ?

धाउए भू सत्तायां परस्मैभाषा, एध वृद्धौ, स्पर्द्ध संहर्षे, गाधृ प्रतिष्ठा–लिप्सयोर्ग्रन्थे च, बाधृ लोडने। से तं धाउए।

३११. (प्र.) धातुजनाम क्या है?

(उ.) धातु से बनने वाला नाम, जैसे–परस्मैपदी भू धातु सत्ता अर्थ में है, एध धातु वृद्धि अर्थ में, स्पर्द्धा धातु संघर्ष अर्थ में, गाधृ धातु-प्रतिष्ठा, लिप्सा और ग्रन्थ अर्थ में, बाधृ धातु विलोडन अर्थ में है। ये धातुजनाम के उदाहरण हैं।

(3) DHATUJ NAAM

311. (Q.) What is this *Dhatuj bhaava pramana naam* (according to perfect validity, a name based on verbal roots) ?

(Ans.) The (examples of) *Dhatuj bhaava pramana naam* (according to perfect validity, a name based on verbal roots) are as follows—

Bhu (is a verbal root) in the sense of 'to exist' and is in the active form, *Edha* (is a verbal root) in the sense of 'to increase' or 'to rise', *Spardha* (is a verbal root) in the sense of 'to exercise rivalry or envy', *Gadhri* (is a verbal root) in the sense of 'to stand firmly'; 'to desire' and 'to string together' *Badhri* (is a verbal root) in the sense of 'to agitate'.

This concludes the description of *Dhatuj bhaava pramana naam* (according to perfect validity, a name based on verbal roots).

(४) निरुक्तिजनाम

३१२. से किं तं निरुत्तिए ?

निरुत्तिए–मह्यां शेते महिषः, भ्रमति च रौति च भ्रमरः, मुहुर्मुहुर्लसति मुसलं, कपिरिव लम्बते त्थच्च करोति कपित्थं, चिदिति करोति खल्लं च भवति चिक्खल्लं, ऊर्ध्वकर्णः उलूकः, मेखस्य माला मेखला। से तं निरुत्तिए। से तं भावप्पमाणे। से तं पमाणनामे। से तं दसनामे। से तं नामे।

॥ नामे त्ति पयं सम्मत्तं ॥

३१२. (प्र.) निरुक्तिजनाम क्या है?

(उ.) निरुक्ति (व्युत्पत्ति) से होने वाला निरुक्तिजनाम है, जैसे–**मह्यां शेते महिषः**–पृथ्वी पर सोता है, इसलिए वह महिष–भैंसा। **भ्रमति रौति इति भ्रमरः**–जो भ्रमण और गुंजन शब्द

करता है वह भ्रमर। मुहुर्मुहुर्लसति इति मुसलं–जो बारंबार ऊँचा-नीचा होता है वह मूसल। कपिरिव लम्बते त्यच्चं (चेष्टा) करोति इति कपित्थं–कपि-बंदर के समान वृक्ष की शाखा पर झूलता है और 'त्थ' इस प्रकार की ध्वनि करता है वह कपित्थ (एक प्रकार का फल-कैंथ)। चिच्च करोति खल्लं च भवति इति चिक्खल्लं–पैरों के साथ जो चिपकता है और चींचीं करता है वह चिक्खल (कीचड़)। ऊर्ध्वकर्णः इति उलूकः–जिसके कान ऊपर उठे हों वह उलूक (उल्लू)। मेखस्य माला मेखला–मेघों की माला–मेखला इत्यादि।

ये निरुक्तिजतद्धितनाम हैं। यह भावप्रमाण से होने वाला नाम है। इस प्रकार प्रमाण नाम, दसनाम और नामाधिकार की वक्तव्यता समाप्त।

॥ नामपद प्रकरण समाप्त ॥

(4) NIRUKTIJ NAAM

312. (Q.) What is this *Niruktij bhaava pramana naam* (according to perfect validity, an etymologically derived name) ?

(Ans.) The (examples of) *Niruktij bhaava pramana naam* (according to perfect validity, an etymologically derived name) are as follows—

Mahyam shete mahishah—A *mahish* (buffalo) is so called because it lies down (*shete*) on earth *(mahi)*. In the same way a *bhramar* (bumble-bee) is so called because it wanders (*bhramati*) and hums (*rauti*), a *musal* (mace) is so called because it rises and falls (*lasati*) again and again (*muhurmuhu*), a *kapittha* (a fruit, *Feronia limonia*) is so called because it swings like a monkey on branches of a tree (*kapiriva lambate*) and produces the sound *'ttha'*, *chikkhal* (slime) is so called because when trod over it produces the sound *chichi* and is pressed down under feet (*khallam bhavati*), an *Uluk* (owl) is so called because it has erect (*urdhva*) ears (*karn*) and a *mekhala* (girdle) is so called because it is like a garland (*mala*) of clouds (*mekha*).

This concludes the description of *Niruktij bhaava pramana naam* (according to perfect validity, an etymologically derived name). This also concludes the description of *Bhaava pramana naam* (name according to validity as essence or perfect validity). This concludes the description of *Das nama* (Ten-named) as well as *Naam* (name).

● END OF THE DISCUSSION ON NAME ●

प्रमाण-प्रकरण
THE DISCUSSION ON PRAMANA

[सूत्र ९२ में उपक्रम के छह भेद बताये थे-(१) आनुपूर्वी, (२) नाम, (३) प्रमाण, (४) वक्तव्यता, (५) अर्थाधिकार, और (६) समवतार। आनुपूर्वी और नाम का वर्णन पूर्ण हो जाने पर अब प्रमाण का वर्णन प्रारम्भ होता है।]

[In aphorism 92 it is mentioned that *Upakram* (introduction) is of six types—(1) *Anupurvi* (sequence/sequential configuration), (2) *Naam* (name), (3) *Pramana* (validity), (4) *Vaktavyata* (explication), (5) *Arthadhikar* (giving synopsis), and (6) *Samavatar* (assimilation). After concluding the first two, *Anupurvi* and *Nama*, the discussion of the third, *Pramana*, starts now.]

३१३. से किं तं पमाणे ?

पमाणे चउव्विहे पण्णत्ते। तं जहा-१. दव्वप्पमाणे, २. खेत्तप्पमाणे, ३. कालप्पमाणे, ४. भावप्पमाणे।

३१३. (प्र.) प्रमाण क्या है ?

(उ.) प्रमाण के चार प्रकार हैं, जैसे-(१) द्रव्यप्रमाण, (२) क्षेत्रप्रमाण, (३) कालप्रमाण, और (४) भावप्रमाण।

विवेचन-'प्रमाण' शब्द का अर्थ है, ज्ञान का साधन अथवा यथार्थ ज्ञान। न्याय व दर्शन ग्रन्थों में 'प्रमाण' शब्द का यही अर्थ प्रसिद्ध है। वहाँ प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान और आगम-इन चार प्रमाणों की विस्तृत चर्चा मिलती है। किन्तु आगम केवल दार्शनिक ग्रन्थ नहीं है, यह समग्र तत्त्व विषयक ज्ञान का कोष है, इसलिए यहाँ प्रमाण शब्द का प्रयोग व्यापक अर्थ में किया गया है। वृत्तिकार का कथन है-"जिसके द्वारा किसी वस्तु का माप-तौल किया जाये अथवा अन्य प्रकार से वस्तु जानी जाए उन सभी साधनों व हेतुओं को 'प्रमाण' के अन्तर्गत लिया है।" जब तक द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव-इन चार अपेक्षाओं से किसी विषय की चर्चा नहीं की जाय तब तक वह विषय पूर्ण स्पष्ट नहीं हो सकता। इसलिए यहाँ प्रमाण के द्रव्यप्रमाण, क्षेत्रप्रमाण, कालप्रमाण तथा भावप्रमाण-ये चार भेद बताये हैं और, इन अपेक्षाओं से प्रमाण चर्चा की है। द्रव्यप्रमाण में तत्कालीन समाज में प्रचलित मान, उन्मान आदि मानदण्डों की व्यावहारिक जानकारी है। क्षेत्रप्रमाण में तीन प्रकार के अंगुल, पुरुष आदि क्षेत्र-नाप के साधनों की चर्चा है। कालप्रमाण में समय, घटिका, मुहूर्त्त से लेकर पल्योपम, सागरोपम तक काल की चर्चा है। भावप्रमाण में दार्शनिक ग्रन्थों में प्रचलित, प्रत्यक्ष, अनुमान आदि चार प्रमाणों की चर्चा हुई है। सर्वप्रथम द्रव्यप्रमाण की चर्चा है।

313. (Q.) What is this *Pramana* (standard of measurement) ?

(Ans.) *Pramana* (standard of measurement) is of four kinds—

(1) *Dravya pramana* (standard of physical measurement), (2) *Kshetra pramana* (standard of measurement of area), (3) *Kaal pramana* (standard of measurement of time), and (4) *Bhaava pramana* (standard of measurement of state).

Elaboration—The meaning of the word '*pramana*' is means of knowledge or true knowledge. This is the popularly accepted meaning of *pramana* in the works of logic and philosophy. There, detailed discussion is available about four kinds of *pramana*, namely *Pratyaksh* (direct or evident reality), *Anumaan* (postulation), *Upamaan* (comparison) and *Agam* (scriptural). However, *Agams* are not just books of philosophy, they are the compendiums of all knowledge about fundamentals. Therefore here *pramana* has been used in its wider meaning. The commentator (*Vritti*) says—"The standards and means and concepts of measuring and assessing and knowing full range of dimensions and attributes of a thing have all been included in the meaning of the term *pramana*." As long as a subject is not examined and discussed in the four contexts of *Dravya* (matter), *Kshetra* (area), *Kaal* (time) and *Bhaava* (state) it cannot become explicit. That is the reason these four kinds of *pramana* have been mentioned here and the subject of *pramana* has been discussed in these contexts. *Dravya pramana* includes the standard units of measurement of physical dimensions prevalent during that period. *Kshetra pramana* includes the standards of measurement of area including *angul* (breadth of human finger) and *purush* (length of the human body). *Kaal pramana* includes the units of time including *samaya, ghatika, muhurt, palyopam* and *sagaropam*. *Bhaava pramana* includes the philosophical and logical meanings of *pramana*, including *pratyaksh* (direct or evident reality) and *anumaan* (postulation). The discussion starts with *Dravya pramana* (standard of physical measurement).

(क) द्रव्यप्रमाण

३१४. से किं तं दव्वप्पमाणे ?

दव्वप्पमाणे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा–१. पदेसनिप्फण्णे य, २. विभागनिप्फण्णे य।

३१४. (प्र.) द्रव्यप्रमाण क्या है?

(उ.) द्रव्यप्रमाण के दो प्रकार हैं, जैसे-(१) प्रदेशनिष्पन्न, और (२) विभागनिष्पन्न।

(A) DRAVYA PRAMANA

314. (Q.) What is this *Dravya pramana* (standard of physical measurement)?

(Ans.) *Dravya pramana* (standard of physical measurement) is of two kinds—(1) *Pradesh nishpanna* (space-point related), and (2) *Vibhag nishpanna* (fragmentary).

(१) प्रदेशनिष्पन्नद्रव्यप्रमाण

३१५. से किं तं पदेसनिप्फण्णे ?

पदेसनिप्फण्णे परमाणुपोग्गले दुपएसिए जाव दसपएसिए संखिज्जपएसिए असंखिज्जपएसिए अणंतपएसिए। से तं पदेसनिप्फण्णे।

३१५. (प्र.) प्रदेशनिष्पन्नद्रव्यप्रमाण क्या है?

(उ.) परमाणु पुद्गल, द्विप्रदेश यावत् दस प्रदेश, संख्यात प्रदेश, असंख्यात प्रदेश और अनन्त प्रदेशों से निष्पन्न होने वाला। यह प्रदेशनिष्पन्नद्रव्यप्रमाण है।

विवेचन-'प्रदेश' का अर्थ है, आकाश का वह उतना अंश जितना एक परमाणु होता है, परन्तु वह आकाश से भिन्न (अलग) नहीं है। प्रदेशनिष्पन्नद्रव्यप्रमाण में मेय और मापक पृथक्-पृथक् नहीं होते। वस्तु का अभिन्न संलग्न अंश अवयव ही उसका मापक होता है, जैसे-परमाणु, द्विप्रदेशी स्कन्ध यावत् अनन्तप्रदेशी स्कन्ध।

जिसमें मेय (वस्तु) और मापक (प्रमाण) दोनों अलग-अलग होते हैं, उसे विभागनिष्पन्न कहा जाता है। जैसे-चालीस सेर = एक मन, सौ किलो = एक क्विंटल।

(1) PRADESH NISHPANNA DRAVYA PRAMANA

315. (Q.) What is this *Pradesh nishpanna dravya pramana* (space-point related standard of physical measurement)?

(Ans.) The (examples of) *Pradesh nishpanna dravya pramana* (space-point related standard of physical measurement) are as follows—*Paramanu pudgal* (ultimate-particle of matter or one space-point), an aggregate (*skandh*) of two space-points (and so on...), an aggregate (*skandh*) of ten space-points, an aggregate

(*skandh*) of countable space-points, an aggregate (*skandh*) of uncountable space-points and an aggregate (*skandh*) of infinite space-points.

This concludes the description of *Pradesh nishpanna dravya pramana* (space-point related standard of physical measurement).

Elaboration—'*Pradesh*' means the fraction of space that is occupied by a single *paramanu* (ultimate-particle) but this ultimate-particle is not separated from space. In this space-point related standard of measurement the substance and the measure are not different. The inseparable portion of the substance is the measure. For example, the space that is occupied by one *paramanu* (ultimate-particle), the space that is occupied by two *paramanus* and so on.

Where the substance and the measure are different it is called fragmentary standard of measurement. For example, 40 *Seers* make a *Maund,* 100 kilograms make a quintal.

(२) विभागनिष्पन्नद्रव्यप्रमाण

३१६. से किं तं विभागनिप्फण्णे ?

विभागनिप्फण्णे पंचविहे पण्णत्ते। तं जहा-१. माणे, २. उम्माणे, ३. ओमाणे, ४. गणिमे, ५. पडिमाणे।

३१६. (प्र.) विभागनिष्पन्नद्रव्यप्रमाण क्या है ?

(उ.) विभागनिष्पन्नद्रव्यप्रमाण के पाँच प्रकार हैं, जैसे-(१) मानप्रमाण, (२) उन्मानप्रमाण, (३) अवमानप्रमाण, (४) गणिमप्रमाण, और (५) प्रतिमानप्रमाण।

विवेचन-विभागनिष्पन्न द्रव्यप्रमाण के पाँचों प्रकारों के अर्थ इस प्रकार हैं-

(१) **मान**-जिससे तेल आदि तरल पदार्थों तथा धान्य आदि ठोस पदार्थों का माप किया जाय वह पात्र विशेष 'मान' कहा जाता है।

(२) **उन्मान**-वजन तोलने की तराजू आदि।

(३) **अवमान**-लम्बाई, चौड़ाई तथा गहराई मापने के दण्ड, गज आदि।

(४) **गणिम**-जिसमें एक, दो, तीन आदि गणना (गिनती) की जाये।

(५) **प्रतिमान**-जिसके द्वारा स्वर्ण आदि मूल्यवान वस्तुओं का वजन किया जाये।

(2) VIBHAG NISHPANNA DRAVYA PRAMANA

316. (Q.) What is this *Vibhag nishpanna dravya pramana* (fragmentary standard of physical measurement) ?

(Ans.) *Vibhag nishpanna dravya pramana* (fragmentary standard of physical measurement) is of five kinds—(1) *Maan pramana* (volume measure), (2) *Unmaan pramana* (weight measure), (3) *Avamaan pramana* (linear measure), (4) *Ganim pramana* (numerical measure), and (5) *Pratimaan pramana* (precision weight measure).

Elaboration—The meanings of the five types of *Vibhag nishpanna dravya pramana* (fragmentary standard of physical measurement) are as follows—

(1) **Maan**—A pot or scoop of standard dimensions used to measure volume or quantity of liquids like oil or solids like food-grains.

(2) **Unmaan**—Weighing balance or other such instruments.

(3) **Avamaan**—Scales for linear measures like length, breadth and depth.

(4) **Ganim**—Counting.

(5) **Pratimaan**—Finer or accurate weighing balance for precious metals and other things.

(क) मानप्रमाण

३१७. से किं तं माणे ?

माणे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा–१. धन्नमाणप्पमाणे य, २. रसमाणप्पमाणे य।

३१७. (प्र.) मानप्रमाण क्या है ?

(उ.) मानप्रमाण दो प्रकार का है–(१) धान्यमानप्रमाण, और (२) रसमानप्रमाण।

(A) MAAN PRAMANA

317. (Q.) What is this *Maan pramana* (volume measure) ?

(Ans.) *Maan pramana* (volume measure) is of two kinds—(1) *Dhaanya maan pramana* (volume measure of food-grains), and (2) *Rasa maan pramana* (volume measure of liquids).

३१८. से किं तं धण्णमाणप्पमाणे ?

धण्णमाणप्पमाणे दो असतीओ पसती, दो पसतीओ सेतिया, चत्तारि सेतियाओ कुलओ, चत्तारि कुलया पत्थो, चत्तारि पत्थया आढयं, चत्तारि आढयाइं दोणो, सट्ठिं आढयाइं जहन्नए कुंभे, असीति आढयाइं मज्झिमए कुंभे, आढयसतं उक्कोसए कुंभे, अट्ठ आढयसतिए वाहे।

३१८. (प्र.) धान्यमानप्रमाण क्या है ?

(उ.) धान्यमानप्रमाण इस प्रकार है-

दो असृति (एक पल का माप) की एक प्रसृति,

दो प्रसृति की एक सेतिका,

चार सेतिका का एक कुडब,

चार कुडब का एक प्रस्थक,

चार प्रस्थकों का एक आढक,

चार आढक का एक द्रोण,

साठ आढक का एक जघन्य कुंभ,

अस्सी आढक का एक मध्यम कुंभ,

सौ आढक का एक उत्कृष्ट कुंभ, तथा

आठ सौ आढकों का एक बाह।

(1) DHAANYA MAAN PRAMANA

318. (Q.) What is this *Dhaanya maan pramana* (volume measure of food-grains) ?

(Ans.) The (examples of) *Dhaanya maan pramana* (volume measure of food-grains) are as follows—

two *asritis* (one *asriti* being one handful of food-grains) make one *prasriti*,

two *prasritis* make one *setika*,

four *setikas* make one *kudab*,

four *kudabs* make one *prasthak,*
four *prasthaks* make one *adhak,*
four *adhaks* make one *dron,*
sixty *adhaks* make one smallest *kumbh* (pitcher or pot),
eighty *adhaks* make one medium *kumbh,*
one hundred *adhaks* make one largest *kumbh,* and
eight hundred *adhaks* make one *baha* (one cart load).

३१९. एएणं धण्णमाणप्पमाणेणं किं पयोयणं ?

एएणं धण्णमाणप्पमाणेणं मुत्तोली–मुरव–इड्डर–अलिंद–अपवारिसंसियाणं धण्णाणं धण्णमाणप्पमाणनिव्वित्तिलक्खणं भवति। से तं धण्णमाणप्पमाणे।

३१९. (प्र.) इस धान्यमानप्रमाण का प्रयोजन क्या है ?

(उ.) इस धान्यमानप्रमाण के द्वारा धान्य का माप होता है। इससे मुत्तोली, मुरव, इड्डर, अलिंद, अपचारि आदि में रखे धान्य के प्रमाण का ज्ञान होता है। यह धान्यप्रमाण है।

विवेचन–जिससे धान्य आदि ठोस पदार्थ का माप होता है वह धान्यमानप्रमाण है। असृति, प्रसृति आदि प्राचीन मगध देश में प्रचलित माप थे। असृति धान्यादि ठोस वस्तुओं के मापने की आद्य इकाई है। प्रसृति आदि मापों की उत्पत्ति का मूल भी यह असृति है।

टीकाकार के अनुसार उल्टी हथेली रखकर मुट्ठी में जितना धान्य समा जाये उसे एक असृति कहते हैं। वर्तमान में एक असृति या एक पल, लगभग चार तोला अर्थात् ०.०५ सेर अर्थात् ४६.६४ ग्राम वजन के बराबर होता है। एक द्रोण धान्य में लगभग १ मन ११.२० सेर या ४७.४५ किलोग्राम वजन माना जाता है।

उस समय में धान्य के प्रचलित भंडारण स्थान इस प्रकार हैं–

मुत्तोली–ऐसी कोठी जो खड़े मृदंग के आकार जैसी ऊपर-नीचे सँकड़ी और मध्य में कुछ विस्तृत, चौड़ी होती है।

मुरव–सूत का बना हुआ बड़ा बोरा, जिसे कहीं-कहीं 'फट्ट' भी कहते हैं और उसमें भरकर बेचने के लिए मण्डियों, बाजारों में लाया जाता है।

इड्डर–यह बकरी आदि के बालों, सूत या सुतली की बनी हुई होती है और इसमें अनाज भरकर पीठ पर लादकर लाते हैं। कहीं-कहीं इसे गुण, गोन, कोथला या बोरा भी कहते हैं।

अलिंद–अनाज को भरकर लाने का बर्तन, पात्र, डलिया, कुंडा आदि।

अपचारि–बंडा, खंती, धान्य को सुरक्षित रखने के लिए जमीन के अन्दर या बाहर बनायी गयी कोठी, आज की भाषा में 'सायलो'।

319. (Q.) What is the purpose of this *Dhaanya maan pramana* (volume measure of food-grains) ?

(Ans.) This *Dhaanya maan pramana* (volume measure of food-grains) is used to measure the quantity of food-grains or cereals. With the help of this the quantity of cereals stored in the following was measured—*Muktoli, murav, iddar, alind, apachari* etc.

This concludes the description of *Dhaanya maan pramana* (volume measure of food-grains).

Elaboration—That which is used to measure solids like cereals and food-grains is called *Dhanya maan pramana* (volume measure of food-grains). *Asriti, prasriti* etc. were the popular units of grain measurement in the ancient state of Magadh.

One *asriti* is approximately one handful of an average man. The modern equivalent of *asriti* or *pal* is approximately four *Tolas* or 0.05 *Seers* or 46.64 gms. One *dron* measure was equivalent to approximately 1 *Maund* and 11.20 *Seers* or 47.45 kgs.

The names of popular places of storage of food-grains during that period are as follows—

Muktoli—A barrel shaped bin, narrow at the top and bottom and broader in the middle.

Murav—Also called '*phatt*' at some places is a large cotton sack used for packing food-grains and transporting it to markets.

Iddar—A sack or bag made of goat-hair, cotton or hessian used to carry food-grains on shoulders; other names for this are *guna, gone, kothala* or *bora.*

Alind—Various utensils, pots, baskets and troughs used for carrying food-grains.

Apachari—*Banda, khanti* and other large constructed areas under and over the ground for storage of large quantities of food-grains. Something like modern *silos.*

(२) रसमानप्रमाण

३२०. से किं तं रसमाणप्पमाणे ?

रसमाणप्पमाणए धण्णमाणप्पमाणाओ चउभागविवड्डिए अब्भिंतरसिहाजुत्ते रसमाणप्पमाणे विहिज्जति। तं जहा–चउसट्ठिया ४, बत्तीसिया ८, सोलसिया १६, अट्ठभाइया ३२, चउभाइया ६४, अद्धमाणी १२८, माणी २५६।

दो चउसट्ठियाओ बत्तीसिया, दो बत्तीसियाओ सोलसिया, दो सोलसियाओ अट्ठभाइया, दो अट्ठभाइयाओ चउभाइया, दो चउभाइयाओ अद्धमाणी, दो अद्धमाणीओ माणी।

३२०. (प्र.) रसमानप्रमाण क्या है ?

(उ.) रसमानप्रमाण धान्यमानप्रमाण से चार भाग अधिक और आभ्यन्तर शिखा से युक्त होता है। वह इस प्रकार है–चार पल की एक चतुःषष्ठिका होती है। इसी प्रकार आठ पलप्रमाण द्वात्रिंशिका, सोलह पलप्रमाण षोडशिका, बत्तीस पलप्रमाण अष्टभागिका, चौंसठ पलप्रमाण चतुर्भागिका, एक सौ अट्ठाईस पलप्रमाण अर्धमानी और दो सौ छप्पन पलप्रमाण मानी होती है।

इसका अर्थ यह हुआ कि–दो चतुःषष्ठिका की एक द्वात्रिंशिका, दो द्वात्रिंशिका की एक षोडशिका, दो षोडशिकाओं की एक अष्टभागिका, दो अष्टभागिकाओं की एक चतुर्भागिका, दो चतुर्भागिकाओं की एक अर्धमानी और दो अर्धमानियों की एक मानी होती है।

(2) RASA MAAN PRAMANA

320. (Q.) What is this *Rasa maan pramana* (volume measure of liquids) ?

(Ans.) *Rasa maan pramana* (volume measure of liquids) is one quarter more than the *Dhaanya maan pramana* (volume measure of food-grains) and its crest is inwards. It is as follows—four *pals* make one *chatuhshashtika* (sixty fourth fraction), eight *pals* make one *dvatrinshika* (thirty second fraction), sixteen *pals* make one *shodashika* (sixteenth fraction), thirty two *pals* make one *ashtabhagika* (eighth fraction), sixty four *pals* make one *chaturbhagika* (fourth fraction), one hundred twenty eight *pals* make one *ardhamani* (one half of a *mani*) and two hundred fifty six *pals* make one *mani*.

In other words—two *chatuhshashtika* (one sixty fourth fraction) make one *dvatrinshika* (one thirty second fraction), two *dvatrinshikas* (one thirty second fraction) make one *shodashika* (one sixteenth fraction), two *shodashikas* (one sixteenth fraction) make one *ashtabhagika* (one eighth fraction), two *ashtabhagikas* (one eighth fraction) make one *chaturbhagika* (one fourth fraction), two *chaturbhagikas* (one fourth fraction) make one *ardhamani* (one half of a *mani*) and two *ardhamanis* (one half of a *mani*) make one *mani.*

३२१. एतेणं रसमाणप्पमाणेणं किं पओयणं ?

एएणं रसमाणप्पमाणेणं वारग–घडग–करग–किक्किरि–दइय–करोडि–कुंडियसंसियाणं रसाणं रसमाणप्पमाणनिव्वित्तिलक्खणं भवइ। से तं रसमाणप्पमाणे। से तं माणे।

३२१. (प्र.) इस रसमानप्रमाण का क्या प्रयोजन है?

(उ.) इस रसमानप्रमाण से वारक (छोटा घड़ा), घट-कलश, करक (झारी), किक्किरि (गगरी या कलशी), दृति (चमड़े से बना पात्र-कुप्पा दीवड़ी), कोरडिका (बड़ी कुंडी) और कुंडिका (कुंडी) आदि में भरे हुए रसों (तरल पदार्थों) का परिमाण जाना जाता है। यह रसमानप्रमाण है। यह मानप्रमाण का स्वरूप है।

विवेचन–इन दो सूत्रों में रसमानप्रमाण का स्वरूप, धान्यमानप्रमाण से उसकी पृथकता तथा तरल पदार्थों के मापने के पात्रों के नाम का उल्लेख है।

अब्भिंतर सिहा जुत्ते–पद द्वारा धान्यमान और रसमान–इन दोनों प्रकार के मानप्रमाणों का अन्तर स्पष्ट किया है। धान्यमानप्रमाण के द्वारा ठोस पदार्थों को मापा जाता है और मापे जाने वाले ठोस पदार्थ का शिरोभाग-शिखा-ऊपर का भाग ऊपर की ओर होता है। धान्य की ढेरी लगाने पर वह ऊपर की तरफ ऊँची उठी हुई रहती है, जिसे शिरोभाग कहा जाता है। लेकिन रसमानप्रमाण के द्वारा तरल-द्रव पदार्थों का माप किये जाने और तरल पदार्थों की शिखा अन्तर्मुखी-अन्दर की ओर होने से वह सेतिका आदि रूप धान्यमानप्रमाण से चतुर्भागाधिक वृद्धि रूप होता है।

रसमानप्रमाण के प्रयोजन के प्रसंग में जिन पात्रों का उल्लेख किया गया है, ये तत्कालीन मगध देश में तरल पदार्थों को भरने के उपयोग में आने वाले पात्र हैं। ये पात्र मिट्टी, चमड़े एवं धातुओं से बने होते थे। संक्षेप में धान्यमानप्रमाण तथा रसमानप्रमाण को अगली तालिका से समझना चाहिए–

धान्यमान प्रमाण

असृति = १ पल = ४ तोला = ०.०५ सेर = ४६.६४ ग्राम

प्रसृति = २ पल = ८ तोला = ०.१० सेर = ९३.२८ ग्राम

सेतिका = ४ पल = १६ तोला = ०.२० सेर = १८६.५६ ग्राम

कुडब = १६ पल = ६४ तोला = ०.८० सेर = ७४६.२४ ग्राम

प्रस्थक = ६४ पल = २५६ तोला = ३.२० सेर = २.९८५ किलो

आढक = २५६ पल = १,०२४ तोला = १२.८० सेर = ११.९४ किलो

द्रोण (४ आढक) = १,०२४ पल = ४,०९६ तोला = ५१.२० सेर = ४७.७६ किलो

जघन्य कुम्भ (६० आढक) = १५,३६० पल = ६१,४४० तोला = १९.२ मन = ७.१६ क्विंटल

मध्यम कुम्भ (८० आढक) = २०,४८० पल = ८१,९२० तोला = २५.६० मन = ९.५५ क्विंटल

उत्कृष्ट कुम्भ (१०० आढक) = २५,६०० पल = १,०२,४०० तोला = ३२ मन = १.१९ टन

बाह (८०० आढक) = २,०४,८०० पल = ८,१९,२०० तोला = २५६ मन = ९.५५ टन

रसमानप्रमाण

चतुःषष्टिका = ४ पल = माणी का चौंसठवाँ भाग = १६ तोला = ०.२० सेर = १८६.५६ ग्राम

द्वात्रिंशिका = ८ पल = माणी का बत्तीसवाँ भाग = ३२ तोला = ०.४० सेर = ३७३.१२ ग्राम

षोडशिका = १६ पल = माणी का सोलहवाँ भाग = ६४ तोला = ०.८० सेर = ७४६.२४ ग्राम

अष्टभागिका = ३२ पल = माणी का आठवाँ भाग = १२८ तोला = १.६० सेर = १.४९ किलोग्राम

चतुर्भागिका = ६४ पल = माणी का चौथा भाग = २५६ तोला = ३.२० सेर = २.९९ किलोग्राम

अर्धमाणी = १२८ पल = माणी का आधा भाग = ५१२ तोला = ६.४० सेर = ५.९८ किलोग्राम

माणी = २५६ पल = १,०२४ तोला = १२.८० सेर = ११.९४ किलोग्राम

321. (Q.) What is the purpose of this *Rasa maan pramana* (volume measure of liquids) ?

(Ans.) This *Rasa maan pramana* (volume measure of liquids) is used to measure the quantity of liquids. With the help of this the quantity of liquids stored in the following was measured—*Varak* (small pitcher), *Ghat* (pitcher), *Karak* (*jhari* or a pitcher with a long neck), *Kikkiri* (*kalashi* or urn), *Driti* (a large leather flask), *Koradika* (large trough) and *Kundika* (small trough or basin).

This concludes the description of *Rasa maan pramana* (volume measure of liquids). This also concludes the description of *Maan pramana* (volume measure).

Elaboration—These two aphorisms describe liquid measures, their difference from food-grain measures and names of pots used to measure quantities of liquids.

Abbhintar siha jutte (abhyantara shikha yukt)—This phrase defines the difference between food-grain measure and liquid measure. With the *Dhaanya maan pramana* (volume measure of food-grains) solids in granular form are measured and these have a crest at the top. When made into a heap while measuring, these solids have an upward pointing crest. But when the liquids are measured they are level at the top. This is defined here as inverted or inward crest. This also accounts for the liquid measures to be considered as one quarter more than the equivalent solid measures.

The pots mentioned in context of *Rasa maan pramana* (volume measure of liquids) are those in popular use during that period in the state of Magadh. These pots were made of clay, leather or metal. In brief these two measures and their modern equivalents are as follows—

DHAANYA MAAN PRAMANA (VOLUME MEASURE OF FOOD-GRAINS)

Asriti = 1 *Pal* = 4 *Tola* = 0.05 *Seers* = 46.64 gms.

Prasriti = 2 *Pal* = 8 *Tola* = 0.10 *Seers* = 93.28 gms.

Setika = 4 *Pal* = 16 *Tola* = 0.20 *Seers* = 186.56 gms.

Kudab = 16 *Pal* = 64 *Tola* = 0.80 *Seers* = 746.24 gms.

Prasthak = 64 *Pal* = 256 *Tola* = 3.20 *Seers* = 2.985 kgs.

Adhak = 256 *Pal* = 1,024 *Tola* = 12.80 *Seers* = 11.94 kgs.

Dron (4 *Adhak*) = 1,024 *Pal* = 4,096 *Tola* = 51.20 *Seers* = 47.76 kgs.

Mini-*Kumbh* (60 *Adhak*) = 15,360 *Pal* = 61,440 *Tola* = 19.2 *Maunds* = 7.16 quintals.

Midi-*Kumbh* (80 *Adhak*) = 20,480 *Pal* = 81,920 *Tola* = 25.60 *Maunds* = 9.55 quintals.

Maxi-*Kumbh* (100 *Adhak*) = 25,600 *Pal* = 1,02,400 *Tola* = 32 *Maunds* = 1.19 metric tonnes.

Baha (800 *Adhak*) = 2,04,800 *Pal* = 8,19,200 *Tola* = 256 *Maunds* = 9.55 metric tonnes.

RASA MAAN PRAMANA (VOLUME MEASURE OF LIQUIDS)

Chatuhshashtika = 4 *Pal* = one sixty fourth part of a *Mani* = 16 *Tola* = 0.20 *Seers* = 186.56 gms.

Dvatrinshika = 8 *Pal* = one thirty second part of a *Mani* = 32 *Tola* = 0.40 *Seers* = 373.12 gms.

Shodashika = 16 *Pal* = one sixteenth part of a *Mani* = 64 *Tola* = 0.80 *Seers* = 746.24 gms.

Ashtabhagika = 32 *Pal* = one eighth part of a *Mani* = 128 *Tola* = 1.60 *Seers* = 1.49 kgs.

Chaturbhagika = 64 *Pal* = one fourth part of a *Mani* = 256 *Tola* = 3.20 *Seers* = 2.99 kgs.

Ardhamani = 128 *Pal* = one half of a *Mani* = 512 *Tola* = 6.40 *Seers* = 5.98 kgs.

One *Mani* = 256 *Pal* = 1,024 *Tola* = 12.80 *Seers* = 11.94 kgs.

(ख) उन्मानप्रमाण

३२२. से किं तं उम्माणे ?

उम्माणे जण्णं उम्मिणिज्जइ। तं जहा–अद्धकरिसो करिसो अद्धपलं पलं अद्धतुला तुला अद्धभारो भारो। दो अद्धकरिसा करिसो, दो करिसा अद्धपलं, दो अद्धपलाइं पलं, पंचुत्तरपलसतिया पंचपलसइया तुला, दस तुलाओ अद्धभारो, वीसं तुलाओ भारो।

३२२. (प्र.) उन्मानप्रमाण क्या है ?

(उ.) जिसका उन्मान किया जाता है अर्थात् जिसके द्वारा तोला जाता है, वह तराजू, काँटा आदि साधन उन्मानप्रमाण है। उसके आठ भेद इस प्रकार हैं-(१) अर्धकर्ष, (२) कर्ष, (३) अर्धपल, (४) पल, (५) अर्धतुला, (६) तुला, (७) अर्धभार, और (८) भार। दो अर्धकर्षों का एक कर्ष (१ तोला), दो कर्षों का एक अर्धपल, दो अर्धपलों का एक पल, एक सौ पाँच पलों की एक तुला (५.२५ सेर), दस तुला का एक अर्धभार (५२.५ सेर), बीस तुला का एक भार (१०५ सेर या २ मन २५ सेर लगभग) होता है।

(B) UNMAAN PRAMANA

322. (Q.) What is this *Unmaan pramana* (weight measure) ?

(Ans.) That which is used for weighing on a weighing scale is called *Unmaan*. The examples being—(1) *Ardhakarsh*, (2) *Karsh*, (3) *Ardhapal*, (4) *Pal*, (5) *Ardhatula*, (6) *Tula*, (7) *Ardhabhar*, and (8) *Bhar*. Two *Ardhakarshas* make one *Karsh* (1 *Tola*), two *Karshas* make one *Ardhapal*, two *Ardhapals* make one *Pal*, one

hundred and five *Pals* make one *Tula* (5.25 *Seers*), ten *Tulas* make one *Ardhabhar* (52.5 *Seers*), twenty *Tulas* make one *Bhar* (105 *Seers* or 2 *Maunds* and 25 *Seers*).

३२३. एएणं उम्माणपमाणेणं किं पयोयणं ?

एतेणं उम्माणपमाणेणं पत्त-अगलु-तगर-चोयय-कुंकुम-खंड-गुल-मच्छंडियादीणं दव्वाणं उम्माणपमाणणिव्वत्तिलक्खणं भवति। से तं उम्माणपमाणे।

३२३. (प्र.) इस उन्मानप्रमाण का क्या प्रयोजन है ?

(उ.) इस उन्मानप्रमाण से (१) पत्र (तेजपत्र आदि), (२) अगर, (३) तगर (गंधद्रव्य विशेष), (४) चोयक-(चोक औषधि विशेष), (५) कुंकुम, (६) खांड (शक्कर), (७) गुड़, तथा (८) मिश्री आदि द्रव्यों का परिमाण किया जाता है। यह उन्मानप्रमाण का स्वरूप है।

विवेचन-शब्द शास्त्र के अनुसार 'उन्मान' का अर्थ है-ऊँचाई का माप। प्रस्तुत आगम में 'उन्मान' शब्द का प्रयोग तोलने के अर्थ में हुआ है।

इस सूत्र में उन्मानप्रमाण की आद्य इकाई अर्धकर्ष हैं और अन्तिम उन्मान है-भार। इस सूत्र के अनुसार अर्द्धभार में एक हजार पचास (१,०५०) पल होते हैं। चरक के अनुसार, १,०५० पल का भार ६५.६२ सेर के बराबर होता है। आधुनिक मान के अनुसार एक सेर में ९२८ ग्राम वजन होता है। इस प्रकार आधुनिक मान में परिवर्तित करने पर चरक में बताये मान के अनुसार अर्द्धभार में ६५.६२ सेर = ६०.८९५ किलोग्राम होता है। उस समय प्रचलित मागध मान के अनुसार अर्द्धभार में ५२.५ सेर = ४८.७२० किलोग्राम होता है। (आचार्य महाप्रज्ञ कृत विवेचन, पृष्ठ २३४)

प्राचीन माप की जानकारी के लिए देखें-आगम समिति द्वारा प्रकाशित अनुयोगद्वार, पृ. २३३-२३६।

323. (Q.) What is the purpose of this *Unmaan pramana* (weight measure) ?

(Ans.) This *Unmaan pramana* (weight measure) is used to measure the quantity of things like (1) Leaves (like leaves of Indian *Cassia lignia* or *Cinnamomum tamala Nees*), (2) *Agar* (*Aquillaria agallocha*; a herb used as incense), (3) *Tagar* (*Valeriana jatamansi*; a fragrant herb), (4) *Choyak* (a medicinal herb), (5) *Kumkum* (saffron; also vermilion), (6) Sugar, (7) Jaggery, and (8) *Mishri* (large crystals of refined sugar) etc.

This concludes the description of *Unmaan pramana* (weight measure).

एक
दस
सौ
हजार
दस हजार
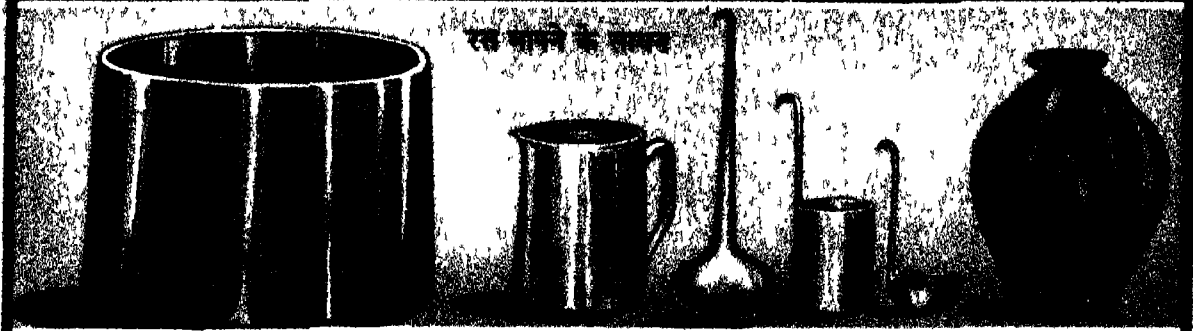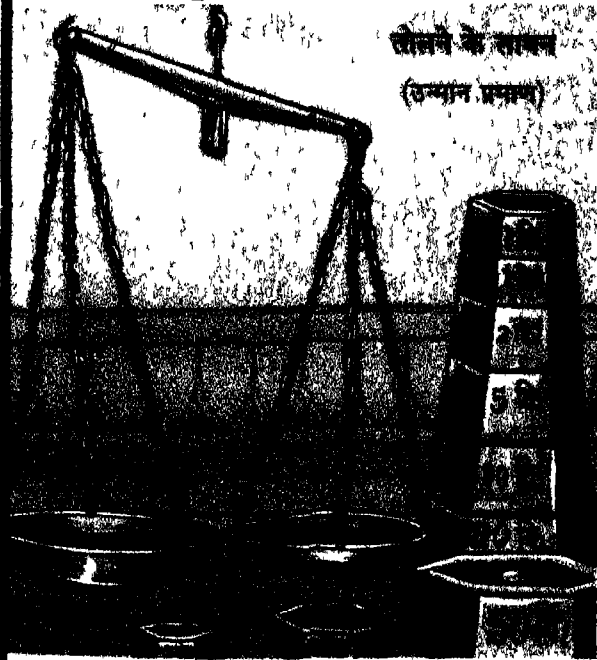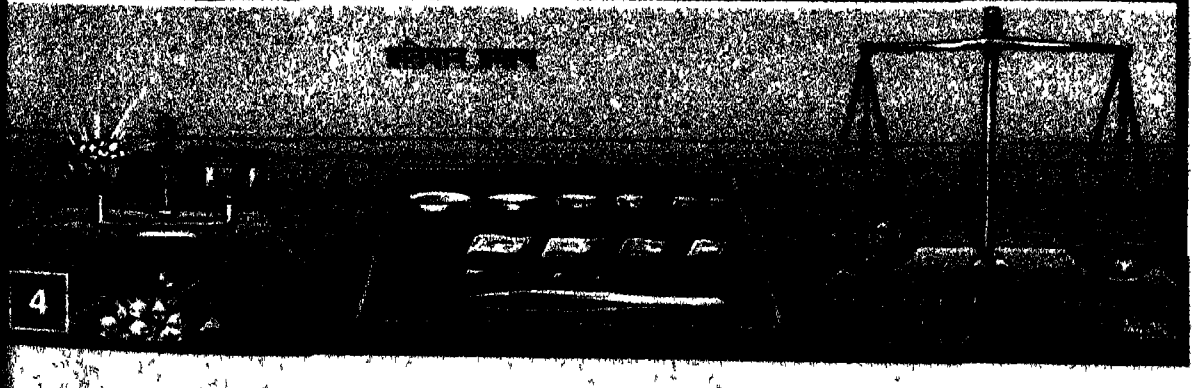
मान-प्रमाण के विविध भेद

मान-प्रमाण के दो भेद हैं-(१) धान्यमान, और (२) रसमान।

धान्य मापने के साधन, असृति-प्रसृति आदि तथा रस मापने के साधनों का वर्णन सूत्र ३१७ से ३२२, पृष्ठ ५५ से ६४ तक किया गया है।

धान्य मापने के साधन **धान्यमान** एवं रस मापने के साधन **रसमान**। तौलने के साधन **उन्मान**, गणना के साधन **गणिम** तथा सुवर्ण आदि मूल्यवान वस्तुएँ तौलने के साधन **प्रतिमान** कहे जाते हैं। प्राचीनकाल में प्रचलित मान-प्रमाणों के चित्रों की कल्पना आचार्य यशोदेव सूरि जी सम्पादित **'संग्रहणी रत्न'** के परिशिष्ट चित्र ६८-६९ के अनुसार है।

-सूत्र ३१७-३२२, पृष्ठ ५५-६४

VARIOUS KINDS OF VOLUME MEASURE

Volume measure is of two kinds—(1) Volume measure of food-grains, and (2) Volume measure of liquids.

The details of means of measuring volume of grains and liquids, such as *asriti* (handful), have been given in aphorisms 317 to 322 (pp. 55-64).

The means of measuring volume of grains are called *Dhaanyamaan* and those used for liquids are called *Rasamaan.* Means of weighing are called *Unmaan,* those of counting are *Ganim* and those of weighing precious things are *Pratimaan.* These illustrations of ancient means of measurement have been conceived on the basis of illustrations included in the book *'Sangrahani Ratna'* by Acharya Yashodev Suri ji (illustrations 68-69 in appendix).

—Aphorisms 317-322, pp. 55-64

Elaboration—Literally '*unmaan*' means measure of height. But in this *Agam* it is used as measure of weight.

In this aphorism the first unit of weight is *Ardhakarsh* and the last one is *Bhar*. As mentioned here *Ardhabhar* is of 1,050 *Pals* or 52.50 *Seers*. According to Charak, 1,050 *Pals* are equivalent to 65.62 *Seers*. Converting these into modern units we get 52.50 *Seers* = 48.720 kgs. according to the ancient Magadh measure and 65.62 *Seers* = 60.895 kgs. according to Charak. (*Anuogdarim* by Acharya Mahaprajna, p. 234).

For more details about ancient measures refer to *Tika of Anuyogadvar Sutra* by Shri Jnana Muni, part II, p. 233-236.

(ग) अवमानप्रमाण

३२४. से किं तं ओमाणे ?

ओमाणे जण्णं ओमिणिज्जति। तं जहा–हत्थेण वा दंडेण वा धणुएण वा जुगेण वा णालियाए वा अक्खेण वा मुसलेण वा।

दंडं धणू जुगं णालिया य अक्ख मुसलं च चउहत्थं।
दसनालियं च रज्जुं वियाण ओमाणसण्णाए॥१॥
वत्थुम्मि हत्थमिज्जं खित्ते दंडं धणुं च पंथम्मि।
खायं च नालियाए वियाण ओमाणसण्णाए॥२॥

३२४. (प्र.) अवमानप्रमाण क्या है?

(उ.) जिसके द्वारा अवमान-(लम्बाई, चौड़ाई और परिधि का नाप) किया जाता है, उसे अवमानप्रमाण कहते हैं। जैसे–हाथ, दंड, धनुष, युग, नालिका, अक्ष अथवा मूसल।

दंड, धनुष, युग, नालिका, अक्ष और मूसल यह चार हाथ के होते हैं। दस नालिका की एक रज्जु होती है। ये सभी अवमान कहलाते हैं॥१॥

वास्तु-(घर की भूमि को) हाथ द्वारा, क्षेत्र-खेत को दंड द्वारा मापा जाता है। मार्ग को धनुष द्वारा और खाई-कुआ, गड्ढा आदि को नालिका द्वारा नापा जाता है। इन सबकी 'अवमान' संज्ञा है॥२॥

विवेचन–हाथ–कोहनी से मध्यमा के आगे तक का नाप जो औसतन २४ अंगुल के बराबर होता है।

दण्ड–चार हाथ के नाप का लकड़ी का टुकड़ा।

धनुष–चार हाथ लम्बा धनुष।

युग–चार हाथ लम्बा बैलगाड़ी का जुआ।

नालिका–चार हाथ के नाप का बाँस का टुकड़ा।

अक्ष–चार हाथ लम्बी बैलगाड़ी की धुरी।

मूसल–चार हाथ लम्बा मूसल (धान कूटने का धनकुट्टा)।

रज्जु–४० हाथ लम्बी डोरी या रस्सी।

(C) AVAMAAN PRAMANA

324. (Q.) What is this *Avamaan pramana* (linear measure) ?

(Ans.) That which is used to measure linear dimension (length, breadth and circumference) is called *Avamaan pramana* (linear measure). The examples being—*Haath, Dand, Dhanush, Yug, Nalika, Aksh* and *Musal.*

Dand, Dhanush, Yug, Nalika, Aksh and *Musal* are equal to four *Haath*. Ten *Nalikas* make a *Rajju.* All these are called *Avamaan.* (1)

A plot of land meant for a house is measured in *Haath,* farm land in *Dand,* path in *Dhanush* and ditch or well is measured in *Nalika.* (2)

Elaboration—*Haath* (cubit)—length of the human forearm from elbow to the tip of the middle finger; on an average it is equal to 24 *angul* or breadth of a human finger.

***Dand* (stick)**—a stick cut to the length of four cubits.

***Dhanush* (bow)**—a bow of standard length of four cubits.

***Yug* (yoke)**—a bullock-cart yoke of standard length of four cubits.

***Nalika* (tube)**—a piece of bamboo cut to the length of four cubits.

***Aksh* (axle)**—a bullock-cart axle of standard length of four cubits.

***Musal* (pestle or mace)**—a pestle of standard length of four cubits.

***Rajju* (string or rope)**—a rope or string cut to a standard length of 40 cubits.

३२५. एतेणं ओमाणप्पमाणेणं किं पओयणं ?

एतेणं ओमाणप्पमाणेणं खाय–चिय–करगचित–कड–पड–भित्ति–परिक्खेवसंसियाणं दव्वाणं ओमाणप्पमाणनिव्वत्तिलक्खणं भवति। से तं ओमाणे।

३२५. (प्र.) इस अवमानप्रमाण का क्या प्रयोजन है ?

(उ.) इस अवमानप्रमाण से खात-खोदे हुए, चित-चिने हुए, बनाए हुए, करीत से काटे हुए तथा कट-चटाई, पट-वस्त्र, भित्ति-दीवाल, परिधि-दीवाल का घेरा अथवा खाई आदि से सम्बन्धित द्रव्यों की लम्बाई, चौड़ाई, गहराई और ऊँचाई का प्रमाण जाना जाता है।

325. (Q.) What is the purpose of this *Avamaan pramana* (linear measure) ?

(Ans.) This *Avamaan pramana* (linear measure) is used to measure the length, width, depth and height of things like dug up places, masonry work or constructed places, sawn boards, woven mats, cloth, wall and round constructions like parapet walls and moats.

This concludes the description of *Avamaan pramana* (linear measure).

(घ) गणिमप्रमाण

३२६. से किं तं गणिमे ?

गणिमे जण्णं गणिज्जति। तं जहा—एक्को दसगं सतं सहस्सं दससहस्साइं सतसहस्सं दससत—सहस्साइं कोडी।

३२६. (प्र.) गणिमप्रमाण क्या है ?

(उ.) जो गिना जाता है अथवा जिसके द्वारा गणना की जाती है, उसे गणिमप्रमाण कहते हैं। जैसे—एक, दस, सौ, हजार, दस हजार, लाख, दस लाख, करोड़ इत्यादि।

(D) GANIM PRAMANA

326. (Q.) What is this *Ganim pramana* (numerical measure) ?

(Ans.) That which is counted or that which is used for counting is called *Ganim pramana* (numerical measure). The examples being—one, ten, hundred, thousand, ten thousand, *lakh* (hundred thousand), ten *lakh* (a million), *crore* (ten million) etc.

३२७. एतेणं गणिमप्पमाणेणं किं पओयणं ?

एतेणं गणिमप्पमाणेणं भितग-भित्ति-भत्त-वेयण-आय-व्ययनिव्विसंसियाणं दव्वाणं गणिमप्पमाणनिव्वित्तिलक्खणं भवति। से तं गणिमे।

३२७. (प्र.) गणिमप्रमाण का क्या प्रयोजन है?

(उ.) इस गणिमप्रमाण से भृत्य-नौकर, कर्मचारी आदि की भित्ति-वृत्ति, भक्त-भोजन, वेतन के आय-व्यय से सम्बन्धित (व्यापार में हानि-लाभ आदि का हिसाब) द्रव्यों की गिनती का प्रमाण जाना जाता है। यह गणिमप्रमाण है।

327. (Q.) What is the purpose of this *Ganim pramana* (numerical measure)?

(Ans.) This *Ganim pramana* (numerical measure) is used to count things like—coinage or currency related to salary and wages and food for servants and employees, income and expenditure (in business) etc.

This concludes the description of *Ganim pramana* (numerical measure).

(च) प्रतिमानप्रमाण

३२८. से किं तं पडिमाणे ?

पडिमाणे जण्णं पडिमिणिज्जइ। तं जहा-गुंजा कागणी निप्फावो कम्ममासओ मंडलओ सुवण्णो।

पंच गुंजाओ कम्ममासओ, चत्तारि कागणीओ कम्ममासओ। तिण्णि निप्फावा कम्ममासओ, एवं चउक्को कम्ममासओ। बारस कम्ममासया मंडलओ, एवं अडयालीसाए (कागणीए) मंडलओ। सोलस कम्ममासया सुवण्णो, एवं चउसट्ठीए (कागणीए) सुवण्णो।

३२८. (प्र.) प्रतिमानप्रमाण क्या है?

(उ.) जिससे प्रतिमान (स्वर्ण आदि का तोल) किया जाता है, उसे प्रतिमान कहते हैं। जैसे-(१) गुंजा-(चिरमी)-रत्ती, (२) काकणी, (३) निष्पाव (बड़ी उड़द या राजमास), (४) कर्ममाषक, (५) मंडलक, और (६) सुवर्ण।

पाँच गुंजाओं-रत्तियों का, चार काकणियों का अथवा तीन निष्पाव का एक कर्ममाषक होता है। इस प्रकार चार काकणी का एक कर्ममाषक होता है। बारह कर्ममाषकों का

एक मंडलक होता है। सोलह कर्ममाषक अर्थात् चौंसठ काकणियों का एक स्वर्ण (मोहर) होता है।

विवेचन—आधुनिक इकाइयों में इनका मान लगभग निम्न प्रकार है—

(१) गुंजा (चिरमी या रत्ती) = ०.१२ ग्राम = ०.६ कैरेट

(२) काकणी = ०.१५ ग्राम = ०.७५ कैरेट

(३) निष्पाव = ०.२० ग्राम = १ कैरेट

(४) कर्ममाषक = ०.६० ग्राम = ३ कैरेट

(५) मण्डलक = ७.२० ग्राम = ३६ कैरेट

(६) सुवर्ण = ९.६० ग्राम = ४८ कैरेट

(E) PRATIMAAN PRAMANA

328. (Q.) What is this *Pratimaan pramana* (precision weight measure)?

(Ans.) That which is used to measure precious things (like gold) is called *Pratimaan pramana* (precision weight measure). The examples being—(1) *Gunja* (*chirmi* or *ratti*; seed of a shrub *Abru precatorius*), (2) *Kakani*, (3) *Nishpava* (a specific pulse called *Rajmash*), (4) *Karmamashak*, (5) *Mandalak*, and (6) *Suvarna* etc.

Five *gunjas* or four *kakanis* or three *nishpavas* make one *karmamashak*. Thus one *karmamashak* is made up of four *kakanis*. Twelve *karmamashaks* make one *mandalak*. Sixteen *karmamashaks* make one *suvarna* (gold coin).

Elaboration—Approximate equivalents of these weights in modern units are—

(1) *Gunja* (*chirmi* or *ratti*) = 0.12 gms. = 0.6 carats

(2) *Kakani* = 0.15 gms. = 0.75 carats

(3) *Nishpava* = 0.20 gms. = 1 carat

(4) *Karmamashak* = 0.60 gms. = 3 carats

(5) *Mandalak* = 7.20 gms. = 36 carats

(6) *Suvarna* = 9.60 gms. = 48 carats

३२९. एतेणं पडिमाणप्पमाणेणं किं पओयणं ?

एतेणं पडिमाणप्पमाणेणं सुवण्ण–रजत–मणि–मोत्तिय–संख–सिलप्पवालादीणं दव्वाणं पडिमाणप्पमाणनिव्वत्तिलक्खणं भवति। से तं पडिमाणे। से तं विभागनिप्फण्णे। से तं दव्वपमाणए।

३२९. (प्र.) इस प्रतिमानप्रमाण का क्या प्रयोजन है?

(उ.) इस प्रतिमानप्रमाण के द्वारा सुवर्ण, रजत (चाँदी), मणि, मोती, शंख, शिला, प्रवाल (मूँगा) आदि द्रव्यों का परिमाण जाना जाता है। इसे ही प्रतिमानप्रमाण कहते हैं। यही विभागनिष्पन्नप्रमाण और द्रव्यप्रमाण है।

329. (Q.) What is the purpose of this *Pratimaan pramana* (precision weight measure)?

(Ans.) This *Pratimaan pramana* (precision weight measure) is used to weigh things like—gold, silver, gems, pearls, conch-shells, rough gems, coral etc.

This concludes the description of *Pratimaan pramana* (precision weight measure). This concludes the description of *Vibhag nishpanna dravya pramana* (fragmentary standard of physical measurement). This also concludes the description of *Dravya pramana* (standard of physical measurement).

(ख) क्षेत्रप्रमाण

३३०. से किं तं खेत्तप्पमाणे ?

खेत्तप्पमाणे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा—१. पदेसनिप्फण्णे य, २. विभागणिप्फण्णे य।

३३०. (प्र.) क्षेत्रप्रमाण क्या है?

(उ.) क्षेत्रप्रमाण (भूमि, आकाश आदि की नाप) दो प्रकार का है-(१) प्रदेशनिष्पन्न, और (२) विभागनिष्पन्न।

(B) KSHETRA PRAMANA

330. (Q.) What is this *Kshetra pramana* (standard of measurement of area)?

(Ans.) *Kshetra pramana* (standard of measurement of area of land, sky etc.) is of two kinds—(1) *Pradesh nishpanna* (space-point related), and (2) *Vibhag nishpanna* (fragmentary).

(१) प्रदेशनिष्पन्नक्षेत्रप्रमाण

३३१. से किं तं पदेसणिप्फण्णे ?

पदेसणिप्फण्णे एगपदेसोगाढे दुपदेसोगाढे जाव संखेज्जपदेसोगाढे असंखिज्जपदेसोगाढे। से तं पएसणिप्फण्णे।

३३१. (प्र.) प्रदेशनिष्पन्नक्षेत्रप्रमाण क्या है?

(उ.) एक प्रदेशावगाढ़, दो प्रदेशावगाढ़ यावत् संख्यात प्रदेशावगाढ़, असंख्यात प्रदेशावगाढ़। यह प्रदेशनिष्पन्नक्षेत्रप्रमाण हैं।

विवेचन—जैनदर्शन के अनुसार आकाश असंख्यात प्रदेशों वाला है, परन्तु आकाश के ये प्रदेश कभी एक दूसरे से अलग नहीं होते, परस्पर मिले हुए हैं। फिर भी कल्पना करके स्कन्ध, देश, प्रदेश के रूप में इनका विभाग किया जाता है। आकाश के एक प्रदेश का स्पर्श करने वाला या आकाश के एक प्रदेश पर आश्रित रहने वाला जो पुद्गल है, वह एक प्रदेशावगाढ़ कहा जाता है। इसी प्रकार दो प्रदेशों को स्पर्श करने वाला दो प्रदेशावगाढ़ यावत् असंख्यात प्रदेशावगाढ़ समझना चाहिए। लोकाकाश असंख्यात प्रदेशों वाला है।

(1) PRADESH NISHPANNA KSHETRA PRAMANA

331. (Q.) What is this *Pradesh nishpanna kshetra pramana* (space-point related standard of measurement of area)?

(Ans.) The (examples of) *Pradesh nishpanna kshetra pramana* (space-point related standard of measurement of area) are as follows—A body occupying one space-point, two space-points (and so on...), ten space-points, countable space-points and uncountable space-points.

This concludes the description of *Pradesh nishpanna kshetra pramana* (space-point related standard of measurement of area).

Elaboration—According to Jain metaphysics space has uncountable space-points which are joined together and inseparable. However, for convenience imaginary divisions like aggregate, part thereof, and space-point have been made. The particle of matter touching or occupying one space-point is called one *pradeshavagadh*. In the same way matter occupying two space-points and so on is called two *pradeshavagadh* etc. The *Lokakash* (occupied space) has uncountable space-points.

(२) विभागनिष्पन्नक्षेत्रप्रमाण

३३२. से किं तं विभागणिप्फण्णे ?

विभागणिप्फण्णे–

> **अंगुल विहत्थि रयणी कुच्छी धणु गाइयं च बोद्धव्वं।**
> **जोयणसेढी पयरं लोगमलोगे वि य तहेव॥१॥**

३३२. **(प्र.)** विभागनिष्पन्नक्षेत्रप्रमाण क्या है ?

(उ.) अंगुल, वितस्ति (बेंत, बालिश्त, बित्ता), रत्नि–(मुँड हाथ, बँधी मुट्ठी का हाथ), कुक्षि–(दो हाथ नाप), धनुष–(चार हाथ प्रमाण), गाऊ–(गव्यूत दो कोस प्रमाण), योजन–(चार कोस), श्रेणि–(असंख्य कोटाकोटि योजन), प्रतर–(श्रेणि से श्रेणि को गुणा करने पर जो क्षेत्र आता है वह प्रतर), लोक और अलोक को विभागनिष्पन्नक्षेत्रप्रमाण कहा है॥१॥

विवेचन–प्रदेशनिष्पन्नता और विभागनिष्पन्नता में मुख्य अन्तर यह है कि प्रदेशनिष्पन्नता में क्षेत्र अपने ही प्रदेशों द्वारा जाना जाता है, वे उससे अलग नहीं होते, लेकिन विभागनिष्पन्नता में उसी क्षेत्र को बाह्य साधनों, जैसे–अंगुल, वितस्ति आदि से जाना जा सकता है। विभागनिष्पन्न की आद्य इकाई अंगुल है।

(2) VIBHAG NISHPANNA KSHETRA PRAMANA

332. (Q.) What is this *Vibhag nishpanna kshetra pramana* (fragmentary standard of measurement of area) ?

(Ans.) The (examples of) *Vibhag nishpanna kshetra pramana* (fragmentary standard of measurement of area) are as follows—*Angul* (breadth of a human finger), *Vitasti* (*balisht* or *bittabhar* or the distance between tip of thumb and tip of little finger when fully stretched, it is approximately 12 *anguls*), *Ratni* (cubit or length of an arm with closed fist), *Kukshi* (two cubits), *Dhanush* (four cubits), *Gau* (two *kosa* or four miles), *Yojan* (four *kosa* or eight miles), *Shreni* (innumerable *kota-koti yojans, kota-koti* being ten million multiplied by ten million), *Pratar* (*shreni* multiplied by *shreni*), *Loka* (occupied space) and *Aloka* (unoccupied space or the space beyond). (1)

Elaboration—The basic difference between *Pradesh nishpanna* (space-point related) and *Vibhag nishpanna* (fragmentary) is that in the

former the area is measured in its own fractions (*pradesh*) only, whereas in the latter it is measured in fragmentary units through outside means, such as *angul, vitasti* etc. The first or the smallest unit of *Vibhag nishpanna kshetra pramana* (fragmentary standard of measurement of area) is *angul* (breadth of a human finger).

अंगुल का स्वरूप

३३३. से किं तं अंगुले ?

अंगुले तिविहे पण्णत्ते। तं जहा–१. आयंगुले, २. उस्सेहंगुले, ३. पमाणंगुले।

३३३. **(प्र.)** अंगुल क्या है ?

(उ.) अंगुल तीन प्रकार का है-(१) आत्मांगुल, (२) उत्सेधांगुल, और (३) प्रमाणांगुल।

ANGUL

333. (Q.) What is this *Angul* (breadth of a human finger) ?

(Ans.) *Angul* (breadth of a human finger) is of three kinds—(1) *Atmangul,* (2) *Utsedhangul,* and (3) *Pramanangul.*

(१) आत्मांगुल

३३४. से किं तं आयंगुले ?

आयंगुले जे णं जया मणुस्सा भवंति। तेसि णं तया अप्पणो अंगुलेणं दुवालस अंगुलाइं मुहं, नवमुहाइं पुरिसे पमाणजुत्ते भवति, दोणिए पुरिसे माणजुत्ते भवति, अद्धभारं तुलमाणे पुरिसे उम्माणजुत्ते भवति।

माणुम्माण–पमाणे जुत्ता लक्खण–वंजण–गुणेहिं उववेया।
उत्तमकुलप्पसूया उत्तमपुरिसा मुणेयव्वा॥१॥
होंति पुण अहियपुरिसा अट्ठसतं अंगुलाण उव्विद्धा।
छण्णउइ अहमपुरिसा चउरुत्तरा मज्झिमिल्ला उ॥२॥
हीणा वा अहिया वा जे खलु सर–सत्त–सारपरिहीणा।
ते उत्तमपुरिसाणं अवसा पेसत्तणमुवेंति॥३॥

३३४. **(प्र.)** आत्मांगुल किसे कहते हैं ?

(उ.) जिस काल में जो मनुष्य होते हैं (उस काल की अपेक्षा) उनके अपने अंगुल को आत्मांगुल कहते हैं। उनके अपने अंगुल से बारह अंगुल का एक मुख होता है। नौ मुख जितना (अर्थात् एक सौ आठ आत्मांगुल की ऊँचाई वाला) पुरुष प्रमाणयुक्त होता है। द्रोणिक पुरुष मानयुक्त होता है और अर्धभार जितने तोल वाला पुरुष उन्मानयुक्त होता है।

जो पुरुष मान, उन्मान और प्रमाण से सम्पन्न होते हैं तथा साथ ही (शंख आदि) शारीरिक शुभ लक्षणों (तिल, मसा आदि), व्यंजनों से और (उदारता, करुणा आदि) सद्गुणों से युक्त होते हैं तथा उग्र, भोग आदि उत्तम कुलों में उत्पन्न होने वाले पुरुषों को उत्तम पुरुष कहा जाता है ॥१॥

ये उत्तम पुरुष अपने अंगुल से एक सौ आठ (१०८) अंगुल ऊँचे होते हैं। अधम पुरुष छियानवै (९६) अंगुल और मध्यम पुरुष की ऊँचाई एक सौ चार (१०४) अंगुल की होती है ॥२॥

जो व्यक्ति स्वर, सत्व, सार से हीन होते हैं, वे उक्त प्रमाण से हीन हों या अधिक, वे उत्तम पुरुषों के अधीन रहकर उनकी सेवा करते हैं ॥३॥

(1) ATMANGUL

334. (Q.) What is this *Atmangul* ?

(Ans.) The breadth of the finger of man belonging to a particular epoch (this statement is about the average ideal standard man of the specific epoch; this is variable with respect to epoch) is called *atmangul* (own finger). (Now the ideal standard is described) He has a face that has a length equal to the breadth of his own twelve fingers. A person having a height equal to nine times the length of his face is the ideal standard man (in context of linear measure). A *draunik* man (a man who displaces the volume of water equal to one *dron)* is the ideal standard man (in context of volume). A man weighing *ardhabhar* is the ideal standard man (in context of weight).

The individuals who are born in high class families or clans, are endowed with the aforesaid ideal—*maan, unmaan* and *pramana* (ideal standard measurements including those of volume and weight) as also with auspicious *lakshans* (signs like conch-shell),

vyanjans (marks like mole) and virtues (like generosity and compassion) are called *uttam purush* or excellent ones. (1)

These excellent ones have a height of one hundred and eight *anguls.* The inferior ones measure ninety six *anguls* and the mediocre ones one hundred and four *anguls.* (2)

Irrespective of measuring higher or lower than the said standards, those who are devoid of good voice, substance and worth remain subservient to and serve the excellent ones. (3)

३३५. एतेणं अंगुलपमाणेणं छ अंगुलाइं पादो, दो पाया विहत्थी, दो विहत्थीओ रयणी, दो रयणीओ कुच्छी, दो कुच्छीओ दंडं धणू जुगे नालिया अक्ख-मुसले, दो धणुसहस्साइं गाउयं, चत्तारि गाउयाइं जोयणं।

३३५. इस आत्मांगुल से छह अंगुल का एक पाद (पाँव का अग्र भाग) होता है। दो पाद की एक वितस्ति, दो वितस्ति की एक रत्नि (हाथ) और दो रत्नि की एक कुक्षि, दो कुक्षि का एक दण्ड या धनुष या युग या नालिका या अक्ष या मूसल जानना चाहिए। दो हजार धनुष का एक गव्यूत (एक कोस) और चार गव्यूत का एक योजन होता है।

विवेचन-सूत्र ३३४ में पुरुषों के दो वर्गीकरण बताये हैं-

पहला-(१) प्रमाणयुक्त, (२) मानयुक्त, तथा (३) उन्मानयुक्त।

दूसरा-(१) उत्तम पुरुष, (२) मध्यम पुरुष, तथा (३) अधम पुरुष।

(१) अपने अंगुल से १२ अंगुल का मुख होता है और ९ मुख जितना अर्थात् १०८ अंगुल वाला पुरुष **प्रमाण पुरुष** होता है।

(२) **द्रौणिक पुरुष**-पानी से भरी हुई एक बड़ी कुंडिका को द्रोणी कहते हैं। उस कुंडिका में बैठाने पर द्रोण (४ आढक) जितना पानी छलककर बाहर निकल जाये अथवा उतनी खाली द्रोण में प्रवेश करने पर वह भर जाये उसे द्रोणिक पुरुष कहा जाता है। द्रोणिक पुरुष मानयुक्त कहलाता है।

(३) **उन्मानयुक्त**-तराजू से तोलने पर जिस पुरुष का वजन अर्ध भार यानी ५२.५ सेर या ४८.८३ किलोग्राम होता है, वह उन्मानयुक्त कहलाता है।

उत्तम पुरुष की ऊँचाई १०८ अंगुल, मध्यम पुरुष की १०४ अंगुल तथा अधम पुरुष की ९६ अंगुल मानी गई है।

जिसके शरीर में शंख, स्वस्तिक आदि शुभ लक्षण, तिल, मष आदि चिन्ह व्यंजन होते हैं, जिसका शरीर सत्व, बल, ओज, दृढ़ता आदि से युक्त तथा जिसका स्वर गम्भीरता आदि गुणों से युक्त, उदारता, करुणा आदि सद्गुणों से युक्त तथा जिनका जन्म उच्च कुलों में होता है, वे उत्तम पुरुष कहलाते हैं।

उपर्युक्त प्रमाण के अनुसार १०८ अंगुल की ऊँचाई = ६ फिट ९ इंच, १०४ अंगुल = ६ फिट ६ इंच तथा ९६ अंगुल = ६ फिट होती है।

वर्तमान में आत्मांगुल से १०० अंगुल की ऊँचाई = ६ फिट ३ इंच (श्रेष्ठ), ९२ अंगुल = ५ फिट ९ इंच (मध्यम) तथा ८४ अंगुल = ५ फिट ३ इंच (निम्न) मानी जाती है। पुरुष के व्यक्तित्व को प्रभावशाली और नेतृत्व सम्पन्न बनाने में शरीर की सुन्दरता, वाणी का ओज, शारीरिक वजन, कद आदि सहायक माने गये हैं।

335. By this standard *angul*—six *anguls* make one *paad* (foot), two *paads* make one *vitasti*, two *vitastis* make one *ratni*, two *ratnis* make one *kukshi* and two *kukshis* make one *dand* or *dhanush* or *yug* or *nalika* or *aksha* or *musal*. Two thousand *dhanush* make one *gavyut* (one *kosa* or two miles) and four *gavyuts* make a *yojan* (eight miles).

Elaboration—In aphorism 334 are mentioned two classifications of men—

First—Having (1) *pramana*, (2) *maan*, and (3) *unmaan*.

Second—(1) excellent, (2) mediocre, and (3) inferior.

(1) The *pramana* (ideal standard) man has a face 9 *anguls* long and height 12 times the length of the face or 108 *anguls*.

(2) Draunik purush—A large tub is called *droni*. When it is filled to the brim with water and a man sits in it and completely submerges, then if the volume of water he displaces measures one *dron* (4 *adhaks*) he is called a *dronik* man. This *dronik* man is the one endowed with ideal standard *maan*.

(3) Unman purush—When weighed on a balance if a man weighs *Ardhabhar* (52.5 *Seers* or 48.83 kgs.) he is supposed to be endowed with standard *unmaan*.

In height the excellent ones measure 108 *anguls*, the mediocre ones 104 *anguls* and the inferior ones 96 *anguls*.

The *uttam purush* or excellent ones are endowed with auspicious signs including conch-shell and *Swastika;* marks like moles and other birth-marks; a body that is strong, radiant and firm; a voice that is deep and resonant; virtues like generosity and compassion; and are born in high class families or clans.

The modern equivalent of the said standards of that period are—108 *angul* = 6 ft. 9 inches; 104 *angul* = 6 ft. 6 inches and 96 *angul* = 6 ft.

In modern times similar standards are : 100 *angul* = 6 ft. 3 inches; 92 *angul* = 5 ft. 9 inches and 84 *angul* = 5 ft. 3 inches. The beautiful appearance of the body, power of speech, weight and height of the body are said to be the qualities that give an impressive and dominating personality to a man.

आत्मांगुल का प्रयोजन

३३६. एएणं आयंगुलप्पमाणेणं किं पओयणं ?

एएणं आयंगुलप्पमाणे णं जे णं जया मणुस्सा भवंति तेसि णं तया अप्पणो अंगुलेणं अगड–तलाग–दह–नदी–वावी–पुक्खरिणि–दीहिया–गुंजालियाओ सरा सरपंतियाओ सरसरपंतियाओ बिलपंतियाओ आरामुज्जाण–काणण–वण–वणसंड–वणराईओ, देवकुल–सभा–पवा–थूभ–खाइय–परिहाओ, पागार–अट्टालग–चरिय–दार–गोपुर–तोरण–पासाद–घर–सरण–लेण–आवण–सिंघाडग–तिय–चउक्क–चच्चर–चउमुह–महापह–पह, सगड–रह–जाण–जुग्ग–गिल्लि–थिल्लि–सीय–संदमाणिय–लोही–लोहकडाह–कडुच्छुय–आसण–सतण–खंभ–भंड–मत्तोवगरणमादीणि अज्जकालिगाइं च जोयणाइं मविज्जंति।

३३६. (प्र.) इस आत्मांगुलप्रमाण का क्या प्रयोजन है ?

(उ.) इस आत्मांगुलप्रमाण से–अवट (कुआ), तड़ाग (तालाब), द्रह (जलाशय), नदी, वापी (चतुष्कोण वाली बावड़ी), पुष्करिणी (कमलयुक्त जलाशय), दीघिका (लम्बी-चौड़ी बावड़ी), गुंजालिका (वक्राकार बावड़ी), सर (अपने आप बना जलाशय-झील), सरपंक्ति (पंक्ति रूप में स्थित जलाशय), सरसरपंक्ति (नालियों द्वारा सम्बन्धित जलाशयों की पंक्ति), बिलपंक्ति (छोटे मुख वाले कूपों की पंक्ति-कुंडियाँ), आराम (बगीचा), उद्यान (अनेक प्रकार के पुष्पों–फलों वाले वृक्षों से युक्त बाग), कानन (अनेक वृक्षों से युक्त नगर का निकटवर्ती प्रदेश), वन (जिसमें एक ही जाति के वृक्ष हों), वनखण्ड (जिसमें अनेक जाति के उत्तम वृक्ष हों), वनराजि (जिसमें एक या अनेक जाति के वृक्षों की श्रेणियाँ हों), देवकुल (यक्षायतन मन्दिर आदि), सभा, प्रपा (प्याऊ), स्तूप (स्मृति में बनाया हुआ स्तम्भ), खातिका (खाई), परिखा (नीचे सँकड़ी और ऊपर विस्तीर्ण खाई), प्राकार (परकोटा), अट्टालक (परकोटे पर बना बुर्ज–अटारी), चरिका (खाई और प्राकार के बीच

बना आठ हाथ चौड़ा मार्ग), द्वार, गोपुर (नगर में प्रवेश करने का मुख्य द्वार), तोरण, प्रासाद (राजभवन), घर (सामान्य जनों के निवास-स्थान), शरण (घास-फूस से बनी झोंपड़ी), लयन (पर्वत में बनाया गया निवास-गुफा), आपण (हाट-दुकान), शृंगाटक (सिंघाड़े के आकार का त्रिकोण मार्ग), त्रिक (तिराहा), चतुष्क (चौराहा), चत्वर (चौगान, चौक, मैदान), चतुर्मुख (चार द्वार वाला देवालय आदि), महापथ (राजमार्ग), पथ (गलियाँ), शकट (बैलगाड़ी), रथ, यान (साधारण गाड़ी), युग्य (डोली-पालखी), गिल्लि (हाथी पर रखने का हौदा अथवा दो व्यक्तियों द्वारा उठाई जाने वाली पालखी), थिल्लि (दो घोड़ों की बग्घी, बहली), शिविका (पालखी), स्यंदमानिका (इक्का या पुरुष प्रमाण लम्बाई वाली शिविका), लोही (लोहे की छोटी कड़ाही, तवा), लोहकटाह (लोहे की बड़ी कड़ाही-कड़ाहा), कड़छी (चमचा), आसन (बैठने के पाट आदि), शयन (शय्या), स्तम्भ, भांड (मिट्टी के पात्र आदि), अमत्र (काँसे के बर्तन) आदि गृहोपयोगी बर्तन, उपकर आदि वस्तुओं एवं योजन आदि का माप किया जाता है।

विवेचन-'अज्जकालिगाइं' (अद्य कालिक) शब्द से यह सूचित किया है कि जिस काल में जितनी ऊँचाई, चौड़ाई वाले मनुष्य हों, उनकी अपेक्षा ही आत्मांगुल का प्रमाण निर्धारित होता है इसलिए यह अनिश्चित (अनवस्थित) है। और आत्मांगुल से ही योजन आदि नापे जाते हैं।

PURPOSE OF ATMANGUL

336. (Q.) What is the purpose of this *Atmangul pramana* (standard of the breadth of own finger) ?

(Ans.) This *Atmangul pramana* (standard of the breadth of own finger) of the men of the epoch under reference is used to measure the dimensions of the following—*avat* (well), *tadag* (pond), *draha* (lake), *river, vapi* (*bavadi* or rectangular reservoir), *pushkarini* (lake or pond with lotuses), *dighika* (large lake), *gunjalika* (zig-zag lake), *sar* (natural lake), *sar-pankti* (row of lakes), *sar-sar-pankti* (row of lakes connected by canals), *bil-pankti* (row of narrow wells or water-pits), *aram* (pleasure garden), *udyan* (parks with a variety of flowering plants and fruit trees), *kanan* (jungle near a town), *van* (forest with single species of trees), *van-khand* (forest with a variety of good quality trees), *van-raji* (forest with rows upon rows of trees of same or different kinds), *devakul* (temples), *sabha* (assembly hall), *prapa* (water-hut), *stupa* (a memorial pillar or mound), *khatika* (trench or gully), *parikha* (a moat or trench with narrow

नरक गति

चित्र परिचय ७

Illustration No. 7
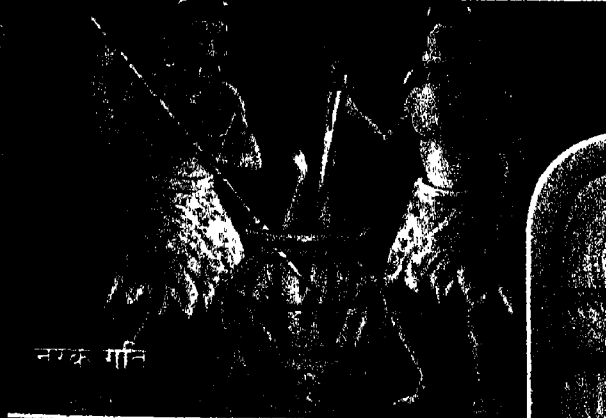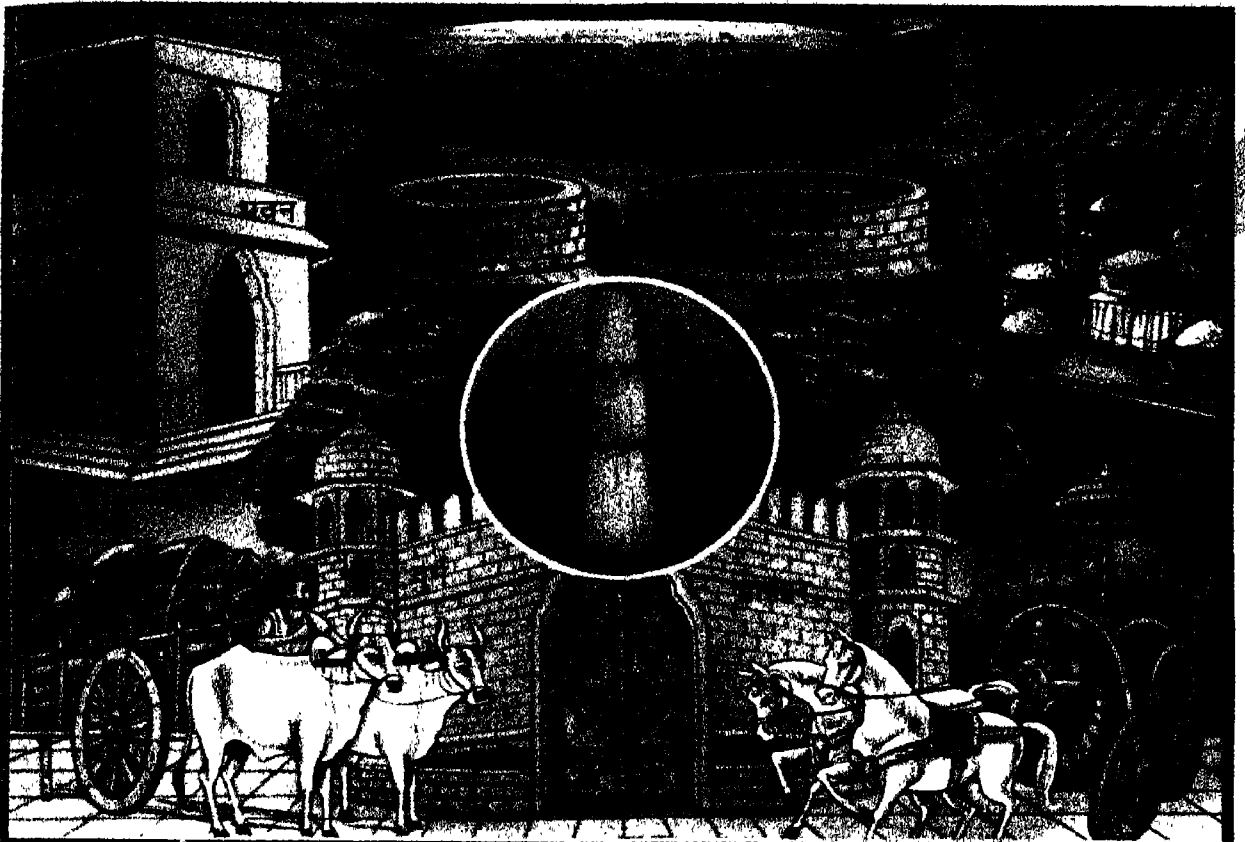
आत्मांगुल का प्रयोजन

आत्मांगुल–जिस काल में जो मनुष्य होते हैं उनका अपना अंगुल आत्मांगुल कहा जाता है। (सूत्र ३३४) इस आत्मांगुल से भवन, सरोवर, कुआँ, आपण (हाट), उद्यान, परकोटे, गोपुर (नगर द्वार), बैलगाड़ी, रथ आदि निर्मित वस्तुओं का नाप किया जाता है। –सूत्र ३३६, पृष्ठ ७८

उत्सेधांगुल–अंगुल के बीच आठ यव के नाप से आठ यवमध्य का एक उत्सेधांगुल होता है। उत्सेधांगुल से नरक, तिर्यंच, मनुष्य एवं देवगति वाले जीवों के शरीरों की अवगाहना नापी जाती है। -सूत्र ३४५-३४६, पृष्ठ ९४

THE USE OF ATMANGUL

Atmangul (Own Finger)—It is the breadth of a finger of the men of the epoch under reference. (aphorism 334) It is used to measure the dimensions of things like—buildings, ponds, wells, markets, gardens, parapet walls, city gates, bullock-carts, chariots etc. —*Aphorism 336, p. 78*

Utsedhangul—Eight *yavamadhyas* make one *utsedhangul*. This unit is used to measure the space occupied by beings like infernal-beings, animals, human-beings and divine-beings. —*Aphorisms 345-346, p. 94*

bottom and wide top), *prakar* (parapet wall), *attalak* (bastion on a rampart), *charika* (an eight cubit wide pathway between moat and rampart), *dvar* (door), *gopur* (main gate of entrance into a town), *toran* (arch), *prasad* (palace), *ghar* (house), *sharan* (thatched hut), *layan* (a dugout or cave on a hill), *apan* (shop or marketplace), *shringatak* (a triangular marketplace), *trik* (meeting point of three roads), *chatushk* (meeting point of four roads), *chatvar* (a square, court, circus or plaza), *chaturmukh* (a temple with gates on all four sides), *mahapath* (highway), *path* (path or street), *shakat* (bullock-cart), *rath* (chariot), *yan* (vehicle), *yugya* (palanquin), *gilli* (howda or a seat on elephant's back), *thilli* (a coach driven by two horses), *shivika* (covered palanquin), *syandaman* (a palanquin as long as a man), *lohi* (a steel pan or concave platen), *lohakatah* (steel cauldron), *kadachi* (serving spoons), *asan* (seat), *shayan* (bed), *stambh* (pillar), *bhand* (earthen pots), *amatra* (bronze vessels) and other household equipment and accessories as also distances like *yojan* (eight miles).

Elaboration—The term *ajjakaligai* conveys that measure of *atmangul* was standardized during a particular epoch according to the physical dimensions of the people of that era. Thus as standard it is variable. All other units like *yojan* were fixed according to the measure of *atmangul* only.

आत्मांगुल के तीन भेद

३३७. से समासओ तिविहे पण्णत्ते। तं जहा–१. सूइअंगुले, २. पयरंगुले, ३. घणंगुले।

१. अंगुलायता एगपदेसिया सेढी सूइअंगुले, २. सूई सूईए गुणिया पयरंगुले, ३. पयरं सूईए गुणितं घणंगुले।

३३७. आत्मांगुल सामान्य से तीन प्रकार का है–(१) सूच्यंगुल, (२) प्रतरांगुल, तथा (३) घनांगुल।

(१) एक अंगुल लम्बी और एक प्रदेश चौड़ी आकाशप्रदेशों की श्रेणि–पंक्ति का नाम सूच्यंगुल है; (२) सूच्यंगुल को सूच्यंगुल से गुणा करने पर प्रतरांगुल होता है; तथा (३) प्रतरांगुल को सूच्यंगुल से गुणा करने पर घनांगुल होता है।

विवेचन–सूची अंगुल का अर्थ है–जो रेखा सुई की तरह एक ही आयाम (डाइमैन्शन) में फैली हो। जिसकी लम्बाई एक अंगुल जितनी तथा चौड़ाई और मोटाई एक आकाशप्रदेश जितनी हो। इसकी आकृति इस प्रकार समझी जा सकती है–

(एक पंक्ति में तीन बिन्दु)
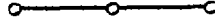
प्रतरांगुल–प्रतर का अर्थ है वर्ग। सूची अंगुल को सूची अंगुल से गुणा करने पर प्रतर अंगुल बनता है जिसकी आकृति इस प्रकार बनती है–

(तीन-तीन बिन्दुओं की तीन पंक्तियाँ)
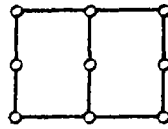
घनांगुल–गणित शास्त्र के अनुसार एक संख्या को उसी संख्या से दो बार गुणा करने को घन कहते हैं (२ × २ × २)। त्रिआयामी ज्यामिति में वस्तु की लम्बाई, चौड़ाई और मोटाई से घन बनता है। आगम में यही बात कही है। प्रतर अंगुल को सूची अंगुल से गुणा करने पर घन अंगुल प्राप्त होता है। इसकी आकृति की कल्पना इस प्रकार हो सकती है–
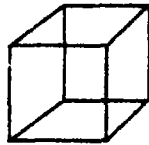
इसका सारांश यह है कि सूची अंगुल से वस्तु की दीर्घता = लम्बाई, प्रतरांगुल से लम्बाई-चौड़ाई तथा घनांगुल से लम्बाई, चौड़ाई और मोटाई जानी जाती है। एक उदाहरण द्वारा इसे यों समझा सकते हैं–एक अंगुल लम्बे बारीक धागे को नापने में सूच्यंगुल उपयोगी होता है, एक अंगुल लम्बे-चौड़े वस्त्र को नापने में प्रतरांगुल की उपयोगिता है और जहाँ धातु के टुकड़े की लम्बाई, चौड़ाई और मोटाई तीनों नापी जाती हैं वहाँ घनांगुल की उपयोगिता है।

THREE KINDS OF ATMANGUL

337. Generally *atmangul* is said to be of three types—(1) *Suchyangul* (linear *angul*), (2) *Pratarangul* (square *angul*), and (3) *Ghanangul* (cubic *angul*).

(1) One *angul* long and one space-point wide row of space-points is called *Suchyangul* (linear *angul*); (2) *Suchyangul* (linear *angul*) multiplied by *suchyangul* (linear *angul*) is *Pratarangul* (square

प्रतर अंगुल
कोटि८
तल५
कोटि५
कोटि६
कोटि११
कोटि१
कोटि१०
कोटि२
कोटि१

चित्र परिचय ६ | **Illustration No. 6**
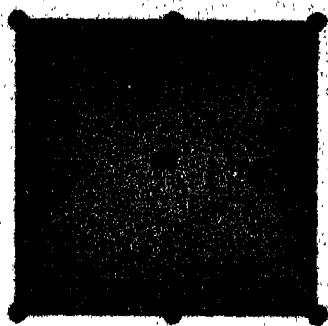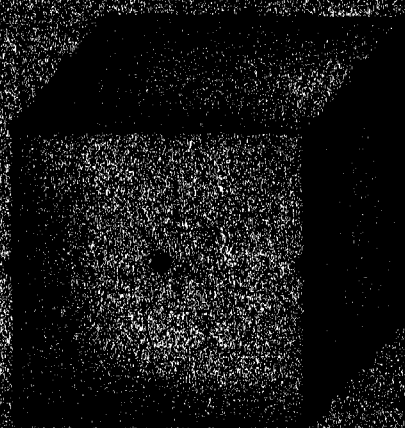
अंगुल-प्रमाण के तीन भेद

(१) **सूची अंगुल**—एक अंगुल लम्बी रेखा जिसकी चौड़ाई एक प्रदेश हो।

(२) **प्रतर अंगुल**—एक अंगुल लम्बी, एक अंगुल चौड़ी समचौरस आकृति। सूची अंगुल के वर्ग को प्रतर अंगुल कहा जाता है।

(३) **घन अंगुल**—एक अंगुल लम्बी, एक अंगुल चौड़ी और एक अंगुल मोटी आकृति घन आकृति–घन अंगुल कही जाती है। यह तीनों आयामों में फैली हुई होती है।

–सूत्र ३३७ तथा ३५६, पृष्ठ ७९ तथा १३६

(४) **काकणी रत्न**—प्राचीनकाल में यह एक सिक्के के रूप में प्रचलित था। भरत चक्रवर्ती के चौदह रत्नों में एक रत्न है। काकणी रत्न की बाईं ओर वाली आकृति का वर्णन सूत्र में किया गया है। दाहिनी ओर अहरन की आकृति वाला काकणी रत्न है। **क.** संकेत से कोटि, **को.** संकेत से कोण तथा **त.** से तल समझें।

एक काकणी रत्न में १२ कोटि, ८ कोण तथा ६ तल होते हैं।

--सूत्र ३५८, पृष्ठ ८०

THREE KINDS OF ANGUL PRAMAAN

(1) Suchyangul (Linear Angul)—One *angul* long and one space-point wide row of space-points.

(2) Pratarangul (Square Angul)—A square shape one *angul* long and one *angul* wide. In other words square of *Suchyangul* is *Pratarangul*.

(3) Ghanangul (Cubic Angul)—A cube one *angul* long, one *angul* wide and one *angul* high is called *Ghanangul*. It has three dimensions.

—Aphorisms 337 and 356, pp. 79 and 136

(4) Kakani Gem—In ancient times it was used as a medium of exchange. It figures among the fourteen *ratnas* (exclusive possessions) belonging to Bharat Chakravarti. On left is the shape of the Kakani gem as described in the aphorism. On right is the anvil shaped gem. **Ka.**, **Ko.** and **Ta.** stand for projection, corner and surface.

A Kakani gem has 12 projections, 8 corners and 6 surfaces.

—Aphorism 358, p. 80

angul); and (3) *Pratarangul* (square *angul*) multiplied by *suchyangul* (linear *angul*) is *Ghanangul* (cubic *angul*).

Elaboration—*Suchyangul* or *suchi* (needle) *angul* means a one *angul* long needle-like line having only one dimension. The other two dimensions being one space-point each. It can be illustrated with three points in a line—
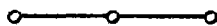
Pratarangul—*Pratar* means square. *Suchyangul* (linear *angul*) multiplied by *suchyangul* (linear *angul*) is *Pratarangul* (square *angul*). It is a square, one *angul* long and one *angul* wide and can be illustrated by three lines of three points each—
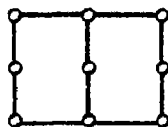
Ghanangul—According to mathematics a number multiplied twice with the same number becomes its cube. In three dimensional geometry a cube has three dimensions—length, width and thickness or height of a thing. *Agam* also conveys the same thing. When *pratarangul* (square *angul*) is multiplied by *suchyangul* (linear *angul*) we get *Ghanangul* (cubic *angul*). It is a cube one *angul* long, one *angul* wide and one *angul* high and can be illustrated by extending the square formed by three lines of three points each to three points in the third dimension—
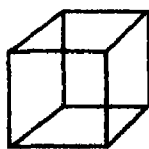
This means that *Suchyangul* is the unit of measuring length, *Pratarangul* (square *angul*) is the unit of measuring the length and width or the area and *Ghanangul* (cubic *angul*) is the unit of measuring length, width and height or volume. Practical example of this is—one *angul* long thread is one *suchyangul* (linear *angul*), one *angul* long and one *angul* wide piece of cloth is one *pratarangul* (square *angul*), and one *angul* long, one *angul* wide and one *angul* high piece of metal is one *ghanangul* (cubic *angul*).

३३८. एतेसि णं भंते ! सूइअंगुल–पयरंगुल–घणंगुलाण य कतरे कतरेहिंतो अप्पे वा बहुए वा तुल्ले वा विसेसाहिए वा ?

सव्वत्थोवे सूइअंगुले, पयरंगुले असंखेज्जगुणे, घणंगुले असंखेज्जगुणे। से तं आयंगुले।

३३८. (प्र.) भंते ! इन सूच्यंगुल, प्रतरांगुल और घनांगुल में से कौन किससे अल्प, अधिक, तुल्य अथवा विशेषाधिक है ?

(उ.) इनमें सूच्यंगुल सबसे अल्प (कम) है, प्रतरांगुल उससे असंख्यातगुणा है और उससे घनांगुल असंख्यातगुणा है। यह आत्मांगुल है।

338. (Q.) *Bhante* ! Which of these three, *Suchyangul* (linear *angul*), *Pratarangul* (square *angul*) and *Ghanangul* (cubic *angul*), is relatively less, more, equal or much more.

(Ans.) Of these, *Suchyangul* (linear *angul*) is least, *Pratarangul* (square *angul*) is innumerable times larger than it and *Ghanangul* (cubic *angul*) is still innumerable times larger.

This concludes the description of *Atmangul pramana* (standard of the breadth of own finger).

(२) उत्सेधांगुल

३३९. से किं तं उस्सेहंगुले ?

उस्सेहंगुले अणेगविहे पण्णत्ते। तं जहा–

परमाणू तसरेणू रहरेणू अग्गयं च वालस्स।
लिक्खा जूया य जवो अट्ठगुणविवड्ढिया कमसो॥१॥

३३९. (प्र.) उत्सेधांगुल क्या है ?

(उ.) उत्सेधांगुल अनेक प्रकार का है। वह इस प्रकार है–(१) परमाणु, (२) त्रसरेणु, (३) रथरेणु, (४) बालाग्र (बाल का अग्र भाग), (५) लिक्षा (लीख), (६) यूका (जूँ), और (७) यव (जौ)। ये सभी क्रमशः उत्तरोत्तर आठ गुणे जानना चाहिए।

विवेचन–यहाँ 'अनेक प्रकार' का इंगित अनेक प्रकार की वर्धमान इकाइयों से मिलकर बना होने से है। जो क्रमशः बढ़ता जाता है उसे 'उत्सेध' कहते हैं। ऐसी घटक इकाइयों से जो अंगुल का नाप

होता है उसे उत्सेधांगुल कहा जाता है। अथवा देव, नारक आदि चतुर्गति के जीवों के शरीर की ऊँचाई का निर्णय करने के लिए जिस अंगुल का उपयोग किया जाता है, उसे उत्सेधांगुल कहते हैं।

उत्सेधांगुल के क्रमिक विभाजनों से होने वाला नाप सात प्रकार का है, इस कारण यहाँ उत्सेधांगुल के सात भेद बताये हैं। ये क्रमशः आठ गुणा बढ़ते हैं अर्थात् आठ परमाणु = एक त्रसरेणु, आठ त्रसरेणु = एक रथरेणु, आठ रथरेणु = एक बालाग्र, आठ बालाग्र = एक लिक्षा, आठ लिक्षा = एक यूका, आठ यूका = एक यव तथा आठ यव = एक उत्सेधांगुल।

त्रस जीवों के चलने से जो सूक्ष्म धूलिकण उड़ते हैं उसे त्रसरेणु कहते हैं। यह अत्यन्त सूक्ष्म होता है। रथ के उड़ने से चलने वाले धूलिकण रथरेणु। बाल का अग्र भाग बालाग्र कहा जाता है। लिक्षा-लीख और यूका-जूं से यहाँ नन्हें जीवों के प्रमाण का नाम सूचित किया है।

(2) UTSEDHANGUL

339. (Q.) What is this *Utsedhangul* (fragmentary units of *angul*)?

(Ans.) *Utsedhangul* (fragmentary units of *angul*) is of many kinds—(1) *Paramanu*, (2) *Tras-renu*, (3) *Rath-renu*, (4) *Balagra*, (5) *Liksha*, (6) *Yuka*, and (7) *Yava*. These units are progressively eight times the preceding unit.

Elaboration—Here 'many kinds' points at many kinds of progressively increasing units that form an *Utsedhangul*. That which continuously increases is called *Utsedh*. The measure of *angul* that is made up of such constituent units is called *Utsedhangul*. The other definition is—the unit (*angul*) that is used to measure the height of beings of the four realms including hell-beings is called *Utsedhangul*.

There are seven progressive division of *utsedhangul*. That is why it is said that *utsedhangul* is of seven kinds. They are in multiples of eight—eight *paramanus* (ultimate-particles) = one *tras-renu*, eight *tras-renus* = one *rath-renu*, eight *rath-renus* = one *balagra*, eight *balagras* = one *liksha*, eight *likshas* = one *yuka*, eight *yukas* = one *yava* and eight *yavas* make one *utsedhangul*.

The minute motes blown up due to movement of mobile-beings are called *tras-renu* and these are extremely minute. The dust particles blown up due to movement of a chariot are called *rath-renu*. The tip of *hair* is called *balagra*. *Liksha* means a nit and *yuka* means a louse. *Yava* means *barley*. All these are unit names based on the respective dimensions of these things.

३४०. से किं तं परमाणु ?

परमाणु दुविहे पण्णत्ते। तं जहा–१. सुहुमे य, २. वावहारिए य।

३४०. **(प्र.)** वह परमाणु क्या है ?

(उ.) परमाणु के दो प्रकार हैं, जैसे-(१) सूक्ष्म परमाणु, और (२) व्यवहार परमाणु।

PARAMANU

340. (Q.) What is this *Paramanu* (ultimate-particle of matter) ?

(Ans.) *Paramanu* (ultimate-particle of matter) is of two types—(1) *Sukshma paramanu* (abstract ultimate-particle of matter), and (2) *Vyavahar paramanu* (empirical ultimate-particle of matter).

३४१. तत्थ णं जे से सुहुमे से ठप्पे।

३४१. इनमें से सूक्ष्म परमाणु स्थापनीय है अर्थात् यहाँ उसका विषय नहीं है।

341. Of these, *Sukshma paramanu* (abstract ultimate-particle of matter) can only be ensconced (in the present context) and thus conventionally avoided here.

३४२. से किं तं वावहारिए ?

वावहारिए अणंताणं सुहुमपरमाणुपोग्गलाणं समुदयसमितिसमागमेणं से एगे वावहारिए परमाणुपोग्गले निप्पज्जति।

३४२. **(प्र.)** व्यवहार परमाणु किसे कहते हैं ?

(उ.) अनंत-अनंत सूक्ष्म परमाणुओं के समुदय–समागम (एकीभाव रूप मिलन) से एक व्यावहारिक परमाणु बनता है।

विवेचन–उत्सेधांगुल की आद्य इकाई परमाणु है।

परम + अणु = अर्थात् जो सब द्रव्यों में सूक्ष्मतम है, उससे सूक्ष्म (छोटा) अन्य कोई अणु न हो तथा जिसका पुनः विभाग (टुकड़ा–खण्ड) न हो सके, ऐसे अविभागी अंश को परमाणु कहते हैं।

परमाणु पुद्गलद्रव्य होने से मूर्त्त है। उसमें पौद्गलिक गुण–वर्ण, गंध, रस और स्पर्श पाये जाते हैं। तथापि अपनी सूक्ष्मता के कारण वह सामान्य ज्ञानियों द्वारा इन्द्रियग्राह्य–दृष्टिगोचर नहीं होता है। लेकिन केवलज्ञानी और क्षायोपशमिक ज्ञानी (परम अवधिज्ञानी) उसे जानते–देखते हैं।

परमाणु दो प्रकार का है–(१) सूक्ष्म परमाणु, तथा (२) व्यावहारिक परमाणु। सूक्ष्म परमाणु का यहाँ प्रसंग नहीं होने से उसे स्थाप्य अर्थात् अप्रासंगिक बताया है। व्यावहारिक परमाणु अनन्त सूक्ष्म

परमाणुओं के संयोग से बनता है, इसलिए वास्तव में वह अनन्तप्रदेशी स्कन्ध है, किन्तु अत्यन्त सूक्ष्म होने के कारण उसे परमाणु कहा गया है। वही क्षेत्रप्रमाण आदि का आदि कारण है।

342. (Q.) What is this *Vyavahar paramanu* (empirical ultimate-particle of matter) ?

(Ans.) *Vyavahar paramanu* (empirical ultimate-particle of matter) is formed by fusion or integration of infinite times infinite *Sukshma paramanus* (abstract ultimate-particles of matter).

Elaboration—The basic formative unit of *utsedhangul* is *paramanu* (ultimate-particle).

Paramanu or *Param* (ultimate) + *anu* (particle) means that particle of matter which is smallest, there is no other particle smaller than this, and that which cannot be further divided.

As *paramanu* (ultimate-particle) is matter. It has form and attributes like colour, smell, taste and touch. But due to its extreme minuteness it is beyond the reach of sense organs of normal human beings. However *Keval-jnani* (omniscient) and *Kshayopashamik-jnani* (one who acquires highest level of *avadhi-jnana* or extrasensory perception of the physical dimension) see and know it.

Paramanu (ultimate-particle of matter) is of two types—(1) *Sukshma paramanu* (abstract ultimate-particle of matter), and (2) *Vyavahar paramanu* (empirical ultimate-particle of matter). As the first is out of context here, it is marked as worth being ensconced. As it is formed by infinite *sukshma paramanus* (abstract ultimate-particles of matter), the *vyavahar paramanu* (empirical ultimate-particle of matter) is in fact an aggregate of infinite space-points. However, as it is extremely minute it is called *paramanu* (ultimate-particle). This *vyavahar paramanu* (empirical ultimate-particle of matter) is the basic unit of area and other dimensional measures.

व्यावहारिक परमाणु की सूक्ष्मता

३४३. (१) से णं भंते ! असिधारं वा खुरधारं वा ओगाहेज्जा ?

हंता ओगाहेज्जा।

से णं तत्थ छिज्जेज्ज वा भिज्जेज्ज वा ?

नो इणट्ठे समट्ठे, नो खलु तत्थ सत्थं कमति।

३४३. (१) (प्र.) भंते ! व्यावहारिक परमाणु तलवार की धार या छुरे की धार का अवगाहन (पार) कर सकता है ?

(उ.) हाँ, कर सकता है।

(प्र.) तो क्या वह उस (तलवार या छुरे से) छिन्न-भिन्न हो सकता है ?

(उ.) ऐसा नहीं हो सकता। क्योंकि शस्त्र इसका छेदन-भेदन नहीं कर सकता।

MINUTENESS OF VYAVAHAR PARAMANU

343. (1) (Q.) *Bhante* ! Does this *Vyavahar paramanu* (empirical ultimate-particle of matter) occupy the edge of a sword or a razor ?

(Ans.) Yes, it does.

(Q.) If so, does it get cut or pierced there ?

(Ans.) That is not possible because no weapon (in the form of matter) prevails there.

(२) से णं भंते ! अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं विईवएज्जा ?

हंता विईवएज्जा।

से णं तत्थ डहेज्जा ?

नो तिणट्ठे समट्ठे, णो खलु तत्थ सत्थं कमति।

(२) (प्र.) भंते ! क्या वह व्यावहारिक परमाणु अग्निकाय के बीचोंबीच होकर निकल जाता है ?

(उ.) हाँ, निकल जाता है।

(प्र.) तब क्या वह उससे जल जाता है ?

(उ.) ऐसा नहीं हो सकता, क्योंकि अग्निरूप शस्त्र का उसमें संक्रमण नहीं होता।

(2) (Q.) *Bhante* ! Does this *Vyavahar paramanu* (empirical ultimate-particle of matter) pass through a fire-body ?

(Ans.) Yes, it does.

(Q.) If so, does it burn there ?

(Ans.) That is not possible because no weapon (in the form of fire) prevails there.

(३) से णं भंते ! पुक्खलसंवट्टयस्स महामेहस्स मज्झंमज्झेणं विईवएज्जा ?

हंता विईवएज्जा।

से णं तत्थ उदउल्ले सिया ?

नो तिणट्ठे समट्ठे, णो खलु तत्थ सत्थं कमति।

(३) (प्र.) भगवन् ! क्या व्यावहारिक परमाणु पुष्करसंवर्तक नामक महामेघ के बीचोंबीच से जा सकता है ?

(उ.) हाँ, जा सकता है।

(प्र.) क्या वह वहाँ पानी से गीला हो जाता है ?

(उ.) नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। पानी से भीगता नहीं, गीला नहीं होता है क्योंकि अप्काय रूप शस्त्र का उस पर प्रभाव नहीं पड़ता।

विवेचन–पुष्करसंवर्तक एक महामेघ का नाम है, जो उत्सर्पिणी काल के इक्कीस हजार वर्ष वाले दुषम-दुषम नामक प्रथम आरे की समाप्ति पर दूसरे आरे के प्रारम्भ में सर्वप्रथम बरसता है। यह पुष्करसंवर्तक नामक महामेघ लगातार सात दिन-रात धारा प्रवाह बरसता है, इससे भूमि की समस्त रूक्षता, भूमि का समस्त ताप, उष्णता आदि अशुभ प्रभाव नष्ट हो जाते हैं। इस मेघ में जल धारा का प्रवाह बहुत सघन होता है।

(3) (Q.) *Bhante* ! Does this *Vyavahar paramanu* (empirical ultimate-particle of matter) pass through the great cloud called *Pushkarasamvartak* ?

(Ans.) Yes, it does.

(Q.) If so, does it get wet with water there ?

(Ans.) That is not possible because no weapon (in the form of water) prevails there.

Elaboration—*Pushkarasamvartak* is the name of a specific dense and great cloud that is said to rain first of all at the end of the twenty one thousand years long first epoch (*Dukham-dukham*) and the beginning of the second epoch (*Dukham-sukham*) of the progressive cycle of time. This great cloud rains incessantly for seven days and pacifies all the hostile conditions including aridity and excessive heat of the earth. The rain caused by this cloud is very intense.

(४) से णं भंते ! गंगाए महाणईए पडिसोयं हव्वमागच्छेज्जा ?

हंता हव्वमागच्छेज्जा।

से णं तत्थ विणिघायमावज्जेज्जा ?

नो तिणट्ठे समट्ठे, णो खलु तत्थ सत्थं कमति।

(४) (प्र.) भंते ! क्या वह व्यावहारिक परमाणु गंगा महानदी के प्रतिस्रोत (प्रतिकूल प्रवाह) से गति कर सकता है ?

(उ.) हाँ, वह प्रतिकूल प्रवाह में शीघ्र गति कर सकता है।

(प्र.) क्या वहाँ उसमें प्रतिस्खलना (रुकावट) आती है ?

(उ.) ऐसा नहीं हो सकता है, क्योंकि किसी भी शस्त्र का उस पर असर नहीं होता है।

(4) (Q.) *Bhante* ! Does this *Vyavahar paramanu* (empirical ultimate-particle of matter) move fast against the flow of the great river Ganges ?

(Ans.) Yes, it does move fast against the flow.

(Q.) If so, does it get obstructed by the flow ?

(Ans.) That is not possible because no weapon (in the form of flow of a stream) prevails there.

(५) से णं भंते ! उदगावत्तं वा उदगबिंदुं वा ओगाहेज्जा ?

हंता ओगाहेज्जा।

से णं तत्थ कुच्छेज्ज वा परियावज्जेज्ज वा ?

णो इणट्ठे समट्ठे, नो खलु तत्थ सत्थं कमति।

सत्थेण सुतिक्खेण वि छेत्तुं भेत्तुं व जं किर न सक्का।

तं परमाणू सिद्धा वयंति आदी पमाणाणं॥१॥

(५) (प्र.) भंते ! क्या वह व्यावहारिक परमाणु उदकावर्त (पानी के चक्राकार भँवर) और जल-बिन्दु में अवगाहन कर सकता है ?

(उ.) हाँ, वह उसमें अवगाहन कर सकता है।

(प्र.) क्या वह उसमें पूतिभाव (सड़ान्ध या पर्यायान्तर) को प्राप्त हो जाता है ?

(उ.) ऐसा नहीं हो सकता है। उस परमाणु को जलरूपी शस्त्र संक्रमित नहीं कर सकता है।

अत्यन्त तीक्ष्ण शस्त्र से भी जिसका छेदन-भेदन नहीं किया जा सकता, उसको ज्ञानी-(सिद्ध होने वाले पुरुष) केवली भगवान परमाणु कहते हैं। वह सर्व प्रमाणों का आदि प्रमाण है॥१॥

विवेचन—प्राचीन आयुर्वेद ग्रन्थों में परमाणु की परिभाषा इस प्रकार मिलती है-

जालान्तरगते भानौ, यत् सूक्ष्मे दृश्यते रजः।
तस्य त्रिंशत्तमो भागः, परमाणुः स कथ्यते॥

मकान के ऊपर की जाली के छोट-छोटे छिद्रों द्वारा सूर्य की किरणावलियों के समुदाय में जो बहुत ही सूक्ष्म कण दिखाई देते हैं, उस एक कण के ३०वें भाग को परमाणु कहा जाता है।

आधुनिक विज्ञान के अनुसार धूल के एक लघुतम कण में दस पदम से भी अधिक परमाणु होते हैं। (जैनदर्शन और आधुनिक विज्ञान, पृ. ४७)

जैनदर्शन के अनुसार जिससे छोटी अन्य कोई वस्तु नहीं होती वह अत्यन्त सूक्ष्म अणु परमाणु है।

(5) (Q.) *Bhante* ! Does this *Vyavahar paramanu* (empirical ultimate-particle of matter) enter a whirlpool or a drop of water ?

(Ans.) Yes, it does enter.

(Q.) If so, does it rot or transform in any way ?

(Ans.) That is not possible because no weapon (in the form water) prevails there.

That which cannot be cut or pierced even by sharpest of weapons is called *paramanu* (ultimate-particle) by the omniscient. And that *paramanu* (ultimate-particle) is the primary unit of all standard measurements. (1)

Elaboration—The definition of *paramanu* (ultimate-particle) according to the ancient scriptures of *Ayurveda* (Indian science of medicine) is—The one thirtieth part of a dust particle seen suspended in air when rays of sunlight enter a closed room from the small holes in a grill at the ceiling.

According to modern science the smallest dust particle contains more than ten thousand trillion (1,016) *paramanus*. (*Jain Darshan aur Adhunik Vijnana*, p. 47)

According to Jain metaphysics the smallest indivisible particle of matter is *paramanu* (ultimate-particle).

३४४. अणंताणं वावहारियपरमाणुपोग्गलाणं समुदय–समिति–समागमेणं सा एगा उस्सण्हसण्हिया ति वा, सण्हसण्हिया ति वा उड्ढरेणू ति वा तसरेणू ति वा रहरेणू ति वा।

अट्ठ उस्सण्हसण्हियाओ सा एगा सण्हसण्हिया। अट्ठ सण्हसण्हियाओ सा एगा उड्ढरेणू। अट्ठ उड्ढरेणूओ सा एगा तसरेणू। अट्ठ तसरेणूओ सा एगा रहरेणू। अट्ठ रहरेणु देवकुरु–उत्तरकुरुयाणं मणुयाणं से एगें वालग्गे। अट्ठ देवकुरु–उत्तरकुरुयाणं मणुयाणं वालग्गा हरिवास–रम्मगवासाणं मणुयाणं से एगे वालग्गे। अट्ठ हरिवस्स–रम्मयवासाणं मणुस्साणं वालग्गा हेमवय–हेरण्णवयवासाणं मणुस्साणं से एगे वालग्गे। अट्ठ हेमवय–हेरण्णवयवासाणं मणुस्साणं वालग्गा पुव्वविदेह–अवरविदेहाणं मणुस्साणं ते एगे वालग्गे। अट्ठ पुव्वविदेह–अवरविदेहाणं मणूसाणं वालग्गा भरहेरवयाणं मणुस्साणं से एगे वालग्गे। अट्ठ भरहेरवयाणं मणूसाणं वालग्गा सा एगा लिक्खा। अट्ठ लिक्खाओ सा एगा जूया। अट्ठ जूयाओ से एगे जवमज्झे। अट्ठ जवमज्झे से एगे उस्सेहंगुले।

३४४. उन अनन्तानन्त व्यावहारिक परमाणुओं के समुदाय (समूह), समिति (मिलन), समागम और (संयोग) (समुदाय के एकत्र होने) से एक उत्श्लक्ष्णश्लक्ष्णिका, श्लक्ष्णश्लक्ष्णिका, ऊर्ध्वरेणु, त्रसरेणु और रथरेणु उत्पन्न होता है। (जो इस प्रकार है–)

आठ उत्श्लक्ष्णश्लक्ष्णिका की एक श्लक्ष्णश्लक्ष्णिका, आठ श्लक्ष्णश्लक्ष्णिका का एक ऊर्ध्वरेणु, आठ ऊर्ध्वरेणुओं का एक त्रसरेणु, आठ त्रसरेणुओं का एक रथरेणु, आठ रथरेणुओं का एक देवकुरु-उत्तरकुरु के मनुष्यों का बालाग्र (बाल का अग्र भाग), देवकुरु-उत्तरकुरु के मनुष्यों के आठ बालाग्रों का एक हरिवर्ष-रम्यक्वर्ष के मनुष्यों का बालाग्र, हरिवर्ष-रम्यक्वर्ष के मनुष्यों के आठ बालाग्रों के बराबर हैमवत और हैरण्यवत क्षेत्र के मनुष्यों का एक बालाग्र, हैमवत और हैरण्यवत क्षेत्र के मनुष्यों के आठ बालाग्रों के बराबर पूर्व महाविदेह और अपर महाविदेह के मनुष्यों का एक बालाग्र, पूर्वविदेह-अपरविदेह के मनुष्यों के आठ बालाग्रों के बराबर भरत-ऐरवत क्षेत्र के मनुष्यों का एक बालाग्र, भरत और ऐरवत क्षेत्र के मनुष्यों के आठ बालाग्रों की एक लिक्षा (लीख), आठ लिक्षाओं की एक जूँ, आठ जुँओं का एक यवमध्य और आठ यवमध्यों का एक उत्सेधांगुल होता है।

DETAILS OF UTSEDHANGUL

344. Progressive assimilation of numerous integrations of many aggregates of infinite *Vyavahar paramanus* (empirical ultimate-particle of matter) gradually give rise to one *Utshlakshnashlakshnika, shlakshnashlakshnika, urdhva-renu, tras-renu* and *rath-renu*. (details of which are as follows)—

Eight *utshlakshnashlakshnikas* make one *shlakshnashlakshnika*, eight *shlakshnashlakshnikas* make one *urdhvarenu*, eight *urdhvarenus* make one *tras-renu*, eight *tras-renus* make one *rath-renu*, eight *rath-renus* make one *balagra* (hair-tip) of *Devakuru-Uttarkuru* man, eight *balagras* of *Devakuru-Uttarkuru* man make one *balagra* of *Harivarsh-Ramyakvarsh* man, eight *balagras* of *Harivarsh-Ramyakvarsh* man make one *balagra* of man of *Haimavat* and *Hairanyavat kshetras*, eight *balagras* of man of *Haimavat* and *Hairanyavat kshetras* make one *balagra* of man of *Purva Mahavideh* and *Apar Mahavideh kshetras*, eight *balagras* of man of *Purva Mahavideh* and *Apar Mahavideh kshetras* make one *balagra* of man of *Bharat-Airavat kshetras*, eight *balagras* of man of *Bharat-Airavat kshetras* make one *liksha*, eight *likshas* make one *yuka*, eight *yukas* make one *yavamadhya* and eight *yavamadhyas* make one *utsedhangul*. (*Devakuru* to *Bharat-Airavat kshetras* are mythical areas where human beings reside.)

३४५. एएणं अंगुलपमाणेणं छ अंगुलाइं पादो, बारस अंगुलाइं विहत्थी, चउवीसं अंगुलाइं रयणी, अडयालीसं अंगुलाइं कुच्छी, छन्नउती अंगुलाइं से एगे दंडे इ वा धणू इ वा जुगे इ वा नालिया इ वा अक्खे इ वा मुसले इ वा।

एएणं धणुप्पमाणेणं दो धणुसहस्साइं गाउयं, चत्तारि गाउयाइं जोयणं।

३४५. इस अंगुलप्रमाण से छह अंगुल का एक पाद, बारह अंगुल की एक वितस्ति, चौबीस अंगुल की एक रत्नि, अड़तालीस अंगुल की एक कुक्षि और छियानवे अंगुल का एक दंड, धनुष, युग, नालिका, अक्ष अथवा मूसल होता है। इस धनुषप्रमाण से दो हजार धनुष का एक गव्यूत और चार गव्यूत का एक योजन होता है।

॥ परमाणु से आरंभ करके अंगुल–योजन तक के प्रमाण की तालिका ॥

अनन्त सूक्ष्म परमाणु = १ व्यवहार परमाणु

अनन्त व्यवहार परमाणु = १ उत्श्लक्ष्णश्लक्ष्णिका

८ उत्श्लक्ष्णश्लक्ष्णिका = १ श्लक्ष्णश्लक्ष्णिका

८ श्लक्ष्णश्लक्ष्णिका = १ ऊर्ध्वरेणु

८ ऊर्ध्वरेणु = १ त्रसरेणु

८ त्रसरेणु = १ रथरेणु

८ रथरेणु = १ देवकुरु-उत्तरकुरु बालाग्र

८ देवकुरु-उत्तरकुरु बालाग्र = १ हरिवर्ष-रम्यक्वर्ष बालाग्र

८ हरिवर्ष-रम्यक्वर्ष बालाग्र = १ हैमवत-हैरण्यवत बालाग्र

८ हैमवत-हैरण्यवत बालाग्र = १ पूर्वापर महाविदेह बालाग्र

८ पूर्वापर महाविदेह बालाग्र = १ भरत-ऐरवत बालाग्र

८ भरत-ऐरवत बालाग्र = १ लीख

८ लीख = १ यूका

८ यूका = १ यवमध्य

८ यवमध्य = १ उत्सेधांगुल

४०० उत्सेधांगुल = १ प्रमाणांगुल

२ उत्सेधांगुल = १ वीरांगुल

६ उत्सेधांगुल = १ पाद

२ पाद = १ बित्ता (वितस्ति)

२ बित्ते (वितस्ति) = १ रत्नि (हाथ)

२ हाथ = १ कुक्षि

२ कुक्षि अथवा ४ हाथ अथवा १६ अगुंल = १ दंड अथवा धनुष अथवा युग अथवा अक्ष अथवा मूसल

२,००० धनुष = १ कोस (गव्यूत)

४ कोस (गव्यूत) = १ योजन

345. By this standard of *angul*, six *anguls* make one *paad*, twelve *anguls* make one *vitasti*, twenty four *anguls* make one *ratni*, forty eight *anguls* make one *kukshi* and ninety six *anguls*

धनुष
युग (जुआ)

चित्र परिचय ५

Illustration No. 5
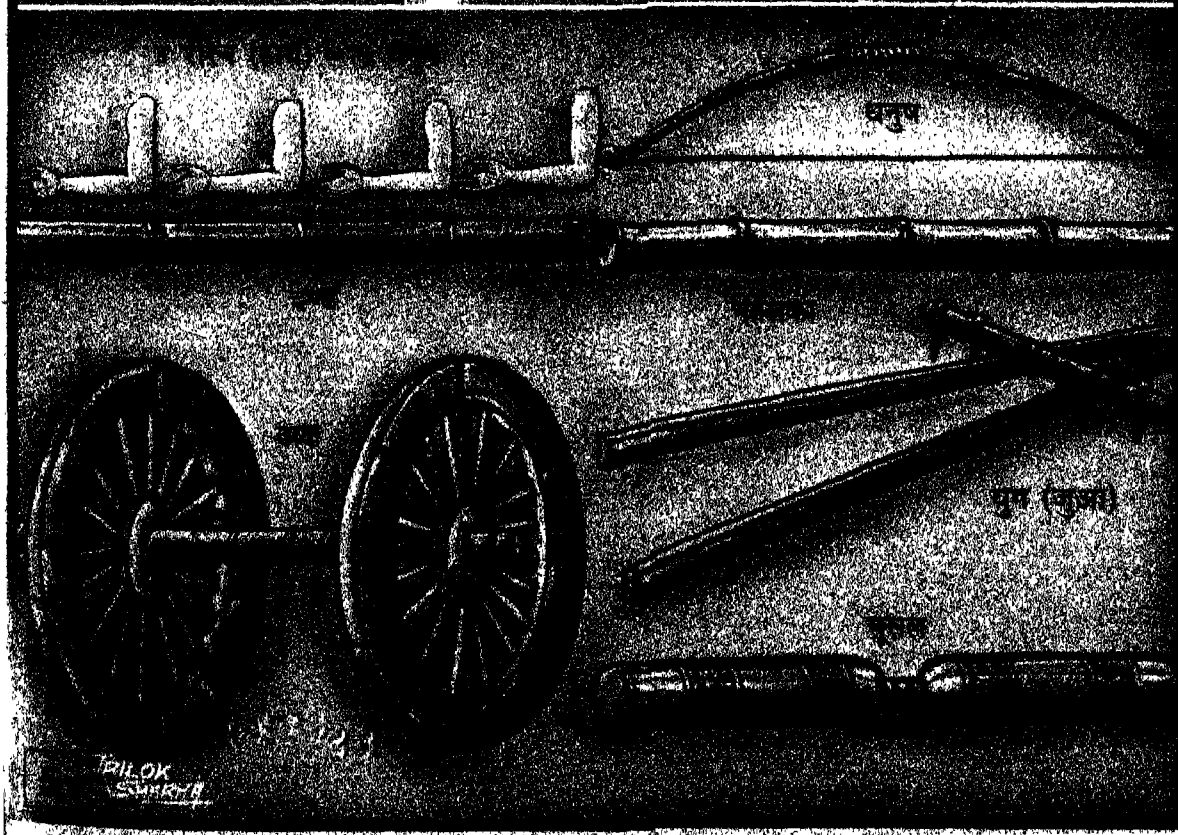
अंगुल-प्रमाण का स्वरूप

(१) एक अंगुल में आठ यव (जौ) होते हैं।

(२) छह अंगुल का एक पाद।

(३) दो पाद की एक बेंत–वितस्ति।

(४) दो वितस्ति का एक हाथ (रत्नि)।

(५) दो हाथ (रत्नि) की एक कुक्षि।

(६) दो कुक्षि का एक दण्ड, वही धनुष, युग, नालिका, अक्ष और मूसल कहा जाता है।

–सूत्र ३३५-३४५, पृष्ठ ९१

MEASUREMENT BY ANGUL

(1) One *angul* has eight *yav* (width of a grain of barley).

(2) Six *anguls* make one *paad* (foot).

(3) Two *paads* make one *vitasti.*

(4) Two *vitastis* make one *ratni* or *haath* (cubit).

(5) Two *ratnis* (cubits) make one *kukshi.*

(6) Two *kukshis* make one *dand* or *dhanush* or *yug* or *nalika* or *aksha* or *musal.*

—Aphorisms 335-345, p. 91

make one *dand* or *dhanush* or *yuga* or *nalika* or *aksha* or *musal.* By this standard of *dhanush,* two thousand *dhanush* make one *gavyut* and four *gavyuts* make one *yojan.*

TABLE OF THE AFORESAID UNITS

Infinite abstract *paramanus* = 1 empirical *paramanu*

Infinite empirical *paramanus* = 1 *utshlakshnashlakshnikas*

8 *utshlakshnashlakshnikas* = 1 *shlakshnashlakshnika*

8 *shlakshnashlakshnikas* = 1 *urdhva-renu*

8 *urdhva-renus* = 1 *tras-renu*

8 *tras-renus* = 1 *rath-renu*

8 *rath-renus* = 1 *balagra* (hair-tip) of *Devakuru-Uttarkuru* man

8 *balagras* of *Devakuru-Uttarkuru* man = 1 *balagra* of *Harivarsh-Ramyakvarsh* man

8 *balagras* of *Harivarsh-Ramyakvarsh* man = 1 *balagra* of *Haimavat-Hairanyavat* man

8 *balagras* of *Haimavat-Hairanyavat* man = 1 *balagra* of *Purva-Apar Mahavideh* man

8 *balagras* of *Purva-Apar Mahavideh* man = 1 *balagra* of *Bharat-Airavat* man

8 *balagras* of *Bharat-Airavat* man = 1 *liksha*

8 *likshas* = 1 *yuka*

8 *yukas* = 1 *yavamadhya*

8 *yavamadhyas* = 1 *utsedhangul*

400 *utsedhangul* = 1 *pramanangul*

2 *utsedhangul* = 1 *virangul*

6 *utsedhanguls* = 1 *paad*

2 *paads* = 1 *vitasti (bitta)*

2 *vitastis (bitta)* = 1 *ratni (haath)*

2 *haath* = 1 *kukshi*

2 *kukshi* (*vaam*) or 4 *haath* or 16 *anguls* = 1 *dand* or *dhanush* or *yuga* or *aksha* or *musal*

2,000 *dhanush* = 1 *kosa (gavyut)*

4 *kosa* (*gavyuts*) = 1 *yojan*

३४६. एएणं उस्सेहंगुलेणं किं पओयणं ?

एएणं उस्सेहंगुलेणं णेरइय-तिरिक्खजोणिय मणूसदेवाणं सरीरोगाहाणाओ मविज्जंति।

॥ पमाणे त्ति पयं सम्मत्तं ॥

३४६. **(प्र.)** इस उत्सेधांगुल का क्या प्रयोजन है ?

(उ.) इस उत्सेधांगुल से नारकों, तिर्यंचों, मनुष्यों और देवों के शरीर की अवगाहना नापी जाती है।

॥ प्रमाणपद प्रकरण समाप्त ॥

PURPOSE OF UTSEDHANGUL

346. (Q.) What is the purpose of this *Utsedhangul pramana* (standard of fragmentary units of *angul* or the breadth of a finger) ?

(Ans.) This *Utsedhangul pramana* (standard of fragmentary units of *angul* or the breadth of a finger) is used to measure the dimensions of the bodies of hell-beings, animals, human beings and divine beings.

● END OF THE DISCUSSION ON PRAMANA ●

अवगाहना-प्रकरण
THE DISCUSSION ON AVAGAHANA

नारक—अवगाहना

३४७. (१) णेरइयाणं भंते ! केमहालिया सरीरोगाहणा पन्नत्ता ?

गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता। तं जहा— १. भवधारणिज्जा य, २. उत्तरवेउव्विया य।

तत्थ णं जा सा भवधारणिज्जा सा जहण्णेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेणं पंच धणुसयाइं।

तत्थ णं जा सा उत्तरवेउव्विया सा जहण्णेणं अंगुलस्स संखेज्जइभागं, उक्कोसेणं धणुसहस्सं।

३४७. (१) (प्र.) भगवन् ! नारकों के शरीर की अवगाहना कितनी बड़ी कही है ?

(उ.) गौतम ! नारक जीवों की शरीर-अवगाहना दो प्रकार से कही है— (१) भवधारणीय (शरीर-अवगाहना-जन्मकाल से जीवन पर्यंत रहने वाले शरीर की ऊँचाई), और (२) उत्तरवैक्रिय (प्रयोजनवश वैक्रिय शक्ति द्वारा निर्मित शरीर)।

उनमें से भवधारणीय (शरीर) की अवगाहना जघन्य (सबसे अल्प) जो उत्पत्ति के समय होती है अंगुल के असंख्यातवें भाग की और उत्कृष्ट (सबसे अधिक) पाँच सौ धनुष की होती है।

उत्तरवैक्रिय शरीर की अवगाहना जघन्य अंगुल के संख्यातवें भाग एवं उत्कृष्ट एक हजार धनुष की होती है।

NARAK AVAGAHANA

347. (1) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *naarak* (infernal being) ?

(Ans.) Gautam ! The *avagahana* (space occupied) by the body of a *naarak* (infernal being) is of two kinds—(1) *Bhavadharaniya* (by "the incarnation sustaining body" or "the body that lasts from birth to death" or "the normal body"), and (2) *Uttar-vaikriya* (by the body created for some purpose by *vaikriya* power or power of transmutation).

Of these the minimum *avagahana* (space occupied) of the *Bhavadharaniya* (normal) body is innumerable fraction of an *angul* (this is at the time of birth) and the maximum is five hundred *dhanushas.*

The minimum *avagahana* (space occupied) of the *Uttar-vaikriya* (secondary transmuted) body is countable fraction of an *angul* and the maximum is one thousand *dhanushas.*

(२) रयणप्पभापुढवीए नेरइयाणं भंते ! केमहालिया सरीरोगाहणा पन्नत्ता ?

गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता। तं जहा-१. भवधारणिज्जा य, २. उत्तरवेउव्विया य।

तत्थ णं जा सा भवधारणिज्जा सा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेणं सत्त धणूइं तिण्णि रयणीओ छच्च अंगुलाइं।

तत्थ णं जा सा उत्तरवेउव्विया सा जहन्नेणं अंगुलस्स संखेज्जइभागं उक्कोसेणं पण्णरस धणूइं अड्ढाइज्जाओ रयणीओ य।

(२) (प्र.) भगवन् ! रत्नप्रभापृथ्वी के नारकों की शरीरावगाहना कितनी कही है ?

(उ.) गौतम ! वह दो प्रकार की कही है-(१) भवधारणीय, और (२) उत्तरवैक्रिय।

इनमें से भवधारणीय शरीरावगाहना तो जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट सात धनुष, तीन रत्नि (हाथ) तथा छह अंगुलप्रमाण होती है।

उत्तरवैक्रिय शरीरावगाहना जघन्य अंगुल के संख्यातवें भागप्रमाण और उत्कृष्ट पन्द्रह धनुष, अढाई रत्नि-दो हाथ और बारह अंगुल की होती है।

(2) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *naarak* (infernal being) of the *Ratnaprabha* land ?

(Ans.) Gautam ! The *avagahana* (space occupied) by the body of a *naarak* (infernal being) of the *Ratnaprabha* land is of two kinds—(1) *Bhavadharaniya* (by the normal body), and (2) *Uttar-vaikriya* (by the secondary transmuted body).

Of these the minimum *avagahana* (space occupied) of the *Bhavadharaniya* (normal) body is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is seven *dhanushas,* three *ratnis* and six *anguls.*

The minimum *avagahana* (space occupied) of the *Uttar-vaikriya* (secondary transmuted) body is countable fraction of an *angul* and the maximum is fifteen *dhanushas* and two and a half *ratnis* (half *ratni* being twelve *anguls*).

(३) सक्करप्पभापुढ णेरइयाणं भंते ! केमहालिया सरीरोगाहणा पण्णत्ता ?

गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता। तं जहा- १. भवधारणिज्जा य, २. उत्तरवेउव्विया य।

तत्थ णं जा सा भवधारणिज्जा सा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेणं पण्णरस धणूइं अड्डाइज्जाओ रयणीओ य।

तत्थ णं जा सा उत्तरवेउव्विया सा जहन्नेणं अंगुलस्स संखेज्जइभागं, उक्कोसेणं एक्कत्तीसं धणूइं रयणी य।

(३) (प्र.) भंते ! शर्कराप्रभापृथ्वी के नारकों की शरीरावगाहना कितनी कही है ?

(उ.) गौतम ! उनकी अवगाहना का कथन दो प्रकार से किया है-(१) भवधारणीय, और (२) उत्तरवैक्रिय।

उनमें से भवधारणीय अवगाहना तो जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग की और उत्कृष्ट पन्द्रह धनुष, दो रत्नि-हाथ और बारह अंगुलप्रमाण है।

उत्तरवैक्रिय अवगाहना जघन्य अंगुल के संख्यातवें भाग और उत्कृष्ट इकतीस धनुष और एक रत्नि है।

(3) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *naarak* (infernal being) of the *Sharkaraprabha* land ?

(Ans.) Gautam ! The *avagahana* (space occupied) by the body of a *naarak* (infernal being) of the *Sharkaraprabha* land is of two kinds—(1) *Bhavadharaniya* (by the normal body), and (2) *Uttar-vaikriya* (by the secondary transmuted body).

Of these the minimum *avagahana* (space occupied) of the *Bhavadharaniya* (normal) body is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is fifteen *dhanushas* and two and a half *ratnis*.

The minimum *avagahana* (space occupied) of the *Uttar-vaikriya* (secondary transmuted) body is countable fraction of an *angul* and the maximum is thirty one *dhanushas* and one *ratni*.

(४) वालुयपभापुढवीए णेरइयाणं भंते ! केमहालिया सरीरोगाहणा पण्णत्ता ?

गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, तं जहा–१. भवधारणिज्जा य, २. उत्तरवेउव्विया य।

तत्थ णं जा सा भवधारणिज्जा सा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेणं एक्कतीसं धणूइं रयणी य।

तत्थ णं जा सा उत्तरवेउव्विया सा जहन्नेणं अंगुलस्स संखेज्जइभागं, उक्कोसेणं बासट्ठिं धणूइं दो रयणीओ य।

(४) (प्र.) भगवन् ! बालुकाप्रभापृथ्वी के नारकों की शरीरावगाहना कितनी कही गई है ?

(उ.) गौतम ! उनकी शरीरावगाहना दो प्रकार से कही है–(१) भवधारणीय, और (२) उत्तरवैक्रिय।

इन दोनों में से प्रथम भवधारणीय शरीरावगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट इकतीस धनुष तथा एक रत्निप्रमाण है।

उत्तरवैक्रिय शरीरावगाहना जघन्य अंगुल के संख्यातवें भाग और उत्कृष्ट बासठ धनुष और दो रत्निप्रमाण है।

(4) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *naarak* (infernal being) of the *Balukaprabha* land ?

(Ans.) Gautam ! The *avagahana* (space occupied) by the body of a *naarak* (infernal being) of the *Balukaprabha* land is of two kinds—(1) *Bhavadharaniya* (by the normal body), and (2) *Uttar-vaikriya* (by the secondary transmuted body).

Of these the minimum *avagahana* (space occupied) of the *Bhavadharaniya* (normal) body is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is thirty one *dhanushas* and one *ratni.*

The minimum *avagahana* (space occupied) of the *Uttar-vaikriya* (secondary transmuted) body is countable fraction of an *angul* and the maximum is sixty two *dhanushas* and two *ratnis.*

(५) एवं सव्वासिं पुढवीणं पुच्छा भाणियव्वा–पंकप्पभाए भवधारणिज्जा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं बासट्ठिं धणूइं दो रयणीओ य, उत्तरवेउव्विया जहन्नेणं अंगुलस्स संखेज्जइभागं उक्कोसेणं पणुवीसं धणुसयं।

धूमप्पभाए भवधारणिज्जा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं पणुवीसं धणुसयं। उत्तरवेउव्विया जहण्णेणं अंगुलस्स संखेज्जइभागं उक्कोसेणं अड्ढाइज्जाइं धणुसयाइं।

तमाए भवधारणिज्जा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं अड्ढाइज्जाइं धणुसयाइं।

(५) इसी प्रकार समस्त पृथ्वियों (नरकभूमियों) के विषय में अवगाहना सम्बन्धी जिज्ञासा करना चाहिए। उत्तर इस प्रकार है-पंकप्रभापृथ्वी में भवधारणीय जघन्य अवगाहना अंगुल का असंख्यातवाँ भाग और उत्कृष्ट बासठ धनुष और दो रत्निप्रमाण है। उत्तरवैक्रिय शरीरावगाहना जघन्य अंगुल के संख्यातवें भाग एवं उत्कृष्ट एक सौ पच्चीस धनुषप्रमाण है।

धूमप्रभापृथ्वी में भवधारणीय जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग तथा उत्कृष्ट एक सौ पच्चीस धनुषप्रमाण है। उत्तरवैक्रिय शरीरावगाहना जघन्य अंगुल के संख्यातवें भाग और उत्कृष्ट ढाई सौ (दो सौ पचास) धनुषप्रमाण है।

तमःप्रभापृथ्वी में भवधारणीय शरीर की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट ढाई सौ धनुषप्रमाण है। उत्तरवैक्रिय शरीरावगाहना जघन्य अंगुल के संख्यातवें भाग और उत्कृष्ट पाँच सौ धनुष है।

(5) In the same way questions should be asked for all the lands belonging to the realm of *naaraks* (infernal beings). The answers are as follows—In case of *Pankprabha* land the minimum *avagahana* (space occupied) of the *Bhavadharaniya* (normal) body is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is sixty two *dhanushas* and two *ratni*. The minimum *avagahana* (space occupied) of the *Uttar-vaikriya* (secondary transmuted) body is countable fraction of an *angul* and the maximum is one hundred twenty five *dhanushas*.

In case of *Dhoomprabha* land the minimum *avagahana* (space occupied) of the *Bhavadharaniya* (normal) body is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is one hundred twenty five *dhanushas*. The minimum *avagahana* (space occupied) of the

Uttar-vaikriya (secondary transmuted) body is countable fraction of an *angul* and the maximum is two hundred fifty *dhanushas.*

In case of *Tamahprabha* land the minimum *avagahana* (space occupied) of the *Bhavadharaniya* (normal) body is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is two hundred fifty *dhanushas.* The minimum *avagahana* (space occupied) of the *Uttar-vaikriya* (secondary transmuted) body is countable fraction of an *angul* and the maximum is five hundred *dhanushas.*

(६) तमतमापुढवीए नेरइयाणं भंते ! केमहालिया सरीरोगाहणा पन्नत्ता ?

गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता। तं जहा–१. भवधारणिज्जा य, २. उत्तरवेउव्विया य।

तत्थ णं जा सा भवधारणिज्जा सा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं पंच धणुसयाइं।

तत्थ णं जा सा उत्तरवेउव्विया सा जहन्नेणं अंगुलस्स संखेज्जइभागं उक्कोसेणं धणुसहस्सं।

(६) (प्र.) भगवन् ! तमःतमाप्रभापृथ्वी के नैरयिकों की शरीरावगाहना कितनी बड़ी कही है ?

(उ.) गौतम ! वह भी दो प्रकार की कही है–(१) भवधारणीय, और (२) उत्तरवैक्रिय।

उनमें से भवधारणीय शरीर की जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट पाँच सौ धनुष की है।

उत्तरवैक्रिय शरीर की अवगाहना जघन्य अंगुल के संख्यातवें भाग और उत्कृष्ट एक हजार धनुषप्रमाण है।

विवेचन–नारक जीवों की अवगाहना के विषय में संक्षेप में यह जानना चाहिए कि जिस नरक में जितनी भवधारणीय (उस भव सम्बन्धी) सामान्य अवगाहना है, उत्तरवैक्रिय करने पर उससे दुगुनी हो सकती है, इससे अधिक नहीं।

(6) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *naarak* (infernal being) of the *Tamastamaprabha* land ?

(Ans.) Gautam ! The *avagahana* (space occupied) by the body of a *naarak* (infernal being) of the *Tamastamaprabha* land is of two

kinds—(1) *Bhavadharaniya* (by the normal body), and (2) *Uttar-vaikriya* (by the secondary transmuted body).

Of these the minimum *avagahana* (space occupied) of the *Bhavadharaniya* (normal) body is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is five hundred *dhanushas.*

The minimum *avagahana* (space occupied) of the *Uttar-vaikriya* (secondary transmuted) body is countable fraction of an *angul* and the maximum is one thousand *dhanushas.*

Elaboration—One should know briefly this rule about the *avagahana* (space occupied) by a *naarak* (infernal being) that the *Uttar-vaikriya* (secondary transmuted) *avagahana* (space occupied) can only be double of the *Bhavadharaniya* (normal) *avagahana* (space occupied) and no more.

भवनपति देवों की शरीरावगाहना

३४८. (१) असुरकुमाराणं भंते ! केमहालिया सरीरोगाहणा पण्णत्ता ?

गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता। तं जहा–१. भवधारणिज्जा य, २. उत्तरवेउव्विया य।

तत्थ णं जा सा भवधारणिज्जा सा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेणं सत्त रयणीओ। तत्थ णं जा सा उत्तरवेउव्विया सा जहन्नेणं अंगुलस्स संखेज्जइभागं उक्कोसेणं जोयणसत्तसहस्सं।

३४८. (१) (प्र.) भंते ! असुरकुमार देवों की कितनी शरीरावगाहना है ?

(उ.) गौतम ! वह दो प्रकार की है-(१) भवधारणीय, और (२) उत्तरवैक्रिय।

उनमें से भवधारणीय शरीरावगाहना तो जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट सात रत्निप्रमाण है। उत्तरवैक्रिय अवगाहना जघन्य अंगुल के संख्यातवें भाग एवं उत्कृष्ट एक लाख योजन प्रमाण है।

BHAVANPATI GODS

348. (1) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Deva* (divine-being) of the *Asurkumar* class ?

(Ans.) Gautam ! The *avagahana* (space occupied) by the body of a *Deva* (divine-being) of the *Asurkumar* class is of two kinds—

(1) *Bhavadharaniya* (by the normal body), and (2) *Uttar-vaikriya* (by the secondary transmuted body).

Of these the minimum *avagahana* (space occupied) of the *Bhavadharaniya* (normal) body is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is seven *ratnis.* The minimum *avagahana* (space occupied) of the *Uttar-vaikriya* (secondary transmuted) body is countable fraction of an *angul* and the maximum is one lac (one hundred thousand) *yojans.*

(२) एवं असुरकुमारगमेणं जाव थणितकुमाराणं ताव भाणियव्वं।

(२) असुरकुमारों की अवगाहना के अनुरूप ही नागकुमारों से लेकर स्तनितकुमारों पर्यन्त समस्त भवनवासी देवों की दोनों प्रकार की अवगाहना एक समान जानना चाहिए।

(2) Likewise both the *avagahanas* (space occupied) related to *Devas* (divine-being) of all classes from the *Naagkumar* to the *Stanitkumar* should be taken to be same as those of the *Asurkumar* class.

पाँच स्थावरों की शरीरावगाहना

३४९. (१) पुढविकाइयाणं भंते ! केमहालिया सरीरोगाहणा पन्नत्ता ?

गोयमा ! जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेणं वि अंगुलस्स असंखेज्जइभागं। एवं सुहुमाणं ओहियाणं अपज्जत्तयाणं पज्जत्तयाणं च भाणियव्वं। एवं जाव बादरवाउक्काइयाणं अपज्जत्तयाणं पज्जत्तयाणं भाणियव्वं।

(१) (प्र.) भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीवों की शरीरावगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! (पृथ्वीकायिक जीवों की शरीरावगाहना) जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण और उत्कृष्ट भी अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण है। इसी प्रकार सामान्य रूप से सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीवों की और विशेष रूप से सूक्ष्म अपर्याप्त और पर्याप्त पृथ्वीकायिक जीवों की तथा सामान्यतः बादर पृथ्वीकायिकों एवं विशेषतः अपर्याप्त और पर्याप्त बादर पृथ्वीकायिकों की, इसी प्रकार अप्कायिक, तेजस्कायिक एवं वायुकायिक जीवों की शरीरावगाहना जानना चाहिए।

349. (1) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Prithvikayik* (earth-bodied) being ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Prithvikayik* (earth-bodied) being is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is also innumerable fraction of an *angul*. The same is also true generally for *Sukshma Prithvikayik* (minute earth-bodied) beings and specifically for *Sukshma Aparyapt* and *Paryapt Prithvikayik* (minute underdeveloped and fully developed earth-bodied) beings. The same also goes generally for *Badar Prithvikayik* (gross earth-bodied) beings and specifically for *Badar Aparyapt* and *Paryapt Prithvikayik* (gross underdeveloped and fully developed earth-bodied) beings. The *avagahanas* (space occupied) by the bodies of *Apkayik* (water-bodied) beings, *Tejaskayik* (fire-bodied) beings and *Vayukayik* (air-bodied) beings also follow the same rule.

(२) वणस्सइकाइयाणं भंते ! केमहालिया सरीरोगाहणा पन्नत्ता ?

गोयमा ! जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेणं सातिरेगं जोयणसहस्सं।

सुहुमवणस्सइकाइयाणं, ओहियाणं, अपज्जत्तयाणं, पज्जत्तगाणं तिण्ह वि जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेण वि अंगुलस्स असंखेज्जइभागं।

बादरवणस्सतिकाइयाणं जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जतिभागं, उक्कोसेणं सातिरेगं जोयणसहस्सं; अपज्जत्तयाणं जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेण वि अंगुलस्स असंखेज्जइभागं; पज्जत्तयाणं जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेणं सातिरेगं जोयणसहस्सं।

(२) **(प्र.)** भगवन् ! वनस्पतिकायिक जीवों की शरीरावगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट कुछ अधिक एक हजार योजन की है।

सामान्य रूप में सूक्ष्म वनस्पतिकायिक और विशेष रूप में अपर्याप्त तथा पर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक जीवों की जघन्य और उत्कृष्ट अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण जानना चाहिए।

औधिक रूप से बादर वनस्पतिकायिक जीवों की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण और उत्कृष्ट कुछ अधिक एक हजार योजन प्रमाण है। विशेष-अपर्याप्त बादर वनस्पतिकायिक जीवों की जघन्य और उत्कृष्ट अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण है। पर्याप्त (बादर वनस्पतिकायिक जीवों) की जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण और उत्कृष्ट कुछ अधिक एक हजार योजन प्रमाण होती है।

विवेचन-यहाँ ज्ञातव्य है कि असंख्यात के भी असंख्यात भेद होते हैं। जघन्य की अपेक्षा उत्कृष्ट अवगाहना अधिक होती है। उसमें तरतमता रहती है। जैसे-पाँच स्थावर की जघन्य अवगाहना सभी जगह अंगुल के असंख्यातवें भाग बताई है परन्तु इन असंख्यात में भी बहुत तरतमता है। असंख्यात भाग सभी का सदृश नहीं होता। जैसा कि भगवतीसूत्र में बताया है-

- असंख्य सूक्ष्म वनस्पतिकायिक जीवों के शरीर = एक सूक्ष्म वायुकायिक जीव का शरीर।
- असंख्य सूक्ष्म वायुकायिक जीवों के शरीर = एक सूक्ष्म तेजस्कायिक जीव का शरीर।
- असंख्य सूक्ष्म तेजस्कायिक जीवों के शरीर = एक सूक्ष्म अप्कायिक जीव का शरीर।
- असंख्य सूक्ष्म अप्कायिक जीवों के शरीर = एक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव का शरीर।
- असंख्य बादर वायुकायिक जीवों के शरीर = एक बादर तेजस्कायिक जीव का शरीर।
- असंख्य बादर तेजस्कायिक जीवों के शरीर = एक बादर अप्कायिक जीव का शरीर।
- असंख्य बादर अप्कायिक जीवों के शरीर = एक बादर पृथ्वीकायिक जीव का शरीर।

(भगवतीसूत्र १९/३३)

(2) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Vanaspatikayik* (plant-bodied) being ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Vanaspatikayik* (plant-bodied) being is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is a little more than one thousand *yojans.*

The minimum as well as maximum *avagahanas* (space occupied) generally by the body of a *Sukshma Vanaspatikayik* (minute plant-bodied) being and specifically by the body of a *Sukshma Aparyapt* or a *Paryapt Vanaspatikayik* (minute underdeveloped and fully developed plant-bodied) being is innumerable fraction of an *angul.*

Generally speaking the minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Badar Vanaspatikayik* (gross plant-bodied) being is innumerable fraction of an *angul* and maximum a little more than one thousand *yojans*. Specifically speaking minimum or maximum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Badar Aparyapt Vanaspatikayik* (gross underdeveloped plant-bodied) being is innumerable fraction of an *angul*. The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Badar Paryapt Vanaspatikayik* (gross fully developed plant-bodied) being is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is a little more than one thousand *yojans*.

Elaboration—It should be understood that innumerable has also innumerable divisions. Minimum *avagahana* (space occupied) is less than the maximum. There are various levels in that also. For example, the minimum *avagahana* (space occupied) by all the five immobiles is mentioned as innumerable fraction of an *angul* but there are many levels in these. The innumerable fraction of all is not same. *Bhagavati Sutra* clarifies as follows—

- Infinite bodies of *Sukshma Vanaspatikayik* (minute plant-bodied) beings = body of one *Sukshma Vayukayik* (minute air-bodied) being.
- Infinite bodies of *Sukshma Vayukayik* (minute air-bodied) beings = body of one *Sukshma Tejaskayik* (minute fire-bodied) being.
- Infinite bodies of *Sukshma Tejaskayik* (minute fire-bodied) beings = body of one *Sukshma Apkayik* (minute water-bodied) being.
- Infinite bodies of *Sukshma Apkayik* (minute water-bodied) beings = body of one *Sukshma Prithvikayik* (minute earth-bodied) being.
- Infinite bodies of *Badar Vayukayik* (gross air-bodied) beings = body of one *Badar Tejaskayik* (gross fire-bodied) being.
- Infinite bodies of *Badar Tejaskayik* (gross fire-bodied) beings = body of one *Badar Apkayik* (gross water-bodied) being.
- Infinite bodies of *Badar Apkayik* (gross water-bodied) beings = body of one *Badar Prithvikayik* (gross earth-bodied) being.

(*Bhagavati Sutra* 19/33)

३५०. (१) एवं बेइंदियाणं पुच्छा भाणियव्वा–बेइंदियाणं पुच्छा–गोयमा ! जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेणं बारस जोयणाइं; अपज्जत्तयाणं जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेण वि अंगुलस्स असंखेज्जइभागं; पज्जत्तयाणं ज. अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेणं बारस जोयणाइं।

३५०. (१) (प्र.) द्वीन्द्रिय जीवों की अवगाहना कितनी है?

(उ.) गौतम ! (सामान्य रूप से) द्वीन्द्रिय जीवों की जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट बारह योजन प्रमाण जानना चाहिए। अपर्याप्त (द्वीन्द्रिय जीवों) की जघन्य और उत्कृष्ट अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण है। पर्याप्त (द्वीन्द्रिय जीवों) की जघन्य शरीरावगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट बारह योजन प्रमाण है।

विवेचन–द्वीन्द्रिय जीवों की अवगाहना-वर्णन के प्रसंग में पर्याप्त द्वीन्द्रिय जीवों की उत्कृष्ट अवगाहना बारह योजन प्रमाण बतलाई है, वह स्वयंभूरमणसमुद्र में उत्पन्न शंखों आदि की अपेक्षा से कही गई है। द्वीन्द्रिय समस्त जीव बादर ही होते हैं, सूक्ष्म नहीं, अतः यहाँ पाँच स्थावर कायिकों की भाँति सूक्ष्म-बादर का भेद नहीं है।

DVINDRIYA (TWO-SENSED) BEINGS

350. (1) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *dvindriya* (two-sensed) being ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *dvindriya* (two-sensed) being is (generally) innumerable fraction of an *angul* and the maximum is twelve *yojans*. The minimum as well as maximum *avagahana* (space occupied) by the body of an *Aparyapt dvindriya* (underdeveloped two-sensed) being is innumerable fraction of an *angul*. The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Paryapt Badar dvindriya* (fully developed gross two-sensed) being is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is twelve *yojans*.

Elaboration—In context of the space occupied by the body of a two-sensed being the maximum is mentioned as twelve *yojans*. This

large dimension is with reference to beings like huge conch-shells dwelling in the *Svayambhuraman* ocean (acccording to Jain mythology). *Dvindriya* (two-sensed) beings and others at higher levels of evolution are gross (*badar*) only and not minute (*sukshma*). Thus the difference of *Sukshma* and *Badar*, like in the five immobiles (*sthavar*), is not relevant here.

त्रीन्द्रिय जीवों की शरीरावगाहना

(२) तेइंदियाणं पुच्छा। गोयमा ! जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेणं तिण्णि गाउयाइं। अपज्जत्तयाणं जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं वि अंगुलस्स असंखेज्जइभागं; पज्जत्तयाणं जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेणं तिण्णि गाउयाइं।

(२) (प्र.) त्रीन्द्रिय जीवों की अवगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! सामान्यतः त्रीन्द्रिय जीवों की जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण है और उत्कृष्ट अवगाहना तीन कोस की है। अपर्याप्त त्रीन्द्रिय जीवों की जघन्य और उत्कृष्ट अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण है। त्रीन्द्रिय पर्याप्तकों की जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग की और उत्कृष्ट अवगाहना तीन गव्यूत प्रमाण है।

TRINDRIYA (THREE-SENSED) BEINGS

(2) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Trindriya* (three-sensed) being ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Trindriya* (three-sensed) being is (generally) innumerable fraction of an *angul* and the maximum is three *gavyut* (six miles). The minimum as well as maximum *avagahana* (space occupied) by the body of an *Aparyapt Trindriya* (underdeveloped three-sensed) being is innumerable fraction of an *angul*. The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Paryapt Badar Trindriya* (fully developed gross three-sensed) being is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is three *gavyut* (six miles).

(३) चउरिंदियाणं पुच्छा। गोयमा ! जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं; उक्कोसेणं चत्तारि गाउयाइं; अपज्जत्तायाणं जहन्नेणं उक्कोसेण वि अंगुलस्स असंखेज्जइभागं; पज्जत्तयाणं पुच्छा, जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेणं चत्तारि गाउयाइं।

(३) **(प्र.)** भगवन् ! चतुरिन्द्रिय जीवों की अवगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! सामान्य रूप से चतुरिन्द्रिय जीवों की जघन्य शरीरावगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट चार गव्यूत प्रमाण है। अपर्याप्त (चतुरिन्द्रिय जीवों) की जघन्य एवं उत्कृष्ट अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण है। पर्याप्तकों की जघन्यतः अंगुल के असंख्यातवें भाग एवं उत्कृष्टतः चार गव्यूत प्रमाण है।

विवेचन—पर्याप्तक त्रीन्द्रिय जीवों की बताई गई तीन गव्यूत प्रमाण उत्कृष्ट अवगाहना अढाई द्वीप (जम्बू द्वीप, धातकीखण्ड द्वीप और अर्ध-पुष्कर द्वीप) में नहीं मिलती, इनसे बाहर के द्वीपों में रहने वाले कर्ण-शृगाली आदि त्रीन्द्रिय जीवों की अपेक्षा यह कथन है। इसी प्रकार चतुरिन्द्रिय पर्याप्त जीवों की उत्कृष्ट अवगाहना का चार गव्यूत प्रमाण अढाई द्वीप से बाहर के भ्रमर आदि चतुरिन्द्रिय जीवों की अपेक्षा से समझना चाहिए।

CHATURINDRIYA (FOUR-SENSED) BEINGS

(3) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Chaturindriya* (four-sensed) being ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Chaturindriya* (four-sensed) being is (generally) innumerable fraction of an *angul* and the maximum is four *gavyut* (eight miles). The minimum as well as maximum *avagahana* (space occupied) by the body of an *Aparyapt Chaturindriya* (underdeveloped four-sensed) being is innumerable fraction of an *angul*. The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Paryapt Badar Chaturindriya* (fully developed gross four-sensed) being is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is four *gavyut* (eight miles).

Elaboration—In context of the space occupied by the body of a *Paryapt Trindriya* (fully developed three-sensed) being the maximum is mentioned as three *gavyut* (six miles). Beings of this huge dimension do not exist in

the *Adhai Dveep* area (*Jambu Dveep, Dhatkikhand Dveep* and *Ardha-Pushkar Dveep*). This mention is with reference to the *Trindriya* (three-sensed) beings like *Karna Shrigali* said to exist in the areas beyond *Adhai Dveep*. In the same way the maximum dimension of a *Chaturindriya* (four-sensed) being four *gavyuts* is with reference to the beings like giant bumble-bee said to exist in the areas beyond *Adhai Dveep*.

पंचेन्द्रिय तिर्यंच जीवों की शरीरावगाहना

३५१. (१) पंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेणं जोयणसहस्सं।

३५१. (१) (प्र.) तिर्यंच पंचेन्द्रिय जीवों की पृच्छा कितनी है ?

(उ.) गौतम ! (सामान्य रूप में तिर्यंच पंचेन्द्रिय जीवों की) जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट एक हजार योजन प्रमाण है।

PANCHENDRIYA (FIVE-SENSED) BEINGS

351. (1) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Panchendriya Tiryanchyonik* (five-sensed animal)?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Panchendriya Tiryanchyonik* (five-sensed animal) is (generally) innumerable fraction of an *angul* and the maximum is one thousand *yojans*.

(२) (क) जलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं पुच्छा, गोयमा ! एवं चेव।

(ख) सम्मुच्छिमजलयरपंचेंदियाणं एवं चेव।

(ग) अपज्जत्तगसम्मुच्छिमजलयरपंचेंदियाणं पुच्छा, जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जतिभागं, उक्कोसेण वि अंगुलस्स असं.।

(घ) पज्जत्तयसम्मुच्छिमजलयरपंचेंदियाणं पुच्छा, जहन्नेणं अंगु. असं. उक्कोसेणं जोयणसहस्सं।

(च) गब्भवक्कंतियजलयरपंचेंदियाणं पुच्छा, गो. ! जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेणं जोयणसहस्सं।

(छ) अपज्जत्तयाणं पुच्छा, गो. ! जह. अंगु. असं. उक्कोसेणं अंगु. असं.।

(ज) पज्जत्तयाणं पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं अंगु. असं. उक्कोसेणं जोयणसहस्सं।

(२) (क) (प्र.) भगवन् ! जलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की अवगाहना के विषय में क्या पृच्छा है ?

(उ.) गौतम ! इसी प्रकार है। अर्थात् जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट अवगाहना एक हजार योजन की है।

(ख) (प्र.) संमूर्च्छिम जलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की अवगाहना के विषय में क्या जिज्ञासा है ?

(उ.) गौतम ! संमूर्च्छिम जलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट अवगाहना एक हजार योजन की है।

(ग) (प्र.) अपर्याप्त संमूर्च्छिम जलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की अवगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! (अपर्याप्त संमूर्च्छिम जलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की) जघन्य शरीरावगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट अवगाहना भी अंगुल के असंख्यातवें भाग है।

(घ) (प्र.) भगवन् ! पर्याप्त संमूर्च्छिम जलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की अवगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट एक हजार योजन प्रमाण है।

(च) (प्र.) भगवन् ! गर्भव्युत्क्रांत (गर्भ से जन्म लेने वाले) जलचरपंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिकों की अवगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! उनकी शरीरावगाहना जघन्यतः अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्टतः एक हजार योजन की है।

(छ) (प्र.) अपर्याप्त गर्भव्युत्क्रांत जलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की अवगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! उनकी शरीरावगाहना जघन्य और उत्कृष्ट दोनों ही प्रकार की अंगुल के असंख्यातवें भाग की है।

(ज) (प्र.) भगवन् ! पर्याप्तक गर्भज जलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की शरीरावगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! उनकी जघन्य शरीरावगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट एक हजार योजन प्रमाण है।

(2) (a) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Jalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (aquatic five-sensed animal) ?

(Ans.) Gautam ! The *avagahana* (space occupied) by the body of a *Jalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (aquatic five-sensed animal) is (generally) the same (minimum is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is one thousand *yojans*).

(b) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Sammurchhim Jalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (aquatic five-sensed animal of asexual origin) ?

(Ans.) Gautam ! The *avagahana* (space occupied) by the body of a *Sammurchhim Jalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (aquatic five-sensed animal of asexual origin) is (generally) the same (minimum innumerable fraction of an *angul* and the maximum is one thousand *yojans*).

(c) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of an *Aparyapt Sammurchhim Jalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (underdeveloped aquatic five-sensed animal of asexual origin) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of an *Aparyapt Sammurchhim Jalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (underdeveloped aquatic five-sensed animal of asexual origin) is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is also innumerable fraction of an *angul*.

(d) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Paryapt Sammurchhim Jalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (fully developed aquatic five-sensed animal of asexual origin) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Paryapt Sammurchhim Jalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (fully developed aquatic five-sensed animal of asexual origin) is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is one thousand *yojans*.

(e) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Garbhavyutkrantik Jalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (aquatic five-sensed animal born out of womb) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Garbhavyutkrantik Jalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (aquatic five-sensed animal born out of womb) is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is one thousand *yojans.*

(f) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of an *Aparyapt Garbhavyutkrantik Jalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (underdeveloped aquatic five-sensed animal born out of womb) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of an *Aparyapt Garbhavyutkrantik Jalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (underdeveloped aquatic five-sensed animal born out of womb) is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is also innumerable fraction of an *angul.*

(g) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Paryapt Garbhavyutkrantik Jalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (fully developed aquatic five-sensed animal born out of womb) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Paryapt Garbhavyutkrantik Jalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (fully developed aquatic five-sensed animal born out of womb) is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is one thousand *yojans.*

(३) (क) चउप्पयथलयराणं पुच्छा, गो. ! जह. अंगु. असं., उक्को. छ गाउयाइं।

(ख) सम्मुच्छिमचउप्पयथलयराणं पुच्छा, गो. ! जह. अंगु. असं., उक्को. गाउयपुहत्तं।

(ग) अपज्जत्तगसम्मुच्छिमचउप्पयथलयराणं पुच्छा, गो. ! जह. अंगु. असं., उक्को. अंगु. असं.।

(घ) पज्जत्तगसम्मुच्छिमचउप्पयथलयराणं पुच्छा, गो. ! जह. अंगु. असं., उक्को. गाउयपुहत्तं।

(च) गब्भवक्कंतियचउप्पयथलयरपंचेंदियाणं पुच्छा, गो. ! जह. अंगु. असं., उक्को. छ गाउयाइं।

(छ) अपज्जत्तगब्भवक्कंतियचउप्पयथलयरपंचेंदियाणं पुच्छा, गो. ! जह. अंगु. असं., उक्को. अंगु. असं.।

(ज) पज्जत्तयाणं जह. अंगु. असं., उक्को. छ गाउयाइं।

(३) (क) (प्र.) भगवन् ! चतुष्पदस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की अवगाहना के विषय में क्या जिज्ञासा है?

(उ.) गौतम ! सामान्य रूप में उनकी जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग एवं उत्कृष्ट छह गव्यूत है।

(ख) (प्र.) संमूर्च्छिम चतुष्पदस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की अवगाहना कितनी है?

(उ.) गौतम ! जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट गव्यूतपृथक्त्व (दो से लेकर नौ गाऊ जितनी है।

(ग) (प्र.) भगवन् ! अपर्याप्त संमूर्च्छिम चतुष्पदस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की अवगाहना कितनी है?

(उ.) गौतम ! उनकी जघन्य एवं उत्कृष्ट अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग होती है।

(घ) (प्र.) भगवन् ! पर्याप्त संमूर्च्छिम चतुष्पदस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की कितनी शरीरावगाहना है?

(उ.) गौतम ! जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट गव्यूतपृथक्त्व (दो से नौ गाऊ तक) है।

(च) (प्र.) भगवन् ! गर्भव्युत्क्रान्तिक चतुष्पदस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की कितनी अवगाहना है?

(उ.) गौतम ! जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट छह गव्यूत प्रमाण शरीरावगाहना है।

(छ) (प्र.) भगवन् ! अपर्याप्त गर्भव्युत्क्रान्तिक चतुष्पदस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की शरीरावगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! उनकी जघन्य और उत्कृष्ट अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण होती है ?

(ज) (प्र.) भगवन् ! पर्याप्तक गर्भज चतुष्पदस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की शरीरावगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण और उत्कृष्ट छह गव्यूत प्रमाण है।

(3) (a) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Chatushpad Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (quadruped terrestrial five-sensed animal) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Chatushpad Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (quadruped terrestrial five-sensed animal) is (generally) innumerable fraction of an *angul* and the maximum is six *gavyuts* (twelve miles).

(b) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Sammurchhim Chatushpad Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (quadruped terrestrial five-sensed animal of asexual origin) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Sammurchhim Chatushpad Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (quadruped terrestrial five-sensed animal of asexual origin) is (generally) innumerable fraction of an *angul* and the maximum is *gavyut prithakatva* (two to nine *gavyuts* or four to eighteen miles).

(c) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of an *Aparyapt Sammurchhim Chatushpad Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (underdeveloped quadruped terrestrial five-sensed animal of asexual origin) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of an *Aparyapt Sammurchhim Chatushpad Sthalchar*

Panchendriya Tiryanchyonik (underdeveloped quadruped terrestrial five-sensed animal of asexual origin) is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is also innumerable fraction of an *angul.*

(d) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Paryapt Sammurchhim Chatushpad Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (fully developed quadruped terrestrial five-sensed animal of asexual origin) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Paryapt Sammurchhim Chatushpad Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (fully developed quadruped terrestrial five-sensed animal of asexual origin) is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is *gavyut prithakatva* (two to nine *gavyuts* or four to eighteen miles).

(e) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Garbhavyutkrantik Chatushpad Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (quadruped terrestrial five-sensed animal born out of womb) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Garbhavyutkrantik Chatushpad Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (quadruped terrestrial five-sensed animal born out of womb) is (generally) innumerable fraction of an *angul* and the maximum is one thousand *yojans.*

(f) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of an *Aparyapt Garbhavyutkrantik Chatushpad Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (underdeveloped quadruped terrestrial five-sensed animal born out of womb) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of an *Aparyapt Garbhavyutkrantik Chatushpad Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (underdeveloped quadruped terrestrial five-sensed animal born out of womb) is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is also innumerable fraction of an *angul.*

(g) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Paryapt Garbhavyutkrantik Chatushpad*

Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik (fully developed quadruped terrestrial five-sensed animal born out of womb) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Paryapt Garbhavyutkrantik Chatushpad Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (fully developed quadruped terrestrial five-sensed animal born out of womb) is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is six *gavyuts* (twelve miles).

(४) (क) उरपरिसप्पथलयरपंचिंदियाणं पुच्छा, गो. ! जह. अंगु. असं., उक्को. जोयणसहस्सं।

(ख) सम्मुच्छिमउरपरिसप्पथलयरपंचेंदियाणं पुच्छा, गो. ! जह. अंगु. असं., उक्को. जोयणपुहत्तं।

(ग) अपज्जत्तायाणं जह. अंगु. असं., उक्को. अंगु. असं.।

(घ) पज्जत्तयाणं जह. अंगु. असं., उक्को. जोयणपुहत्तं।

(च) गब्भवक्कंतियउरपरिसप्पथलयर. जह. अंगु. असं., उक्को. जोयणसहस्सं।

(छ) अपज्जत्तयाणं जह. अंगु. असं., उक्को. अंगु. असं.।

(ज) पज्जत्तयाणं जह. अंगु. असं., उक्को. जोयणसहस्सं।

(४) (क) (प्र.) भगवन् ! उरपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की अवगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! उरपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट एक हजार योजन है।

(ख) (प्र.) भगवन् ! संमूर्च्छिम उरपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की शरीरावगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण और उत्कृष्ट योजनपृथक्त्व (दो योजन से लेकर नौ योजन तक) प्रमाण है।

(ग) (प्र.) भगवन् ! अपर्याप्त संमूर्च्छिम उरपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की अवगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! उनकी जघन्य और उत्कृष्ट अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग की है।

(घ) (प्र.) पर्याप्त संमूर्च्छिम उरपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की अवगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण और उत्कृष्ट योजनपृथक्त्व है।

(च) (प्र.) भगवन् ! गर्भव्युत्क्रान्तिक उरपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की अवगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट अवगाहना एक हजार योजन की है।

(छ) (प्र.) भगवन् ! अपर्याप्त गर्भज उरपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की अवगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य और उत्कृष्ट अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण है।

(ज) (प्र.) भगवन् ! पर्याप्तक गर्भव्युत्क्रान्तिक उरपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की शरीरावगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट एक हजार योजन की है।

(4) (a) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of an *Urparisarp Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (non-limbed reptilian terrestrial five-sensed animal) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of an *Urparisarp Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (non-limbed reptilian terrestrial five-sensed animal) is (generally) innumerable fraction of an *angul* and the maximum is one thousand *yojans*.

(b) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Sammurchhim Urparisarp Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (non-limbed reptilian terrestrial five-sensed animal of asexual origin) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Sammurchhim Urparisarp Sthalchar Panchendriya*

Tiryanchyonik (non-limbed reptilian terrestrial five-sensed animal of asexual origin) is (generally) innumerable fraction of an *angul* and the maximum is *yojan prithakatva* (two to nine *yojans*).

(c) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of an *Aparyapt Sammurchhim Urparisarp Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (underdeveloped non-limbed reptilian terrestrial five-sensed animal of asexual origin) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of an *Aparyapt Sammurchhim Urparisarp Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (underdeveloped non-limbed reptilian terrestrial five-sensed animal of asexual origin) is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is also innumerable fraction of an *angul*.

(d) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Paryapt Sammurchhim Urparisarp Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (fully developed non-limbed reptilian terrestrial five-sensed animal of asexual origin) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Paryapt Sammurchhim Urparisarp Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (fully developed non-limbed reptilian terrestrial five-sensed animal of asexual origin) is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is *yojan prithakatva* (two to nine *yojans*).

(e) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Garbhavyutkrantik Urparisarp Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (non-limbed reptilian terrestrial five-sensed animal born out of womb) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Garbhavyutkrantik Urparisarp Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (non-limbed reptilian terrestrial five-sensed animal born out of womb) is (generally) innumerable fraction of an *angul* and the maximum is one thousand *yojans*.

(f) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of an *Aparyapt Garbhavyutkrantik Urparisarp Sthalchar*

Panchendriya Tiryanchyonik (underdeveloped non-limbed reptilian terrestrial five-sensed animal born out of womb) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of an *Aparyapt Garbhavyutkrantik Urparisarp Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (underdeveloped non-limbed reptilian terrestrial five-sensed animal born out of womb) is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is also innumerable fraction of an *angul.*

(g) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Paryapt Garbhavyutkrantik Urparisarp Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (fully developed non-limbed reptilian terrestrial five-sensed animal born out of womb) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Paryapt Garbhavyutkrantik Urparisarp Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (fully developed non-limbed reptilian terrestrial five-sensed animal born out of womb) is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is one thousand *yojans.*

(५) (क) भुयपरिसप्पथलयराणं पुच्छा, गो. ! जह. अंगु. असं., उक्को. गाउयपुहत्तं।

(ख) सम्मुच्छिमभुय. जाव जह. अंगु. असं., उक्को. धणुपुहत्तं।

(ग) अपज्जत्तगसम्मुच्छिमभुय. जाव पुच्छा, गो. ! जह. अंगु. असं., उक्को. अंगु. असं.।

(घ) पज्जत्तयाणं जह. अंगु. संखे., उक्को. धणुपुहत्तं।

(च) गब्भवक्कंतियभुय. जाव पुच्छा, गो. ! जह. अंगु. असं., उक्को. गाउयपुहत्तं।

(छ) अपज्जत्तयाणं जह. अंगु. असं., उक्को. अंगु. असं.।

(ज) पज्जत्तयगब्भवक्कंतिय. जाव पुच्छा, गो. ! जह. अंगु. असं., उक्को. गाउयपुहत्तं।

(५) (क) (प्र.) भगवन् ! अब भुजपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की अवगाहना जानने की जिज्ञासा है ?

(उ.) गौतम ! सामान्य से भुजपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट अवगाहना गव्यूतपृथक्त्व (दो गाऊ से नौ गाऊ तक) की है।

(ख) (प्र.) भगवन् ! सम्मूर्च्छिम भुजपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की अवगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट धनुषपृथक्त्व (दो धनुष से नौ धनुष तक) की है।

(ग) (प्र.) भगवन् ! अपर्याप्त संमूर्च्छिम भुजपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की अवगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! उनकी जघन्य और उत्कृष्ट शरीरावगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण है।

(घ) (प्र.) भगवन् ! पर्याप्त संमूर्च्छिम भुजपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की अवगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट धनुषपृथक्त्व की है।

(च) (प्र.) भगवन् ! गर्भव्युत्क्रान्तिक भुजपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की शरीरावगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! उनकी शरीरावगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट गव्यूतपृथक्त्व समझनी चाहिए।

(छ) (प्र.) भगवन् ! गर्भव्युत्क्रान्तिक अपर्याप्त भुजपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की शरीरावगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! उनकी शरीरावगाहना जघन्य और उत्कृष्ट अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण है।

(ज) (प्र.) भगवन् ! पर्याप्तक गर्भव्युत्क्रान्तिक भुजपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की शरीरावगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट गव्यूतपृथक्त्व प्रमाण है।

(5) (a) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Bhujparisarp Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (limbed reptilian terrestrial five-sensed animal) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Bhujparisarp Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (limbed reptilian terrestrial five-sensed animal) is (generally) innumerable fraction of an *angul* and the maximum is *gavyut prithakatva* (two to nine *gavyuts* or four to eighteen miles).

(b) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Sammurchhim Bhujparisarp Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (limbed reptilian terrestrial five-sensed animal of asexual origin) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Sammurchhim Bhujparisarp Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (limbed reptilian terrestrial five-sensed animal of asexual origin) is (generally) innumerable fraction of an *angul* and the maximum is *dhanush prithakatva* (two to nine *dhanush*).

(c) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of an *Aparyapt Sammurchhim Bhujparisarp Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (underdeveloped limbed reptilian terrestrial five-sensed animal of asexual origin) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of an *Aparyapt Sammurchhim Bhujparisarp Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (underdeveloped limbed reptilian terrestrial five-sensed animal of asexual origin) is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is also innumerable fraction of an *angul*.

(d) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Paryapt Sammurchhim Bhujparisarp Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (fully developed limbed reptilian terrestrial five-sensed animal of asexual origin) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Paryapt Sammurchhim Bhujparisarp Sthalchar*

Panchendriya Tiryanchyonik (fully developed limbed reptilian terrestrial five-sensed animal of asexual origin) is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is *dhanush prithakatva* (two to nine *dhanush*).

(e) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Garbhavyutkrantik Bhujparisarp Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (limbed reptilian terrestrial five-sensed animal born out of womb) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Garbhavyutkrantik Bhujparisarp Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (limbed reptilian terrestrial five-sensed animal born out of womb) is (generally) innumerable fraction of an *angul* and the maximum is *gavyut prithakatva* (two to nine *gavyuts* or four to eighteen miles).

(f) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of an *Aparyapt Garbhavyutkrantik Bhujparisarp Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (underdeveloped limbed reptilian terrestrial five-sensed animal born out of womb) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of an *Aparyapt Garbhavyutkrantik Bhujparisarp Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (underdeveloped limbed reptilian terrestrial five-sensed animal born out of womb) is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is also innumerable fraction of an *angul*.

(g) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Paryapt Garbhavyutkrantik Bhujparisarp Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (fully developed limbed reptilian terrestrial five-sensed animal born out of womb) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Paryapt Garbhavyutkrantik Bhujparisarp Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (fully developed limbed reptilian terrestrial five-sensed animal born out of womb) is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is *gavyut prithakatva* (two to nine *gavyuts* or four to eighteen miles).

६. (क) खहयरपंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं., गो. ! जह. अंगु. असं., उक्को. धणुपुहत्तं।

(ख) सम्मुच्छिमखहयराणं जहा भुयपरिसप्पसम्मुच्छिमाणं तिसु वि गमेसु तहा भाणियव्वं।

(ग) गब्भवक्कंतियाणं जह. अंगु. असं., उक्को. धणुपुहत्तं।

(घ) अपज्जत्तयाणं जह. अंगु. असं., उक्को. अंगु. असं.।

(च) पज्जत्तयाणं जह. अंगु. असं., उक्को. धणुपुहत्तं।

(६) (क) (प्र.) भगवन् ! खेचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की शरीरावगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! उनकी जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट धनुषपृथक्त्व प्रमाण है।

(ख) तथा सामान्य संमूर्च्छिम खेचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य और उत्कृष्ट शरीरावगाहना संमूर्च्छिम जन्म वाले भुजपरिसर्पपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों के तीन अवगाहना स्थानों के बराबर समझ लेना चाहिए।

(ग) (प्र.) भगवन् ! गर्भव्युत्क्रान्तिक खेचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की शरीरावगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! उनकी जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण और उत्कृष्ट धनुषपृथक्त्व प्रमाण है।

(घ) (प्र.) भगवन् ! अपर्याप्त गर्भव्युत्क्रान्तिक खेचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की अवगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! उनकी जघन्य और उत्कृष्ट शरीरावगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण है।

(च) (प्र.) भगवन् ! पर्याप्त गर्भव्युत्क्रान्तिक खेचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों की शरीरावगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! उनकी जघन्य शरीरावगाहना का प्रमाण अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट धनुषपृथक्त्व है।

(6) (a) (Q.) *Bhante* ! How -large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Khechar Panchendriya Tiryanchyonik* (aerial five-sensed animal) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Khechar Panchendriya Tiryanchyonik* (aerial five-sensed animal) is (generally) innumerable fraction of an *angul* and the maximum is *dhanush prithakatva* (two to nine *dhanush*).

(b) And the minimum as well as maximum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Sammurchhim Khechar Panchendriya Tiryanchyonik* (aerial five-sensed animal of asexual origin) should be taken to be the same as the three points mentioned in connection with *Sammurchhim Bhujparisarp Sthalchar Panchendriya Tiryanchyonik* (limbed reptilian terrestrial five-sensed animal of asexual origin).

(c) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Garbhavyutkrantik Khechar Panchendriya Tiryanchyonik* (aerial five-sensed animal born out of womb) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Garbhavyutkrantik Khechar Panchendriya Tiryanchyonik* (aerial five-sensed animal born out of womb) is (generally) innumerable fraction of an *angul* and the maximum is *dhanush prithakatva* (two to nine *dhanush*).

(d) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of an *Aparyapt Garbhavyutkrantik Khechar Panchendriya Tiryanchyonik* (underdeveloped aerial five-sensed animal born out of womb) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of an *Aparyapt Garbhavyutkrantik Khechar Panchendriya Tiryanchyonik* (underdeveloped aerial five-sensed animal born out of womb) is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is also innumerable fraction of an *angul*.

(e) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Paryapt Garbhavyutkrantik Khechar*

Panchendriya Tiryanchyonik (fully developed aerial five-sensed animal born out of womb) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Paryapt Garbhavyutkrantik Khechar Panchendriya Tiryanchyonik* (fully developed aerial five-sensed animal born out of womb) is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is *dhanush prithakatva* (two to nine *dhanush*).

(७) एत्थ संगहणिगाहाओ भवंति। तं जहा–

जोयणसहस्स गाउयपुहत्त तत्तो य जोयणपुहत्तं।
दोण्हं तु धणुपुहत्तं सम्मुच्छिम होइ उच्चत्तं॥१॥
जोयणसहस्स छग्गाउयाइं तत्तो य जोयणसहस्सं।
गाउयपुहत्त भुयगे पक्खीसु भवे धणुपुहत्तं॥२॥

(७) उक्त समग्र कथन की संग्राहक गाथाएँ इस प्रकार हैं–

संमूर्च्छिम जलचरतिर्यंचपंचेन्द्रिय जीवों की उत्कृष्ट अवगाहना एक हजार योजन, चतुष्पदस्थलचर की गव्यूतपृथक्त्व, उरपरिसर्पस्थलचर की योजनपृथक्त्व, भुजपरिसर्पस्थलचर की एवं खेचरतिर्यंचपंचेन्द्रिय की धनुषपृथक्त्व प्रमाण है॥१॥

गर्भज तिर्यंचपंचेन्द्रिय जीवों में से जलचरों की एक हजार योजन, चतुष्पदस्थलचरों की छह गव्यूत, उरपरिसर्पस्थलचरों की एक हजार योजन, भुजपरिसर्पस्थलचरों की गव्यूतपृथक्त्व और पक्षियों (खेचरों) की धनुषपृथक्त्व प्रमाण उत्कृष्ट शरीरावगाहना जानना चाहिए॥२॥

विवेचन–इन सूत्रों में तिर्यंच पंचेन्द्रिय जीवों की अवगाहना का वर्णन है। पंचेन्द्रिय जीवों के चार भेद हैं–(१) नारक, (२) तिर्यंच, (३) मनुष्य, और (४) देव। नारक जीवों की अवगाहना की चर्चा पहले आ चुकी है। तिर्यंचपंचेन्द्रिय के पाँच भेद हैं–(१) **जलचर**–जल में चलने वाले। (२) **स्थलचर**–भूमि पर चलने वाले–गाय, भैंस आदि। (३) **खेचर**–आकाश में चलने/उड़ने वाले–पक्षी आदि। (४) **उरःपरिसर्प**–छाती के बल रेंगकर चलने वाले–साँप, अजगर आदि। (५) **भुजपरिसर्प**–भुजाओं के सहारे रेंगकर चलने वाले–चूहा, गिलहरी आदि। जो माता–पिता के संयोग के बिना ही जन्म लेते हैं वे **सम्मूर्च्छिम** तथा गर्भ से जन्म लेने वाले **गर्भज** अथवा **गर्भव्युत्क्रान्त** कहलाते हैं। जिस जीव ने आहार आदि पर्याप्ति (शक्ति) ग्रहण कर ली है वह **पर्याप्तक** तथा जिसकी शक्तियाँ अभी अपूर्ण हैं वह **अपर्याप्तक**। इस प्रकार उक्त पाँच तिर्यंचपंचेन्द्रिय जीवों का सम्मूर्च्छिम, गर्भज, पर्याप्तक, अपर्याप्तक के चार–चार भेद से बीस भेद हो जाते हैं। यहाँ जलचर आदि प्रत्येक के ७–७ भेद किये गये हैं।

जैसे-(१) औधिक (सामान्य), (२) सम्मूर्च्छिम, (३) अपर्याप्तक सम्मूर्च्छिम, (४) पर्याप्तक सम्मूर्च्छिम, (५) गर्भज, (६) अपर्याप्तक गर्भज, तथा (७) पर्याप्तक गर्भज। इन सात भेदों द्वारा पाँच प्रकार के तिर्यंचयोनिक जीवों के ७ × ५ = ३५ भेद करके ३५ तथा एक सामान्य; यों कुल ३६ प्रश्नों का समाधान दिया गया है। ये कुल ३६ अवगाहना स्थान कहे जाते हैं।

(7) The epitomic verses compiling the aforesaid in brief are as follows—

The maximum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Sammurchhim* (of asexual origin) *Jalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (aquatic five-sensed animal) is one thousand *yojans,* of a *Sammurchhim* (of asexual origin) *Chatushpad Sthalchar* (quadruped terrestrial) is *gavyut prithakatva,* of a *Sammurchhim* (of asexual origin) *Urparisarp Sthalchar* (non-limbed reptilian terrestrial) is *yojan prithakatva* and that of a *Sammurchhim* (of asexual origin) *Bhujparisarp Sthalchar* (limbed reptilian terrestrials) and a *Sammurchhim* (of asexual origin) *Khechar Tiryanch Panchendriya* (aerial five-sensed animal) is *dhanush prtithakatva.* (1)

Of the *Garbhavyutkrant Tiryanch Panchendriya* (five-sensed animals born out of womb) the maximum *avagahana* (space occupied) of a *Jalachar* (aquatic) is one thousand *yojans,* of a *Chatushpad Sthalchar* (quadruped terrestrial) is six *gavyut,* of *Urparisarp Sthalchar* (non-limbed reptilian terrestrial) is one thousand *yojans* and of a *Bhujparisarp Sthalchar* (limbed reptilian terrestrial) is *gavyut prithakatva* (two to nine *gavyut*). That of a *Khechar Tiryanch Panchendriya* (aerial five-sensed animals) is *dhanush prithakatva* (two to nine *dhanush*). (2)

Elaboration—The aforesaid aphorisms describe the *avagahana* (space occupied) of the bodies of five-sensed animals. There are four divisions of five-sensed animals—(1) *Naarak* (infernal beings), (2) *Tiryanch* (animals), (3) *Manushya* (human beings), and (4) *Deva* (divine beings or gods). The *avagahana* (space occcupied) in context of infernal beings has already been discussed. Five-sensed animals are again divided into five categories—(1) *Jalachar*—those who move in water or aquatic. (2) *Sthalchar*—those who move on land like cow, buffalo etc. or terrestrials. (3) *Khechar*—those who move in the air or

aerials. (4) *Urparisarp*—those who crawl without the help of limbs, like snakes etc. or non-limbed reptilians. (5) *Bhujparisarp*—those who crawl with the help of limbs, like rat, squirrel etc. or limbed reptilians. Those born spontaneously without male-female intercourse are called *Sammurchhim* (of asexual origin) and those born out of womb are called *Garbhaj* or *Grabhavyutkrant*. Beings who have fully developed capacity of food intake and other physiological functions are called *Paryaptak* (fully developed) and those who are still short of such development are called *Aparyaptak* (underdeveloped). Thus these four kinds (*Sammurchhim, Garbhaj, Paryaptak* and *Aparyaptak*) of each of the five categories of five-sensed animals make twenty categories. Here seven classifications of each of the five kinds have been made—(1) *Aughik* (general), (2) *Sammurchhim,* (3) *Aparyaptak Sammurchhim,* (4) *Paryaptak Sammurchhim,* (5) *Garbhaj,* (6) *Aparyaptak Garbhaj,* and (7) *Paryaptak Garbhaj.* These seven categories of five kinds of animals make a total of 35 categories. Adding one more being the general category for all animals, a total of 36 questions have been answered here. These 36 are called *Avagahana Sthan* or places (types) of space-occupation.

मनुष्यगति–अवगाहना निरूपण

३५२. (१) मणुस्साणं भंते ! केमहालिया सरीरोगाहणा पन्नत्ता ?

गोयमा ! जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेणं तिन्नि गाउयाइं।

३५२. (१) (प्र.) मनुष्यों की शरीरावगाहना कितनी कही है ?

(उ.) गौतम ! (सामान्य रूप में) मनुष्यों की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट तीन गव्यूत (तीन कोस) होती है।

AVAGAHANA (SPACE OCCUPIED) OF HUMAN BEINGS

352. (1) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Manushya* (human being) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *manushya* (human being) is (generally) innumerable fraction of an *angul* and the maximum is three *gavyut* (six miles).

(२) सम्मुच्छिममणुस्साणं जाव गो. ! जह. अंगु. असं., उक्को. अंगु. असं.।

(२) (प्र.) भंते ! संमूर्च्छिम मनुष्यों की अवगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! संमूर्च्छिम मनुष्यों की जघन्य और उत्कृष्ट अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण है।

(2) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Sammurchhim Manushya* (human being of asexual origin) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum as well as maximum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Sammurchhim Manushya* (human being of asexual origin) is (generally) innumerable fraction of an *angul*.

(३) गब्भवक्कंतियमणुस्साणं जाव गोयमा ! जह. अंगु. असं., उक्को. तिन्नि गाउयाइं।

अपज्जत्तगगब्भवक्कंतियमणुस्साणं पुच्छा, गो. ! जह. अंगु. असं., उक्को. वि अंगु. असं.।

पज्जत्तयग. पुच्छा, गो. ! जह. अंगु. असं., उक्को. तिन्नि गाउआइं।

(३) (प्र.) भगवन् ! गर्भव्युत्क्रान्त (गर्भज) मनुष्यों की अवगाहना की पृच्छा है ?

(उ.) गौतम ! सामान्य रूप में गर्भज मनुष्यों की जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट तीन गव्यूत प्रमाण है।

(प्र.) भगवन् ! अपर्याप्त गर्भव्युत्क्रान्त मनुष्यों की अवगाहना कितनी है ?

(उ.) उनकी जघन्य और उत्कृष्ट शरीरावगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण है।

(प्र.) भगवन् ! पर्याप्त गर्भव्युत्क्रान्त मनुष्यों की अवगाहना का प्रमाण कितना है ?

(उ.) गौतम ! उनकी जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट अवगाहना तीन गव्यूत प्रमाण है।

विवेचन–प्रस्तुत प्रश्नोत्तरों में मनुष्यों के पाँच अवगाहना स्थान बताये गये हैं–(१) सामान्य मनुष्य, (२) संमूर्च्छिम मनुष्य, (३) गर्भज मनुष्य, (४) अपर्याप्त गर्भज मनुष्य, और (५) पर्याप्त गर्भज मनुष्य। संमूर्च्छिम तिर्यंचों की तरह संमूर्च्छिम मनुष्यों में अपर्याप्त और पर्याप्त ये दो विकल्प नहीं होते। संमूर्च्छिम मनुष्य गर्भज मनुष्यों के शुक्र, शोणित आदि में ही उत्पन्न होते हैं और वे अपर्याप्त अवस्था में ही मर जाते हैं। अतः उनमें पर्याप्त–अपर्याप्त विकल्प सम्भव नहीं हैं।

सामान्य मनुष्यों की जो उत्कृष्ट अवगाहना तीन कोस की कही है, वह देवकुरु आदि के मनुष्यों की अपेक्षा से समझना चाहिए।

मनुष्य की शरीरगत लम्बाई-चौड़ाई आदि पर भूमि का, भोजन का तथा समय का प्रभाव पड़ता है। प्राचीन इतिहास पढ़ने वाले जानते हैं आज से हजारों, लाखों वर्ष पहले के जलचर आदि अन्य जीवों की शरीरगत विशालता का वर्णन आज आश्चर्यजनक लगता है, परन्तु यह पुरातात्त्विक सत्य है कि प्राचीनकाल के जीव पर्वत जैसे विशालकाय होते थे।

वर्तमानकाल में शरीरगत अवगाहना (उच्चता) की अधिकता के कुछ उदाहरण देखिए-

''बम्बई की देवल सर्कस कम्पनी में एक नौ फीट ऊँचा आदमी काम करता था। १८ दिसम्बर, १८९२ के 'गुजरात मित्र' नामक समाचार-पत्र के ३०वें अंक में अस्थि-पंजरों का वर्णन करते हुए लिखा है कि 'कोनटोलोकस' नाम का एक राक्षस साढ़े पन्द्रह फुट ऊँचा था। 'फरटीग्स' नाम का मनुष्य २८ फीट ऊँचा था। मुलतान शहर में वीर दरवाजे के भीतर एक नौ गज की कब्र अभी तक विद्यमान है, जिससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि उस कब्र वाला मनुष्य नौ गज यानी २७ फीट ऊँचा था। विदेश के एक अजायबघर में डेढ़ फुट लम्बा मनुष्य का दाँत रखा हुआ है। विचार कीजिए, जिस मनुष्य का इतना लम्बा दाँत है वह मनुष्य डीलडौल और कद में कितना ऊँचा होगा।'' *(अनु. श्री ज्ञान मुनि जी, भाग २, पृ. ६१३)*

(3) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Garbhavyutkrant Manushya* (human being born out of womb) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Garbhavyutkrant Manushya* (human being born out of womb) is (generally) innumerable fraction of an *angul* and the maximum is three *gavyut* (six miles).

(Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of an *Aparyapt Garbhavyutkrant Manushya* (underdeveloped human being born out of womb) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum as well as maximum *avagahana* (space occupied) by the body of an *Aparyapt Garbhavyutkrant Manushya* (underdeveloped human being born out of womb) is innumerable fraction of an *angul*.

(Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Paryapt Garbhavyutkrant Manushya* (fully developed human being born out of womb) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum *avagahana* (space occupied) by the body of a *Paryapt Garbhavyutkrant Manushya* (fully

developed human being born out of womb) is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is three *gavyut* (six miles).

Elaboration—In these aphorisms five *Avagahana sthans* (types of space-occupation) have been described—(1) Normal human beings, (2) *Sammurchhim Manushyas* (human beings of asexual origin), (3) *Garbhavyutkrant Manushyas* (human beings born out of womb), (4) *Aparyapt Garbhavyutkrant Manushyas* (underdeveloped human beings born out of womb), and (5) *Paryapt Garbhavyutkrant Manushyas* (fully developed human beings born out of womb). Unlike the animals of asexual origin the human beings of asexual origin do not have the categories of fully developed and underdeveloped. The human beings of asexual origin are born in the semen, blood etc. of the humans and die in their underdeveloped state. Thus these two alternatives are non-existent.

The maximum *avagahana* (space occupied) by the body of a normal human being stated as three *gavyuts* (six miles) is in context of the human beings of *Devakuru* (according to Jain Mythology) and other such specific areas.

The dimension of the human body is influenced by factors like place (land), available food and time. Students of anthropology and paleontology know that though the huge proportions of the bodies of the beings, including aquatic and terrestrial animals, of the remote past appear to be incredible but this is a paleontological reality that the bodies of the beings of the remote past were, indeed, gigantic.

Hindi *Tika of Anuyogadvar Sutra,* Part 2, by Shri Jnana Muni, p. 613 mentions some examples of such unusually large dimensions from the modern era—

"A nine feet tall man worked in the Deval Circus Company of Bombay. In the 30th number of a newspaper, Gujarat Mitra, dated 18th December, 1892, describing the fossil remains, it is mentioned that Conotolocus (a giant demon) measured fifteen and a half feet in height. A man named Furtigs was 28 ft. tall. In the city of Multan, inside the Vir Gate there is a grave measuring more than nine yards, clearly indicating that the individual buried there must have been 27 ft. tall. In a foreign museum one of the exhibits is a tooth measuring one and a half feet. The size of the human being that could have such huge tooth can well be imagined."

वाणव्यंतर और ज्योतिष्क देवों की अवगाहना

३५३. वाणमंतराणं भवधारणिज्जा उत्तरवेउव्विया य जहा असुरकुमाराणं तहा भाणियव्वं।

३५३. वाणव्यंतरों की भवधारणीय एवं उत्तरवैक्रिय शरीर की अवगाहना असुरकुमारों के समान जानना चाहिए। (सूत्र ३४८)

THE DIVINE BEINGS

353. The *avagahana* (space occupied) by the *Bhavadharaniya* (normal) and *Uttarvaikriya* (secondary transmuted) bodies of *Vanavyantar* (interstitial) gods is same as that of *Asurkumar* gods (aphorism 348).

३५४. जहा वाणमंतराणं तहा जोतिसियाणं।

३५४. जितनी वाणव्यंतरों की अवगाहना है, उतनी ही ज्योतिष्क देवों की भी है।

354. The *avagahana* (space occupied) by the bodies of *Jyotishk* (stellar) gods is also same as that of *Vanavyantar* (interstitial) gods.

वैमानिक देवों की अवगाहना

३५५. (१) सोहम्मयदेवाणं भंते ! केमहालिया सरीरोगाहणा पन्नत्ता ?

गोयमा ! दुविहा प.। तं.- १. भवधारणिज्जा य, २. उत्तरवेउव्विया य। तत्थ णं जा सा भवधारणिज्जा सा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं सत्त रयणीओ।

तत्थ णं जा सा उत्तरवेउव्विया सा जहन्नेणं अंगुलस्स संखेज्जइभागं, उक्कोसेणं जोयणसत्तसहस्सं।

३५५. (१) (प्र.) भंते ! सौधर्मकल्प के देवों की शरीरावगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! (उनकी अवगाहना) दो प्रकार की कही है-(१) भवधारणीय, और (२) उत्तरवैक्रिय। इनमें से भवधारणीय अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग की और उत्कृष्ट सात रत्नि (हाथ जितनी) है।

उत्तरवैक्रिय शरीर की अवगाहना जघन्य अंगुल के संख्यातवें भाग और उत्कृष्ट एक लाख योजन जितनी है।

355. (1) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Deva* (divine-being) of the *Saudharm-kalp* (dimension) ?

(Ans.) Gautam ! The *avagahana* (space occupied) by the body of a *Deva* (divine-being) of the *Saudharm* dimension is of two kinds—(1) *Bhavadharaniya* (by the normal body), and (2) *Uttarvaikriya* (by the secondary transmuted body). Of these the minimum *avagahana* (space occupied) of the *Bhavadharaniya* (normal) body is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is seven *ratnis*.

The minimum *avagahana* (space occupied) of the *Uttarvaikriya* (secondary transmuted) body is countable fraction of an *angul* and the maximum is one lac (one hundred thousand) *yojans*.

(२) जहा सोहम्मे तहा ईसाणे कप्पे वि भाणियव्वं।

(२) ईशानकल्प में भी देवों की अवगाहना का प्रमाण सौधर्मकल्प जितना ही जानना चाहिए।

(2) The *avagahana* (space occupied) by the body of a *Deva* (divine-being) of the *Ishan* dimension is same as that in the *Saudharm* dimension.

(३) जहा सोहम्मयदेवाणं पुच्छा तहा सेसकप्पाणं देवाणं पुच्छा भाणियव्वा जाव अच्चुयकप्पो–

सणंकुमारे भवधारणिज्जा जह. अंगु. असं., उक्को. छ रयणीओ; उत्तरवेउव्विया जहा सोहम्मे।

जहा सणंकुमारे तहा माहिंदे।

बंभलोग–लंतएसु भवधारणिज्जा जह. अंगु. असं., उक्को. पंच रयणीओ; उत्तरवेउव्विया जहा सोहम्मे।

महासुक्क–सहस्सारेसु भवधारणिज्जा जह. अंगु. असं., उक्को. चत्तारि रयणीओ; उत्तरवेउव्विया जहा सोहम्मे।

आणत–पाणत–आरण–अच्चुतेसु चउसु वि भवधारणिज्जा जह. अंगु. असं., उक्को. तिण्णि रयणीओ; उत्तरवेउव्विया जहा सोहम्मे।

(३) सौधर्मकल्प के देवों की शरीरावगाहना विषयक प्रश्न की तरह शेष अच्युतकल्प तक के देवों की अवगाहना सम्बन्धी प्रश्न पूर्ववत् जानना चाहिए। उत्तर इस प्रकार हैं–

सनत्कुमारकल्प में भवधारणीय जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट छह रत्नि प्रमाण है। उत्तरवैक्रिय अवगाहना सौधर्मकल्प के बराबर है।

सनत्कुमारकल्प जितनी अवगाहना माहेन्द्रकल्प में जानना।

ब्रह्मलोक और लांतक–इन दो कल्पों में भवधारणीय शरीर की जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट अवगाहना पाँच रत्नि प्रमाण है। उत्तरवैक्रिय अवगाहना का प्रमाण सौधर्मकल्पवत् है।

महाशुक्र और सहस्रारकल्पों में भवधारणीय अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट चार रत्नि प्रमाण है। उत्तरवैक्रिय शरीरावगाहना सौधर्मकल्प के समान है।

आनत, प्राणत, आरण और अच्युत–इन चार कल्पों में भवधारणीय अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट तीन रत्नि की है। इनकी उत्तरवैक्रिय अवगाहना सौधर्मकल्प के ही समान है।

विवेचन–देवों के चार मुख्य निकाय हैं–(१) भवनपति, (२) वाणव्यंतर, (३) ज्योतिष्क, और (४) वैमानिक। इन्हीं के भेदोपभेद करने पर देवों के १९८ भेद होते हैं। (देखें तत्त्वार्थसूत्र ४/१) फिर भी रूढ़ि से 'कल्प' शब्द का व्यवहार वैमानिक देवों के लिए ही किया जाता है। सौधर्मकल्प से अच्युतकल्प पर्यन्त के देव कल्पोपपन्न हैं और इनसे ऊपर नव–ग्रैवेयक आदि सर्वार्थसिद्ध तक के विमानों में इन्द्रादि की कल्पना नहीं होने से वहाँ के देव कल्पातीत कहलाते हैं।

इन सभी कल्पवासी देवों की उत्तरवैक्रिय जघन्य और उत्कृष्ट शरीरावगाहना समान अर्थात् जघन्य अंगुल के संख्यातवें भाग प्रमाण और उत्कृष्ट एक लाख योजन की है। लेकिन भवधारणीय उत्कृष्ट अवगाहना में अन्तर है। इसका कारण यह है कि ऊपर–ऊपर के प्रत्येक कल्प में वैमानिक देवों की आयुस्थिति, प्रभाव, सुख, द्युति–कांति, लेश्याओं की विशुद्धि, विषयों को ग्रहण करने की ऐन्द्रियक शक्ति एवं अवधिज्ञान की विशदता क्रमशः अधिक होती है। किन्तु एक देश से दूसरे देश में गमन करने रूप गति, शरीरावगाहना, परिग्रह–ममत्वभाव और अभिमान भावना उत्तरोत्तर ऊपर–ऊपर के देवों में अल्प–अल्पतर होती जाती है। इसी कारण सौधर्मकल्प में देवों की शरीरावगाहना सात रत्नि प्रमाण है तो वह बारहवें अच्युतकल्प में जाकर तीन रत्नि प्रमाण रह जाती है।

(3) Like the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Deva* (divine-being) of the *Saudharm* dimension, questions should be asked for all the dimensions of gods up to *Achyut* dimension. The answers are as follows—

In case of *Sanatkumar-kalp* (dimension) the minimum *avagahana* (space occupied) of the *Bhavadharaniya* (normal) body is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is six *ratnis*. The *avagahana* (space occupied) of the *Uttarvaikriya* (secondary transmuted) body is same as that in the *Saudharm* dimension.

The *avagahana* (space occupied) by the body of a *Deva* (divine-being) of the *Mahendra* dimension is same as that in the *Sanatkumar* dimension.

In case of *Brahmalok* and *Lantak-kalps* (dimensions) the minimum *avagahana* (space occupied) of the *Bhavadharaniya* (normal) body is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is five *ratnis*. The *avagahana* (space occupied) of the *Uttarvaikriya* (secondary transmuted) body is same as that in the *Saudharm* dimension.

In case of *Mahashukra* and *Sahasrar-kalps* (dimensions) the minimum *avagahana* (space occupied) of the *Bhavadharaniya* (normal) body is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is four *ratnis*. The *avagahana* (space occupied) of the *Uttarvaikriya* (secondary transmuted) body is same as that in the *Saudharm* dimension.

In case of *Anat, Pranat, Aran* and *Achyut-kalps* (dimensions) the minimum *avagahana* (space occupied) of the *Bhavadharaniya* (normal) body is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is three *ratnis*. The *avagahana* (space occupied) of the *Uttarvaikriya* (secondary transmuted) body is same as that in the *Saudharm* dimension.

Elaboration—There are four main dimensions of gods or divine beings—(1) *Bhavanpati* (mansion residing), (2) *Vaanvyantar* (interstitial), (3) *Jyotishk* (stellar), and (4) *Vaimanik* (endowed with celestial vehicle; celestial-vehicular). Including categories and sub-categories of these, the total number of classes of divine beings comes to 198 (*Tattvarth Sutra* 4/1).

However, the term *kalp* (dimension) is traditionally used for the *Vaimanik* (celestial-vehicular) gods only. Starting from *Saudharm-kalp* the gods up to *Achyut-kalp* are called *Kalpopapanna.* Starting from *Nava-graiveyak,* in the higher celestial vehicles up to *Sarvarth-siddh* the system of *Indras* (kings of gods) or the feudal structure of the *kalp* (dimension) does not exist; therefore the divine beings of these dimensions are called *Kalpateet devas* (gods beyond *kalps*).

The minimum as well as maximum *avagahana* (space occupied) by the *Uttarvaikriya* (secondary transmuted) bodies of all these *kalp*-dwelling gods is same, minimum being countable fraction of an *angul* and maximum being one lac *yojans.* However the *Bhavadharaniya* (normal) *avagahana* (space occupied) varies. The reason for this is that the life-span, influence, joy, radiance, purity of attitude, the information acquiring potency of sense organs and the range of *Avadhi-jnana* (extra-sensory perception of the physical dimension) progressively enhance in each higher dimension. But the speed of movement from one place to another, space occupied by the body, fondness for possessions and ego progressively diminish. That is the reason that the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Saudharm* god is seven *ratnis* whereas at the twelfth level of *Achyut-kalp* it remains only three *ratnis.*

(४) गेवेज्जयदेवाणं भंते ! केमहालिया सरीरोगाहणा पन्नत्ता ?

गो. ! गेवेज्जगदेवाणं एगे भवधारणिज्जए सरीरए, से जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेणं दो रयणीओ।

(४) (प्र.) भंते ! ग्रैवेयक देवों की शरीरावगाहना कितनी है ?

(उ.) गौतम ! ग्रैवेयक देवों के एकमात्र भवधारणीय शरीर ही होता है। उस शरीर की जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट अवगाहना दो हाथ की होती है।

(4) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Deva* (divine-being) of the *Graiveyak* dimension ?

(Ans.) Gautam ! *Graiveyak* gods only have *Bhavadharaniya* (normal) body. The minimum *avagahana* (space occupied) of this *Bhavadharaniya* (normal) body is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is two *ratnis.*

(५) अणुत्तरोववाइयदेवाणं भंते ! केमहालिया सरीरोगाहणा पन्नत्ता ?

गोयमा ! अणुत्तरोववाइयदेवाणं एगे भवधारणिज्जए सरीरए, से जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेणं एक्का रयणी।

(५) (प्र.) भंते ! अनुत्तरौपपातिक देवों के शरीर की कितनी अवगाहना होती है ?

(उ.) गौतम ! अनुत्तरविमानवासी देवों के एकमात्र भवधारणीय शरीर ही होता है। उनकी अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट एक हाथ की होती है। (प्रज्ञापनासूत्र, पद २१ के अवगाहना द्वार में इनका विस्तारपूर्वक वर्णन है।)

(5) (Q.) *Bhante* ! How large is the *avagahana* (space occupied) by the body of a *Deva* (divine-being) of the *Anuttaraupapatik* dimension ?

(Ans.) Gautam ! *Anuttaraupapatik* gods only have *Bhavadharaniya* (normal) body. The minimum *avagahana* (space occupied) of this *Bhavadharaniya* (normal) body is innumerable fraction of an *angul* and the maximum is one *ratni.* (For detailed description of these see *Avagahana Dvar* of *Prajnapana Sutra,* Pad 21.)

उत्सेधांगुल के भेद और भेदों का अल्पबहुत्व

३५६. से समासओ तिविहे पण्णत्ते। तं जहा–सूईअंगुले पयरंगुले घणंगुले।

अंगुलायता एगपदेसिया सेढी सूईअंगुले, सूई सूईए गुणिया पयरंगुले, पयरं सूईए गुणियं घणंगुले।

३५६. वह उत्सेधांगुल संक्षेप से तीन प्रकार का कहा गया है–(१) सूच्यंगुल, (२) प्रतरांगुल, और (३) घनांगुल।

एक अंगुल लम्बी तथा एक प्रदेश चौड़ी आकाशप्रदेशों की श्रेणी (पंक्ति–रेखा) को सूच्यंगुल कहते हैं। सूची से सूची को गुणा करने पर प्रतरांगुल निष्पन्न होता है। सूच्युंगल से गुणा करने पर प्रतरांगुल घनांगुल कहलाता है।

KINDS AND COMPARATIVE DIMENSIONS OF UTSEDHANGUL

356. Briefly *utsedhangul* is said to be of three types—(1) *Suchyangul* (linear *angul*), (2) *Pratarangul* (square *angul*), and (3) *Ghanangul* (cubic *angul*).

One *angul* long and one space-point wide row of space-points is called *Suchyangul* (linear *angul*). *Suchyangul* (linear *angul*) multiplied by *suchyangul* (linear *angul*) is *Pratarangul* (square *angul*). *Pratarangul* (square *angul*) multiplied by *suchyangul* (linear *angul*) is *Ghanangul* (cubic *angul*).

३५७. एएसि णं सूचीअंगुल–पयरंगुल–घणंगुलाणं कतरे कतरेहिंतो अप्पे वा बहुए वा तुल्ले वा विसेसाहिए वा ?

सव्वत्थोवे सूईअंगुले, पयरंगुले असंखेज्जगुणे, घणंगुले असंखेज्जगुणे। से तं उस्सेहंगुले।

३५७. (प्र.) इन सूच्यंगुल, प्रतरांगुल और घनांगुल में कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य अथवा विशेषाधिक है ?

(उ.) इनमें (सबसे छोटा) सूच्यंगुल है। प्रतरांगुल उससे असंख्यात गुणा और प्रतरांगुल से घनांगुल असंख्यात गुणा है।

यह उत्सेधांगुल है। (विवेचन सूत्र ३३७ के अनुसार)

357. (Q.) *Bhante* ! Which of these three, *Suchyangul* (linear *angul*), *Pratarangul* (square *angul*), and *Ghanangul* (cubic *angul*), is relatively less, more, equal or much more.

(Ans.) Of these, *Suchyangul* (linear *angul*) is least, *Pratarangul* (square *angul*) is innumerable times larger than it and *Ghanangul* (cubic *angul*) is still innumerable times larger. (for elaboration refer to aphorism 337)

This concludes the description of *Utsedhangul* (fragmentary units of *angul*).

(3) प्रमाणांगुल
(3) PRAMANANGUL (Paramount Angul)

प्रमाणांगुल

३५८. से किं तं पमाणंगुले ?

पमाणंगुले एगमेगस्स णं रण्णो चाउरंतचक्कवट्टिस्स अट्ठ सोवण्णिए कागणिरयणे छत्तले दुवालसंसिए अट्ठकण्णिए अहिगरणिसंठाणसंठिए पण्णत्ते, तस्स णं एगमेगा कोडी

उस्सेहंगुलविक्खंभा, तं समणस्स भगवओ महावीरस्स अद्धंगुलं, तं सहस्सगुणं पमाणंगुलं भवति।

३५८. (प्र.) प्रमाणांगुल का क्या स्वरूप है ?

(उ.) (सबसे बड़े अंगुल को प्रमाणांगुल कहते हैं।) यह इस प्रकार है—भरत क्षेत्र पर शासन करने वाले चक्रवर्ती राजा का अष्ट सुवर्ण जितने भार वाला छह तल वाला, बारह भुजा (कोटियों) और आठ कर्णिका (कोनों) वाला तथा अहरन के संस्थान (सुनार के एरण जैसे आकार) वाला काकणीरत्न होता है। उसकी प्रत्येक भुजा उत्सेधांगुल के समान चौड़ाई वाली है, वह एक भुजा श्रमण भगवान महावीर के अर्धांगुल जितनी होती है। उस अर्धांगुल से हजार गुणा (अर्थात् उत्सेधांगुल से हजार गुणा) एक प्रमाणांगुल होता है।

PRAMANANGUL

358. (Q.) What is this *Pramanangul* (paramount *angul*) ?

(Ans.) (The *angul* of largest dimension is called *Pramanangul* or paramount *angul.*) It is defined as follows— A *Chakravarti* king (an emperor) ruling over Bharat area in all the four directions has a jewel named *Kakini* weighing eight *suvarn* (a unit of weight) and having six sides or surfaces, twelve edges and eight corners and is shaped like an anvil. Each of its sides measures one *utsedhangul* which is equal to half *angul* of Shraman Bhagavan Mahavir. One thousand times of this is one *pramanangul* (paramount *angul*).

३५९. एतेणं अंगुलप्पमाणएणं छ अंगुलाइं पादो, दो पाया—दुवालस अंगुलाइं विहत्थी, दो विहत्थीओ रयणी, दो रयणीओ कुच्छी, दो कुच्छीओ धणू, दो धणुसहस्साइं गाउयं, चत्तारि गाउयाइं जोयणं।

३५९. इस अंगुल से छह अंगुल का एक पाद, दो पाद अथवा बारह अंगुल की एक वितस्ति, दो वितस्तियों की रत्नि (हाथ), दो रत्नि की एक कुक्षि, दो कुक्षियों का एक धनुष, दो हजार धनुष का एक गव्यूत और चार गव्यूत का एक योजन होता है।

विवेचन—इन दो सूत्रों में से पहले में प्रमाणांगुल का व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ बतलाकर उसके यथार्थ मान का निर्देश किया है। इसी प्रसंग में चक्रवर्ती राजा का स्वरूप, उसके प्रमुख रत्न काकणी का प्रमाण और श्रमण भगवान महावीर के आत्मांगुल का मान बता दिया है।

तीर्थंकरों की तरह चक्रवर्ती राजा भी उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी काल के तीसरे, चौथे आरे में होते हैं। एक अवसर्पिणी काल में बारह चक्रवर्ती होते हैं और वह एक समय में एक क्षेत्र में एक ही चक्रवर्ती होता है। छह खण्ड पर उसका एक छत्र शासन होता है। प्रत्येक चक्रवर्ती सात एकेन्द्रिय और सात पंचेन्द्रिय, कुल चौदह रत्नों का स्वामी होता है। प्रस्तुत में उल्लिखित काकणी रत्न पार्थिव रत्न है और वह आठ सुवर्ण जितना भारी (वजन वाला) होता है। सुवर्ण उस समय का एक तोल था। वह चारों ओर से सम होता है। उसकी आठ कर्णिकायें कोने और बारह कोटियाँ-भुजाएँ होती हैं। प्रत्येक भुजा एक उत्सेधांगुल की लम्बाई, चौड़ाई वाली विष्कंभ प्रमाण होती है। प्राचीन चित्रों के अनुसार काकणी रत्न की आकृति चित्र में देखें।

काकणी रत्न विष को नष्ट करने वाला होता है। यह सदा चक्रवर्ती के स्कन्धावार में स्थापित रहता है। इसकी किरणें बारह योजन तक फैलती हैं। जहाँ चन्द्र, सूर्य, अग्नि आदि अन्धकार को नष्ट करने में समर्थ नहीं होते, ऐसी तमिस्रा गुफा में यह काकणी रत्न अन्धकार को समूल नष्ट कर देता है। प्रमाणांगुल की लम्बाई (आयाम) उत्सेधांगुल से ४०० गुनी तथा चौड़ाई (विष्कंभ) २ गुनी अधिक होती है। ४०० को $२\frac{१}{२}$ गुना करने पर प्रमाणांगुल उत्सेधांगुल से हजार गुना होता है। टीकाकार ने प्राचीन तीन मतों का उल्लेख करके बताया है कि-भगवान महावीर का १ आत्मांगुल २ उत्सेधांगुल के समान होता है। अर्थात् एक उत्सेधांगुल = अर्ध-आत्मांगुल होता है। टीकाकार के इन उल्लेखों के अनुसार भगवान महावीर का शरीर उत्सेधांगुल से ७ हाथ प्रमाण, आत्मांगुल से (भगवान महावीर के अंगुल से) ८४ अंगुल = $३\frac{१}{२}$ हाथ प्रमाण था।

359. By this standard of *angul,* six *anguls* make one *paad,* twelve *anguls* make one *vitasti,* twenty four *anguls* make one *ratni,* forty eight *anguls* make one *kukshi* and ninety six *anguls* make one *dand* or *dhanush* or *yuga* or *aksha* or *musal.* By this standard of *dhanush,* two thousand *dhanushas* make one *gavyut* and four *gavyuts* make one *yojan.*

Elaboration—In the aforesaid aphorisms the word meaning of *pramanangul* is mentioned and then its exact magnitude has been defined. In this context simple definition of a *Chakravarti* emperor has been given alongwith the dimensions of his *Kakini* jewel and the *atmangul* (own finger) of Bhagavan Mahavir.

Like Tirthankars, *Chakravarti* emperors also live during the third and fourth epochs of the progressive and regressive cycles of time. There are twelve *Chakravartis* in one regressive cycle and only one at a time. His reign extends to all the six divisions of Bharat area. Every *Chakravarti* possesses fourteen jewels, seven one-sensed and seven five-

sensed. The *Kakini* jewel mentioned here is a mineral and weighs eight *suvarns,* a unit of weight cf that period. All its sides are equal. It has eight corners and twelve sides. Each side being one *utsedhangul* square. The shape of this *Kakini* jewel, based on ancient illustrations, can be seen in illustration.

This *Kakini* jewel acts as an antitoxin. It rests in the vault of the *Chakravarti.* Its glow spreads up to twelve *yojans.* It can fully illuminate a dark cave where light from the sun, the moon or other sources fails to reach. The length of *pramanangul* is 400 times that of *utsedhangul* and the width is two and a half times that. Thus (on the whole) one *pramanangul* is one thousand times the *utsedhangul.* The commentator (*Tika*), referring to three ancient views, informs that one *atmangul* (own finger) of Bhagavan Mahavir was equal to 2 *utsedhangul.* Numerically put, 1 *utsedhangul* = 1/2 *atmangul.* Inferring from these mentions by the commentator (*Tika*) the body of Bhagavan Mahavir was 7 *haath* tall in terms of *utsedhangul* and three and a half *haath* tall in terms of *atmangul.*

प्रमाणांगुल का प्रयोजन

३६०. एतेणं पमाणंगुलेणं किं पओयणं ?

एएणं पमाणंगुलेणं पुढवीणं कंडाणं पायालाणं भवणाणं भवणपत्थडाणं निरयाणं निरयावलियाणं निरयपत्थडाणं कप्पाणं विमाणाणं विमाणावलियाणं विमाणपत्थडाणं टंकाणं कूडाणं सेलाणं सिहरीणं पब्भाराणं विजयाणं वक्खाराणं वासाणं वासहराणं वासहरपव्वयाणं वेलाणं वेइयाणं दाराणं तोरणाणं दीवाणं समुद्दाणं आयाम-विक्खंभ-उच्चत्तोव्वेह-परिक्खेवा मविज्जंति।

३६०. (प्र.) इस प्रमाणांगुल का क्या प्रयोजन (उपयोग) है ?

(उ.) इस प्रमाणांगुल से (रत्नप्रभा आदि नरक) पृथ्वियों की, (रत्नकांड आदि) कांडों-खण्डों की, पातालकलशों की, (भवनवासियों के) भवनों की, भवनों के प्रस्तरों की, नरकावासों की, नरक-पंक्तियों की, नरक के प्रस्तरों की, कल्पों की, विमानों की, विमान-पंक्तियों की, विमान-प्रस्तरों की, टंकों की, कूटों की, पर्वतों की, शिखर वाले पर्वतों की, प्राग्भारों (नमित पर्वतों) की, विजयों की, वक्षारों की, (भरत आदि) क्षेत्रों की, (हिमवान् आदि) वर्षधर पर्वतों की, समुद्रों की, वेलाओं की, वेदिकाओं की, द्वारों की,

नरक प्रस्तर पंक्तियाँ

चित्र परिचय ८

Illustration No. 8
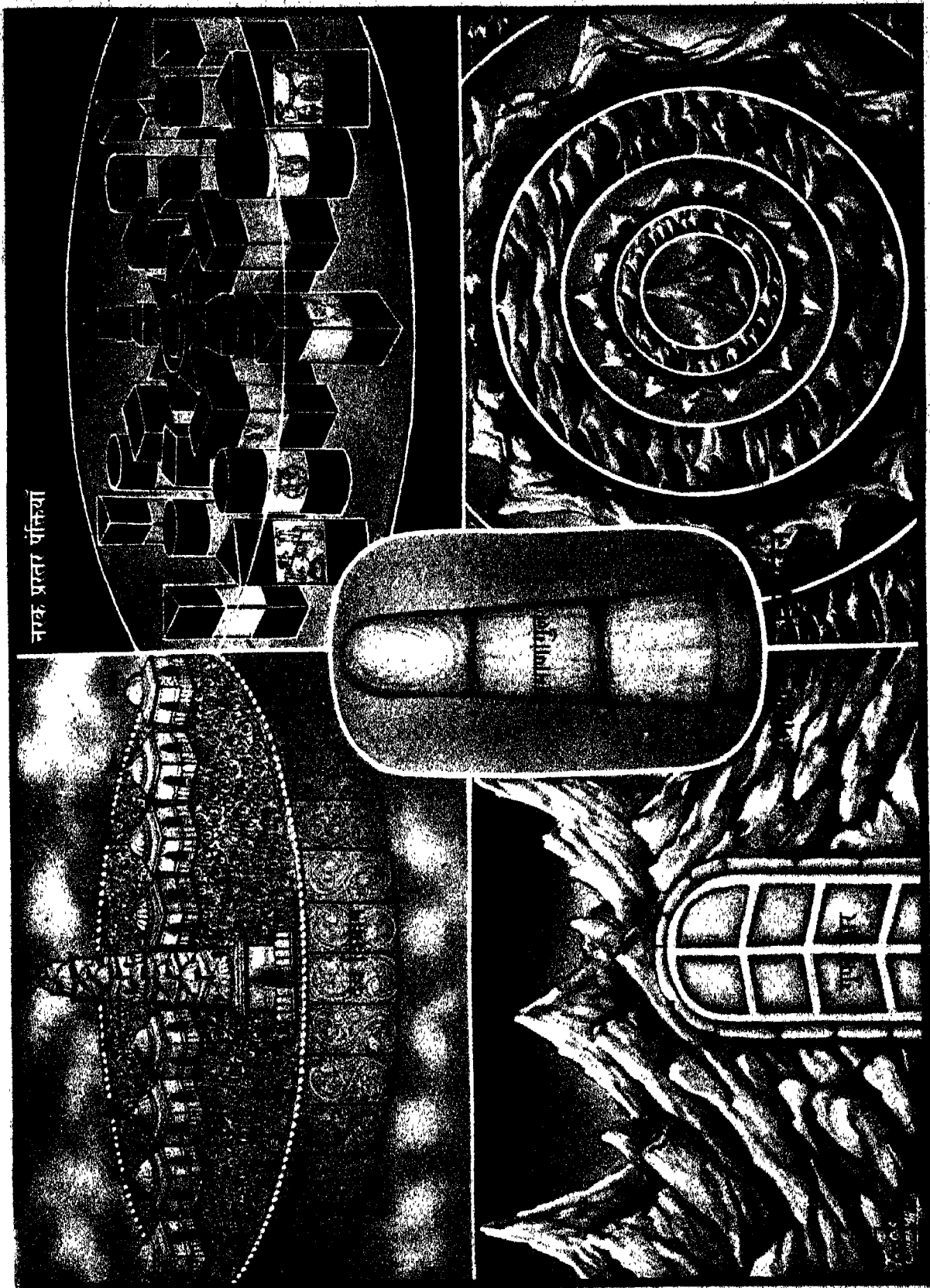
प्रमाणांगुल का प्रयोजन

प्रमाणांगुल—उत्सेधांगुल से हजार गुना बड़ा होता है। इससे देव विमानों की विमान पंक्तियाँ तथा नरक पृथ्वियों के प्रस्तर आदि स्वाभाविक वस्तुओं का नाप होता है। शिखर पर्वतों, कूटों, गुफाओं तथा समुद्रों आदि का नाप भी प्रमाणांगुल से होता है।

—सूत्र ३६०, पृष्ठ १४१

THE USE OF PRAMAANANGUL

Pramaanangul—It is one thousand times the dimension of *Utsedhangul.* This unit is used to measure the dimensions of rows of celestial vehicles, areas of hells and other large natural areas. It is also used to measure the dimensions of mountains, peaks, caves, seas etc.

—*Aphorism 360, p. 141*
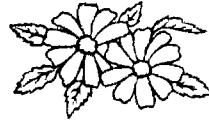
तोरणों की, द्वीपों की तथा समुद्रों की लम्बाई, चौड़ाई, ऊँचाई, गहराई और परिधि मापी जाती है।

विवेचन—लोक में तीन प्रकार के रूपी पदार्थ हैं-(१) मनुष्यकृत, (२) उपाधिजन्य, और (३) शाश्वत। मनुष्यकृत पदार्थों की लम्बाई, चौड़ाई आदि का माप आत्मांगुल द्वारा होता है। उपाधिजन्य पदार्थ से यहाँ शरीर का कथन है। इसका माप उत्सेधांगुल के द्वारा किया जाता है। शाश्वत पदार्थों की लम्बाई, चौड़ाई आदि प्रमाणांगुल के द्वारा मापी जाती है। जैसे नरकभूमियाँ शाश्वत हैं, उनकी लम्बाई-चौड़ाई में किंचिन्मात्र भी अन्तर नहीं आता, अतः प्रमाणांगुल का परिमाण भी सदैव एक जैसा रहता है।

विशेष शब्दों के अर्थ—

पृथ्वी—भूखण्ड

काण्ड—भूमि का बड़ा भाग

पाताल—भूतलीय संसार

भवन—भवनपति देवों के आवास

भवन-प्रस्तर—भवनों के मध्यवर्ती अन्तराल भाग

नरक—यमलोक

नरक-पंक्ति—यमलोक की पंक्तियाँ

नरक-प्रस्तर—नरकों के बीच का भाग

कल्प—वैमानिक देवों के आवास

विमान—ज्योतिष्क और वैमानिक देवों के आवास और यान

विमान-पंक्ति—विमानों की पंक्ति

विमान-प्रस्तर—विमानों के बीच का भाग

टंक—एक दिशा में टूटा हुआ पर्वत

कूट—शिखर

शैल—मुंड पर्वत (शिखररहित पर्वत)

परिधि—घेरा

शिखरी—शिखर वाले पर्वत

प्राग्भार—कुछ झुके हुए पर्वत

विजय—महाविदेह क्षेत्र

वक्षस्कार—गजदन्त के आकार वाले पर्वत

वर्ष–भरत आदि क्षेत्र

वर्षधर पर्वत–क्षेत्रों की सीमा करने वाले पर्वत

वेला–समुद्र के ज्वार की ऊँचाई और नीचाई

वेदिका–मंच

द्वार–दरवाजा

तोरण–प्रवेश द्वार

द्वीप–टापू

समुद्र–समुद्र

आयाम–विष्कंभ, लम्बाई, चौड़ाई

विष्कम्भ–लम्बाई एवं चौड़ाई

उद्वेह–गहराई (हारिभद्रीय वृत्ति)

PURPOSE OF PRAMANANGUL

360. (Q.) What is the purpose of this *Pramanangul* (paramount *angul*) ?

(Ans.) This *Pramanangul* (paramount *angul*) is used to measure the length, width, height, depth and circumference of *prithvis, kands, patals, bhavans, bhavan-prastars, naraks, narak-panktis, narak-prastars, kalps, vimans, viman-panktis, viman-prastars, tanks, koots, shails, shikharis, pragbhars, vijayas, vakshaskars, varsh, varshdhars, samudras, velas, vedikas, dvars, torans, dveeps, samudras* etc.

Elaboration—In the *lok* (occupied space) there are three types of substances having form—(1) man made, (2) causal creations, and (3) eternal. Man made things are measured in *atmangul* units. Causal creations here mean physiological bodies; they are measured in *utsedhangul* units. The eternal things are measured in *pramanangul.* For example the hells or the lands where the infernal beings dwell are eternal and there is no variation in their dimensions. This means that *Pramanangul* is always the same.

Technical Terms—

prithvi—world; large land mass; hell or infernal world

kand—large division of land

patal—subterranean world

bhavan—divine-mansion (occupying a specific level in outer space) of mansion-dwelling gods

bhavan-prastar—intervening space between two levels of divine mansions

narak—hell; world where infernal beings dwell

narak-pankti—rows of hells

narak-prastar—intervening space between two levels of infernal worlds

kalp—the world or level or dimension of gods dwelling in celestial vehicles

viman—the dwelling place or celestial vehicle of *Jyotishk* (stellar) and *Vaimanik* (celestial-vehicular) gods

viman-pankti—row of *vimans*

viman-prastar—intervening space between two levels of *vimans*

tank—a mountain with one face broken or straight

koot—peak or pinnacle

shail—flat-top mountain

paridhi—round

shikhari—mountain with a peak

pragbhar—leaning mountain; mountain with an overhang

vijaya—*Mahavideh* area (a specific continent in Jain mythology)

vakshaskar—elephant-tusk-shaped mountain

varsh—large land mass of continental size, like Bharatvarsh (Indian sub-continent)

varshdhar—mountain range dividing *varsh* (continents)

vela—depth and height of ebb and tide in the sea; also beaches

vedika—platform; plateau

dvar—gate

toran—arch

dveep—island

samudra—sea; ocean

ayam—length

vishkambh—length and breadth (area)

udvedh—depth (*Vritti* by Haribhadra Suri)

प्रमाणांगुल के भेद एवं अल्पबहुत्व

३६१. से समासओ तिविहे पण्णत्ते। तं जहा–सेढीअंगुले पयरंगुले घणंगुले।

असंखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ सेढी, सेढी सेढीए गुणिया पयरं, पयरं सेढीए गुणितं लोगो, संखेज्जएणं लोगो गुणितो संखेज्जा लोगा, असंखेज्जएणं लोगो गुणिओ असंखेज्जा लोगा।

३६१. वह (प्रमाणांगुल) संक्षेप में तीन प्रकार का है–(१) श्रेणी अंगुल, (२) प्रतरांगुल, तथा (३) घनागुंल।

असंख्यात कोडाकोडी योजनों की एक श्रेणी होती है। श्रेणी को श्रेणी से गुणित करने पर प्रतरांगुल और प्रतरांगुल को श्रेणी के साथ गुणा करने से (एक) लोक होता है। लोक को संख्येय से गुणा करने पर संख्येय लोक और असंख्येय से गुणा करने पर असंख्येय लोक होते हैं।

KINDS AND COMPARATIVE DIMENSIONS OF PRAMANANGUL

361. Briefly *pramanangul* is said to be of three types—(1) *Shreni-angul* (series-*angul*), (2) *Pratarangul* (square series-*angul*), and (3) *Ghanangul* (cubic series-*angul*).

Innumerable *kodakodi* (10^{14}) *yojans* is called *Shreni-angul* (series-*angul*). *Shreni-angul* (series-*angul*) multiplied by *shreni-angul* (series-*angul*) is *Pratarangul* (square series-*angul*) and *pratarangul* (square series-*angul*) multiplied by *shreni-angul* (series-*angul*) is one *Lok* (occupied space). *Lok* multiplied by a countable number makes countable *Loks* and when multiplied by uncountable number it makes innumerable *Loks*.

३६२. एतेसि णं सेढीअंगुले–पयरंगुल–घणंगुलाणं कतरे कतरेहिंतो अप्पे वा बहुए वा तुल्ले वा विसेसाहिए वा ?

सव्वत्थोवे सेढिअंगुले, पयरंगुले असंखेज्जगुणे घणंगुले असंखेज्जगुणे। से तं पमाणंगुले। से तं विभागनिप्फन्ने। से तं खेत्तप्पमाणे।

।। अवगाहणे त्ति पयं सम्मत्तं ।।

३६२. (प्र.) इन श्रेणी अंगुल, प्रतरांगुल और घनांगुल में कौन, किससे अल्प, अधिक, तुल्य अथवा विशेषाधिक है?

(उ.) श्रेणी अंगुल सबसे छोटा-अल्प है, उससे प्रतरांगुल असंख्यात गुणा है और प्रतरांगुल से घनांगुल असंख्यात गुणा है।

विवेचन-प्रस्तुत में '**असंखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ सेढी**' पद का यह आशय है कि प्रमाणांगुल से निष्पन्न योजन की असंख्यात कोडाकोडी संवर्तित योजनों की एक श्रेणी होती है। एक करोड़ को एक करोड़ से गुणा करने पर प्राप्त संख्या को कोडाकोडी कहते हैं।

यद्यपि सूत्र में घनांगुल के स्वरूप का संकेत नहीं किया है लेकिन यह पहले बताया जा चुका है कि घनांगुल से किसी भी वस्तु की लम्बाई, चौड़ाई और मोटाई का परिमाण जाना जाता है। अतएव यहाँ घनीकृत लोक के उदाहरण द्वारा घनांगुल का स्वरूप स्पष्ट किया है।

लोक का वर्णन इस प्रकार है-समग्र लोक ऊपर से नीचे तक चौदह रज्जु प्रमाण है। उसका विस्तार नीचे सात रज्जु, मध्य में एक रज्जु, ब्रह्मलोक नामक पाँचवें देवलोक तक का मध्य भाग में पाँच रज्जु और शिरो भाग में एक रज्जु है। यही शिरो भाग लोक का अन्त है। अधोलोक का विस्तार ऊपर-प्रथम नरक एक रज्जु प्रमाण है, नीचे विस्तृत होता हुआ सप्तम नरक का विस्तार सात रज्जु प्रमाण हो गया है।

इस प्रकार की लम्बाई, चौड़ाई प्रमाण वाले लोक की आकृति दोनों हाथ कमर पर रखकर नाचते हुए पुरुष के समान है। इसीलिए लोक को पुरुषाकार संस्थान से संस्थित कहा है। इस लोक के ठीक मध्य भाग में एक रज्जु चौड़ा और चौदह रज्जु ऊँचा क्षेत्र त्रस-नाड़ी कहलाता है। इसे त्रस-नाड़ी कहने का कारण यह है कि द्वीन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय तक के त्रस-संज्ञक जीवों का यही वास-स्थान है। घनांगुल से लोक की आकृति विषयक चर्चा एवं विभिन्न गणितिक विवेचनों के लिए देखें *अनुयोगद्वार, आचार्य महाप्रज्ञ जी, पृ. २४५-२४८; लोक प्रकाश, सर्ग १२ में भी लोक सम्बधी विस्तृत वर्णन है।*

द्रव्यप्रमाण और क्षेत्रप्रमाण का निरूपण समाप्त हुआ।

॥ अवगाहनापद प्रकरण समाप्त॥

362. (Q.) *Bhante* ! Which of these three, *Shreni-angul* (series-*angul*), *Pratarangul* (square series-*angul*) and *Ghanangul* (cubic series-*angul*), is relatively less, more, equal or much more ?

(Ans.) Of these, *Shreni-angul* (series-*angul*) is least, *Pratarangul* (square series-*angul*) is innumerable times larger than it and *Ghanangul* (cubic series-*angul*) is still innumerable times larger.

This concludes the description of *Pramanangul* (paramount *angul*). This concludes the description of *Vibhag nishpanna kshetra pramana* (fragmentary standard of measurement of area). This also concludes the description of *Kshetra pramana* (standard of measurement of area).

Elaboration—***'Asankhejjao joyankodakodio sedhi'***—This phrase means innumerable *kodakodi yojans* made up of the *pramanangul* make one *shreni* (series). One *kodakodi* means one *crore* (one hundred million or 10^7 multiplied by one *crore*.

Although *ghanangul* (cubic *angul*) has not been mentioned here, the already defined parameters of length, breadth and height have been confirmed with the example of the three dimensional configuration of *Lok*.

The description of the *Lok* is—The total height of the *Lok* is said to be 14 *rajju*. The base is seven *rajju* wide, the middle is one *rajju* wide, still higher up to fifth dimension of gods, *Brahmalok*, it is five *rajju* wide and the top is one *rajju* wide. This top portion is the edge of the *Lok*. The lower half starting from the middle expands gradually to seven *rajjus*. This area contains the seven infernal worlds one under the other, first of which is one *rajju* wide and the seventh seven *rajjus*.

The *Lok*, having aforesaid dimensions, has the shape of a man standing akimbo and turning around at a spot. That is why it is said to have a man-like configuration. In the middle of this *Lok* a perpendicular portion one *rajju* wide and 14 *rajju* high is called *Tras-nadi*. It is named so because this is the dwelling place of all *tras* (mobile) beings from two-sensed to five-sensed. Further details about these measurements and shape of the *Lok* along with a variety of mathematical interpretations can be seen in *Anuogadaraim*, pp. 245-248 by Acharya Mahaprajna and *Lok Prakash* chapter 12. (see illustration).

● END OF THE DISCUSSION ON AVAGAHANA ●

कालप्रमाण-प्रकरण
THE DISCUSSION ON KAAL PRAMANA

कालप्रमाण प्ररूपण

३६३. से किं तं कालप्पमाणे ?

कालप्पमाणे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा– १. पदेसनिप्फण्णे य, २. विभागनिप्फण्णे य।

३६३. (प्र.) कालप्रमाण क्या है ?

(उ.) कालप्रमाण दो प्रकार का है–(१) प्रदेशनिष्पन्न, और (२) विभागनिष्पन्न।

KAAL PRAMANA

363. (Q.) What is this *Kaal pramana* (standard of measurement of time) ?

(Ans.) *Kaal pramana* (standard of measurement of time) is of two kinds—(1) *Pradesh nishpanna* (segment or time-point related), and (2) *Vibhag nishpanna* (fragmentary).

३६४. से किं तं पदेसनिप्फण्णे ?

पदेसनिप्फण्णे एगसमयट्ठितीए दुसमयट्ठितीए तिसमयट्ठितीए जाव दससमयट्ठितीए संखेज्जसमयट्ठितीए अंसखेज्जसमयट्ठिईए। से तं पदेसनिप्फण्णे।

३६४. (प्र.) प्रदेशनिष्पन्न कालप्रमाण क्या है ?

(उ.) एक समय की स्थिति वाला, दो समय की स्थिति वाला, तीन समय की स्थिति वाल यावत् दस समय की स्थिति वाला, संख्यात समय की स्थिति वाला, असंख्यात समय की स्थिति वाला प्रदेशनिष्पन्न कालप्रमाण है।

इस प्रकार से प्रदेशनिष्पन्न (अर्थात् काल के निर्विभाग अंश से होने वाले) कालप्रमाण का स्वरूप जानना चाहिए।

364. (Q.) What is this *Pradesh nishpanna kaal pramana* (time-point related standard of measurement of time) ?

(Ans.) The (examples of) *Pradesh nishpanna kaal pramana* (time-point related standard of measurement of time) are as follows—

Time duration of one *Samaya* (ultimate fractional unit of time that cannot be divided any further), time duration of two *Samayas*, time duration of three *Samayas* (and so on. . .), time duration of ten *Samayas*, time duration of countable *Samayas* and time duration of uncountable *Samayas*.

This concludes the description of *Pradesh nishpanna kaal pramana* (time-point related standard of measurement of time).

३६५. से किं तं विभागनिप्फण्णे ?

विभागनिप्फण्णे–

समयाऽऽवलिय–मुहुत्ता दिवस–अहोरत्त–पक्ख मासा य।
संवच्छर–जुग–पलिया सागर–ओसप्पि–परिअट्टा॥१॥

३६५. **(प्र.)** विभागनिष्पन्न कालप्रमाण का क्या स्वरूप है ?

(उ.) समय, आवलिका, मुहूर्त्त, दिवस, अहोरात्र, पक्ष, मास, संवत्सर, युग, पल्योपम, सागर, अवसर्पिणी (उत्सर्पिणी) और पुद्‌गलपरावर्तन रूपकाल को विभागनिष्पन्न कालप्रमाण कहते हैं।

365. (Q.) What is this *Vibhag nishpanna kaal pramana* (fragmentary standard of measurement of time) ?

(Ans.) The (examples of) *Vibhag nishpanna kaal pramana* (fragmentary standard of measurement of time) are as follows—

Time expressed as—*Samaya, Avalika, Muhurt, Divas, Ahoratra, Paksh, Maas, Samvatsar, Yug, Palyopam, Sagar, Avasarpini* (and *Utsarpini*) and *Pudgal Paravartan (Kaal)*.

समय का निरूपण

३६६. से किं तं समए ?

समयस्स णं परूवणं करिस्सामि–से जहाणामए तुण्णागदारए सिया तरुणे बलवं जुगवं जुवाणे अप्पातंके थिरग्गहत्थे दढपाणि–पाय–पासपिट्ठंतरोरुपरिणते तलजमलजुयल–परिघणिभबाहू चम्मेट्ठग–दुहण–मुट्ठियसमाहयनिचियगत्तकाये लंघण–पवण–जइणवायामसमत्थे उरस्सबलसमण्णागए छेए दक्खे पत्तट्ठे कुसले मेहावी निउणे निउणसिप्पोवगए एगं महतिं पडसाडियं वा पट्टसाडियं वा गहाय सयराहं हत्थमेत्तं ओसारेज्जा।

तत्थ चोयए पण्णवयं एवं वयासी–

जेणं कालेणं तेणं तुण्णागदारएणं तीसे पडसाडियाए वा पट्टसाडियाए वा सयराहं हत्थमेत्ते ओसारिए से समए भवइ ?

नो इणमट्ठे समट्ठे ?

कम्हा ?

जम्हा संखेज्जाणं तंतूणं समुदयसमितिसमागमेणं पडसाडिया निप्पज्जइ, उवरिल्लम्मि तंतुम्मि अच्छिण्णे हेट्ठिल्ले तंतूणं छिज्जइ, अण्णम्मि काले उवरिल्ले तंतू छिज्जइ अण्णम्मि काले हिट्ठिल्ले तंतू छिज्जइ, तम्हा से समए न भवति।

एवं वयंतं पण्णवगं चोयए एवं वयासी–

जेणं कालेणं तेणं तुण्णागदारएणं तीसे पडसाडियाए वा पट्टसाडियाए वा उवरिल्ले तंतू छिण्णे से समए ?

ण भवति।

कम्हा ?

जम्हा संखेज्जाणं पम्हाणं समुदयसमितिसमागमेणं एगे तंतू निप्फज्जइ, उवरिल्ले पम्हम्मि अच्छिण्णे हेट्ठिल्ले पम्हे न छिज्जति, अण्णम्मि काले उवरिल्ले पम्हे छिज्जति अण्णम्मि काले हेट्ठिल्ले पम्हे छिज्जति, तम्हा से समए ण भवति।

एवं वदंतं पण्णवगं चोयए एवं वयासी–

जेणं कालेणं तेणं तुण्णागदारएणं तस्स तंतुस्स उवरिल्ले पम्हे छिण्णे से समए ?

ण भवति।

कम्हा ?

जम्हा अणंताणं संघाताणं समुदयसमितिसमागमेणं एगे पम्हे णिप्फज्जइ, उवरिल्ले संघाते अविसंघातिए हेट्ठिल्ले संघाते ण विसंघाडिज्जति, अण्णम्मि काले उवरिल्ले संघाए विसंघातिज्जइ अण्णम्मि काले हेट्ठिल्ले संघाए विसंघातिज्जइ, तम्हा से समए ण भवति। एत्तो वि णं सुहुमतराए समए पण्णत्ते समणाउसो !

३६६. **(प्र.)** वह समय का स्वरूप क्या है?

(उ.) मैं समय की प्ररूपणा करूँगा–

जैसे–कोई तुन्नवाय (रफूगर जुलाहा या दर्जी) का पुत्र है। वह तरुण, बलवान्, युगवान (तीसरे–चौथे आरे में जन्मा हुआ) युवा, स्वस्थ और सधे हुए हाथों वाला है, उसके हाथ–पाँव, पार्श्व, पृष्ठान्तर (पसली) और उरु (जंघाएँ) सुदृढ़ और विकसित हैं। सम श्रेणी में स्थित दो ताल वृक्ष और परिघा (कपाट की अर्गला) के समान (सुदृढ़) जिसकी भुजाएँ हैं। चर्मेष्टक (व्यायाम करने का चमड़े का उपकरण), पाषाण, मुद्गर और मुट्ठी के व्यायामों से जिसके शरीर के पुट्ठे आदि सुदृढ़ हैं। जो आन्तरिक उत्साह बल से युक्त है। लंघन (उछलना–Long jump), प्लवन (कूदना–हाई जम्प), धावन (दौड़ना) और व्यायाम करने में समर्थ है, छेक (प्रयोग की विधि जानने वाला), दक्ष (शीघ्र काम करने वाला), प्राप्तार्थ (प्रवीण), कुशल, मेधावी, निपुण और सूक्ष्म (प्रयोग को जानने वाला) शिल्प कला में निष्णात है। वह युवा एक बड़ी पटशाटिका (सूती साड़ी) अथवा पट्टशाटिका (रेशमी साड़ी या रेशमी वस्त्र) को लेकर अति शीघ्र एक हाथ प्रमाण जितना वस्त्र फाड़ डालता है।

यहाँ प्रेरक (शिष्य) ने प्रज्ञापक (गुरु) से इस प्रकार पूछा–

जितने समय में उस तुन्नवाय पुत्र ने शीघ्र ही उस पटशाटिका या पट्टशाटिका को एक हाथ फाड़ डाला, क्या उतने काल को एक समय कहा जाता है?

(गुरु) ऐसा नहीं होता।

(शिष्य) क्यों नहीं होता?

(गुरु) क्योंकि संख्येय (अनेकानेक) तन्तुओं के समुदय, समिति (मिलन) और समागम से एक पटशाटिका तैयार होती है। उस शाटिका के ऊपर वाले तन्तु के छिन्न हुए बिना नीचे वाला तन्तु छिन्न नहीं होता, ऊपर का तन्तु दूसरे समय में छिन्न होता है और नीचे का दूसरे (भिन्न) समय में, इसलिए एक हाथ शाटिका फटने का काल 'समय' नहीं होता।

प्रज्ञापक (गुरु) के ऐसा कहने पर प्रेरक (शिष्य) ने इस प्रकार कहा–

जितने समय में उस तुन्नवाय पुत्र ने उस पटशाटिका या पट्टशाटिका के ऊपर वाले तन्तु का छेदन किया, क्या वह उतना काल समय होता है?

(गुरु) नहीं होता।

(गुरु) क्यों?

(गुरु) संख्येय पक्ष्मों (सूक्ष्म रेशों–धागों) के समुदय, समिति और समागम से एक तन्तु निर्मित होता है, ऊपर का पक्ष्म–रेशा छिन्न हुए बिना नीचे का पक्ष्म छिन्न नहीं होता। ऊपर का पक्ष्म दूसरे समय में छिन्न होता है और नीचे का दूसरे (भिन्न) समय में, इसलिए वह समय नहीं होता।

गुरु से शिष्य ने पुनः प्रश्न किया–

जितने समय में उस तुन्नवाय पुत्र ने उस तन्तु के ऊपर वाले पक्ष्म को छिन्न किया, क्या उतने काल को समय कहा जाये?

(गुरु) नहीं! उतना काल समय नहीं है।

(गुरु) क्यों?

(गुरु) कारण यह है कि अनन्त संघातों के समुदय, समिति और समागम से एक पक्ष्म निर्मित होता है, ऊपर का संघात जब तक नहीं बिखरता तब तक नीचे का संघात भी नहीं बिखरता। ऊपर का संघात दूसरे समय में बिखरता है और नीचे का दूसरे (भिन्न) समय में, इसलिए वह समय नहीं होता। हे आयुष्मान् श्रमण! समय इससे भी सूक्ष्मतर होता है।

विवेचन–सामान्य व्यवहार में हम जिसे सेकण्ड, मिनट, घण्टा, दिन–रात, महीना आदि काल कहते हैं, वास्तव में यह तो काल की स्थूल इकाईयाँ हैं। काल तो वह सूक्ष्म किन्तु व्यापक सत्ता है जिसके निमित्त से सभी द्रव्य वस्तुओं का परिणमन (परिवर्तन) सूक्ष्मतम स्तर पर अभिव्यक्त होता है। उसी परिणमन अथवा परिवर्तन के आधार पर ही काल का मापदण्ड स्थिर होता है। काल का सबसे सूक्ष्म या छोटा अंश समय है। जैसे परमाणु अविभाज्य है, वैसे ही समय भी अविभाज्य है।

जैन आचार्यों ने समय की परिभाषा करते हुए बताया है–उत्कृष्ट गति से एक परमाणु सटे हुए द्वितीय परमाणु तक जितने काल में जाता है, उस सूक्ष्म काल को समय कहते हैं। हम जिस सूक्ष्म से सूक्ष्म काल को पहचानते हैं, वह असंख्यात समयों का संघात है। सूत्र में तुन्नवाय (जुलाहे) के उदाहरण द्वारा अत्यन्त शीघ्रतापूर्वक वस्त्र छेदन का जो उदाहरण दिया है, वह स्थूल समय की पहचान है। इसलिए कहा है–**"एत्तो वि सुहुम तराए समए।"**–समय तो इससे भी अधिक सूक्ष्मतर होता है। पलक झपकने मात्र में असंख्यात समय बीत जाते हैं। आज के विज्ञान के अत्यन्त सूक्ष्म यंत्र भी समय के उस सूक्ष्म अंश को जानने में अब तक समर्थ नहीं हुए हैं। असंख्यात समयों से बनने वाली आवलिका आदि समय के विभागों का वर्णन अगले सूत्र में किया गया है।

SAMAYA

366. (Q.) What is this *Samaya* (ultimate fractional unit of time)?

(Ans.) I will define *Samaya* (ultimate fractional unit of time)—

For example, there is a son of a *tunnavaya* (weaver or tailor). He is young, strong and belongs to the right era (the third or the fourth epoch of the time cycle). He is youthful and healthy. He has steady hands and well developed and strong limbs, flanks, rib-cage and thighs. He has sturdy arms like a pair of level palm trees and the bolt of a large gate. The muscles and sinews have been rendered robust by regular exercises using *charmestak* (a leather equipment), stone, wooden club and fists. He is full of enthusiasm and inner strength. He is accomplished in leaping (long jump), jumping (high jump), sprinting and other exercises. He is skilled, agile, proficient, intelligent, accomplished, accurate and an exponent of precision in craftsmanship. Such young man takes a large piece of cotton or silk cloth and tears quickly one cubit length out of it.

At this point a disciple asks the teacher—

Is the time taken by that son of a tailor to quickly tear one cubit out of that large piece of cotton or silk cloth equal to one *Samaya* (ultimate fractional unit of time) ?

(Teacher) No, it is not so.

(Student) Why ?

(Teacher) Because one piece of cloth is produced by progressive assimilation of numerous integrations of many aggregates of infinite threads and without tearing the thread at the top, that at the bottom cannot be torn. Thus the thread at the top is torn at a moment that is different than the moment the bottom one is torn. Therefore, the time taken in tearing one cubit of cloth is not one *Samaya*.

At this statement by the teacher, the disciple asks—

Is the time taken by that son of a tailor to tear the thread at the top equal to one *Samaya* ?

(Teacher) No, it is not so.

(Student) Why ?

(Teacher) Because one thread is produced by progressive assimilation of numerous integrations of many aggregates of infinite fibres and without splitting the fibre at the top, that at the bottom cannot be split. Thus the fibre at the top is split at a

moment that is different than the moment the bottom one is split. Therefore, the time taken in tearing one thread is not one *Samaya*.

At this the disciple asks again—

Is the time taken by that son of a tailor to tear the fibre at the top equal to one *Samaya* ?

(Teacher) No, it is not so.

(Student) Why ?

(Teacher) Because one fibre is produced by progressive assimilation of numerous integrations of many aggregates of infinite *sanghats* (aggregates of ultimate-particles) and without disintegration of the *sanghat* at the top, that at the bottom does not disintegrate. Thus the *sanghat* at the top disintegrates at a moment that is different than the moment the bottom one disintegrates. Therefore, the time taken in tearing the fibre at the top is not one *Samaya*. O long lived *Shraman* ! *Samaya* is still very minute than this.

Elaboration—The terms like second, minute, hour, day-night, month, which we generally call time are in fact gross units of time. Time is that subtle but all pervading entity through which any and all transformations of all substances find expression at the subtlest level. The time scale is standardized on the basis of those changes or transformations. The smallest indivisible unit of time is called *Samaya*. As the ultimate-particle is indivisible so is *Samaya*, the ultimate fraction of time.

Defining *Samaya*, Jain *Acharyas* state that the time taken by one ultimate-particle in going to the adjacent ultimate-particle at optimum speed is called one *Samaya*. The smallest unit of time that we are able to recognize is an aggregate of uncountable *Samayas*. The example of a tailor tearing a piece of cloth here is related to gross *Samaya*. That is why it concludes with the statement that *Samaya* is still very minute than this. In a mere blink of eyes uncountable *Samayas* pass. Even the most modern scientific instruments have yet to actually measure that minute fraction of time. The following aphorism details the units of time such as *avalika* which is an aggregate of innumerable *Samayas*.

३६७. असंखेज्जाणं समयाणं समुदयसमितिसमागमेणं सा एगा आवलिय त्ति पवुच्चइ। संखेज्जाओ आवलियाओ ऊसासो। संखेज्जाओ आवलियाओ नीसासो।

हट्ठस्स अणवगल्लस्स निरुवकिट्ठस्स जंतुणो।
एगे ऊसास–नीसासे एस पाणु त्ति वुच्चति॥१॥

सत्त पाणूणि से थोवे सत्त थोवाणि से लवे।
लवाणं सत्तहत्तरिए एस मुहुत्ते वियाहिए॥२॥

तिण्णि सहस्सा सत्त य सयाणि तेहत्तरिं च उस्सासा।
एस मुहुत्तो भणिओ सव्वेहिं अणंतनाणीहिं॥३॥

एतेणं मुहुत्तपमाणेणं तीसं मुहुत्ता अहोरत्ते, पण्णरस अहोरत्ता पक्खो, दो पक्खा मासो, दो मासा उऊ, तिण्णि उऊ अयणं, दो अयणाइं संवच्छरे, पंच संवच्छरिए जुगे, वीसं जुगाइं वाससयं, दस वाससयाइं वाससहस्सं, सयं वाससहस्साणं वाससयसहस्सं, चउरासीई वासयसहस्साइं से एगे पुव्वंगे, चउरासीतिं पुव्वंगसतसहस्साइं से एगे पुव्वे, चउरासीइं पुव्वसयसहस्साइं से एगे तुडियंगे, चउरासीइं तुडियंगसयसहस्साइं से एगे तुडिए, चउरासीइं तुडियसयसहस्साइं से एगे अडडंगे, चउरासीइं अडडंगसयसहस्साइं से एगे अडडे, चउरासीइं अडडसयसहस्साइं से एगे अववंगे, चउरासीइं अववंगसयसहस्साइं से एगे अववे, चउरासीतिं अववसतसहस्साइं से एगे हूहुयंगे, चउरासीइं हूहुयंगसतसहस्साइं से एगे हूहुए, एवं उप्पलंगे उप्पले पउमंगे पउमे नलिणंगे नलिणे अत्थनिउरंगे अत्थनिउरे अउयंगे अउए णउयंगे णउए पउयंगे पउए चूलियंगे चूलिया, चउरासीतिं चूलियासयसहस्साइं से एगे सीसपहेलियंगे, चउरासीतिं सीसपहेलिंगसतसहस्साइं सा एगा सीसपहेलिया।

एताव ताव गणिए, एयावए चेव गणियस्स विसए, अतो परं ओवमिए।

३६७. असंख्यात समयों के समुदाय समिति के संयोग से (असंख्यात समयों के समुदाय रूप संयोग से) एक आवलिका होती है। संख्यात आवलिकाओं का एक उच्छ्वास और संख्यात आवलिकाओं का एक निःश्वास होता है।

हृष्ट (प्रसन्न), वृद्धावस्था से रहित, शारीरिक रोग और मानसिक (क्लेश) व्याधि से रहित मनुष्य आदि के एक उच्छ्वास (श्वास को बाहर फेंकना–रेचक) निःश्वास (श्वास भीतर भरना–पूरक) के 'काल' को प्राण कहा है ॥१ ॥

ऐसे सात प्राणों का एक स्तोक, सात स्तोकों का एक लव और सतहत्तर लवों का एक मुहूर्त्त होता है ॥२ ॥

सर्वज्ञ–अनन्त ज्ञानियों ने तीन हजार सात सौ तिहत्तर (३,७७३) उच्छ्वास–निःश्वासों का एक मुहूर्त्त बताया है ॥३ ॥

इस मुहूर्त्त प्रमाण से तीस मुहूर्त्तों का एक अहोरात्र (दिन-रात) होता है, पन्द्रह अहोरात्र का एक पक्ष, दो पक्षों का एक मास, दो मासों की एक ऋतु, तीन ऋतुओं का एक अयन, दो अयनों का एक संवत्सर (वर्ष), पाँच संवत्सर का एक युग और बीस युग का वर्षशत (एक सौ वर्ष) होता है। दस सौ वर्षों का एक सहस्र वर्ष, सौ सहस्र वर्षों का एक लक्ष (लाख) वर्ष होता है, चौरासी लाख वर्षों का एक पूर्वांग, चौरासी लाख पूर्वांगों का एक पूर्व, चौरासी लाख पूर्वों का एक त्रुटितांग, चौरासी लाख त्रुटितांगों का एक त्रुटित, चौरासी लाख त्रुटितों का एक अडडांग, चौरासी लाख अडडांगों का एक अडड, चौरासी लाख अडडों का एक अववांग, चौरासी लाख अववांगों का एक अवव, चौरासी लाख अववों का एक हूहुअंग, चौरासी लाख हूहुकांगों का एक हूहुक, इसी प्रकार उत्पलांग, उत्पल, पद्मांग, पद्म, नलिनांग, नलिन, अच्छनिकुरांग, अच्छनिकुर, अयुतांग, अयुत, नयुतांग, नयुत, प्रयुतांग, प्रयुत, चूलिकांग, चूलिका, चौरासी लाख चूलिकाओं का एक शीर्षप्रहेलिकांग होता है एवं चौरासी लाख शीर्षप्रहेलिकांगों की एक शीर्षप्रहेलिका होती है।

यहाँ तक गणित (गणना) है। इतना ही गणित का विषय है, इसके आगे उपमा काल प्रवृत्त होता है। अर्थात् इससे आगे गणना करने के लिए उपमा का आश्रय लिया जाता है।

AGGREGATES OF SAMAYA

367. Progressive assimilation of numerous integrations of many aggregates of infinite *Samayas* make one *avalika.* Countable *avalikas* make one *uchhavas* (inhalation) and countable *avalikas* also make one *nishvas* (exhalation).

The duration of one *uchhavas* (inhalation) and one *nishvas* (exhalation) of a person who is happy, unaffected by dotage and free of physical and mental ailments is called one *pran* (breath). (1)

Seven *prans* make one *stoka,* seven *stokas* make one *lava* and seventy seven *lavas* make one *muhurt* (a unit of time equal to 48 minutes). (2)

As said by the omniscients three thousand seven hundred seventy three *uchhavas-nishvas* (inhalation-exhalations) make one *muhurt.* (3)

By the standard of this *muhurt,* thirty *muhurts* make one *ahoratra* (day and night), fifteen *ahoratras* (day and night) make one *paksha* (fortnight), two *pakshas* make one *maas* (month), two *maas* make one *ritu* (season), three *ritus* make one *ayan* (the time from one solstice to another; six months), two *ayans* make one *samvatsar* (year), five *samvatsars* make one *yug* and twenty *yugs* make one *varshashat* (century). Ten *varshashat* make one *varshasahasra* (millennium) and one hundred *varshasahasra* make one *varshashatsahasra,* 8.4 million *varsh* make one *purvanga,* 8.4 million *purvangas* make one *purva,* 8.4 million *purvas* make one *trutitanga,* 8.4 million *trutitanga* make one *trutit,* 8.4 million *trutit* make one *adadanga,* 8.4 million *adadanga* make one *adada,* 8.4 million *adada* make one *avavanga,* 8.4 million *avavanga* make one *avava,* 8.4 million *avava* make one *huhukanga,* 8.4 million *huhukanga* make one *huhuka,* the same process continues to include *utpalanga, utpala, padmanga, padma, nalinanga, nalina, achhanikuranga, achhanikura, ayutanga, ayut, nayutanga, nayuta, prayutanga, prayuta, chulikanga, chulika* and still further 8.4 million *chulika* make one *sheershaprahelikanga* and 8.4 million *sheershaprahelikanga* make one *sheershaprahelika.* (for more details see Illustrated Anuyogdvar, Part I, p. 289)

Thus far goes arithmetic or numerical counting. Only this much is the scope of mathematics and beyond this metaphoric time scale comes into play. In other words, beyond this metaphors are used to express the measure of time.

औपमिक कालप्रमाणनिरूपण

३६८. से किं तं ओवमिए ?

ओवमिए दुविहे पण्णत्ते। तं जहा–१. पलिओवमे य, २. सागरोवमे य।

३६८. (प्र.) औपमिक काल क्या है ?

(उ.) औपमिक (काल) दो प्रकार का कहा है-(१) पल्योपम, और (२) सागरोपम।

विवेचन-जैन काल-मीमांसा में काल दो प्रकार का है-

(१) **गणित विषयक काल**-इसका अन्तिम बिन्दु शीर्षप्रहेलिका है। इसके आगे गणित का प्रयोग नहीं होता है, यद्यपि इसके आगे का काल भी संख्यात काल ही है, किन्तु उसका उपयोग साधारण ज्ञानी नहीं कर सकते इसलिए उसे उपमा द्वारा समझाया गया है।

(२) **औपमिक काल**-केवल उपमा के द्वारा जिसका वर्णन किया जाये वह है औपमिक काल। वह दो प्रकार का है-पल्योपम और सागरोपम। पल्य (धान्य को भरने का गड्ढा या कोठा) की उपमा के द्वारा जिस कालमान का वर्णन किया जाये उसे पल्योपम और सागर (समुद्र) की उपमा द्वारा जिसका स्वरूप समझाया जाये उसे सागरोपम काल कहते हैं। (विशेष तालिका अनुयोगद्वार, भाग १, पृ. २८९ पर देखें)

चूर्णिकार ने बताया है-संव्यवहारकाल से प्रथम पृथ्वी के नैरयिकों, भवनपतियों, व्यंतरों, भरत तथा ऐरवत क्षेत्र के सुषम-दुःषम काल के पश्चिम भाग के मनुष्यों और तिर्यंचों के आयुष्य का माप किया जाता है।

अन्तर्मुहूर्त्त से पूर्वकोटि तक की संख्या का उपयोग मनुष्यों और तिर्यंचों के धर्माचरण काल के सन्दर्भ में आयुष्य परिमाण के लिए किया जाता है। जैसे-किसी मनुष्य का आयुष्य करोड़ पूर्व का हो और वह नौ वर्ष की अवस्था में मुनि बने तो वह कुछ न्यून करोड़ पूर्व तक धर्म की आराधना करता है।

त्रुटित से लेकर शीर्षप्रहेलिका तक की संख्या का उपयोग नरक, भवनपति और व्यन्तर देवों का आयुष्य परिमाण जानने के लिए किया जाता है। (तुलनात्मक विस्तृत चर्चा के लिए देखें अनु. महाप्रज्ञ, पृ. २७८-२८०)

METAPHORIC TIME

368. (Q.) What is this metaphoric time ?

(Ans.) Metaphoric time is of two kinds—(1) *Palyopam* (metaphor of silo), and (2) *Sagaropam* (metaphor of a sea).

Elaboration—The Jains have made two divisions of time-scale—

(a) Numerical time scale—Which is arithmetically countable. It has *sheershaprahelika* as the last point beyond which arithmetic is not applicable although the time is considered countable. However, actual counting beyond this point cannot be done by normal mundane scholars. That is why it is explained with the help of metaphors.

(b) Metaphoric time scale—That which can be described only with the help of metaphors is called metaphoric time. This, in turn, is also of

two kinds—*Palyopam* and *Sagaropam*. Period of time described by using a *palya* (a large pit for storing grains or a silo) is called *Palyopam*. Where sea is used as a metaphor it is called *Sagaropam*. (for more details see Illustrated Anuyogdvar, Part I, p. 289)

The commentator *(Churni)* informs that the numerical time scale is used to measure the life-span of the infernal beings of the first hell, *Bhavanpati* (abode-dwelling) and *Vyantar* (interstitial) gods and human beings and animals of Bharat and Airavat area during the latter part of the *Sukham-dukham* epoch.

The numbers from *antar-muhurt* (less than a *muhurt*) to *Purva koti* are used to express the life-span of human beings and animals in context of the period of adhering to religious conduct. For example—That particular person practiced religion for a little less than a crore *purva*. This statement indicates that his life-span was a crore *purva* and he got initiated at some early age, say of nine years.

The numbers from *trutit* to *sheershaprahelika* are used to measure the life-span of infernal beings, *Bhavanpati* (abode-dwelling) and *Vyantar* gods. (For a more detailed and comparative discussion refer to *Anuogadaraim* by Acharya Mahaprajna, p. 278-280)

पल्योपम–सागरोपमप्ररूपण

३६९. से किं तं पलिओवमे ?

पलिओवमे तिविहे पण्णत्ते। तं जहा– १. उद्धारपलिओवमे य, २. अद्धापलिओवमे य, ३. खेत्तपलिओवमे य।

३६९. (प्र.) पल्योपम किसे कहते हैं ?

(उ.) पल्योपम के तीन प्रकार हैं–(१) उद्धारपल्योपम, (२) अद्धापल्योपम, और (३) क्षेत्रपल्योपम।

PALYOPAM AND SAGAROPAM

369. (Q.) What is this *Palyopam* (metaphor of silo) ?

(Ans.) *Palyopam* (metaphor of silo) is of three kinds—(1) *Uddhar Palyopam*, (2) *Addha Palyopam*, and (3) *Kshetra Palyopam*.

३७०. से किं तं उद्धारपलिओवमे ?

उद्धारपलिओवमे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा–सुहुमे य वावहारिए य।

३७०. (प्र.) उद्धारपल्योपम किसे कहते हैं ?

(उ.) उद्धारपल्योपम के दो प्रकार हैं, यथा-सूक्ष्म उद्धारपल्योपम और व्यावहारिक उद्धारपल्योपम।

विवेचन-इन सूत्रों में औपम्यकाल के जो भेद किये हैं वे निम्न तालिका से स्पष्ट समझे जा सकते हैं-

औपम्यकाल-(१) पल्योपम, (२) सागरोपम

(१) **पल्योपम**-(१) उद्धारपल्योपम-(क) सूक्ष्म, और (ख) व्यवहार

(२) अद्धापल्योपम-(क) सूक्ष्म, और (ख) व्यवहार

(३) क्षेत्रपल्योपम-(क) सूक्ष्म, और (ख) व्यवहार

चूर्णिकार ने तीनों की व्याख्या निम्न प्रकार की है-

(१) जिस काल में बालाग्र अथवा बालखण्डों का एक समय में एक की गति से उद्धार (अपहरण) किया जाता है, वह **उद्धारपल्योपम** कहलाता है। (सूत्र ३७२)

(२) जिस काल में सौ वर्ष में एक बालाग्र या बालखण्ड की गति से उद्धार किया जाता है, वह **अद्धापल्योपम** कहलाता है। (सूत्र ३७८)

(३) जो कालखण्ड आकाश-प्रदेशों के (क्षेत्र) अवहार (निकालने) से मापा जाता है, उसे **क्षेत्रपल्योपम** कहा जाता है। (सूत्र ३८४)

(क) जिसमें एक-एक बालाग्र के असंख्यात सूक्ष्म खण्ड करने की कल्पना की जाती है और एक-एक खण्ड समय-समय पर निकाला जाता है, वह सूक्ष्म उद्धारपल्योपम होता है।

(ख) जिसमें स्थूल बालाग्र जैसे थे वैसे ही उनका अवहरण किया जाता है, वह व्यावहारिक उद्धारपल्योपम होता है। (अनु. चूर्णि तथा वृत्ति, पत्र १८२)

इनमें से व्यावहारिक उद्धारपल्योपम तथा सागरोपम व्यावहारिक अद्धापल्योपम-सागरोपम का कोई प्रयोजन नहीं है। सूक्ष्म उद्धारपल्योपम तथा सागरोपम से द्वीप समुद्रों का प्रमाण बताया जाता है तथा सूक्ष्म अद्धापल्योपम तथा सागरोपम से देव, नारक आदि चार गतियों के जीवों की आयु को भान किया जाता है।

पल्योपम से दस कोटाकोटि गुणा अधिक अर्थात् दस कोटाकोटि प्रमाण पल्य जब खाली हो जाये तब एक सागरोपम होता है।

अगले सूत्रों की व्याख्या में चूर्णिकार ने बालाग्र का प्रतिपादन दो दृष्टियों से किया है-

(१) **विषय-वस्तु की दृष्टि से**-एक स्वस्थ मनुष्य अपनी आँखों से किसी पौद्गलिक वस्तु को देखता है, उसमें असंख्येय भाग जितना बालाग्र होता है।

(२) क्षेत्र की दृष्टि से–सूक्ष्म पनक (फफूँद) के जीवों का शरीर जितने क्षेत्र को रोकता है वह उसकी अवगाहना होती है, उसके जीवों की शरीरावगाहना के असंख्य गुण क्षेत्र जितनी अवगाहना वाला एक बालाग्र होता है। एक बालाग्र पर्याप्त बादर पृथ्वीकायिक जीव के शरीर जितना परिमाण वाला होता है–(चूर्णि, पृ. ५८)

उक्त परिभाषाओं को समझने पर आगे का विषय समझना सुगम हो जायेगा।

370. (Q.) What is this *Uddhar Palyopam* ?

(Ans.) *Uddhar Palyopam* is of two kinds—*Sukshma Uddhar Palyopamm* and *Vyavahar Uddhar Palyopam.*

Elaboration—The aforesaid kinds of Metaphoric time scale are better understood with the help of following table—

Metaphoric time scale—(1) *Palyopam,* (2) *Sagaropam*

(1) *Palyopam*—

(1) *Uddhar Palyopam*—(a) *Sukshma*, and (b) *Vyavahar*

(2) *Addha Palyopam*—(a) *Sukshma*, and (b) *Vyavahar*

(3) *Kshetra Palyopam*—(a) *Sukshma*, and (b) *Vyavahar*

The commentator *(Churni)* has defined these terms as follows—

(1) The time measured by removal *(uddhar)* of *balagras* (hair-tip) or *balakhand* (innumerable pieces of a *balagra*) at the rate of one every *Samaya* is *Uddhar Palyopam.* (aphorism 372)

(2) The time measured by removal of *balagras* (hair-tip) or *balakhand* (innumerable pieces of a *balagra*) at the rate of one in one hundred years is *Addha Palyopam.* (aphorism 378)

(3) The time measured by removal of all space-points is called *Kshetra Palyopam.* (aphorism 378)

(a) In the said process of removal when one *balagra* (hair-tip) is presumed to have been cut into innumerable minute pieces and one such piece is removed every *Samaya* the unit is called *Sukshma Uddhar Palyopam.*

(b) In the said process of removal when one *balagra* is removed as it is in every *Samaya* the unit is called *Vyavaharik Uddhar Palyopam.* (*Churni* and *Vritti,* leaf 182)

Of these *Vyavahar Uddhar* and *Addha Palyopam* and *Sagaropam* have no practical use. *Sukshma Uddhar Palyopam* and *Sagaropam* are used to measure the dimensions of continents and oceans. *Sukshma Addha Palyopam* and *Sagaropam* are used to measure the life-span of beings of four dimensions including divine and infernal.

Ten *kodakodi* (10^{14}) *Palyopam* make one *Sagaropam.* In other words the time taken in emptying ten *kodakodi* (10^{14}) aforesaid *palyas* (silos) is one *Sagaropam.*

In the elaboration of following aphorisms the commentator (*Churni*) has defined *Balagra* from two viewpoints—

(1) From material viewpoint—Innumerable fraction of the time taken by a normal healthy person in seeing a material thing is one *Balagra.*

(2) From are a view point—The area occupied by a single being of the minute mildew class is called its *avagahana.* Innumerable times of this is the *avagahana* of a *balagra.* One *balagra* is of the size of the body of a *Paryapt Badar Prithvikayik* being (fully developed gross earth-bodied being) (*Churni,* p. 58)

Knowlege of these definition will make the following discussion easily understandable.

३७१. तत्थ णं जे से सुहुमे से ठप्पे।

३७१. इन दोनों में सूक्ष्म उद्धारपल्योपम अभी स्थापनीय है। (इसकी व्याख्या आगे सूत्र ३७४ पर की गई है।)

371. Of these two, *Sukshma Uddhar Palyopam* is to be ensconced for now. (This is discussed in aphorism 374)

व्यावहारिक उद्धारपल्योपम

३७२. तत्थ णं जे से वावहारिए से जहानामए पल्ले सिया–जोयणं आयाम–विक्खंभेणं जोयणं उड्ढं उच्चत्तेणं, तं तिगुणं सविसेसं परिरएणं।

से णं एगाहिय–बेहिय–तेहिय जाव उक्कोसेणं सत्तरत्तपरूढाणं। सम्मट्ठे सन्निचिते भरिए वालग्गकोडीणं॥१॥

ते णं वालग्गा नो अग्गी डहेज्जा, नो वाऊ हरेज्जा, नो कुच्छेज्जा, नो पलिविद्धंसिज्जा णो पूइत्ताए हव्वमागच्छेज्जा। तओ णं समए समए एगमेगं वालग्गं अवहाय जावतिएणं कालेणं से पल्ले खीणे नीरए निल्लेवे णिट्ठिते भवति, से तं वावहारिए उद्धारपलिओवमे।

एएसिं पल्लाणं कोडाकोडी हवेज्ज दसगुणिता।
तं वावहारियस्स उद्धारसागरोवमस्स एगस्स भवे परीमाणं॥२॥

३७२. व्यावहारिक उद्धारपल्योपम का स्वरूप इस प्रकार है-

जैसे-कोई पल्य (कोठा या धान्य नापने का पात्र) उत्सेधांगुल से एक योजन लम्बा, एक योजन चौड़ा और एक योजन ऊँचा एवं कुछ अधिक तिगुनी परिधि वाला है, वह एक पल्य है। उस पल्य को (सिर का मुंडन कराने के बाद) एक दिन, दो दिन, तीन दिन यावत् अधिक से अधिक सात दिन के उगे हुआ बालाग्रों (बाल के अग्र भाग) से इस प्रकार ठसाठस घनीभूत करके ऊपर तक भरा जाय कि फिर उन बालाग्रों को अग्नि जला न सके, वायु उड़ा न सके, न वे सड़-गल सकें, न उनका विध्वंस हो सके, न उनमें दुर्गन्ध उत्पन्न हो-सड़ें नहीं; तत्पश्चात् उसमें से प्रत्येक समय में एक-एक बालाग्र निकाला जाये तो जितने काल में वह कोठा खाली हो, नीरज (रजरहित), निर्लेप और निष्ठित (पूर्ण खाली) हो जाये, उतने काल को व्यावहारिक उद्धारपल्योपम कहते हैं।

ऐसे दस कोडाकोडी पल्योपमों का एक व्यावहारिक उद्धारसागरोपम होता है॥१, २॥

VYAVAHARIK UDDHAR PALYOPAM

372. *Vyavaharik Uddhar Palyopam* is described as follows—

For example there is a silo one *yojan* long, one *yojan* wide, one *yojan* high and with a circumference of a little more than three times (three *yojans*). That silo is filled to the brim with hair-tips grown in one day, two days, three days, up to a maximum of seven days (after shaving the head). The hair are tightly packed into a solid mass so that afterwards they cannot be burnt by fire or swept by air and are neither decayed, destroyed or putrefied. Now, *Vyavaharik Uddhar Palyopam* is the total time taken in completely emptying this silo by taking out one hair-tip at a time every *Samaya* and sweeping it clean and free from any sand particles, slime and even odour.

१ योजन

चित्र परिचय ९	Illustration No. 9

उद्धार पल्योपम नापने का काल्पनिक चित्र

एक योजन लम्बा, एक योजन चौड़ा और एक योजन गहरा कुएँ के आकार वाला कोठा, अति सूक्ष्म बालों से ठसाठस भरा हुआ है। इसमें से प्रत्येक समय में एक-एक बालाग्र निकालने पर जितने समय में यह कोठा खाली हो जाये उतने समय को व्यावहारिक उद्धार पल्योपम कहते हैं। —सूत्र ३७२, पृष्ठ १६२

MEASURING UDDHAR PALYOPAM

A well-shaped silo one *yojan* long, one *yojan* wide, one *yojan* deep is filled to the brim with extremely minute hair tips tightly packed. Now, *Vyavaharik Uddhar Palyopam* is the total time taken in completely emptying this silo by taking out one hair-tip at a time every *Samaya*.

—*Aphorism 372, p. 162*

Such ten *kodakodi* (10^{14}) *Vyavaharik Uddhar Palyopam* make one *Vyavaharik Uddhar Sagaropam.* (1, 2)

३७३. एतेहिं वावहारियउद्धारपलिओवम–सागरोवमेहिं किं पयोयणं ?

एतेहिं वावहारियउद्धारपलिओवम–सागरोवमेहिं णत्थि किंचि पओयणं, केवलं पण्णवणा पण्णविज्जति। से तं वावहारिए उद्धारपलिओवमे।

३७३. (प्र.) इन व्यावहारिक उद्धारपल्योपम और सागरोपम का क्या प्रयोजन है ?

(उ.) इन व्यावहारिक उद्धारपल्योपम और सागरोपम से किसी प्रयोजन की सिद्धि नहीं होती है। ये दोनों केवल प्ररूपणामात्र के लिए हैं। यह व्यावहारिक उद्धारपल्योपम का स्वरूप है।

373. (Q.) What is the purpose of these *Vyavaharik Uddhar Palyopam* and *Sagaropam* ?

(Ans.) No purpose is served by these *Vyavaharik Uddhar Palyopam* and *Sagaropam.* They have just been mentioned as abstract theoretical presentation.

This concludes the description of *Vyavaharik Uddhar Palyopam.*

सूक्ष्म उद्धारपल्योपम

३७४. से किं तं सुहुमे उद्धारपलिओवमे ?

सुहुमे उद्धारपलिओवमे से जहानामए पल्ले सिया–जोयणं आयाम–विक्खंभेणं, जोयणं उड्ढं उच्चत्तेणं, तं तिगुणं सविसेसं परिक्खेवेणं, से णं पल्ले एगाहिय–बेहिय–तेहिय, उक्कोसेणं सत्तरत्तपरूढाणं सम्मट्ठे सन्निचिते भरिते वालग्गकोडीणं। तत्थ णं एगमेगे वालग्गे असंखेज्जाइं खंडाइं कज्जति। ते णं वालग्गा दिट्ठीओगाहणाओ असंखेज्जतिभागमेत्ता सुहुमस्स पणगजीवस्स सरीरोगाहणाओ असंखेज्जगुणा। ते णं वालग्गा णो अग्गी डहेज्जा, णो वाऊ हरेज्जा, णो कुच्छेज्जा, णो पलिविद्धंसेज्जा, णो पूइत्ताए हव्वमागच्छेज्जा। तओ णं समए एगमेगं वालग्गं अवहाय जावतितेणं कालेणं से पल्ले खीणे नीरए निल्लेवे णिट्ठिए भवति, से तं सुहुमे उद्धारपलिओवमे।

एतेसिं पल्लाणं कोडाकोडी हवेज्ज दसगुणिया।
तं सुहुमस्स उद्धारसागरोवमस्स उ एगस्स भवे परीमाणं॥३॥

३७४. (प्र.) सूक्ष्म उद्धारपल्योपम क्या है ?

(उ.) सूक्ष्म उद्धारपल्योपम का स्वरूप इस प्रकार है-

धान्य के पल्य के समान कोई एक योजन लम्बा, एक योजन चौड़ा और एक योजन गहरा एवं कुछ अधिक तीन योजन की परिधि वाला पल्य हो। इस पल्य को एक, दो, तीन यावत् उत्कृष्ट सात दिन तक के उगे हुए बालाग्रों से खूब ठसाठस भरा जाये और उन एक-एक बालाग्र के (कल्पना से) ऐसे असंख्यात-असंख्यात खण्ड किये जायें जो निर्मल चक्षु से देखने योग्य पदार्थ की अपेक्षा भी असंख्यातवें भाग प्रमाण हों और सूक्ष्म पनक जीव की शरीरावगाहना से असंख्यात गुणे हों, जिन्हें अग्नि जला न सके, वायु उड़ा न सके, जो सड़-गल न सके, नष्ट न हो सके और न दुर्गन्धित हो सके। फिर समय-समय में उन बालाग्र खण्डों को निकालते-निकालते जितने काल में वह पल्य बालाग्रों की रज से रहित, बालाग्रों के संश्लेष से रहित और पूरी तरह खाली हो जाये, उतने काल को सूक्ष्म उद्धारपल्योपम कहते हैं।

इस दस कोटाकोटि सूक्ष्म उद्धारपल्योपमों का एक सूक्ष्म उद्धार सागरोपम होता है ॥३ ॥

SUKSHMA UDDHAR PALYOPAM

374. (Q.) What is this *Sukshma Uddhar Palyopam* ?

(Ans.) *Sukshma Uddhar Palyopam* is described as follows—

For example there is a silo one *yojan* long, one *yojan* wide, one *yojan* deep and with a circumference of a little more than three *yojans*. That silo is filled to the brim with hair-tips grown in one day, two days, three days, up to a maximum of seven days (after shaving the head). The hair are tightly packed into a solid mass. Now imagine one *balagra* (hair-tip) to have been cut into innumerable minute pieces that are equivalent to an innumerable fraction of the most minute visible particle and innumerable times the area occupied by a single being of the minute mildew class. And these pieces of hair-tips cannot be burnt by fire or swept by air and are neither decayed, destroyed or putrefied. Now, *Sukshma Uddhar Palyopam* is the total time taken in completely emptying this silo by taking out one such piece of hair-tip at a time every *Samaya* and sweeping it clean and free from any sand particles, slime and even odour.

Such ten *kodakodi* (quadrillion) (10^{14}) *Sukshma Uddhar Palyopam* make one *Sukshma Uddhar Sagaropam.* (3)

३७५. एएहिं सुहुमेहिं उद्धारपलिओवम–सागरोवमेहिं किं पओयणं ?

एतेहिं सुहुमेहिं उद्धारपलिओवम–सागरोवमेहिं दीव–समुद्दाणं उद्धारे घेप्पति।

३७५. (प्र.) इस सूक्ष्म उद्धारपल्योपम और सागरोपम से क्या प्रयोजन है ?

(उ.) सूक्ष्म उद्धारपल्योपम और सागरोपम से द्वीप–सनुद्रों का उद्धारप्रमाण किया जाता है–

375. (Q.) What is the purpose of these *Sukshma Uddhar Palyopam* and *Sagaropam* ?

(Ans.) *Sukshma Uddhar Palyopam* and *Sagaropam* are used to measure the dimension (time of emptying) of continents and oceans.

३७६. केवतिया णं भंते ! दीव–समुद्दा उद्धारेण पन्नत्ता ?

गोयम ! जावइया णं अड्ढाइज्जाणं उद्धारसागरोवमाणं उद्धारसमया एवतिया णं दीव–समुद्दा उद्धारेणं पण्णत्ता। से तं सुहुमे उद्धारपलिओवमे। से तं उद्धारपलिओवमे।

३७६. (प्र.) भंते ! उद्धारप्रमाण से कितने द्वीप–समुद्रों का प्रतिपादन होता है ?

(उ.) गौतम ! अढाई उद्धार सूक्ष्म सागरोपम के जितने उद्धार समयों के बराबर द्वीप समुद्र हैं। उतने द्वीप–समुद्र उद्धार से कहे जाते हैं। यही सूक्ष्म उद्धारपल्योपम का और उद्धारपल्योपम का स्वरूप है।

376. (Q.) How many continents and oceans are defined with this *Uddhar* standard.

(Ans.) There are two and a half times *Sukshma Uddhar Sagaropam* number of continents and oceans. This number of continents and oceans is defined with this *Uddhar* standard.

This concludes the description of *Sukshma Uddhar Palyopam.* This also concludes the description of *Uddhar Palyopam.*

अद्धापल्योपम–सागरोपमनिरूपण

३७७. से किं तं अद्धापलिओवमे ?

अद्धापलिओवमे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा–१. सुहुमे य, २. वावहारिए य।

३७७. **(प्र.)** अद्धापल्योपम का क्या स्वरूप है ?

(उ.) अद्धापल्योपम के दो भेद हैं-(१) सूक्ष्म अद्धापल्योपम, और (२) व्यावहारिक अद्धापल्योपम।

ADDHA PALYOPAM—SAGAROPAM

377. (Q.) What is this *Addha Palyopam* ?

(Ans.) *Addha Palyopam* is of two kinds—(1) *Sukshma Addha Palyopam,* and (2) *Vyavaharik Addha Palyopamm.*

व्यावहारिक अद्धापल्योपम

३७८. तत्थ णं जे से सुहुमे से ठप्पे।

३७९. तत्थ णं जे से वावहारिए से जहानामए पल्ले सिया जोयणं विक्खंभेणं, जोयणं उड्ढं उच्चत्तेणं, तं तिगुणं सविसेसं परिक्खेवेणं, से णं पल्ले एगाहिय–बेहिय–तेहिय जाव भरिये वालग्गकोडीणं। ते णं वालग्गा नो अग्गी डहेज्जा, नो वाऊ हरेज्जा, नो कुच्छेज्जा, नो पलिविद्धंसेज्जा नो पूइत्ताए हव्वमागच्छेज्जा। ततो णं वाससते ते एगमेगं वालग्गं अवहाय जावइएणं कालेणं से पल्ले खीणे नीरए निल्लेवे निट्ठिए भवति, से तं वावहारिए अद्धापलिओवमे।

एएसिं पल्लाणं कोडाकोडी हविज्ज दसगुणिया।
तं वावहारियस्स अद्धासागरोवमस्स एगस्स भवे परीमाणं॥४॥

३७८-३७९. उनमें से सूक्ष्म अद्धापल्योपम अभी स्थापनीय है। (अर्थात् उसका वर्णन आगे सूत्र ३८२ में किया जायेगा।)

व्यावहारिक अद्धापल्योपम इस प्रकार है-

धान्य के पल्य के समान एक योजन लम्बा, एक योजन चौड़ा और एक योजन ऊँचा तथा कुछ अधिक तीन योजन की परिधि वाला कोई पल्य हो। उस पल्य को एक, दो, तीन दिवस यावत् सात दिवस के उगे हुए बालाग्रों से इस प्रकार ठूँस–ठूँसकर भरा जाये कि

उस पल्य में से सौ–सौ वर्ष के पश्चात् एक–एक बालाग्र निकालने पर जितने काल में वह पल्य उन बालाग्रों से रहित, रजरहित और निर्लेप एवं निष्ठित–पूर्ण रूप से खाली हो जाये, उतने काल को व्यावहारिक अद्धापल्योपम कहते हैं।

इन दस कोटाकोटि व्यावहारिक अद्धापल्योपमों का एक व्यावहारिक अद्धासागरोपम होता है ॥४॥

VYAVAHARIK ADDHA PALYOPAM

378-379. Of these two, *Sukshma Addha Palyopam* is to be ensconced for now. (This is discussed in aphorism 382.)

Vyavaharik Addha Palyopam is described as follows—

For example there is a silo one *yojan* long, one *yojan* wide, one *yojan* high and with a circumference of a little more than three *yojans*. That silo is filled to the brim with hair-tips grown in one day, two days, three days, up to a maximum of seven days (after shaving the head). The hair are tightly packed into a solid mass so that afterwards they cannot be burnt by fire or swept by air and are neither decayed, destroyed or putrefied. Now, *Vyavaharik Addha Palyopam* is the total time taken in completely emptying this silo by taking out one hair-tip at a time every hundred years and sweeping it clean and free from any sand particles, slime and even odour.

Such ten *kodakodi* (10^{14}) *Vyavaharik Addha Palyopam* make one *Vyavaharik Addha Sagaropam.* (4)

३८०. एएहिं वावहारिएहिं अद्धापलिओवम–सागरोवमेहिं किं पओयणं ?

एएहिं जाव नत्थि किंचिप्पओयणं, केवलं तु पण्णवणा पण्णविज्जति। से त्तं वावहारिए अद्धापलिओवमे।

३८०. (प्र.) व्यावहारिक अद्धापल्योपम और सागरोपम का क्या प्रयोजन है ?

(उ.) व्यावहारिक अद्धापल्योपम एवं सागरोपम से कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होता है। ये केवल प्ररूपणा के लिए हैं।

यह व्यावहारिक अद्धापल्योपम का स्वरूप है।

380. (Q.) What is the purpose of these *Vyavaharik Addha Palyopam* and *Sagaropam* ?

(Ans.) No purpose is served by these *Vyavaharik Addha Palyopam* and *Sagaropam*. They have just been mentioned as abstract theoretical presentation.

This concludes the description of *Vyavaharik Addha Palyopam.*

सूक्ष्म अद्धापल्योपम

३८१. से किं तं सुहुमे अद्धापलिओवमे ?

सुहुमे अद्धापलिओवमे से जहानामए पल्ले सिया–जोयणं आयाम–विक्खंभेणं, जोयणं उड्ढं उच्चत्तेणं, तं तिगुणं सविसेसं परिक्खेवेणं; से णं पल्ले एगाहिय–बेयाहिय–तेहिय जाव भरिए वालग्गकोडीणं। तत्थ णं एगमेगे वालग्गे असंखेज्जाइं खंडाइं कज्जति। ते णं वालग्गा दिट्ठीओगाहणाओ असंखेज्जति भागमेत्ता सुहुमस्स पणगजीवस्स सरीरोगाहणाओ असंखेज्जगुणा। ते णं वालग्गा णो अग्गी डहेज्जा, नो वाऊ हरेज्जा, नो कुच्छेज्जा, नो पलिविद्धंसेज्जा, नो पूइत्ताए हव्वमागच्छेज्जा। ततो णं वाससते वाससते गते एगमेगं वालग्गं अवहाय जावइएणं कालेणं से पल्ले खीणे नीरए निल्लेवे निट्ठिए भवति, से तं सुहुमे अद्धापलिओवमे।

एएसिं पल्लाणं कोडाकोडी हवेज्ज दसगुणिया।
तं सुहुमस्स अद्धासागरोवमस्स एगस्स भवे परीमाणं॥५॥

३८१. (प्र.) सूक्ष्म अद्धापल्योपम क्या है ?

(उ.) सूक्ष्म अद्धापल्योपम इस प्रकार है-एक योजन लम्बा, एक योजन चौड़ा, एक योजन ऊँचा एवं साधिक (कुछ न्यून षष्ठ भाग अधिक) तीन योजन की परिधि वाला एक पल्य हो। उस पल्य को एक, दो, तीन दिन के यावत् करोड़ों बालाग्रों से पूरी तरह भर दिया जाये। फिर उनमें से एक-एक बालाग्र के ऐसे असंख्यात-असंख्यात खण्ड किये जायें कि वे खण्ड दृष्टि के विषय में आने वाले पुद्गलों की अपेक्षा असंख्यात भाग मात्र हों और सूक्ष्म पनक जीव की शरीरावगाहना से असंख्यात गुणा अधिक हों। वे बालाग्र अग्नि से जल न सकें, वायु उन्हें उड़ा न सके, वे सड़-गल न सकें, उनका विध्वंस भी न हो सके और उनमें दुर्गन्ध भी उत्पन्न न हो सके। उन खण्डों में से सौ-सौ वर्ष के पश्चात् एक-

एक खण्ड को निकालने पर जितने समय में वह पल्य बालाग्र खण्डों से विहीन, नीरज, संश्लेषरहित और सम्पूर्ण रूप से निष्ठित-खाली हो जाये, उतने काल को सूक्ष्म अद्धापल्योपम कहते हैं।

इस अद्धापल्योपम को दस कोटाकोटि से गुणा करने से अर्थात् दस कोटाकोटि सूक्ष्म अद्धापल्योपमों का एक सूक्ष्म अद्धासागरोपम होता है ॥५॥

SUKSHMA ADDHA PALYOPAM

381. (Q.) What is this *Sukshma Addha Palyopam* ?

(Ans.) *Sukshma Addha Palyopam* is described as follows—

For example there is a silo one *yojan* long, one *yojan* wide, one *yojan* high and with a circumference of a little more than three *yojans*. That silo is filled to the brim with hair-tips grown in one day, two days, three days, up to a maximum of seven days (after shaving the head). The hair are tightly packed into a solid mass. Now imagine one *balagra* (hair-tip) to have been cut into innumerable minute pieces that are equivalent to an innumerable fraction of the most minute visible particle and innumerable times the area occupied by a single being of the minute mildew class. And these pieces of hair-tips cannot be burnt by fire or swept by air and are neither decayed, destroyed or putrefied. Now, *Sukshma Addha Palyopam* is the total time taken in completely emptying this silo by taking out one such piece of hair-tip at a time every hundred years and sweeping it clean and free from any sand particles, slime and even odour.

Such ten *kodakodi* (quadrillion) (10^{14}) *Sukshma Addha Palyopam* make one *Sukshma Addha Sagaropam*. (5)

३८२. एएहिं सुहुमेहिं अद्धापलिओवम-सागरोवमेहिं किं पओयणं ?

एतेहिं सुहुमेहिं अद्धापलिओवम-सागरोवमेहिं णेरतिय-तिरियजोणिय-मणूस-देवाणं आउयाइं मविज्जंति।

॥ काले प्रमाणे त्ति पयं सम्मत्तं ॥

३८२. (प्र.) इस सूक्ष्म अद्धापल्योपम और सागरोपम का क्या प्रयोजन है ?

(उ.) इस सूक्ष्म अद्धापल्योपम और सागरोपम से नारक, तिर्यंच, मनुष्य और देवों के आयुष्य का प्रमाण जाना जाता है।

॥ कालप्रमाणापद प्रकरण समाप्त ॥

382. (Q.) What is the purpose of these *Sukshma Addha Palyopam* and *Sagaropam* ?

(Ans.) *Sukshma Addha Palyopam* and *Sagaropam* are used to measure the life-span of infernal beings, animals, human beings and gods.

● END OF THE DISCUSSION ON KAAL PRAMANA ●

आयुस्थिति-प्रकरण
THE DISCUSSION ON LIFE-SPAN

नारकों की स्थिति का मान

३८३. (१) णेरइयाणं भंते ! केवतियं कालं ठिती पण्णत्ता ?

गो. ! जहन्नेणं दसवाससहस्साइं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं।

३८३. (१) (प्र.) भगवन् ! नैरयिक जीवों की स्थिति (आयु) कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! सामान्य रूप में (नारक जीवों की स्थिति) जघन्य दस हजार वर्ष की और उत्कृष्ट तैंतीस सागरोपम की है।

विवेचन—वृत्तिकार ने 'स्थिति' शब्द का अर्थ किया है–"**स्थीयते नारकादि भवेष्वनयेति स्थितिः।**"–अर्थात् जहाँ नरक आदि गतियों में जीव को आयुष्य कर्म भोगने के लिए स्थित रहना–रुकना पड़ता है, उस काल को स्थिति कहा है। जैसे कर्मग्रन्थों में आयुस्थिति, भवस्थिति, कायस्थिति और कर्मस्थिति यों चार प्रकार की स्थिति बताई है। यहाँ 'स्थिति' शब्द का भाव है जब तक जीव उस पर्याय में रहता है। (वृत्ति, पत्र १८४)। यहाँ क्रमशः २४ दण्डकों के जीवों की आयुस्थिति की चर्चा की गई है।

LIFE-SPAN OF INFERNAL BEINGS

383. (1) (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (stay in one place or state; life-span) of infernal beings ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span (of the infernal beings) is ten thousand years and the maximum is thirty three *Sagaropam*.

Elaboration—The commentator *(Vritti)* has explained the term *sthiti* as—the duration for which a being has to stay in a dimension of birth, like hell, as a consequence of *ayushya-karma* (life-span determining *karma*) is called *sthiti*. *Karma Granth* mentions four kinds of *sthiti*—*Ayu-sthiti*, *Bhava-sthiti*, *Kaya-sthiti* and *Karma-sthiti*. In simple terms *sthiti* is the duration for which a being lives in a specific state of birth; life-span. (*Vritti*, leaf 184). Here the life-span of beings in 24 *Dandaks* (places of suffering) have been discussed in proper order.

(२) रयणप्पभापुढविणेरइयाणं भंते ! केवतियं कालं ठिती पं. ? गो. ! जहन्नेणं दसवाससहस्साइं उक्कोसेणं एक्कं सागरोवमं, अपज्जत्तगरयणप्पभापुढविणेरइयाणं भंते ! केवतिकालं ठिती पं. ?

गो. ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्को. अंतो. पज्जत्तग जाव जह. दसवाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणइं, उक्कोसेणं सागरोवमं अंतोमुहुत्तूणं।

(२) (प्र.) भगवन् ! रत्नप्रभापृथ्वी के नारकों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट एक सागरोपम की है।

(प्र.) भगवन् ! रत्नप्रभापृथ्वी के अपर्याप्तक नारकों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! इनकी जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त प्रमाण की होती है।

(इसी प्रकार अपर्याप्तकों की स्थिति सभी नारकों की एक समान अन्तर्मुहूर्त्त प्रमाण समझना चाहिए।)

(प्र.) भगवन् ! रत्नप्रभापृथ्वी के पर्याप्तक नारकों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त न्यून दस हजार वर्ष की और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त न्यून एक सागरोपम की होती है।

(2) (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of infernal beings of the *Ratnaprabha* land (the first hell) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is ten thousand years and the maximum is one *Sagaropam.*

(Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of the underdeveloped infernal beings of the *Ratnaprabha* land ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is *antar-muhurt* (less than a *muhurt*) and the maximum is also *antar-muhurt.*

(In the same way the life-span of underdeveloped beings of all infernal lands is said to be *antar-muhurt.*)

(Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of the fully developed infernal beings of the *Ratnaprabha* land ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is one *antar-muhurt* less ten thousand years and the maximum is one *antar-muhurt* less one *Sagaropam.*

(३) सक्करपभापुढविणेरइयाणं भंते ! केवतिकालं ठिती पं. ? गो. जहन्नेणं सागरोवमं उक्कोसेणं तिण्णि सागरोवमाइं।

(३) (प्र.) भगवन् ! शर्कराप्रभापृथ्वी के नारकों की स्थिति कितनी है ?

(उ.) गौतम ! (सामान्य रूप में) शर्कराप्रभापृथ्वी के नारकों की जघन्य स्थिति एक सागरोपम और उत्कृष्ट तीन सागरोपम प्रमाण कही है।

(3) (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of the infernal beings of the *Sharkaraprabha* land (the second hell)?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is one *Sagaropam* and the maximum is three *Sagaropam.*

(४) एवं सेसपहासु वि पुच्छा भाणियव्वा–वालुयपभापुढविणेरइयाणं जह. तिण्णि सागरोवमाइं, उक्कोसेणं सत्त सागरोवमाइं।

पंकपभापुढविनेरइयाणं जह. सत्त सागरोवमाइं, उक्कोसेणं दस सागरोवमाइं।

धूमप्पभापुढविनेरइयाणं जह. दस सागरोवमाइं, उक्कोसेणं सत्तरस सागरोवमाइं।

तमपुढविनेरइयाणं भंते ! केवतिकालं ठिती पन्नत्ता ?

गो. ! जहन्नेणं सत्तरस सागरोवमाइं, उक्कोसेणं बावीसं सागरोवमाइं।

तमतमापुढविनेरइयाणं भंते ! केवतिकालं ठिती पन्नत्ता ?

गो. ! जहन्नेणं बावीसं सागरोवमाइं, उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं।

(४) इसी प्रकार के प्रश्न शेष पृथ्वियों के विषय में भी पूछना चाहिए। जिनके उत्तर क्रमशः इस प्रकार हैं–

बालुकाप्रभा नामक तीसरी पृथ्वी के नैरयिकों की जघन्य स्थिति तीन सागरोपम की और उत्कृष्ट स्थिति सात सागरोपम की है।

पंकप्रभा (चतुर्थ) पृथ्वी के नारकों की जघन्य स्थिति सात सागरोपम और उत्कृष्ट स्थिति दस सागरोपम की है।

धूमप्रभा (नामक पंचम) पृथ्वी के नारकों की जघन्य स्थिति दस सागरोपम और उत्कृष्ट स्थिति सत्रह सागरोपम की है।

(प्र.) भगवन् ! तमःप्रभा (छठी) पृथ्वी के नारकों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! तमःप्रभा नामक छठी पृथ्वी के नारकों की जघन्य स्थिति सत्रह सागरोपम और उत्कृष्ट स्थिति बाईस सागरोपम की है।

(प्र.) भगवन् ! तमस्तमःप्रभा (सातवीं) पृथ्वी के नारकों की आयुस्थिति कितने काल की है ?

(उ.) आयुष्मन् ! तमस्तमःप्रभा पृथ्वी के नैरयिकों की जघन्य स्थिति बाईस सागरोपम प्रमाण और उत्कृष्ट स्थिति तैंतीस सागरोपम की है।

(4) The same type of questions should be asked for the remaining infernal lands. The answers in brief are as follows—

The minimum life-span of the beings of the *Balukaprabha* land (the third hell) is three *Sagaropam* and the maximum is seven *Sagaropam.*

The minimum life-span of the beings of the *Pankprabha* land (the fourth hell) is seven *Sagaropam* and the maximum is ten *Sagaropam.*

The minimum life-span of the beings of the *Dhoomprabha* land (the fifth hell) is ten *Sagaropam* and the maximum is seventeen *Sagaropam.*

(Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of the infernal beings of the *Tamahprabha* land (the sixth hell) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is seventeen *Sagaropam* and the maximum is twenty two *Sagaropam.*

(Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of the infernal beings of the *Tamastamahprabha* land (the seventh hell) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is twenty two *Sagaropam* and the maximum is thirty three *Sagaropam.*

भवनपति देवों की स्थिति

३८४. (१) असुरकुमाराणं भंते ! देवाणं केवतिकालं ठिती पं. ?

गो. ! जहन्नेणं दसवाससहस्साइं, उक्कोसेणं सातिरेगं सागरोवमं।

असुरकुमारीणं भंते ! देवीणं केवतिकालं ठिती पं. ?

गो. ! जहन्नेणं दसवाससहस्साइं, उक्कोसेणं अद्धपंचमाइं पलिओवमाइं।

३८४. (१) (प्र.) भगवन् ! असुरकुमार देवों की कितने काल की स्थिति कही है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट कुछ अधिक एक सागरोपम प्रमाण है।

(प्र.) भगवन् ! असुरकुमार देवियों की स्थिति कितने काल की कही है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य स्थिति दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट साढ़े चार पल्योपम की कही है।

LIFE-SPAN OF MANSION-DWELLING GODS

384. (1) (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of *Asurkumar* gods ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is ten thousand years and the maximum is slightly more than one *Sagaropam.*

(Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of *Asurkumar* goddesses ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is ten thousand years and the maximum is four and a half *Palyopam.*

(२) नागकुमाराणं जाव गो. ! जहन्नेणं दसवाससहस्साइं, उक्कोसेणं देसूणाइं दोण्णि पलिओवमाइं।

नागकुमारीणं जाव गो. ! जहन्नेणं दसवाससहस्साइं, उक्कोसेणं देसूणं पलिओवमं।

(३) एवं जहा णागकुमाराणं देवाणं देवीण य तहा जाव थणियकुमाराणं देवाणं देवीण य भाणियव्वं।

(२-३) (प्र.) भगवन् ! नागकुमार देवों की स्थिति कितनी है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य दस हजार वर्ष की और उत्कृष्ट देशोन (कुछ कम) दो पल्योपम की है।

(प्र.) भगवन् ! नागकुमार देवियों की स्थिति कितने काल प्रमाण है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट देशोन एक पल्योपम की होती है। जितनी नागकुमार देव-देवियों की स्थिति कही है, उतनी ही शेष-सुपर्णकुमार से स्तनितकुमार तक के देवों और देवियों की स्थिति जानना चाहिए।

(2-3) (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of *Naagkumar* gods ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is ten thousand years and the maximum is slightly less than two *Palyopam.*

(Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of *Naagkumar* goddesses ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is ten thousand years and the maximum is slightly less than one *Palyopam.* The life-span of the remaining mansion-dwelling gods and goddesses from *Suparnakumar* to *Stanitkumar* is said to be the same as that of the *Naagkumar* gods and goddesses.

पंच स्थावरों की स्थिति

३८५. (१) पुढवीकाइयाणं भंते ! केवतिकालं ठिती पन्नत्ता ?

गो. ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं बावीसं वाससहस्सा।

सुहुमपुढविकाइयाणं ओहियाणं अपज्जत्तयाणं पज्जत्तयाण य तिण्ह वि पुच्छा।

गो. ! जह. अंतोमुहुत्तं उक्कोसेण वि अंतोमुहुत्तं।

बादरपुढविकाइयाणं पुच्छा।

गो. ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं बावीसं वाससहस्साइं।

अपज्जत्तयबादरपुढविकाइयाणं पुच्छा।

गो. ! जहण्णेण वि अंतोमुहुत्तं उक्कोसेण वि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयबादरपुढविकाइयाणं जाव गो. ! जह. अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं बावीसं वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं।

३८५. (१) (प्र.) भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीवों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! (पृथ्वीकायिक जीवों की) जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट बाईस हजार वर्ष की है।

(प्र.) भगवन् ! सामान्य सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीवों की तथा सूक्ष्म पृथ्वीकायिक अपर्याप्त और पर्याप्तों की स्थिति कितनी है ?

(उ.) गौतम ! इन तीनों की जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की है।

चित्र परिचय १०

Illustration No. 10
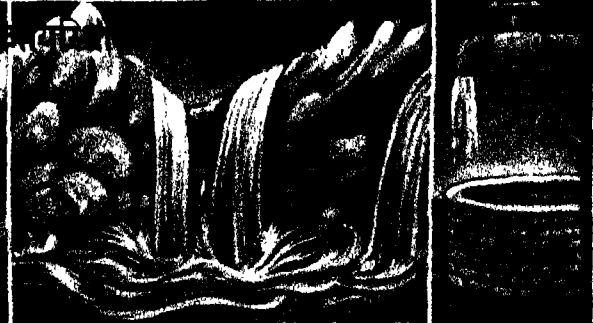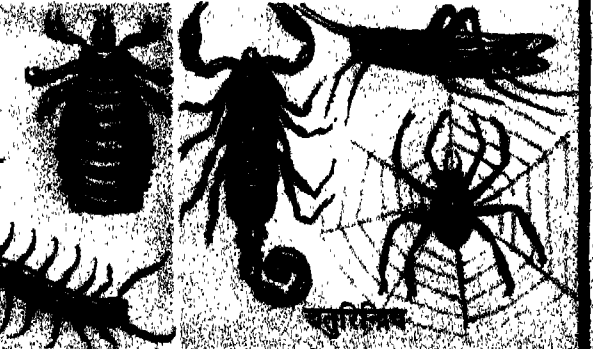
२४ दण्डकों की आयुस्थिति (१)

नारकों की आयुस्थिति

संसार के सभी जीवों को २४ दण्डकों (स्थानों) में विभक्त किया गया है।

जीव दो प्रकार के हैं--अपर्याप्त और पर्याप्त। सभी अपर्याप्त जीवों की आयुस्थिति जघन्य-उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त प्रमाण है। पर्याप्त जीवों की स्थिति भिन्न-भिन्न प्रकार की है। सातों नरक भूमियों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त न्यून दस हजार वर्ष तथा उत्कृष्ट प्रत्येक नरक की भिन्न-भिन्न है। प्रथम नरक की अन्तर्मुहूर्त्त न्यून एक सागरोपम तथा सातवीं नरक भूमि की तेंतीस सागरोपम बताई है।

-सूत्र ३८३, पृष्ठ १७३

भवनपतिदेवों की स्थिति

भवनपतिदेवों के असुरकुमार आदि दस भेद हैं। इसलिए इनके दस दण्डक हैं। सभी की आयुस्थिति जघन्य दस हजार वर्ष तथा उत्कृष्ट कुछ अधिक एक सागरोपम है।

पृथ्वीकायिक आदि पाँच स्थावर (दण्डक १२-१६) तथा द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय तीन विकलेन्द्रियों (दण्डक १७-१९) की आयुस्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त तथा उत्कृष्ट चित्र में नीचे बताये अनुसार समझें।

-सूत्र ३८४-३८६, पृष्ठ १७५-१८५

LIFE-SPAN IN 24 DANDAKS (1)

LIFE-SPAN OF INFERNAL-BEINGS

All the beings in this universe have been divided into 24 *Dandaks* (places of suffering).

Beings are basically of two kinds—under-developed and fully developed. The minimum and maximum life-span of all under-developed beings is *antarmuhurt* (less than a muhurt of 48 minutes). The life-span of fully developed beings varies. The minimum life-span for all the seven hells is one *antarmuhurt* less ten thousand years. The maximum life-span varies; that for the first hell is *antarmuhurt* less one *Sagaropam* and that for the seventh hell is thirty three *Sagaropam*.

—Aphorism 383, p. 173

LIFE-SPAN OF MANSION-DWELLING GODS

There are ten kinds of mansion-dwelling gods including Asur Kumar. Therefore, these form ten *Dandaks*. The minimum life-span for all these is ten thousand years and maximum is a little more than one *Sagaropam*.

The minimum life-span of five immobiles including earth-bodied (*Dandak* 12-16) and three *Vikalendriyas*, i.e., two, three and four-sensed beings (*Dandak* 17-19) is *antarmuhurt* and maximum is as mentioned in the illustrations.

—Aphorisms 384-386, pp. 175-185

(प्र.) भगवन् ! बादर पृथ्वीकायिक जीवों की स्थिति के लिए पृच्छा है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति बाईस हजार वर्ष की है।

(प्र.) भगवन् ! अपर्याप्त बादर पृथ्वीकायिक जीवों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! (अपर्याप्त बादर पृथ्वीकायिक जीवों की) जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की है। पर्याप्त बादर पृथ्वीकायिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त न्यून बाईस हजार वर्ष की है।

LIFE-SPAN OF FIVE IMMOBILE BEINGS

385. (1) (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of *Prithvikayik* (earth-bodied) beings ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is twenty two thousand years.

(Q.) *Bhante* ! What is generally the duration of the *sthiti* (life-span) of *Sukshma Prithvikayik* (minute earth-bodied) beings and specifically of *Sukshma Aparyapt* and *Sukshma Paryapt Prithvikayik* (minute underdeveloped and fully developed earth-bodied) beings ?

(Ans.) Gautam ! The minimum as well as maximum life-span of all these three is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*).

(Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of *Badar Prithvikayik* (gross earth-bodied) beings ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is twenty two thousand years.

(Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of *Aparyapt Badar Prithvikayik* (underdeveloped gross earth-bodied) beings ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span of *Aparyapt Badar Prithvikayik* (underdeveloped gross earth-bodied) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*). However, the minimum life-span of *Paryapt Badar Prithvikayik* (fully developed gross earth-bodied)

beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is one *antar-muhurt* less twenty two thousand years.

(२) एवं सेसकाइयाणं पि पुच्छावयणं भाणियव्वं–आउकाइयाणं जाव गो. ! जह. अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं सत्तवाससहस्साइं।

सुहुमआउकाइयाणं ओहियाणं अपज्जत्तयाणं तिण्ह वि जहण्णेण वि अंतोमुहुत्तं उक्कोसेण वि अंतोमुहुत्तं।

बादरआउकाइयाणं जाव गो. ! जहा ओहियाणं।

अपज्जत्तयबादरआउकाइयाणं जाव गो. ! जह. अंतोमुहुत्तं उक्कोसेण वि अंतोमुहुत्तं।

पज्जत्तयबादरआउ. जाव गो. ! जह. अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं सत्तवाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं।

(२) इसी प्रकार से शेष कायिकों (अप्कायिक से वनस्पतिकायिक पर्यन्त) जीवों की स्थिति के विषय में भी प्रश्न जानना चाहिए। अर्थात् जिस प्रकार पृथ्वीकायिक जीवों की स्थिति जानने के लिए प्रश्न किये हैं, उसी प्रकार से शेष कायिक जीवों के विषय में प्रश्न करना चाहिए। उत्तर इस प्रकार हैं–

गौतम ! अप्कायिक जीवों की औघिक (सामान्य रूप में) जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट स्थिति सात हजार वर्ष की है।

सामान्य रूप में सूक्ष्म अप्कायिक तथा अपर्याप्त और पर्याप्त अप्कायिक जीवों की जघन्य एवं उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त प्रमाण है।

गौतम ! बादर अप्कायिक जीवों की जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति सामान्य अप्कायिक जीवों के तुल्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट सात हजार वर्ष है।

गौतम ! अपर्याप्त बादर अप्कायिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट भी अन्तर्मुहूर्त्त प्रमाण है।

गौतम ! पर्याप्तक बादर अप्कायिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त न्यून सात हजार वर्ष की है।

(2) The same questions should be asked for the remaining immobile beings (from *Apkayik* to *Vanaspatikayik*). The answers in brief are as follows—

Gautam ! In general the minimum life-span of *Apkayik* (water-bodied) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is seven thousand years.

In general the maximum as well as minimum life-span of *Sukshma Apkayik* (minute water-bodied) beings and specifically of *Sukshma Aparyapt* and *Sukshma Paryapt Apkayik* (minute underdeveloped and fully developed water-bodied) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*).

Gautam ! Like general *Apkayik* (water-bodied) beings, the minimum life-span of general *Badar Apkayik* (gross water-bodied) beings is also *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is seven thousand years.

Gautam ! The maximum as well as minimum life-span of *Aparyapt Badar Apkayik* (underdeveloped gross water-bodied) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*).

Gautam ! The minimum life-span of *Paryapt Badar Apkayik* (fully developed gross water-bodied) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is one *antar-muhurt* less seven thousand years.

(३) तेउकाइयाणं भंते ! जाव गो. ! जह अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिण्णि राइंदियाइं।

सुहुमतेउकाइयाणं ओहियाणं अपज्जत्तयाण पज्जत्तयाण य तिण्ह वि जह. अंतो. उक्को. अंतो.।

बादरतेउकाइयाणं भंते ! जाव गो. ! जह. अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिण्णि राइंदियाइं।

अपज्जत्तयबायरतेउकाइयाणं जाव गो. ! जह. अंतो. उक्कोसेणं अंतो.।

पज्जत्तयबायरतेउकाइयाणं जाव गो. ! जह. अंतो. उक्कोसेणं तिण्णि राइंदियाइं अंतोमुहुत्तूणाइं।

(३) (प्र.) भगवन् ! (सामान्य रूप में) तेजस्कायिक जीवों की कितनी स्थिति कही गई है ?

(उ.) गौतम ! सामान्य तेजस्कायिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट तीन रात–दिन की बताई है।

औधिक सूक्ष्म तेजस्कायिक और पर्याप्त, अपर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिक की जघन्य स्थिति भी अन्तर्मुहूर्त्त की है और उत्कृष्ट स्थिति भी अन्तर्मुहूर्त्त की है।

(प्र.) भगवन् ! बादर तेजस्कायिक जीवों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! बादर तेजस्कायिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति तीन रात्रि-दिन की होती है।

(प्र.) भगवन् ! अपर्याप्त बादर तेजस्कायिक जीवों की स्थिति कितनी है ?

(उ.) गौतम ! उनकी जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त प्रमाण है।

(प्र.) भगवन् ! पर्याप्त बादर तेजस्कायिक जीवों की स्थिति कितनी है ?

(उ.) गौतम ! पर्याप्त बादर तेजस्कायिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त न्यून तीन रात्रि-दिन की होती है।

(3) (Q.) *Bhante* ! What is generally the duration of the *sthiti* (life-span) of *Tejaskayik* (fire-bodied) beings ?

(Ans.) Gautam ! In general the minimum life-span of *Tejaskayik* (fire-bodied) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is three days and nights.

The maximum as well as minimum life-span generally of *Sukshma Tejaskayik* (minute fire-bodied) beings and specifically of *Sukshma Aparyapt* and *Sukshma Paryapt Tejaskayik* (minute underdeveloped and fully developed fire-bodied) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*).

(Q.) What is generally the duration of the *sthiti* (life-span) of *Badar Tejaskayik* (gross fire-bodied) beings ?

(Ans.) Gautam ! In general the minimum life-span of *Badar Tejaskayik* (gross fire-bodied) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is three days and nights.

(Q.) What is the duration of the *sthiti* (life-span) of *Aparyapt Badar Tejaskayik* (underdeveloped gross fire-bodied) beings ?

(Ans.) Gautam ! The maximum as well as minimum life-span of *Aparyapt Badar Tejaskayik* (underdeveloped gross fire-bodied) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*).

(Q.) What is the duration of the *sthiti* (life-span) of *Paryapt Badar Tejaskayik* (fully developed gross fire-bodied) beings ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span of *Paryapt Badar Tejaskayik* (fully developed gross fire-bodied) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is one *antar-muhurt* less three days and nights.

(४) वाउकाइयाणं जाव गो. ! जह. अंतो. उक्को. तिण्णि वाससहस्साइं।

सुहुमवाउकाइयाणं ओहियाणं अपज्जत्तयाणं पज्जत्तयाण य तिण्ह वि जह. अंतो. उक्को. अंतोमुहुत्तं।

बादरवाउकाइयाणं जाव गो. ! जह. अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिण्णि वाससहस्साइं।

अपज्जत्तयबादरवाउकाइयाणं जाव गो. ! जह. अंतोमुहुत्तं उक्कोसेण वि अंतोमुहुत्तं।

पज्जत्तयबादरवाउकाइयाणं जाव गो. ! जह. अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिण्णि वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं।

(४) (प्र.) भगवन् ! वायुकायिक जीवों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! वायुकायिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति तीन हजार वर्ष की होती है।

किन्तु सामान्य रूप में सूक्ष्म वायुकायिक जीवों की तथा उसके अपर्याप्त और पर्याप्त भेदों की जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त प्रमाण होती है।

(प्र.) भगवन् ! बादर वायुकायिक जीवों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! बादर वायुकायिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति तीन हजार वर्ष की है।

(प्र.) भगवन् ! अपर्याप्त बादर वायुकायिक जीवों की स्थिति कितनी है ?

(उ.) अपर्याप्त बादर वायुकायिक जीवों की जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त प्रमाण है।

(प्र.) भगवन् ! पर्याप्त बादर वायुकायिक जीवों की स्थिति कितनी है ?

(उ.) गौतम ! पर्याप्त बादर वायुकायिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त न्यून तीन हजार वर्ष की है।

(4) (Q.) What is generally the duration of the *sthiti* (life-span) of *Vayukayik* (air-bodied) beings ?

(Ans.) Gautam ! In general the minimum life-span of *Vayukayik* (air-bodied) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is three thousand years.

The maximum as well as minimum life-span generally of *Sukshma Vayukayik* (minute air-bodied) beings and specifically of *Sukshma Aparyapt* and *Sukshma Paryapt Vayukayik* (minute underdeveloped and fully developed air-bodied) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*).

(Q.) What is generally the duration of the *sthiti* (life-span) of *Badar Vayukayik* (gross air-bodied) beings ?

(Ans.) Gautam ! In general the minimum life-span of *Badar Vayukayik* (gross air-bodied) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is three thousand years.

(Q.) What is the duration of the *sthiti* (life-span) of *Aparyapt Badar Vayukayik* (underdeveloped gross air-bodied) beings ?

(Ans.) Gautam ! The maximum as well as minimum life-span of *Aparyapt Badar Vayukayik* (underdeveloped gross air-bodied) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*).

(Q.) What is the duration of the *sthiti* (life-span) of *Paryapt Badar Vayukayik* (fully developed gross air-bodied) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span of *Paryapt Badar Vayukayik* (fully developed gross air-bodied) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is one *antar-muhurt* less three thousand years.

(५) वणस्सइकाइयाणं जाव गो. ! जह. अंतो. उक्को. दसवाससहस्साइं।

सुहुमाणं ओहियाणं अपज्जत्तयाणं पज्जत्तयाणं य तिण्हि वि जह. अंतो. उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं।

बादरवणस्सइकाइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिती पन्नत्ता ? गो. ! जह. अंतो. उक्को. दसवाससहस्साइं।

अपज्जत्तयाणं जाव गो. ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेण वि अंतोमुहुत्तं।

पज्जत्तयबादरवणस्सइकाइयाणं जाव गो. ! जह. अंतो. उक्को. दसवाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं।

(५) (प्र.) भगवन् ! वनस्पतिकायिक जीवों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! सामान्य रूप से वनस्पतिकायिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति दस हजार वर्ष की है।

सामान्य सूक्ष्म वनस्पतिकायिक तथा उनके अपर्याप्तक और पर्याप्तक भेदों की जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की है।

गौतम ! बादर वनस्पतिकायिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति दस हजार वर्ष की कही है।

गौतम ! अपर्याप्तकों की जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की है।

किन्तु गौतम ! पर्याप्तक बादर वनस्पतिकायिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त न्यून दस हजार वर्ष की जानना चाहिए।

(5) (Q.) What is generally the duration of the *sthiti* (life-span) of *Vanaspatikayik* (plant-bodied) beings ?

(Ans.) Gautam ! In general the minimum life-span of *Vanaspatikayik* (plant-bodied) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is ten thousand years.

The maximum as well as minimum life-span generally of *Sukshma Vanaspatikayik* (minute plant-bodied) beings and specifically of *Sukshma Aparyapt* and *Sukshma Paryapt Vanaspatikayik* (minute underdeveloped and fully developed plant-bodied) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*).

Gautam ! The minimum life-span of *Badar Vanaspatikayik* (gross plant-bodied) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is ten thousand years.

Gautam ! The maximum as well as minimum life-span of *Aparyapt Badar Vanaspatikayik* (underdeveloped gross plant-bodied) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*).

Gautam ! The minimum life-span of *Paryapt Badar Vanaspatikayik* (fully developed gross plant-bodied) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is one *antar-muhurt* less ten thousand years.

३८६. (१) बेइंदियाणं जाव गो. ! जह. अंतो. उक्कोसेणं बारस संवच्छराणि।

अपज्जत्तय जाव गोयमा ! जह. अंतो. उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं।

पज्जत्तयाणं जाव गोयमा ! जह. अंतो. उक्कोसेणं बारस संवच्छराणि अंतोमुहुत्तूणाइं।

३८६. (१) (प्र.) इसी प्रकार द्वीन्द्रिय जीवों की स्थिति कितने काल की कही है?

(उ.) गौतम ! उनकी जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट स्थिति बारह वर्ष की है।

अपर्याप्तक द्वीन्द्रिय जीवों की जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त प्रमाण है।

पर्याप्तक द्वीन्द्रिय जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त न्यून बारह वर्ष की है।

LIFE-SPAN OF VIKALENDRIYAS

386. (1) (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of *Dvindriya* (two-sensed) beings ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is twelve years.

The minimum as well as maximum life-span of *Aparyapt Dvindriya* (underdeveloped two-sensed) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*).

The minimum life-span of *Paryapt Badar Dvindriya* (fully developed gross two-sensed) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is one *antar-muhurt* less twelve years.

(२) तेइंदियाणं जाव गो. ! जहन्नेणं अंतो. उक्को. एकूणपण्णासं राइंदियाइं।

अपज्जत्तय जाव गोयमा ! जह. अंतो. उक्कोसेणं अंतो.।

पज्जत्तय जाव गो. ! जह. अंतो. उक्कोसेणं एकूणपण्णासं राइंदियाइं अंतोमुहुत्तूणाइं।

(२) त्रीन्द्रिय जीवों की जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट उनपचास (४९) दिन-रात्रि की होती है।

अपर्याप्तक त्रीन्द्रिय जीवों की जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की होती है।

पर्याप्तक त्रीन्द्रिय जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त न्यून उनपचास दिन–रात्रि की होती है।

(2) Gautam ! The minimum life-span of *Trindriya* (three-sensed) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is forty nine days.

The minimum as well as maximum life-span of *Aparyapt Trindriya* (underdeveloped three-sensed) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*).

The minimum life-span of *Paryapt Trindriya* (fully developed three-sensed) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is one *antar-muhurt* less forty nine days.

(३) चउरिंदियाणं जाव गो. ! जह. अंतो. उक्को. छम्मासा।

अपज्जत्तया जाव गो. ! जह. अंतोमुहुत्तं उक्को. अंतो.।

पज्जत्तयाणं जाव गो. ! जह. अंतो. उक्कोसेणं छम्मासा अंतोमुहुत्तूणा।

(३) चतुरिन्द्रिय जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट छह मास की होती है।

अपर्याप्तक चतुरिन्द्रिय जीवों की जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की होती है।

पर्याप्तक चतुरिन्द्रिय जीवों की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त प्रमाण और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त न्यून छह मास की होती है।

(3) Gautam ! The minimum life-span of *Chaturindriya* (four-sensed) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is one *antar-muhurt* less six months.

The minimum as well as maximum life-span of *Aparyapt Chaturindriya* (underdeveloped four-sensed) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*).

The minimum life-span of *Paryapt Chaturindriya* (fully developed four-sensed) beings is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is one *antar-muhurt* less six months.

पंचेन्द्रियतिर्यंचों की स्थिति

३८७. (१) पंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं जाव गो. ! जह. अंतो. उक्को. तिण्णि पलिओवमाइं।

३८७. (१) गौतम ! पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक जीवों की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट तीन पल्योपम की है।

FIVE-SENSED ANIMALS

387. (1) Gautam ! In general the minimum life-span of *Panchendriya Tiryanchyonik* (five-sensed animals) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is three *Palyopam.*

जलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचों की स्थिति

(२) जलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं जाव गो. ! जह. अंतो. उक्कोसेणं पुव्वकोडी।

सम्मुच्छिमजलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं जाव गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पुव्वकोडी।

अपज्जत्तयसम्मुच्छिमजलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं जाव गोयमा ! जह. अंतो. उक्कोसेणं अंतो.।

पज्जत्तयसम्मुच्छिमजलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं जाव गो. ! जह. अंतो. उक्कोसेणं पुव्वकोडी अंतोमुहुत्तूणा।

गब्भवक्कंतियजलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं जाव गो. ! जह. अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पुव्वकोडी।

अपज्जत्तयगब्भवक्कंतियजलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं जाव गो. ! जह. अंतो. उक्को. अंतो.।

पज्जत्तयगब्भवक्कंतियजलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं जाव गोयमा ! जह. अंतो. उक्को. पुव्वकोडी अंतोमुहुत्तूणा।

(२) जलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति पूर्वकोटि वर्ष प्रमाण की है।

संमूर्च्छिम जलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति पूर्वकोटि वर्ष की है।

अपर्याप्तक संमूर्च्छिम जलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की है।

पर्याप्तक संमूर्च्छिम जलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त प्रमाण और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त न्यून पूर्वकोटि वर्ष प्रमाण है।

सामान्य से गर्भव्युत्क्रान्तिक जलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति पूर्वकोटि वर्ष जितनी है।

अपर्याप्तक गर्भव्युत्क्रान्तिक जलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य स्थिति भी अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति भी अन्तर्मुहूर्त्त की है।

पर्याप्तक गर्भव्युत्क्रान्तिक जलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त कम पूर्वकोटि वर्ष की है।

विवेचन–एक करोड़ पूर्व को पूर्वकोटि कहा जाता है। पूर्व का प्रमाण पहले बताया जा चुका है कि चौरासी लाख वर्ष का एक पूर्वांग और चौरासी लाख पूर्वांग का एक पूर्व होता है। पर्याप्तकों की स्थिति में अन्तर्मुहूर्त्त न्यून (कम) बताने का कारण यह है कि समस्त संसारी जीव अपर्याप्तक अवस्था में अन्तर्मुहूर्त्त से अधिक काल तक नहीं रहते। अन्तर्मुहूर्त्त में ही वे अपनी पर्याप्तियों को पूर्ण कर पर्याप्त हो जाते हैं। अतः उत्कृष्ट स्थिति में वह अन्तर्मुहूर्त्त कम हो जाता है। सर्वत्र यही नियम समझें।

AQUATIC FIVE-SENSED ANIMALS

(2) Gautam ! In general the minimum life-span of *Jalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (aquatic five-sensed animals) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is *Purvakoti* years.

In general the minimum life-span of *Sammurchhim Jalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (aquatic five-sensed animals of asexual origin) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is *Purvakoti* years.

The minimum as well as maximum life-span of *Aparyapt Sammurchhim Jalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (underdeveloped aquatic five-sensed animals of asexual origin) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*).

The minimum life-span of *Paryapt Sammurchhim Jalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (fully developed aquatic five-sensed animals of asexual origin) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*)

and the maximum is one *antar-muhurt* less *Purvakoti* (7,05,600 quadrillion) years.

In general the minimum life-span of *Garbhavyutkrantik Jalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (aquatic five-sensed animals born out of womb) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is *Purvakoti* years.

The minimum as well as maximum life-span of *Aparyapt Garbhavyutkrantik Jalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (underdeveloped aquatic five-sensed animals born out of womb) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*).

The minimum life-span of *Paryapt Garbhavyutkrantik Jalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (fully developed aquatic five-sensed animals born out of womb) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is one *antar-muhurt* less *Purvakoti* years.

Elaboration—One *crore* or ten million *Purva* is called *Purvakoti*. As already mentioned, one *Purvanga* is 8.4 million years and one *Purva* is 8.4 million *Purvanga*. The life-span of fully developed beings is mentioned as one *antar-muhurt* less than the normal life-span of that category. This is because all beings remain in the underdeveloped state only for one *antar-muhurt*. After the lapse of this time they get fully developed. Therefore this time is deducted from the maximum life-span. This should be taken as a general rule.

स्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचों की स्थिति

(३) (क) चउप्पयथलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं भंते ! केवतिकालं ठिती पन्नत्ता ?

गो. ! जह. अंतो. उक्को. तिण्णि पलिओवमाइं।

संमूच्छिमचउप्पयथलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं जाव गो. ! जह. अंतो. उक्को. चउरासीतिवाससहस्साइं।

अपज्जत्तयसंमुच्छिमचउप्पयथलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं जाव गो. ! जहन्नेणं अंतो. उक्को. अंतो.।

पज्जत्तयसंमुच्छिमचउप्पयथलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं जाव गो. ! जह. अंतो. उक्को. चउरासीतिवाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाणं।

गब्भवक्कंतियचउप्पयथलयर. जाव गो. ! जह. अंतो. उक्को. तिण्णि पलिओवमाइं।

अपज्जत्तयगब्भवक्कंतियचउप्पय. जाव गो. ! जह. अंतो. उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं।

पज्जत्तयगब्भवक्कंतियचउप्पयथलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं जाव जह. अंतो. उक्को. तिण्णि पलिओवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं।

(३) (क) (प्र.) भगवन् ! चतुष्पदस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की स्थिति कितने काल की है?

(उ.) गौतम ! सामान्य रूप में जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति तीन पल्योपम की है।

गौतम ! सम्मूर्च्छिम चतुष्पदस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति चौरासी हजार वर्ष की है।

अपर्याप्तक सम्मूर्च्छिम चतुष्पदस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त प्रमाण है।

पर्याप्तक सम्मूर्च्छिम चतुष्पदस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त कम चौरासी हजार वर्ष की है।

गर्भव्युत्क्रान्तिक चतुष्पदस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट तीन पल्योपम की है।

अपर्याप्तक गर्भव्युत्क्रान्तिक चतुष्पदस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की है।

पर्याप्तक गर्भज चतुष्पदस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त कम तीन पल्योपम की जानना चाहिए।

TERRESTRIAL FIVE-SENSED ANIMALS

(3) (a) (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of *Chatushpad Sthalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (quadruped terrestrial five-sensed animals) ?

(Ans.) Gautam ! In general the minimum life-span of *Chatushpad Sthalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (quadruped terrestrial five-sensed animals) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is three *Palyopam*.

In general the minimum life-span of *Sammurchhim Chatushpad Sthalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (quadruped terrestrial five-sensed animals of asexual origin) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is eighty four thousand years.

The minimum as well as maximum life-span of *Aparyapt Sammurchhim Chatushpad Sthalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (underdeveloped quadruped terrestrial five-sensed animals of asexual origin) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*).

The minimum life-span of *Paryapt Sammurchhim Chatushpad Sthalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (fully developed quadruped terrestrial five-sensed animals of asexual origin) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is one *antar-muhurt* less eighty four thousand years.

In general the minimum life-span of *Garbhavyutkrantik Chatushpad Sthalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (quadruped terrestrial five-sensed animals born out of womb) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is three *Palyopam.*

The minimum as well as maximum life-span of *Aparyapt Garbhavyutkrantik Chatushpad Sthalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (underdeveloped quadruped terrestrial five-sensed animals born out of womb) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*).

The minimum life-span of *Paryapt Garbhavyutkrantik Chatushpad Sthalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (fully developed quadruped terrestrial five-sensed animals born out of womb) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is one *antar-muhurt* less three *Palyopam.*

(ख) उरपरिसप्पथलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं भंते ! केवतिकालं ठिती पं. ?

गो. ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पुव्वकोडी।

सम्मुच्छिमउरपरिसप्प. जाव गो. ! जह. अंतो. उक्को. तेवन्नं वाससहस्साइं।

अपज्जत्तयसम्मुच्छिमउरपरिसप्प. जाव गो. ! जह. अंतो. उक्कोसेणं अंतो.।

पज्जत्तयसम्मुच्छिमउरपरिसप्प. जाव गो. ! जह. अंतो. उक्को. तेवण्णं वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं।

गब्भवक्कंतियउरपरिसप्पथलयर. जाव गो. ! जह. अंतो. उक्कोसेणं पुव्वकोडी।

अपज्जत्तयगब्भवक्कंतियउरपरिसप्प. जाव गोयमा ! जह. अंतो. उक्को. अंतो.।

पज्जत्तयगब्भवक्कंतियउरपरिसप्पथलयरपंचेंदियतिरक्खिजोणियाणं जाव गो. ! जह. अंतो. उक्को. पुव्वकोडी अंतोमुहुत्तूणा।

(ख) (प्र.) भगवन् ! उरपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की स्थिति कितनी है ?

(उ.) गौतम ! सामान्य रूप में उरपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति कोटिपूर्व वर्ष की है।

गौतम ! सम्मूर्च्छिम उरपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति तिरेपन हजार वर्ष की है।

अपर्याप्तक सम्मूर्च्छिम उरपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य तथा उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की है।

पर्याप्तक सम्मूर्च्छिम उरपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त न्यून तिरेपन हजार वर्ष की है।

गौतम ! गर्भज उरपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति पूर्वकोटि वर्ष की है।

गौतम ! अपर्याप्तक गर्भज उरपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की है।

पर्याप्तक गर्भज उरपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त कम पूर्वकोटि वर्ष की है।

(b) (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of *Urparisarp Sthalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (non-limbed reptilian terrestrial five-sensed animals) ?

(Ans.) Gautam ! In general the minimum life-span of *Urparisarp Sthalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (non-limbed

reptilian terrestrial five-sensed animals) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is *Kotipurva* years.

In general the minimum life-span of *Sammurchhim Urparisarp Sthalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (non-limbed reptilian terrestrial five-sensed animals of asexual origin) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is fifty three thousand years.

The minimum as well as maximum life-span of *Aparyapt Sammurchhim Urparisarp Sthalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (underdeveloped non-limbed reptilian terrestrial five-sensed animals of asexual origin) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*).

The minimum life-span of *Paryapt Sammurchhim Urparisarp Sthalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (fully developed non-limbed reptilian terrestrial five-sensed animals of asexual origin) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is one *antar-muhurt* less fifty three thousand years.

In general the minimum life-span of *Garbhavyutkrantik Urparisarp Sthalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (non-limbed reptilian terrestrial five-sensed animals born out of womb) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is *Kotipurva* years.

The minimum as well as maximum life-span of *Aparyapt Garbhavyutkrantik Urparisarp Sthalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (underdeveloped non-limbed reptilian terrestrial five-sensed animals born out of womb) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*).

The minimum life-span of *Paryapt Garbhavyutkrantik Urparisarp Sthalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (fully developed non-limbed reptilian terrestrial five-sensed animals born out of womb) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is one *antar-muhurt* less *Kotipurva* years.

(ग) भुयपरिसप्पथलयर. जाव गो. ! जह. अंतो. उक्कोसेणं पुव्वकोडी।

सम्मुच्छिम भुयपरिसप्प. जाव गो. ! जह. अंतो. उक्कोसेणं बायालीसं वाससहस्साइं।

प. अ. पु. : ३० पूर्व कोटि वर्ष

चित्र परिचय ११

Illustration No. 11
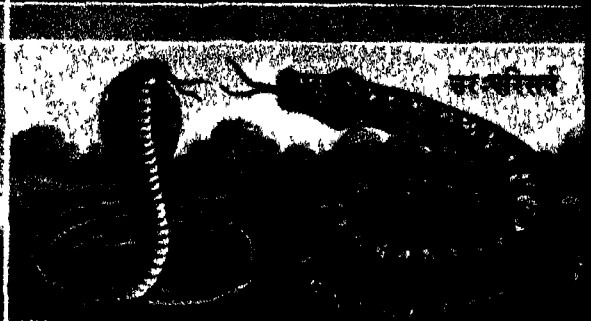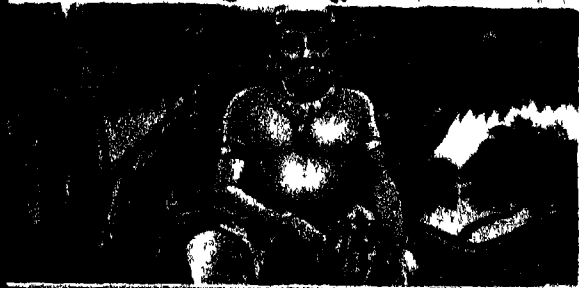
२४ दण्डकों की आयुस्थिति (२)

(दण्डक २०) तिर्यंच पंचेन्द्रिय जीवों की आयुस्थिति–तिर्यंच पंचेन्द्रियों के पाँच भेद हैं-जलचर, स्थलचर, खेचर, उरःपरिसर्प, भुजपरिसर्प। सभी की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त तथा उत्कृष्ट भिन्न-भिन्न सूत्र ३८७ में बताये अनुसार समझें।

(दण्डक २१) मनुष्यों की स्थिति–मनुष्यों में कर्मभूमिक तथा अकर्मभूमिक (युगलिया) ये दो भेद हैं। सभी की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त तथा उत्कृष्ट स्थिति तीन पल्योपम है।

देवों की स्थिति–देवों के चार भेद हैं-(१) भवनपति (दण्डक २-१०), (२) वाणव्यन्तर (दण्डक २२)-इनकी स्थिति जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट एक पल्योपम, (३) ज्योतिष्क (दण्डक २३)-देवों की उत्कृष्ट स्थिति एक पल्योपम में एक लाख वर्ष अधिक, तथा (४) वैमानिक (दण्डक २४) देवों में (अ) १२ कल्पवासी देवों की उत्कृष्ट स्थिति २२ सागरोपम, (ब) कल्पातीत देवों में-नव ग्रैवेयक की २३ से ३१ सागरोपम, तथा (स) अनुत्तर विमानवासी देवों की उत्कृष्ट स्थिति ३३ सागरोपम की है।

--सूत्र ३८७-३९१, पृष्ठ १८५-२१४

LIFE-SPAN IN 24 DANDAKS (2)

(Dandak 20) Life-span of Five-sensed Animals—These have five categories—aquatic, terrestrial, aerial, non-limbed reptilians and limbed reptilians. The minimum life-span of all these is *antarmuhurt* and maximum as mentioned in aphorism 387.

(Dandak 21) Life-span of Human-beings—These have two categories—belonging to the ages of endeavour and non-endeavour (the age of twins). The minimum life-span of both is *antarmuhurt* and maximum three *Palyopam.*

Life-span of Divine-beings—These have four categories—(1) Mansion dwelling (*Dandak* 2-10), (2) Interstitial (*Dandak* 22)—With a minimum life-span of ten thousand years and maximum of one *Palyopam,* (3) Stellar (*Dandak* 23)—With a maximum life-span of one *lac* years more than one *Palyopam,* and (4) Gods with celestial vehicles (*Dandak* 24)—With a maximum life-span of (a) 22 *Sagaropam* for the 12 *Kalpavasis,* (b) 23 to 31 *Sagaropam* for *Navagraiveyaks* among the *Kalpateets,* and (c) 33 *Sagaropam* for those dwelling in *Anuttar* celestial vehicles among the *Kalpateets.*

—Aphorisms 387-391, pp. 185-214

अपज्जत्तयसम्मुच्छिमभुयपरिसप्पथलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं जाव गो. ! जह. अंतो. उक्को. अंतो.।

पज्जत्तयसम्मुच्छिमभुयपरिसप्पथलयरपंचेंदिय. जाव गो. ! जह. अंतो. उक्को. बायालीसं वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं।

गब्भवक्कंतियभुयपरिसप्पथलयरपंचेंदियाणं जाव गो. ! जह. अंतो. उक्को. पुव्वकोडी।

अपज्जत्तयगब्भवक्कंतियभुयपरिसप्पथलयर. जाव गो. ! जह. अंतो. उक्को. अंतोमुहुत्तं।

पज्जत्तयगब्भवक्कंतियभुयपरिसप्पथलयर. जाव गो. ! जह. अंतो. उक्कोसेणं पुव्वकोडी अंतोमुहुत्तूणा।

(ग) (प्र.) भगवन् ! भुजपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की स्थिति कितने काल की है?

(उ.) गौतम ! सामान्य से तो भुजपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति कोटिपूर्व वर्ष की है।

सम्मूर्च्छिम भुजपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति बयालीस हजार वर्ष की है।

अपर्याप्तक सम्मूर्च्छिम भुजपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति भी अन्तर्मुहूर्त्त की जानना चाहिए।

पर्याप्तक सम्मूर्च्छिम भुजपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त न्यून बयालीस हजार वर्ष की है।

गर्भव्युत्क्रान्तिक भुजपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की औधिक जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट कोटिपूर्व वर्ष की है।

अपर्याप्तक गर्भव्युत्क्रान्तिक भुजपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की है।

पर्याप्तक गर्भज भुजपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त न्यून कोटिपूर्व वर्ष प्रमाण है।

(c) **(Q.)** *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of *Bhujparisarp Sthalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (limbed reptilian terrestrial five-sensed animals) ?

(Ans.) Gautam ! In general the minimum life-span of *Bhujparisarp Sthalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (limbed reptilian terrestrial five-sensed animals) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is *Kotipurva* years.

In general the minimum life-span of *Sammurchhim Bhujparisarp Sthalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (limbed reptilian terrestrial five-sensed animals of asexual origin) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is forty two thousand years.

The minimum as well as maximum life-span of *Aparyapt Sammurchhim Bhujparisarp Sthalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (underdeveloped limbed reptilian terrestrial five-sensed animals of asexual origin) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*).

The minimum life-span of *Paryapt Sammurchhim Bhujparisarp Sthalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (fully developed limbed reptilian terrestrial five-sensed animals of asexual origin) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is one *antar-muhurt* less forty two thousand years.

In general the minimum life-span of *Garbhavyutkrantik Bhujparisarp Sthalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (limbed reptilian terrestrial five-sensed animals born out of womb) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is *Kotipurva* years.

The minimum as well as maximum life-span of *Aparyapt Garbhavyutkrantik Bhujparisarp Sthalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (underdeveloped limbed reptilian terrestrial five-sensed animals born out of womb) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*).

The minimum life-span of *Paryapt Garbhavyutkrantik Bhujparisarp Sthalachar Panchendriya Tiryanchyonik* (fully

developed limbed reptilian terrestrial five-sensed animals born out of womb) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is one *antar-muhurt* less *Kotipurva* years.

खेचरपंचेन्द्रियतिर्यंचों की स्थिति

(४) खहयरपंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं भंते ! केवतिकालं ठिती पन्नत्ता ?

गो. ! जह. अंतो. उक्को. पलिओवमस्स असंखेज्जभागं।

सम्मुच्छिमखहयर. जाव गो. ! जह. अंतो. उक्को. बावत्तरिं वाससहस्साइं।

अपज्जत्तयसम्मुच्छिमखहयर. जाव गो. ! जह. अंतो. उक्कोसेणं अंतो.।

पज्जत्तगसम्मुच्छिमखहयर. जाव गोयमा ! जह. अंतो. उक्कोसेणं बावत्तरिं वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं।

गब्भवक्कंतियखहयरपंचेंदियतिरिक्ख. जाव गो. ! जह. अंतो. उक्को. पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं।

अपज्जत्तयगब्भवक्कंतियखहयर. जाव गो. ! जह. अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं।

पज्जत्तयगब्भवक्कंतियखहयरपंचेंदियतिरिक्ख. जाव गोयमा ! जह. अंतो. उक्कोसेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं अंतोमुहुत्तूणं।

(४) (प्र.) भगवन् ! खेचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! सामान्य से खेचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति पल्योपम के असंख्यातवें भाग होती है।

सम्मूर्च्छिम खेचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की औधिक स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट बहत्तर हजार वर्ष की है।

अपर्याप्तक सम्मूर्च्छिम खेचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की स्थिति जघन्य से भी अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट से भी अन्तर्मुहूर्त्त की है।

पर्याप्तक सम्मूर्च्छिम खेचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त न्यून बहत्तर हजार वर्ष की है।

सामान्य रूप में गर्भव्युत्क्रान्तिक खेचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति पल्योपम के असंख्यातवें भाग प्रमाण है।

अपर्याप्तक गर्भज खेचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति भी अन्तुर्मुहूर्त्त की है।

पर्याप्तक गर्भज खेचरपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों की जघन्य स्थिति अन्तमुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त न्यून पल्योपम के असंख्यातवें भाग प्रमाण होती है।

AERIAL FIVE-SNESED ANIMALS

(4) (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of *Khechar Panchendriya Tiryanchyonik* (aerial five-sensed animals) ?

(Ans.) Gautam ! In general the minimum life-span of *Khechar Panchendriya Tiryanchyonik* (aerial five-sensed animals) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is innumerable fraction of *Palyopam*.

In general the minimum life-span of *Sammurchhim Khechar Panchendriya Tiryanchyonik* (aerial five-sensed animals of asexual origin) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is seventy two thousand years.

The minimum as well as maximum life-span of *Aparyapt Sammurchhim Khechar Panchendriya Tiryanchyonik* (underdeveloped aerial five-sensed animals of asexual origin) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*).

The minimum life-span of *Paryapt Sammurchhim Khechar Panchendriya Tiryanchyonik* (fully developed aerial five-sensed animals of asexual origin) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is one *antar-muhurt* less seventy two thousand years.

In general the minimum life-span of *Garbhavyutkrantik Khechar Panchendriya Tiryanchyonik* (aerial five-sensed animals born out of womb) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is innumerable fraction of a *Palyopam*.

The minimum as well as maximum life-span of *Aparyapt Garbhavyutkrantik Khechar Panchendriya Tiryanchyonik*

(underdeveloped aerial five-sensed animals born out of womb) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*).

The minimum life-span of *Paryapt Garbhavyutkrantik Khechar Panchendriya Tiryanchyonik* (fully developed aerial five-sensed animals born out of womb) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is one *antar-muhurt* less innumerable fraction of a *Palyopam.*

संग्रहणी गाथायें

(५) एत्थ एतेसिं संगहणिगाहाओ भवंति। तं जहा–

सम्मुच्छ पुव्वकोडी, चउरासीतिं भवे सहस्साइं।
तेवण्णा बायाला, बावत्तरिमेव पक्खीणं॥१॥

गब्भम्मि पुव्वकोडी, तिण्णि य पलिओवमाइं परमाउं।
उर-भुयग पुव्वकोडी, पलिउवमासंखभागो य॥२॥

(५) पूर्वोक्त कथन की संग्रहणी गाथायें इस प्रकार हैं–

सम्मूर्च्छिम तिर्यंचपंचेन्द्रिय जीवों में अनुक्रम से जलचरों की उत्कृष्ट स्थिति (अन्तर्मुहूर्त्त कम) पूर्वकोटि वर्ष, स्थलचरचतुष्पद सम्मूर्च्छिमों की चौरासी हजार वर्ष, उरपरिसर्पों की तिरेपन हजार वर्ष, भुजपरिसर्पों की बयालीस हजार वर्ष और खेचरों की बहत्तर हजार वर्ष की है॥१॥

गर्भज पंचेन्द्रियतिर्यंचों में अनुक्रम से जलचरों की उत्कृष्ट स्थिति पूर्वकोटि वर्ष, स्थलचरों की तीन पल्योपम, उरपरिसर्पों और भुजपरिसर्पों की और खेचरों की पल्योपम के असंख्यातवें भाग की है॥२॥

विवेचन–सूत्र ३८७ में तिर्यंचपंचेन्द्रिय जीवों के सम्बन्ध में मुख्य तीन विकल्पों के साथ प्रश्न किये गये हैं–

(१) तिर्यंचपंचेन्द्रिय औघिक (सामान्य)–जघन्य–उत्कृष्ट।

(२) सम्मूर्च्छिम तिर्यंचपंचेन्द्रिय–

(A) औघिक–जघन्य–उत्कृष्ट।

(B) अपर्याप्तक–जघन्य–उत्कृष्ट।

(C) पर्याप्तक–जघन्य–उत्कृष्ट।

(३) गर्भज तिर्यंचपंचेन्द्रिय–

(A) औघिक–जघन्य–उत्कृष्ट।

(B) अपर्याप्तक–जघन्य–उत्कृष्ट।

(C) पर्याप्तक–जघन्य–उत्कृष्ट।

जघन्य स्थिति सभी की अन्तर्मुहूर्त्त प्रमाण है। अपर्याप्तक अवस्था में भी सभी की जघन्य तथा उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की होती है। पर्याप्तक अवस्था में उत्कृष्ट स्थिति में अन्तर पड़ता है। उपर्युक्त संग्रहणी गाथाओं में सभी सम्मूर्च्छिम तथा गर्भज पर्याप्तकों की उत्कृष्ट स्थिति बताई है।

EPITOMIC VERSES

(5) The epitomic verses covering the aforesaid aphorisms are—

In proper order the maximum life-spans of *Sammurchhim Panchendriya Tiryanchyonik* (five-sensed animals of asexual origin) are *Purvakoti* years, eighty four thousand years, fifty three thousand years, forty two thousand years and seventy two thousand years for *Sthalachar Chatushpad* (quadruped terrestrial), *Urparisarp* (non-limbed reptilian), *Bhujparisarp* (limbed reptilian) and *Khechar* (aerial) respectively. (1)

In proper order the maximum life-spans of *Garbhavyutkrantik Panchendriya Tiryanchyonik* (five-sensed animals born out of womb) are *Purvakoti* years, three *Palyopam* and innumerable fraction of a *Palyopam* for *Sthalachar Chatushpad* (quadruped terrestrial), *Urparisarp* (non-limbed reptilian), *Bhujparisarp* (limbed reptilian) and *Khechar* (aerial) respectively. (2)

Elaboration—In aphorism 387 questions have been asked about five-sensed animals in mainly three alternative contexts—

(1) *Panchendriya Tiryanchyonik* (five-sensed animals) in general—minimum and maximum.

(2) *Sammurchhim Panchendriya Tiryanchyonik* (five-sensed animals of asexual origin)—

(a) in general.

(b) underdeveloped.

(c) fully developed.

(3) *Garbhavyutkrantik Panchendriya Tiryanchyonik* (five-sensed animals born out of womb)—

(a) in general.

(b) underdeveloped.

(c) fully developed.

The minimum life-span is *antar-muhurt* for all. In the underdeveloped state also the minimum as well as maximum life-span is *antar-muhurt* for all. In the fully developed state there is a variation in the maximum life-span. In the epitomic verses the maximum life-spans for all fully developed *Sammurchhim* (of asexual origin) and *Garbhavyutkrantik* (born out of womb) are mentioned.

मनुष्यों की स्थिति

३८८. (१) मणुस्साणं भंते ! केवइकालं ठिई पं. ?

गो. ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिण्णि पलिओवमाणं।

३८८. (१) (प्र.) भगवन् ! मनुष्यों की (सामान्य) स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट तीन पल्योपम की है।

LIFE-SPAN OF HUMAN BEINGS

388. (1) (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of *Manushya* (human beings) ?

(Ans.) Gautam ! In general the minimum life-span is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is three *Palyopam*.

(२) सम्मुच्छिममणुस्साणं जाव गो. ! अंतो. उक्को. अंतो.।

(२) सम्मूर्च्छिम मनुष्यों की जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की है।

(2) Gautam ! The minimum as well as maximum life-span of *Sammurchhim Manushyas* (human beings of asexual origin) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*).

(३) गब्भवक्कंतियमणुस्साणं जाव जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिण्णि पलिओवमाइं।

अपज्जत्तयगब्भवक्कंतियमणुस्साणं जाव गो. ! जहं. अंतो. उक्कोसेणं अंतो.।

पज्जत्तयगब्भवक्कंतियमणुस्साणं जाव गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिण्णि पलिओवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं।

(३) गर्भव्युत्क्रान्तिक मनुष्यों की (सामान्य) स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट तीन पल्योपम की है।

अपर्याप्तक गर्भव्युत्क्रान्तिक मनुष्यों की जघन्य स्थिति भी अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति भी अन्तर्मुहूर्त्त की है।

पर्याप्तक गर्भव्युत्क्रान्तिक मनुष्यों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त न्यून तीन पल्योपम प्रमाण है।

(3) In general the minimum life-span of *Garbhavyutkrantik Manushyas* (human beings born out of womb) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is three *Palyopam.*

The minimum as well as maximum life-span of *Aparyapt Garbhavyutkrantik Manushyas* (underdeveloped human beings born out of womb) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*).

The minimum life-span of *Paryapt Garbhavyutkrantik Manushyas* (fully developed human beings born out of womb) is *antar-muhurt* (less than one *muhurt*) and the maximum is one *antar-muhurt* less three *Palyopam.*

व्यंतर देवों की स्थिति

३८९. वाणमंतराणं भंते ! देवाणं केवतिकालं ठिती पण्णत्ता ?

गो. ! जहन्नेणं दसवाससहस्साइं उक्कोसेणं पलिओवमं।

वाणमंतरीणं भंते ! देवीणं केवतिकालं ठिती पण्णत्ता ?

गो. ! जहन्नेणं दसवाससहस्साइं उक्कोसेणं अद्धपलिओवमं।

३८९. (प्र.) भगवन् ! वाणव्यंतर देवों की (सामान्य) स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य स्थिति दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट स्थिति एक पल्योपम की है।

(प्र.) भगवन् ! वाणव्यंतरों की देवियों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! उनकी जघन्य स्थिति दस हजार वर्ष की और उत्कृष्ट स्थिति अर्द्ध-पल्योपम की है।

LIFE-SPAN OF INTERSTITIAL GODS

389. (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of *Vanavyantar* (interstitial) gods ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is ten thousand years and the maximum is one *Palyopam.*

(Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of *Vanavyantar* (interstitial) goddesses ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is ten thousand years and the maximum is half a *Palyopam.*

ज्योतिष्क देवों की स्थिति

३९०. (१) जोतिसियाणं भंते ! देवाणं जाव गोयमा ! जह. सातिरेगं अट्ठभागपलिओवमं उक्कोसेणं पलिओवमं वाससतसहस्समब्भहियं।

जोइसीणं भंते ! देवीणं जाव गो. ! जह. अट्ठभागपलिओवमं उक्कोसेणं अद्धपलिओवमं पण्णासाए वाससहस्सेहिं अब्भहियं।

३९०. (१) (प्र.) भगवन् ! ज्योतिष्क देवों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य कुछ अधिक पल्योपम के आठवें भाग प्रमाण और उत्कृष्ट स्थिति एक लाख वर्ष अधिक पल्योपम की है।

(प्र.) भगवन् ! ज्योतिष्क देवियों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! उनकी जघन्य स्थिति पल्योपम का आठवाँ भाग प्रमाण और उत्कृष्ट स्थिति पचास हजार वर्ष अधिक अर्द्ध-पल्योपम की है।

LIFE-SPAN OF JYOTISHK GODS

390. (1) (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of *Jyotishk* (stellar) gods ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is slightly more than one-eighth of a *Palyopam* and the maximum is one hundred thousand years more than a *Palyopam.*

(Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of *Jyotishk* (stellar) goddesses ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is one eighth of a *Palyopam* and the maximum is fifty thousand years more than half a *Palyopam*.

(२) चंदविमाणाणं भंते ! देवाणं जाव जहन्नेणं चउभागपलिओवमं उक्कोसेणं पलिओवमं वाससतसहस्साहियं।

चंदविमाणाणं भंते ! देवीणं जाव जहन्नेणं चउभागपलिओवम उक्को. अद्धपलिओवमं पण्णासाए वाससहस्सेहिं अब्भहियं।

(२) (प्र.) भगवन् ! चन्द्रविमानों के देवों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य स्थिति पल्योपम का चतुर्थ भाग और उत्कृष्ट स्थिति एक लाख वर्ष अधिक एक पल्योपम की है।

(प्र.) भगवन् ! चन्द्रविमानों की देवियों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य स्थिति पल्योपम का चतुर्थ भाग और उत्कृष्ट स्थिति पचास हजार वर्ष अधिक अर्द्ध-पल्योपम की है।

(2) (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of gods dwelling on the moon (*Chandra viman*) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is one quarter of a *Palyopam* and the maximum is one hundred thousand years more than a *Palyopam*.

(Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of goddesses dwelling on the moon (*Chandra viman*) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is one quarter of a *Palyopam* and the maximum is fifty thousand years more than half a *Palyopam*.

(३) सूरविमाणाणं भंते ! देवाणं जाव जह. चउभागपलिओवमं उक्को. पलिओवमं वाससहस्साहियं।

सूरविमाणाणं भंते ! देवीणं जाव जह. चउभागपलिओवमं उक्को. अद्धपलिओवमं पंचहिं वाससएहिं अधियं।

(३) (प्र.) भगवन् ! सूर्यविमानों के देवों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य स्थिति पल्योपम का चतुर्थांश और उत्कृष्ट स्थिति एक हजार वर्ष अधिक एक पल्योपम की है।

(प्र.) भगवन् ! सूर्यविमानों की देवियों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! सूर्यविमानों की देवियों की जघन्य स्थिति पल्योपम का चतुर्थ भाग और उत्कृष्ट स्थिति पाँच सौ वर्ष अधिक अर्द्ध-पल्योपम की है।

(3) (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of gods dwelling on the sun (*Surya viman*) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is one quarter of a *Palyopam* and the maximum is one hundred thousand years more than a *Palyopam.*

(Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of goddesses dwelling on the sun (*Surya viman*) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is one quarter of a *Palyopam* and the maximum is fifty thousand years more than half a *Palyopam.*

(४) गहविमाणाणं भंते ! देवाणं जाव जहन्नेणं चउभागपलिओवमं उक्को. पलिओवमं।

गहविमाणाणं भंते ! देवीणं जाव जह. चउभागपलिओवमं उक्कोसेणं अद्धपलिओवमं।

(४) (प्र.) भगवन् ! ग्रहविमानों के देवों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य स्थिति पल्योपम का चतुर्थ भाग और उत्कृष्ट स्थिति एक पल्योपम की है।

(प्र.) भगवन् ! ग्रहविमानों की देवियों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य स्थिति पल्योपम का चतुर्थ भाग और उत्कृष्ट स्थिति अर्द्ध-पल्योपम प्रमाण है।

(4) (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of gods dwelling on planets (*Graha viman*) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is one quarter of a *Palyopam* and the maximum is one *Palyopam.*

(Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of goddesses dwelling on planets (*Graha viman*) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is one quarter of a *Palyopam* and the maximum is half *Palyopam.*

(५) णक्खत्तविमाणाणं भंते ! देवाणं जाव गोयमा ! जह. चउभागपलिओवमं उक्को. अद्धपलिओवमं।

णक्खत्तविमाणाणं भंते ! देवीणं जाव गो. ! जहन्नेणं चउभागपलिओवमं उक्को. सातिरेगं चउभागपलिओवमं।

(५) (प्र.) भगवन् ! नक्षत्रविमानों के देवों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! उनकी जघन्य स्थिति पल्योपम का चतुर्थ भाग और उत्कृष्ट स्थिति अर्द्ध-पल्योपम की है।

(प्र.) भगवन् ! नक्षत्रविमानों की देवियों की स्थिति का प्रमाण क्या है ?

(उ.) गौतम ! उनकी जघन्य स्थिति पल्योपम का चतुर्थ भाग और उत्कृष्ट स्थिति साधिक पल्योपम का चतुर्थ भाग है।

(5) (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of gods dwelling on other specific heavenly bodies (*Nakshatra viman*) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is one quarter of a *Palyopam* and the maximum is half *Palyopam.*

(Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of goddesses dwelling on other specific heavenly bodies (*Nakshatra viman*) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is one quarter of a *Palyopam* and the maximum is slightly more than quarter *Palyopam.*

(६) ताराविमाणाणं भंते ! देवाणं जाव गो. ! जह. सातिरेगं अट्ठभागपलिओवमं उक्को. चउभागपलिओवमं।

ताराविमाणाणं भंते ! देवीणं जाव गो. ! जहन्नेणं अट्ठभागपलिओवमं उक्को. सातिरेगं अट्ठभागपलिओवमं।

(६) (प्र.) भगवन् ! ताराविमानों के देवों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! कुछ अधिक पल्योपम का अष्टमांश भाग जघन्य स्थिति है और उत्कृष्ट स्थिति पल्योपम का चतुर्थ भाग है।

(प्र.) भगवन् ! ताराविमानों की देवियों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य स्थिति पल्योपम का आठवाँ भाग और उत्कृष्ट स्थिति साधिक पल्योपम का आठवाँ भाग है।

(6) (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of gods dwelling on stars (*Tara viman*) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is a little more than one-eighth of a *Palyopam* and the maximum is quarter *Palyopam*.

(Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of goddesses dwelling on stars (*Tara viman*) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is one-eighth of a *Palyopam* and the maximum is slightly more than one-eighth of a *Palyopam*.

वैमानिक देवों की स्थिति

३९१. (१) वेमाणियाणं भंते ! देवाणं जाव गो. ! जहण्णेणं पलिओवमं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं।

वेमाणीणं भंते ! देवीणं जाव गो. ! जह. पलिओवमं उक्को. पणपण्णं पलिओवमाइं।

३९१. (१) (प्र.) भगवन् ! वैमानिक देवों की (सामान्य) स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! वैमानिक देवों की (सामान्य) स्थिति जघन्य एक पल्योपम की और उत्कृष्ट तैंतीस सागरोपम की है।

(प्र.) भगवन् ! वैमानिक देवियों की स्थिति कितनी है ?

(उ.) गौतम ! वैमानिक देवियों की जघन्य स्थिति एक पल्योपम की और उत्कृष्ट स्थिति पचपन पल्योपम की है।

LIFE-SPAN OF VAIMANIK GODS

391. (1) (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of *Vaimanik* gods (gods endowed with celestial-vehicles) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is slightly more than one *Palyopam* and the maximum is thirty three *Sagaropam.*

(Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of *Vaimanik* goddesses ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is one *Palyopam* and the maximum is fifty five *Palyopam.*

सौधर्म आदि अच्युत पर्यन्त कल्पों की स्थिति

(२) सोहम्मे णं भंते ! कप्पे देवाणं केवतिकालं ठिती पं. ?

गो. ! जह. पलिओवमं उक्कोसेणं दोन्नि सागरोवमाइं।

सोहम्मे णं भंते ! कप्पे देवीणं जाव गोयमा ! जहन्नेणं पलिओवमं उक्कोसेणं सत्त पलिओवमाइं।

सोहम्मे णं भंते ! कप्पे अपरिग्गहियाणं देवीणं जाव गो. ! जह. पलिओवमं उक्कोसेणं पन्नासं पलिओवमाइं।

(२) (प्र.) भगवन् ! सौधर्मकल्प के देवों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! उनकी जघन्य स्थिति एक पल्योपम की और उत्कृष्ट स्थिति दो सागरोपम की है।

(प्र.) भगवन् ! सौधर्मकल्प में (परिगृहीता) देवियों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! सौधर्मकल्प में (परिगृहीता) देवियों की जघन्य स्थिति एक पल्योपम की और उत्कृष्ट स्थिति सात पल्योपम की है।

(प्र.) भगवन् ! सौधर्मकल्प में अपरिगृहीता देवियों की स्थिति कितनी है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य स्थिति एक पल्योपम की और उत्कृष्ट स्थिति पचास पल्योपम की होती है।

LIFE-SPAN OF CELESTIAL-VEHICULAR GODS

(2) (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of gods the *Saudharma Kalp* (celestial-vehicular gods dwelling in a specific celestial area called *Saudharma Kalp*) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is one *Palyopam* and the maximum is two *Sagaropam.*

(Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of the married goddesses of *Saudharma Kalp* ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is one *Palyopam* and the maximum is seven *Palyopam.*

(Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of the unmarried goddesses of *Saudharma Kalp* ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is one *Palyopam* and the maximum is fifty *Palyopam.*

(३) ईसाणे णं भंते ! कप्पे देवाणं केवतिकालं ठिती पन्नत्ता ?

गो. ! जहन्नेणं सातिरेगं पलिओवमं उक्को. सातिरेगाइं दो सागरोवमाइं।

ईसाणे णं भंते ! कप्पे देवीणं जाव गो. ! जह. सातिरेगं पलिओवमं उक्को. नव पलिओवमाइं।

ईसाणे णं भंते ! कप्पे अपरिग्गहियाणं देवीणं जाव गो. ! जहन्नेणं साइरेगं पलिओवमं उक्कोसेणं पणपण्णं पलिओवमाइं।

(३) (प्र.) भगवन् ! ईशानकल्प में देवों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! ईशानकल्प के देवों की जघन्य स्थिति साधिक पल्योपम की और उत्कृष्ट स्थिति साधिक दो सागरोपम की है।

(प्र.) भगवन् ! ईशानकल्प की (परिगृहीता) देवियों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य स्थिति साधिक पल्योपम की और उत्कृष्ट स्थिति नौ पल्योपम की है।

(प्र.) भगवन् ! ईशानकल्प में अपरिगृहीता देवियों की स्थिति कितनी है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य स्थिति कुछ अधिक पल्योपम की और उत्कृष्ट स्थिति पचपन पल्योपम की है।

विवेचन—ईशानकल्प से आगे के कल्पों में देवियाँ उत्पन्न नहीं होतीं इस कारण आगे उनकी स्थिति का उल्लेख नहीं है। परिगृहीत का अर्थ है, देवों द्वारा स्वीकृत या ग्रहीत।

(3) (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of gods the *Ishan Kalp* (celestial-vehicular gods dwelling in a specific celestial area called *Ishan Kalp*) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is a little more than one *Palyopam* and the maximum is a little more than two *Sagaropam.*

(Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of the married goddesses of *Ishan Kalp* ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is a little more than one *Palyopam* and the maximum is nine *Palyopam.*

(Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of the unmarried goddesses of *Ishan Kalp* ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is a little more than one *Palyopam* and the maximum is fifty five *Palyopam.*

Elaboration—Beyond *Ishan Kalp* goddesses are not born thus there is no mention of life-span. *Parigrihit* means married or formally accepted as consorts by gods.

(४) सणंकुमारे णं भंते ! कप्पे देवाणं केवइकालं ठिती पन्नत्ता ?

गो. ! जह. दो सागरोवमाइं उक्कोसेणं सत्त सागरोवमाइं।

(४) (प्र.) भगवन् ! सनत्कुमारकल्प के देवों की स्थिति कितनी है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य स्थिति दो सागरोपम की और उत्कृष्ट स्थिति सात सागरोपम की है।

(4) (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of gods the *Sanatkumar Kalp* (celestial-vehicular gods dwelling in a specific celestial area called *Sanatkumar Kalp*) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is two *Sagaropam* and the maximum is seven *Sagaropam.*

(५) माहिंदे णं भंते ! कप्पे देवाणं जाव गोयमा ! जह. साइरेगाइं दो सागरोवमाइं, उक्को. साइरेगाइं सत्त सागरोवमाइं।

(५) (प्र.) भगवन् ! माहेन्द्रकल्प में देवों की स्थिति कितनी है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य स्थिति साधिक दो सागरोपम की और उत्कृष्ट स्थिति कुछ अधिक सात सागरोपम की है।

(5) (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of gods the *Mahendra Kalp* (celestial-vehicular gods dwelling in a specific celestial area called *Mahendra Kalp*) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is a little more than two *Sagaropam* and the maximum is a little more than seven *Sagaropam.*

(६) बंभलोए णं भंते ! कप्पे देवाणं जाव गोयमा ! जहं. सत्त सागरोवमाइं उक्कोसेणं दस सागरोवमाइं।

(६) (प्र.) भगवन् ! ब्रह्मलोककल्प के देवों की स्थिति कितनी है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य स्थिति सात सागरोपम की और उत्कृष्ट स्थिति दस सागरोपम की है।

(6) (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of gods the *Brahmalok Kalp* (celestial-vehicular gods dwelling in a specific celestial area called *Brahmalok Kalp*) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is seven *Sagaropam* and the maximum is ten *Sagaropam.*

(७) एवं कप्पे कप्पे केवतिकालं ठिती पन्नत्ता ?

गो. ! एवं भाविणयव्वं–

लंतए जह. दस सागरोवमाइं उक्को. चोद्दस सागरोवमाइं।

महासुक्के जह. चोद्दस सागरोवमाइं उक्कोसेणं सत्तरस सागरोवमाइं।

सहस्सारे जह. सत्तरस सागरोवमाइं उक्कोसेणं अट्ठारस सागरोवमाइं।

आणए जह. अट्ठारस सागरोवमाइं उक्को. एक्कूणवीसं सागरोवमाइं।

पाणए जह. एक्कूणवीसं सागरोवमाइं उक्को. वीसं सागरोवमाइं।

आरणे जह. वीसं सागरोवमाइं उक्को. एक्कवीसं सागरोवमाइं।

अच्चुए जह. एक्कवीसं सागरोवमाइं उक्कोसेणं बावीसं सागरोवमाइं।

(७) (प्र.) भगवन् ! इसी प्रकार प्रत्येक कल्प की कितने काल की स्थिति कही है ?

(उ.) गौतम ! वह इस प्रकार जानना चाहिए–

लांतककल्प में देवों की जघन्य स्थिति दस सागरोपम की और उत्कृष्ट स्थिति चौदह सागरोपम की है।

महाशुक्रकल्प में देवों की जघन्य स्थिति चौदह सागरोपम की और उत्कृष्ट स्थिति सत्रह सागरोपम की है।

सहस्रारकल्प के देवों की जघन्य स्थिति सत्रह सागरोपम की और उत्कृष्ट स्थिति अठारह सागरोपम की है।

आनतकल्प में जघन्य स्थिति अठारह सागरोपम की और उत्कृष्ट स्थिति उन्नीस सागरोपम की है।

प्राणतकल्प में जघन्य स्थिति उन्नीस सागरोपम की और उत्कृष्ट स्थिति बीस सागरोपम की है।

आरणकल्प के देवों की जघन्य स्थिति बीस सागरोपम की और उत्कृष्ट स्थिति इक्कीस सागरोपम की है।

अच्युतकल्प के देवों की जघन्य स्थिति इक्कीस सागरोपम की और उत्कृष्ट स्थिति बाईस सागरोपम की है।

(7) (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of gods of other *Kalps* (celestial-vehicular gods dwelling in other specific celestial areas) ?

(Ans.) Gautam ! That is as follows—

For the gods of *Lantak Kalp* the minimum life-span is ten *Sagaropam* and the maximum is fourteen *Sagaropam.*

For the gods of *Mahashukra Kalp* the minimum life-span is fourteen *Sagaropam* and the maximum is seventeen *Sagaropam.*

For the gods of *Sahasrar Kalp* the minimum life-span is seventeen *Sagaropam* and the maximum is eighteen *Sagaropam.*

For the gods of *Anat Kalp* the minimum life-span is eighteen *Sagaropam* and the maximum is nineteen *Sagaropam.*

For the gods of *Pranat Kalp* the minimum life-span is nineteen *Sagaropam* and the maximum is twenty *Sagaropam.*

For the gods of *Aran Kalp* the minimum life-span is twenty *Sagaropam* and the maximum is twenty one *Sagaropam.*

For the gods of *Achyut Kalp* the minimum life-span is twenty one *Sagaropam* and the maximum is twenty two *Sagaropam.*

नव ग्रैवेयक देवों की स्थिति

(८) (१) हेट्ठिमहेट्ठिमगेवेज्जविमाणेसु णं भंते ! देवाणं केवइकालं ठिती पं. ?

गो. ! जह. बावीसं सागरोवमाइं उक्को. तेवीसं सागरोवमाइं।

(२) हेट्ठिममज्झिमगेवेज्जविमाणेसु णं जाव गो. ! जह. तेवीसं सागरोवमाइं उक्कोसेणं चउवीसं सागरोवमाइं।

(३) हेट्ठिमउवरिमगेवेज्ज. जाव जह. चउवीसं सागरोवमाइं उक्को. पणुवीसं सागरोवमाइं।

(४) मज्झिमहेट्ठिमगेवेज्जविमाणेसु णं जाव गोयमा ! जह. पणुवीसं सागरोवमाइं उक्को. छव्वीसं सागरोवमाइं।

(५) मज्झिममज्झिमगेवेज्ज. जाव जह. छव्वीसं सागरोवमाइं उक्को. सत्तावीसं सागरोवमाइं।

(६) मज्झिमउवरिमगेवेज्जविमाणेसु णं जाव गोयमा ! जह. सत्तावीसं सागरोवमाइं उक्को. अट्ठावीसं सागरोवमाइं।

(७) उवरिमहेट्ठिमगेवेज्ज. जाव जह. अट्ठावीसं सागरोवमाइं उक्को. एक्कूणतीसं सागरोवमाइं।

(८) उवरिममज्झिमगेवेज्ज. जाव जह. एक्कूणतीसं सागरोवमाइं उक्को. तीसं सागरोवमाइं।

(९) उवरिमउवरिमगेवेज्ज. जाव जह. तीसं सागरोवमाइं उक्को. एक्कतीसं सागरोवमाइं।

(८) (१) (प्र.) भगवन् ! अधस्तन-अधस्तन (सबसे नीचे के) ग्रैवेयक विमान में देवों की स्थिति कितनी है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य स्थिति बाईस सागरोपम की और उत्कृष्ट स्थिति तेईस सागरोपम की है।

(२) (प्र.) भगवन् ! अधस्तन-मध्यम ग्रैवेयक विमान के देवों की स्थिति कितनी है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य स्थिति तेईस सागरोपम की और उत्कृष्ट स्थिति चौबीस सागरोपम की है।

(३) अधस्तन-उपरिम ग्रैवेयक के देवों की जघन्य स्थिति चौबीस सागरोपम की और उत्कृष्ट स्थिति पच्चीस सागरोपम की है।

(४) गौतम ! मध्यम-अधस्तन (मध्य में सबसे नीचे के) ग्रैवेयक के देवों की जघन्य स्थिति पच्चीस सागरोपम की और उत्कृष्ट स्थिति छब्बीस सागरोपम की है।

(५) मध्यम-मध्यम ग्रैवेयक देवों की जघन्य स्थिति छब्बीस सागरोपम की और उत्कृष्ट स्थिति सत्ताईस सागरोपम की है।

(६) गौतम ! मध्यम-उपरिम ग्रैवेयक विमानों में देवों की जघन्य स्थिति सत्ताईस सागरोपम की और उत्कृष्ट स्थिति अट्ठाईस सागरोपम की है।

(७) उपरिम-अधस्तन ग्रैवेयक विमानों के देवों की जघन्य स्थिति अट्ठाईस सागरोपम की और उत्कृष्ट स्थिति उनतीस सागरोपम की है।

(८) उपरिम-मध्यम ग्रैवेयक देवों की जघन्य स्थिति उनतीस सागरोपम की और उत्कृष्ट स्थिति तीस सागरोपम की है।

(९) उपरिम-उपरिम (सबसे ऊपर) ग्रैवेयक विमानों के देवों की जघन्य स्थिति तीस सागरोपम की और उत्कृष्ट स्थिति इकतीस सागरोपम की है।

LIFE-SPAN OF NINE GRAIVEYAK GODS

(8) (1) (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of the *Adhastan-adhastan Graiveyak* gods (gods dwelling in lower region of lower specific part of the celestial area called *Graiveyak*) ? (*adhastan* = lower; *madhyam* = middle and *uparim* = upper)

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is twenty two *Sagaropam* and the maximum is twenty three *Sagaropam*.

(2) (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of the *Adhastan-madhyam Graiveyak* gods (gods dwelling in middle region of lower specific part of the specific area called *Graiveyak*) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is twenty three *Sagaropam* and the maximum is twenty four *Sagaropam*.

(3) For the *Adhastan-uparim Graiveyak* gods (gods dwelling in upper region of lower specific part of *Graiveyak*) the minimum life-span is twenty four *Sagaropam* and the maximum is twenty five *Sagaropam.*

(4) Gautam ! For the *Madhyam-adhastan Graiveyak* gods (gods dwelling in lower region of middle specific part of *Graiveyak*) the minimum life-span is twenty five *Sagaropam* and the maximum is twenty six *Sagaropam.*

(5) For the *Madhyam-madhyam Graiveyak* gods (gods dwelling in middle region of middle specific part of *Coraiveyak*) the minimum life-span is twenty six *Sagaropam* and the maximum is twenty seven *Sagaropam.*

(6) Gautam ! For the *Madhyam-uparim Graiveyak* gods (gods dwelling in upper region of middle specific part of *Coraiveyak*) the minimum life-span is twenty seven *Sagaropam* and the maximum is twenty eight *Sagaropam.*

(7) For the *Uparim-adhastan* (lower region of upper part) *Graiveyak* gods the minimum life-span is twenty eight *Sagaropam* and the maximum is twenty nine *Sagaropam.*

(8) For the *Uparim-madhyam* (middle region of upper part) *Graiveyak* gods the minimum life-span is twenty nine *Sagaropam* and the maximum is thirty *Sagaropam.*

(9) For the *Uparim-uparim* (upper region of upper part) *Graiveyak* gods the minimum life-span is thirty *Sagaropam* and the maximum is thirty one *Sagaropam.*

पाँच अनुत्तर विमान के देवों की स्थिति

(१) विजय–वेजयंत–जयंत–अपराजितविमाणेसु णं भंते ! देवाणं केवइकालं ठिती पण्णत्ता ?

गो. ! जहण्णेणं एक्कतीसं सागरोवमाइं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं।

सव्वट्ठसिद्धे णं भंते ! महाविमाणे देवाणं केवइकालं ठिती पण्णत्ता ?

गो. ! अजहण्णमणुक्कोसा तेत्तीसं सागरोवमाइं। से तं सुहुमे अद्धापलिओवमे। से तं अद्धापलिओवमे।

(९) (प्र.) भगवन् ! विजय, वैजयन्त, जयन्त और अपराजित विमानों के देवों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! जघन्य स्थिति इकतीस सागरोपम की और उत्कृष्ट स्थिति तैंतीस सागरोपम की है।

(प्र.) भगवन् ! सर्वार्थसिद्ध महाविमान के देवों की स्थिति कितने काल की है ?

(उ.) गौतम ! उनकी अजघन्य-अनुत्कृष्ट (एक समान) स्थिति तैंतीस सागरोपम की होती है।

इस प्रकार सूक्ष्म अद्धा-पल्योपम का वर्णन करने के साथ अद्धा-पल्योपम का निरूपण पूर्ण हुआ।

LIFE-SPAN OF FIVE ANUTTAR VIMAN GODS

(9) (Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of the gods of *Vijaya, Vaijayant, Jayant* and *Aparajit Vimans* (gods dwelling in specific areas of the unique highest heavens known as *Anuttar* or unique) ?

(Ans.) Gautam ! The minimum life-span is thirty one *Sagaropam* and the maximum is thirty two *Sagaropam.*

(Q.) *Bhante* ! What is the duration of the *sthiti* (life-span) of the gods of the great *Sarvarth-siddha Viman* ?

(Ans.) Gautam ! In their case the life-span is neither minimum nor maximum but uniformly thirty three *Sagaropam.*

This concludes the description of *Sukshma Addha Palyopam.* This also concludes the description of *Addha Palyopam.*

क्षेत्रपल्योपम का निरूपण

३९२. से किं तं खेत्तपलिओवमे ?

खेत्तपलिओवमे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा-सुहुमे य वावहारिए य।

३९२. (प्र.) क्षेत्रपल्योपम क्या है ?

(उ.) क्षेत्रपल्योपम दो प्रकार का है-सूक्ष्म क्षेत्रपल्योपम और व्यावहारिक क्षेत्रपल्योपम।

KSHETRA PALYOPAM

392. (Q.) What is this *Kshetra Palyopam* ?

(Ans.) *Kshetra Palyopam* is of two kinds—*Sukshma Kshetra Palyopam* and *Vyavahar Kshetra Palyopam.*

३९३. तत्थ णं जे से सुहुमे से ठप्पे।

३९३. उनमें से सूक्ष्म क्षेत्रपल्योपम स्थापनीय है। (अभी स्थगित रखा गया है, इसका वर्णन आगे सूत्र ३९६ में है।)

393. Of these, *Sukshma Kshetra Palyopam* is to be ensconced. (for now, discussed later in aphorism 396.)

३९४. तत्थ णं जे से वावहारिए से जहानामए पल्ले सिया—जोयणं आयाम-विक्खंभेणं, जोयणं उड्ढं उच्चत्तेणं, तं तिगुणं सविसेसं परिक्खेवेणं; से णं पल्ले एगाहिय—बेआहिय—तेआहिय जाव भरिए वालग्गकोडीणं। ते णं वालग्गा णो अग्गी डहेज्जा, णो वातो हरेज्जा, जाव ण पूइत्ताए हव्वमागच्छेज्जा। जे णं तस्स पल्लस्स आगासपदेसा तेहिं वालग्गेहिं अप्फुन्ना ततो णं समए समए गते एगमेगं आगासपएसं अवहाय जावतिएणं कालेणं से पल्ले खीणे जाव निट्ठिए भवइ। से तं वावहारिए खेत्तपलिओवमे।

एएसिं पल्लाणं कोडाकोडी हवेज्ज दसगुणिया।
तं वावहारियस्स खेत्तसागरोवमस्स एगस्स भवे परीमाणं॥१॥

३९४. उन दोनों में से व्यावहारिक क्षेत्रपल्योपम का स्वरूप इस प्रकार जानना चाहिए-जैसे कोई एक योजन लम्बा-चौड़ा तथा एक योजन ऊँचा और कुछ अधिक तिगुनी परिधि वाला धान्य मापने के पल्य (गहरे गोल कोठे) के समान पल्य (गहरा गोल कुँआ) हो। उस पल्य को एक, दो, तीन यावत् सात दिन बढ़े हुए बालाग्रों से इस प्रकार से ठसाठस भरा जाए कि उन बालाग्रों को न तो अग्नि जला सके, न वायु उड़ा सके आदि यावत् उनमें दुर्गन्ध भी पैदा न हो। उस पल्य के जो आकाशप्रदेश उन बालाग्रों से व्याप्त हैं, उन प्रदेशों में से प्रत्येक समय एक-एक आकाशप्रदेश का अपहार किया जाये-निकाला जाये तो जितने काल में वह पल्य खाली यावत् रजरहित हो जाये, वह एक व्यावहारिक क्षेत्रपल्योपम है।

इन दस कोटाकोटि व्यावहारिक क्षेत्रपल्योपमों का एक व्यावहारिक क्षेत्रसागरोपम होता है॥१॥

394. Of these *Vyavahar Kshetra Palyopam* is as follows—For example there is a silo one *yojan* long, one *yojan* wide, one *yojan* high and with a circumference of a little more than three times (three *yojans*). That silo is filled to the brim with hair-tips grown in one day, two days, three days, up to a maximum of seven days (after shaving the head of newly born). The hair are tightly packed into a solid mass so that afterwards they cannot be burnt by fire or swept by air and are neither decayed, destroyed or putrefied. Now, *Vyavaharik Kshetra Palyopam* is the total time taken in completely emptying this silo by taking out one space-point at a time, every *Samaya*, of the space-points occupied by these hair-tips and sweeping it clean and free from any sand particles, slime and even odour.

Such ten *kodakodi* (10^{14}) *Vyavaharik Uddhar Palyopam* make one *Vyavaharik Kshetra Sagaropam.* (1)

३९५. एएहिं वावहारिएहिं खेत्तपलिओवम–सागरोवमेहिं किं पयोयणं ?

एएहिं. नत्थि किंचिप्पओयणं, केवलं तु पण्णवणा पण्णविज्जइ।

से तं वावहारिए खेत्तपलिओवमे।

३९५. **(प्र.)** भगवन् ! इन व्यावहारिक क्षेत्रपल्योपम और सागरोपम से क्या प्रयोजन सिद्ध है ?

(उ.) इन व्यावहारिक क्षेत्रपल्योपम और सागरोपम से कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होता। मात्र इनके स्वरूप की प्ररूपणा के लिए की प्ररूपणा ही गई है।

इस प्रकार से यह व्यावहारिक क्षेत्रपल्योपम का वर्णन समाप्त हुआ।

395. (Q.) What is the purpose of these *Vyavaharik Kshetra Palyopam* and *Sagaropam* ?

(Ans.) No purpose is served by these *Vyavaharik Kshetra Palyopam* and *Sagaropam.* They have just been mentioned as abstract theoretical presentation.

This concludes the description of *Vyavaharik Kshetra Palyopam.*

३९६. से किं तं सुहुमे खेत्तपलिओवमे ?

सुहुमे खेत्तपलिओवमे से जहाणामए पल्ले सिया—जोयणं आयाम—विक्खंभेणं, जोयणं उड्ढं उच्चत्तेणं, तं तिगुणं सविसेसं परिक्खेवेणं; से णं पल्ले एगाहिय—बेआहिय—तेहिय. जाव उक्कोसेणं सत्तरत्त परूढाणं सम्मट्ठे सन्निचिते भरिए वालग्गकोडीणं। तत्थ णं एगमेगे वालग्गे असंखेज्जाइं खंडाइं कज्जइ, ते णं वालग्गा दिट्ठीओगाहणाओ असंखेज्जइभागमेत्ता सुहुमस्स पणगजीवस्स सरीरोगाहणाओ असंखेज्जगुणा। ते णं वालग्गा णो अग्गी डहेज्जा, नो वातो हरेज्जा, णो कुच्छेज्जा, णो पलिविद्धंसेज्जा, णो पूइत्ताए हव्वमागच्छेज्जा। जे णं तस्स पल्लस्स आगासपदेसा तेहिं वालग्गेहिं अप्फुन्ना वा अणप्फुण्णा वा तओ णं समए समए गते एगमेगं आगासपदेसं अवहाय जावइएणं कालेणं से पल्ले खीणे नीरए निल्लेवे णिट्ठिए भवति। से तं सुहुमे खेत्तपलिओवमे।

३९६. (प्र.) वह सूक्ष्म क्षेत्रपल्योपम क्या है ?

(उ.) सूक्ष्म क्षेत्रपल्योपम का स्वरूप इस प्रकार है—जैसे एक योजन लम्बा—चौड़ा, एक योजन ऊँचा और कुछ अधिक तिगुनी परिधि वाला धान्य के पल्य के समान एक पल्य हो। एक दिन, दो दिन, तीन दिन यावत् सात दिन के बढ़े हुए बालाग्रों से ठसाठस भरा जाये। बालाग्रों के असंख्यात—असंख्यात ऐसे खण्ड किये जायें, जो दृष्टि में आने वाले पुद्गलों की अवगाहना से असंख्यात भाग हों। उन बालाग्र खण्डों को न तो अग्नि जला सके और न वायु उड़ा सके, वे न तो सड़—गल सकें और न जल से भीग सकें, उनमें दुर्गन्ध भी उत्पन्न न हो सके। उस पल्य के बालाग्रों से जो आकाशप्रदेश स्पृष्ट (व्याप्त) हुए हों और स्पृष्ट न हुए हों (दोनों प्रकार के प्रदेश यहाँ ग्रहण करना चाहिए)। उनमें से प्रति समय एक—एक आकाशप्रदेश का अपहार किया जाये—निकाला जाये तो जितने काल में वह पल्य क्षीण, नीरज, निर्लेप एवं सर्वात्मना विशुद्ध हो जाये, उसे सूक्ष्म क्षेत्रपल्योपम कहते हैं।

SUKSHMA KSHETRA PALYOPAM AND SAGAROPAM

396. (Q.) What is this *Sukshma Kshetra Palyopam* ?

(Ans.) *Sukshma Kshetra Palyopam* is described as follows—For example there is a silo one *yojan* long, one *yojan* wide, one *yojan* high and with a circumference of a little more than three times

(three *yojans*). That silo is filled to the brim with hair-tips grown in one day, two days, three days, up to a maximum of seven days (after shaving the head). The hair are tightly packed into a solid mass. Now imagine one *balagra* (hair-tip) to have been cut into innumerable minute pieces that are equivalent to an innumerable fraction of the most minute visible particle and innumerable times the area occupied by a single being of the minute mildew class. And these pieces of hair-tips cannot be burnt by fire or swept by air and are neither decayed, destroyed or putrefied. Now, *Vyavaharik Kshetra Palyopam* is the total time taken in completely emptying this silo by taking out one space-point at a time, every *Samaya*, of the space-points occupied as well as unoccupied by these hair-tips and sweeping it clean and free from any sand particles, slime and even odour.

३९७. तत्थ णं चोयए पण्णवगं एवं वयासी–

अत्थि णं तस्स पल्लस्स आगासपएसा जे णं तेहिं वालग्गेहिं अणप्फुण्णा ?

हंता अत्थि।

जहा को दिट्ठंतो ?

से जहाणामते कोट्ठए सिया कोहंडाणं भरिए, तत्थ णं माउलुंगा पक्खित्ता ते वि माया, तत्थ णं बिल्ला पक्खित्ता ते वि माया, तत्थ णं आमलया पक्खित्ता ते वि माया तत्थ णं बयरा पक्खित्ता ते वि माया, तत्थ णं चणगा पक्खित्ता ते वि माया, तत्थ णं मुग्गा पक्खित्ता ते वि माया, तत्थ णं सरिसवा पक्खित्ता ते वि माया, तत्थ णं गंगावालुया पक्खित्ता सा वि माया, एवामेव एएणं दिट्ठंतेणं अत्थि णं तस्स पल्लस्स आगासपएसा जे णं तेहिं वालग्गेहिं अणप्फुण्णा।

एएसिं पल्लाणं कोडाकोडी हवेज्ज दसगुणिया।

तं सुहुमस्स खेत्तसागरोवमस्स एगस्स भवे परीमाणं॥१॥

३९७. इस प्रकार प्ररूपणा करने वाले से जिज्ञासु शिष्य ने पूछा–

क्या उस पल्य के ऐसे भी आकाशप्रदेश हैं जो उन बालाग्र खण्डों से अस्पृष्ट रहे हों ?

हाँ, (ऐसे आकाशप्रदेश भी रह जाते) हैं।

इस विषय में कोई दृष्टान्त है ?

हाँ, है। जैसे कोई एक कोष्ठ (कोठा) कूष्मांड के फलों (कुम्हड़ों) से भरा हुआ हो और उसमें बिजौरा फल डाले गये तो वे भी उसमें समा गये। फिर उसमें बिल्व फल (बेल) डाले तो वे भी समा जाते हैं। इसी प्रकार उसमें आँवला डाले जायें तो वे भी समा जाते हैं। फिर वहाँ बेर डाले जायें तो वे भी समा जाते हैं। फिर चने डालें तो वे भी उसमें समा जाते हैं। फिर मूँग के दाने डाले जायें तो वे भी उसमें समा जाते हैं। फिर सरसों डाले जायें तो वे भी समा जाते हैं। इसके बाद गंगा महानदी की बालू डाली जाये तो वह भी उसमें समा जाती है। इस दृष्टान्त से जाना जाता है कि उस पल्य के ऐसे भी आकाशप्रदेश हैं जो उन बालाग्र खण्डों से अस्पृष्ट रह जाते हैं।

इन दस कोडाकोड पल्यों का एक सूक्ष्म क्षेत्रसागरोपम का परिमाण होता है ॥१॥

397. The curious disciple asks from the teacher who said thus—

In that silo are there such space-points that remain unoccupied or untouched by the pieces of hair-tips.

Yes, there are.

Is there some example of this ?

Yes, there is. For example, when citron fruits are put in a silo filled with gourds they get accommodated. After that when *bilva* fruits (timb; *Aegle marmelos*) are put in it they also get accommodated. In the same way when *amla* (hog-plum; *Emblica officinalis*) fruits are put in it they also get accommodated. Again, when jujube fruits are put in it they too get accommodated. Once more, when grams are put in it they also get accommodated. After this when green grams are put in it they also get accommodated. Now when mustard grains are put in it they also get accommodated. And lastly when sand of the Ganges is put in it that also gets accommodated. By this example it is known that in that silo there are space-points that are untouched by those pieces of hair-tips.

Such ten *kodakodi* (10^{14}) *Sukshma Kshetra Palyopam* make one *Sukshma Kshetra Sagaropam.* (1)

३९८. एतेहिं सुहुमेहिं खेत्तपलिओवम–सागरोवमेहिं किं पओयणं ?

एतेहिं सुहुमेहिं पलिओवम–सागरोवमेहिं दिट्ठिवाए दव्वाइं मविज्जंति।

३९८. **(प्र.)** इन सूक्ष्म क्षेत्रपल्योपम और सागरोपम का क्या प्रयोजन है ?

(उ.) इन सूक्ष्म क्षेत्रपल्योपम और सागरोपम द्वारा दृष्टिवाद में वर्णित द्रव्यों का मान किया जाता है।

PURPOSE OF SUKSHMA KSHETRA PALYOGAM AND SAGAROPAM

398. (Q.) What is the purpose of these *Sukshma Kshetra Palyopam* and *Sagaropam* ?

(Ans.) *Sukshma Kshetra Palyopam* and *Sagaropam* are used to measure the dimension of *dravyas* (substances) mentioned in *Drishtivada* (extinct subtle Jain canon).

(पिछले सूत्र में बताया है कि सूक्ष्म क्षेत्रपल्योपम से द्रव्यों का मान किया जाता है। अतः अब उक्त द्रव्यों का स्वरूप बताया जाता है।)

(In the preceeding aphorism it is stated that *Sukshma Kshetra Palyopam* is used to quantify entities. Therefore now the details about entities are given.)

अजीवद्रव्यों का वर्णन

३९९. कइविधा णं भंते ! दव्वा पण्णत्ता ?

गो. ! दुविहा पण्णत्ता। तं जहा–जीवदव्वा य अजीवदव्वा य।

३९९. **(प्र.)** भगवन् ! द्रव्य कितने प्रकार के हैं ?

(उ.) गौतम ! द्रव्य के दो प्रकार हैं, यथा–जीवद्रव्य और अजीवद्रव्य।

NON-SOUL ENTITIES

399. (Q.) *Bhante* ! How many kinds of *dravya* (entities) are said to be there ?

(Ans.) Gautam ! *Dravya* (entities) are said to be of two kinds—*jiva dravya* (soul entity) and *ajiva dravya* (non-soul entity).

४००. अजीवदव्वा णं भंते ! कतिविहा पण्णत्ता ?

गो. ! दुविहा पन्नत्ता। तं जहा–अरूविअजीवदव्वा या रूविअजीवदव्वा य।

४००. (प्र.) भगवन् ! अजीवद्रव्य कितने प्रकार के हैं ?

(उ.) गौतम ! अजीवद्रव्य दो प्रकार के हैं–अरूपी अजीवद्रव्य और रूपी अजीवद्रव्य।

400. (Q.) *Bhante* ! How many kinds of *ajiva dravya* (non-soul entities) are said to be there ?

(Ans.) Gautam ! *Ajiva dravya* (non-soul entities) are said to be of two kinds—*arupi ajiva dravya* (formless non-soul entities) and *rupi ajiva dravya* (non-soul entities with form).

४०१. अरूविअजीवदव्वा णं भंते ! कतिविहा पण्णत्ता ?

गो. ! दसविहा पण्णत्ता। तं जहा–धम्मत्थिकाए, धम्मत्थिकायस्स देसा, धम्मत्थिकायस्स पदेसा, अधम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकायस्स देसा, अधम्मत्थिकायस्स पदेसा, आगासत्थिकाए, आगासत्थिकायस्स देसा, आगासत्थिकायस्स पदेसा, अद्धासमए।

४०१. (प्र.) भगवन् ! अरूपी अजीवद्रव्य के कितने प्रकार हैं ?

(उ.) गौतम ! अरूपी अजीवद्रव्य के दस प्रकार हैं। यथा–(१) धर्मास्तिकाय, (२) धर्मास्तिकाय के देश, (३) धर्मास्तिकाय के प्रदेश, (४) अधर्मास्तिकाय, (५) अधर्मास्तिकायदेश, (६) अधर्मास्तिकायप्रदेश, (७) आकाशास्तिकाय, (८) आकाशास्तिकायदेश, (९) आकाशास्तिकायप्रदेश, और (१०) अद्धासमय (समय)।

401. (Q.) *Bhante* ! How many kinds of *arupi ajiva dravya* (formless non-soul entities) are said to be there ?

(Ans.) Gautam ! *Arupi ajiva dravya* (formless non-soul entities) are said to be of ten kinds—(1) *Dharmastikaya* (motion entity), (2) *Dharmastikaya-desh* (section of motion entity), (3) *Dharmastikaya-pradesh* (space-point of motion entity), (4) *Adharmastikaya* (rest entity), (5) *Adharmastikaya-desh* (section of rest entity), (6) *Adharmastikaya-pradesh* (space-point of rest entity), (7) *Akashastikaya* (space entity), (8) *Akashastikaya-desh* (section of space entity), (9) *Akashastikaya-pradesh* (space-point of sky entity), and (10) *Addhasamaya* (time).

४०२. रूविअजीवदव्वा णं भंते ! कतिविहा पन्नत्ता ?

गो. ! चउव्विहा पण्णत्ता। तं जहा—१. खंधा, २. खंधदेसा, ३. खंधप्पदेसा, ४. परमाणुपोग्गला।

४०२. (प्र.) भगवन् ! रूपी अजीवद्रव्य के कितने प्रकार हैं ?

(उ.) गौतम ! वे चार प्रकार के हैं, यथा-(१) स्कन्ध, (२) स्कन्धदेश, (३) स्कन्धप्रदेश, और (४) परमाणु पुद्‌गल।

402. (Q.) *Bhante* ! How many kinds of *rupi ajiva dravya* (non-soul entities with form) are said to be there ?

(Ans.) Gautam ! *Rupi ajiva dravya* (non-soul entities with form) are said to be of four kinds—(1) *Skandh* (aggregate), (2) *Skandh-desh* (sections of the aggregate), (3) *Skandh-pradesh* (space-points of the aggregate), and (4) *Paramanu pudgala* (ultimate-particle of matter).

४०३. ते णं भंते ! किं संखेज्जा असंखेज्जा अणंता ?

गोयमा ! नो संखेज्जा, नो असंखेज्जा, अणंता।

से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चति—ते णं नो संखेज्जा, जो असंखेज्जा, अणंता ?

गो. ! अणंता परमाणुपोग्गला अणंता दुपएसिया खंधा जाव अणंता अणंतपदेसिया खंधा, से एतेणं अट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चति—ते णं नो संखेज्जा, नो असंखेज्जा, अणंता।

४०३. (प्र.) भगवन् ! ये स्कन्ध आदि संख्यात हैं, असंख्यात हैं अथवा अनन्त हैं ?

(उ.) गौतम ! ये स्कन्ध आदि संख्यात नहीं हैं, असंख्यात भी नहीं हैं किन्तु अनन्त हैं।

(प्र.) भगवन् ! किस हेतु से ऐसा कहा जाता है कि स्कन्ध आदि संख्यात नहीं हैं, असंख्यात नहीं हैं किन्तु अनन्त हैं ?

(उ.) गौतम ! परमाणु पुद्‌गल अनन्त हैं, द्विप्रदेशिकस्कन्ध अनन्त हैं यावत् अनन्तप्रदेशिकस्कन्ध अनन्त हैं। इसीलिए गौतम ! यह कहा है कि वे न संख्यात हैं, न असंख्यात हैं किन्तु अनन्त हैं।

403. (Q.) *Bhante* ! Are these (*skandh* and others) countable, innumerable or infinite ?

(Ans.) Gautam ! These (*skandh* and others) are neither countable nor innumerable but infinite.

(Q.) *Bhante* ! Why it is said that these (*skandh* and others) are neither countable nor innumerable but infinite ?

(Ans.) Gautam ! *Paramanu-pudgala* (ultimate-particles) are infinite, aggregates of two space-points are infinite and so on, aggregates of infinite space-points are infinite. Therefore, Gautam ! It is said that these (*skandh* etc.) are neither countable nor innumerable but infinite.

जीवद्रव्यप्ररूपण

४०४. जीवदव्वा णं भंते ! किं संखेज्जा असंखेज्जा अणंता ?

गो. ! नो संखेज्जा, नो असंखेज्जा, अणंता।

से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जीवदव्वा णं नो संखेज्जा नो असंखेज्जा; अणंता ?

गोयमा ! असंखेज्जा णेरइया, असंखेज्जा असुरकुमारा जाव असंखेज्जा थणियकुमारा, असंखेज्जा पुढवीकाइया जाव असंखेज्जा वाउकाइया, अणंता वणस्सइकाइया, असंखेज्जा बेंदिया जाव असंखेज्जा चउरिंदिया, असंखेज्जा पंचेंदियतिरिक्खजोणिया असंखेज्जा मणूसा, असंखेज्जा वाणमंतरिया, असंखेज्जा जोइसिया, असंखेज्जा वेमाणिया, अणंता सिद्धा, से एएणं अट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ जीवदव्वा णं नो संखेज्जा, नो असंखेज्जा, अणंता।

॥ आयु ठिति त्ति पयं सम्मत्तं ॥

४०४. **(प्र.)** क्या जीवद्रव्य संख्यात हैं, असंख्यात हैं अथवा अनन्त हैं ?

(उ.) गौतम ! जीवद्रव्य संख्यात नहीं हैं, असंख्यात नहीं हैं किन्तु अनन्त हैं।

(प्र.) भगवन् ! किस कारण ऐसा कहा जाता है कि जीवद्रव्य संख्यात नहीं, असंख्यात नहीं किन्तु अनन्त हैं।

(उ.) गौतम ! अनन्त कहने का कारण यह है–असंख्यात नारक हैं, असंख्यात असुरकुमार यावत् स्तनितकुमार देव हैं, असंख्यात पृथ्वीकायिक जीव हैं यावत् असंख्यात

वायुकायिक जीव हैं, वनस्पतिकायिक जीव अनन्त हैं, द्वीन्द्रिय असंख्यात हैं यावत् चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीव असंख्यात हैं, मनुष्य असंख्यात हैं, वाणव्यन्तर देव असंख्यात हैं, ज्योतिष्क देव, वैमानिक देव असंख्यात हैं और सिद्ध जीव अनन्त हैं। इसीलिए गौतम ! ऐसा कहा जाता है कि जीवद्रव्य संख्यात नहीं, असंख्यात भी नहीं किन्तु अनन्त हैं।

॥ आयु स्थितिपद प्रकरण समाप्त ॥

SOUL ENTITIES

404. (Q.) *Bhante* ! Are *jiva dravya* (soul entities) countable, innumerable or infinite ?

(Ans.) Gautam ! *Jiva dravya* (soul entities) are neither countable nor innumerable but infinite.

(Q.) *Bhante* ! Why it is said that *jiva dravya* (soul entities) are neither countable nor innumerable but infinite ?

(Ans.) Gautam ! *Naaraks* (infernal beings) are innumerable, divine beings including *Asurkumar* to *Stanitkumar* demon-gods are innumerable, earth-bodied to air-bodied beings are innumerable, plant-bodied beings are infinite, two-sensed to four-sensed beings and five-sensed animals are innumerable, human beings are innumerable, *Vanavyantar* gods are innumerable, *Jyotishk* gods are innumerable, *Vaimanik* gods are innumerable, and *Siddhas* (liberated souls) are infinite. Therefore, Gautam ! It is said that *jiva dravya* (soul entities) are neither countable nor innumerable but infinite.

● END OF THE DISCUSSION ON LIFE-SPAN ●

शरीर-प्रकरण
THE DISCUSSION ON BODY

शरीरनिरूपण

४०५. कति णं भंते ! सरीरा पं. ?

गो. ! पंच सरीर पण्णत्ता। तं जहा-१. ओरालिए, २. वेउव्विए, ३. आहारे, ४. तेयए, ५. कम्मए।

४०५. (**प्र.**) भंते ! शरीर कितने प्रकार के हैं ?

(**उ.**) गौतम ! शरीर पाँच प्रकार के हैं। यथा-(१) औदारिक, (२) वैक्रिय, (३) आहारक, (४) तैजस्, तथा (५) कार्मण।

विवेचन-उक्त प्रश्नोत्तर में शरीर के पाँच भेदों का नामोल्लेख किया गया है।

शरीर का अर्थ-जो प्रतिक्षण शीर्ण-जर्जरित होता रहता है अर्थात् उत्पत्ति समय से लेकर निरन्तर क्षीण होता रहता है उसे शरीर कहते हैं। संसारी जीवों के शरीर की रचना शरीरनामकर्म के उदय से होती है। इनके लक्षण क्रमशः इस प्रकार हैं-

(१) **औदारिकशरीर**-मूल शब्द 'उदार' है। शास्त्रों में 'उदार' के तीन अर्थ बताये हैं-(१) उदार का अर्थ होता है-माँस, हड्डियों, स्नायु आदि से निर्मित शरीर। माँस-मज्जा आदि सप्त धातु-उपधातुएँ औदारिकशरीर में ही होती हैं। इस शरीर के स्वामी मनुष्य और तिर्यंच हैं। (२) जो शरीर उदार अर्थात् प्रधान है। तीर्थंकरों और गणधरों का शरीर औदारिक होता है। इस अपेक्षा से यह 'उदार'-उत्तम माना गया है। अथवा औदारिकशरीर से मुक्ति प्राप्त होती है एवं औदारिकशरीर में रहकर ही जीव उत्कृष्ट संयम की आराधना कर सकता है। इस कारण उसे प्रधानतम माना गया है। (३) उदार अर्थात् विस्तारवान्-विशाल शरीर। औदारिकशरीर की उत्कृष्ट अवगाहना एक हजार योजन कुछ अधिक है, जबकि वैक्रियशरीर का इतना प्रमाण नहीं है। उसकी स्वाभाविक अवगाहना अधिक से अधिक पाँच सौ धनुष की है और वह मात्र सातवीं नरकपृथ्वी के नारकों की होती है। यद्यपि उत्तरवैक्रियशरीर एक लाख योजन तक का होता है, किन्तु वह भवान्त तक स्थायी नहीं रहता। (हारिभद्रीय वृत्ति, पृ. ८७)

(२) **वैक्रियशरीर**-जो शरीर विविध क्रियाएँ करने में समर्थ हों अथवा विशिष्ट (विलक्षण) क्रिया करने तथा विशेष रूप धारण करने वाला शरीर वैक्रिय कहलाता है। यह वैक्रियशरीर दो प्रकार का है-लब्धिप्रत्ययिक और भवप्रत्ययिक। तपोविशेष आदि विशिष्ट निमित्तों से जो प्राप्त हो उसे लब्धिप्रत्ययिक और जो भव-जन्म के निमित्त से सहज ही प्राप्त हो उसे भवप्रत्ययिक वैक्रियशरीर

कहते हैं। मनुष्यों और तिर्यंचों को लब्धिजन्य तथा देव-नारकों को भवजन्य होता है। वायुकाय के भी वैक्रियशरीर होता है।

(३) **आहारकशरीर**-चतुर्दशपूर्वधर ज्ञानी मुनि विशिष्ट प्रयोजन होने पर शंका आदि के समाधान हेतु योगबल से दूसरे शरीर का निर्माण करते हैं। आहारक-ऋद्धिसम्पन्न संयत को किसी विषय में सन्देह उत्पन्न होने पर समाधान प्राप्त करने हेतु अपने क्षेत्र में केवलज्ञानी का अभाव होने और दूसरे क्षेत्र में उनके विद्यमान होने पर जब उस क्षेत्र में औदारिकशरीर से पहुँचना सम्भव नहीं होता है तब वे अन्य पुद्गलों का आहारण-ग्रहण करके इस शरीर का निर्माण करते हैं। कार्य-समाप्ति पर उसका त्याग कर देते हैं।

(४) **तैजस्शरीर**-यह ऊष्मामय शरीर है। पाचन, दीपन, दीप्ति और प्रभा इसके कार्य हैं। यह शरीर सभी संसारी जीवों में पाया जाता है। तेजोलब्धि का भी हेतु यही शरीर है।

(५) **कार्मणशरीर**-आठ प्रकार के कर्म पुद्गलों से इसका निर्माण होता है, औदारिक आदि सभी शरीरों का यह मूल कारण है तथा जीव के साथ परभव में जाते समय साथ रहता है।

ये शरीर क्रमशः एक दूसरे से सूक्ष्म होते हैं, औदारिकशरीर से वैक्रियशरीर अधिक सूक्ष्म पुद्गलों से निर्मित है, उससे आहारक, आहारक से तैजस् और तैजस् से कार्मण सूक्ष्मतर होता है। संसारी जीव के तैजस् और कार्मणशरीर सदा साथ रहते हैं। किसी भी जीव के एक साथ चार शरीर से अधिक नहीं रह सकते। क्योंकि वैक्रिय और आहारक एक साथ नहीं रहते।

THE BODY

405. (Q.) How many kinds of *sharira* (bodies) are there ?

(Ans.) *Sharira* (bodies) are of five kinds—(1) *Audarik* (gross physical), (2) *Vaikriya* (transmutable), (3) *Aharak* (telemigratory), (4) *Taijas* (fiery), and (5) *Karman* (*karmic*).

Elaboration—This aphorism states the five types of *sharira* or bodies.

Sharira—That which is subject to decay (*shirna*) every moment is called *sharira*. Right from the moment of its origin or birth it undergoes a continuous decay. The formation of bodies of the worldly beings is caused by the fruition of *Sharira-nama-karma* (body type determining *karma*). The attributes of these bodies are as follows—

(1) *Audarik sharira* (gross physical body)—The term *audarik* is derived from the root word *udaar* (large, gross, prominent). In scriptures it has been interpreted in three ways—(1) The gross physical body constituted of flesh, bones, muscles etc. The seven *dhatus* (bodily humours including flesh and marrow) are found only in this gross physical body. Human beings and animals have this body. (2) The body

वैक्रिय शरीर

चित्र परिचय १२

Illustration No. 12
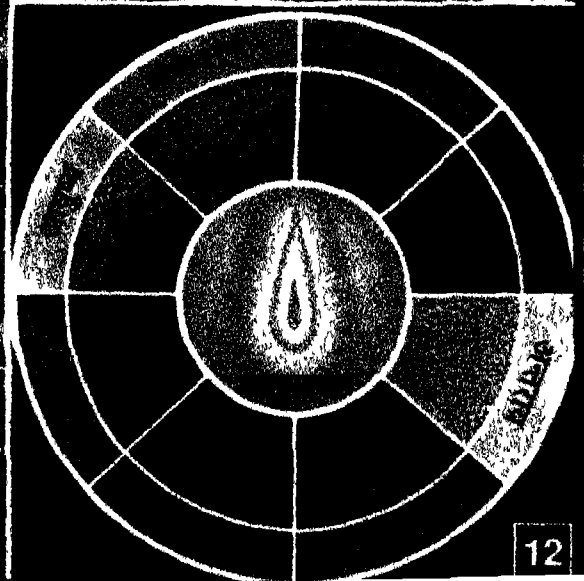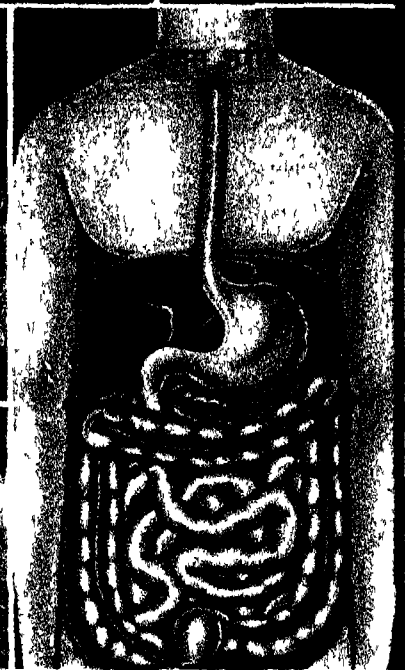
पाँच प्रकार के शरीर

(१) औदारिक शरीर–मनुष्य, पशु, पक्षी, वृक्ष आदि का शरीर।

(२) वैक्रिय शरीर–मन इच्छित विविध रूपों की विक्रिया करने की शक्तियुक्त देवों तथा नारकों में सहज प्राप्त शरीर।

(३) तैजस् शरीर–पचन-पाचन क्रिया का निमित्त तथा तैजस् शक्तियुक्त।

(४) आहारक शरीर–विशिष्ट लब्धि-सम्पन्न मुनि आवश्यकता होने पर एक हाथ का शरीर निर्माण करते हैं।

(५) कार्मण शरीर–चैतन्यस्वरूप प्रकाशमान आत्मा पर आने वाले विभिन्न कर्म-वर्गणाओं के पुद्‌गल दलिकों से निर्मित शरीर। इसके आठ भेद हैं–(१) ज्ञानावरण, (२) दर्शनावरण, (३) मोहनीय, (४) अन्तराय, (५) वेदनीय, (६) नाम, (७) गोत्र, (८) आयुष्य।

–सूत्र ४०५, पृष्ठ २२५

FIVE KINDS OF BODY

(1) Audarik Sharir (Gross Physical Body)—The bodies of human-beings, animals, birds, trees etc.

(2) Vaikriya Sharir (Transmutable Body)—The body capable of acquiring any desired special form, e.g. natural body of infernal and divine-beings.

(3) Aharak Sharir (Telemigratory Body)—Sages endowed with special powers create this one cubit size body for some specific purpose.

(4) Taijas Sharir (Fiery Body)—This body is endowed with properties of fire or heat and helps in digestion and also manifests as aura and magical fire-power.

(5) Karman Sharir (Karmic Body)—This is created by eight types of *karma pudgalas* (*karmic* particles) infesting the pristine and radiant soul—(1) *Jnanavaraniya*, (2) *Darshanavaraniya*, (3) *Mohaniya*, (4) *Antaraya*, (5) *Vedaniya*, (6) *Naam*, (7) *Gotra*, (8) *Ayushya*.

—Aphorism 405, p. 225

that has prominence over other bodies. As the body of a *Tirthankar* (omniscient religious ford-maker) or a *Ganadhar* (principle disciple of a *Tirthankar*) is of *audarik* (gross physical) kind it is accepted as having prominence over others. In other words, with this body a being or soul is able to practice maximum ascetic or spiritual discipline and attain liberation. It is therefore considered to be the most prominent. (3) Large or corpulent body. The maximum space occupied by an *audarik sharira* (gross physical body) is slightly more than one thousand *yojans,* whereas *vaikriya sharira* (transmutable body) is not so large. The normal maximum space occupied by a *vaikriya sharira* (transmutable body) is five hundred *dhanushas,* and that too is only for the infernal beings of the seventh hell. However, the *Uttar-vaikriya sharira* (secondary transmuted body) can be a hundred thousand *yojan* size, but it does not last throughout the life-span. (*Vritti* by Haribhadra, p. 87)

(2) *Vaikriya sharira* (transmutable body)—The body capable of performing a variety of supranormal activities and acquiring special forms is called *vaikriya sharira* (transmutable body). This is of two types *labdhipratyayik* and *bhavapratyayik.* That which is acquired through some specific austerity or other endeavour is called *labdhipratyayik* as in case of animals and human beings. That which is acquired naturally by birth is called *bhavapratyayik* as in case of infernal and divine beings. Air-bodied beings are also said to have this *vaikriya sharira* (transmutable body).

(3) *Aharak sharira* (telemigratory body)—The *Chaturdash-purvadhar* sages (endowed with the knowledge of fourteen subtle canons) create this through their yogic powers for some specific purpose like removing doubts with the help of an omniscient. Sages endowed with this special power create an *aharak sharira* (telemigratory body) in order to reach an omniscient for removing their doubts. This is done particularly when there is no omniscient in their proximity or area but one exists in another area where it is impossible to reach by *audarik sharira* (gross physical body). Once the mission is accomplished this *aharak sharira* (telemigratory body) is withdrawn.

(4) *Taijas sharira* (fiery body)—This body is endowed with properties of fire or heat. It helps in digestion and manifests as aura, glow and radiance. Every worldly being is endowed with this body. It is also the source of the magical fire-power (employed for burning other beings and things).

(5) *Karman sharira (karmic* body)—This is created by eight types of *karma pudgalas* (*karmic* particles). This is also the cause of all the other kinds of bodies including the *audarik sharira* (gross physical body). Its unique feature is that it accompanies the soul at the time of reincarnation.

These bodies are progressively subtler. *Vaikriya* (transmutable) is constituted of subtler particles than *audarik* (gross physical), *aharak* (telemigratory) is subtler than *audarik* (gross physical), *taijas* is subtler than *aharak* (telemigratory) and *karman* (*karmic*) is the most subtle. Every worldly being always has *taijas sharira* (fiery body) and *karman sharira* (*karmic* body). No being can have more than four types of *shariras* (bodies) at a given time. This is because *vaikriya sharira* (transmutable body) and *aharak sharira* (telemigratory body) cannot exist together.

चौबीस दंडकवर्ती जीवों की शरीरप्ररूपणा

४०६. णेरइयाणं भंते ! कति सरीरा पन्नत्ता ?

गो. ! तओ सरीरा पं.। तं.–वेउव्विए तेयए कम्मए।

४०६. **(प्र.)** भगवन् ! नैरयिकों के कितने शरीर हैं ?

(उ.) गौतम ! उनके तीन शरीर हैं–वैक्रिय, तैजस् और कार्मण।

BODIES OF BEINGS AT PLACES OF SUFFERING

406. (Q.) *Bhante* ! How many kinds of bodies do the *naaraks* (infernal beings) have ?

(Ans.) Gautam ! They have three kinds of bodies—*Vaikriya* (transmutable), *Taijas* (fiery) and *Karman* (*karmic*).

४०७. असुरकुमाराणं भंते ! कति सरीरा पं. ?

गो. ! तओ सरीरा पण्णत्ता। तं जहा–वेउव्विए तेयए कम्मए। एवं तिण्णि तिण्णि एते चेव सरीरा जाव थणियकुमाराणं भाणियव्वा।

४०७. **(प्र.)** भगवन् ! असुरकुमार देवों के कितने शरीर होते हैं ?

(उ.) गौतम ! उनके तीन शरीर कहे हैं। यथा–वैक्रिय, तैजस् और कार्मण। इसी प्रकार यही तीन–तीन शरीर स्तनितकुमार पर्यन्त सभी भवनपति देवों के जानना चाहिए।

407. (Q.) *Bhante* ! How many kinds of bodies do the *Asurkumars* have ?

(Ans.) Gautam ! They have three kinds of bodies—*Vaikriya* (transmutable), *Taijas* (fiery) and *Karman* (*karmic*). In the same way all the abode dwelling gods up to *Stanitkumar* have the same three kinds of bodies.

४०८. (१) पुढवीकाइयाणं भंते ! कति सरीरा पण्णत्ता ? गो. ! तओ सरीरा पण्णत्ता। तं जहा–ओरालिए तेयए कम्मए।

४०८. (१) (प्र.) भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीवों के कितने शरीर होते हैं ?

(उ.) गौतम ! उनके तीन शरीर कहे गये हैं–औदारिक, तैजस् और कार्मण।

408. (1) (Q.) *Bhante* ! How many kinds of bodies do the *prithvikayiks* (earth-bodied beings) have ?

(Ans.) Gautam ! They have three kinds of bodies—*Audarik* (gross physical), *Taijas* (fiery) and *Karman* (*karmic*).

(२) एवं आउ–तेउ–वणस्सइकाइयाण वि एते चेव तिण्णि सरीरा भाणियव्वा।

(२) इसी प्रकार अप्कायिक, तेजस्कायिक और वनस्पतिकायिक जीवों के भी ये तीन–तीन शरीर जानना चाहिए।

(2) In the same way all *apkayik* (water-bodied), *tejaskayik* (fire-bodied) and *vanaspatikayik* (plant-bodied) beings have the same three kinds of bodies.

(३) वाउकाइयाणं जाव गो. ! चत्तारि सरीरा पन्नत्ता। तं.–ओरालिए वेउव्विए तेयए कम्मए।

(३) (प्र.) भगवन् ! वायुकायिक जीवों के कितने शरीर हैं ?

(उ.) गौतम ! वायुकायिक जीवों के चार शरीर हैं–औदारिक, वैक्रिय, तैजस् और कार्मण।

विवेचन–वायुकायिक जीवों के वैक्रियशरीर सम्बन्धी स्पष्टीकरण सूत्र ४२०/३ के विवेचन में देखें।

(3) (Q.) *Bhante* ! How many kinds of bodies do the *vayukayiks* (air-bodied beings) have ?

(Ans.) Gautam ! They have four kinds of bodies—*Audarik* (gross physical), *Vaikriya* (transmutable), *Taijas* (fiery) and *Karman* (*karmic*).

Elaboration—For explanation about the *vaikriya sharira* (transmutable body) of *vayukayiks* (air-bodied beings) refer to the elaboration of aphorism 420/3.

४०९. बेंदिय–तेंदिय–चउरिंदियाणं जहा पुढवीकाइयाणं।

४०९. द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय जीवों के पृथ्वीकायिक जीवों के समान (औदारिक, तैजस्, कार्मण यह तीन शरीर) जानना चाहिए।

409. The (statement about) bodies of *dvindriya* (two-sensed), *trindriya* (three-sensed) and *chaturindriya* (four-sensed) beings is same as that about *prithvikayiks* (earth-bodied beings). (*audarik, taijas* and *karman*)

४१०. पंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं जाव गो. ! जहा–वाउकाइयाणं।

४१०. (प्र.) पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों के कितने शरीर होते हैं ?

(उ.) गौतम ! पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों के शरीर वायुकायिक जीवों के समान चार शरीर जानना चाहिए।

410. (Q.) *Bhante* ! How many kinds of bodies do the *Panchendriya Tiryanchyoniks* (five-sensed animals) have ?

(Ans.) Gautam ! Like *vayukayiks* (air-bodied beings) the *Panchendriya Tiryanchyoniks* (five-sensed animals) also have four kinds of bodies (*audarik, vaikriya, taijas* and *karman*).

४११. मणूसाणं जाव गो. ! पंच सरीरा पन्नत्ता। तं.–ओरालिए वेउव्विए आहारए तेयए कम्मए।

४११. (प्र.) भन्ते ! मनुष्यों के कितने शरीर कहे हैं ?

(उ.) गौतम ! मनुष्यों के पाँच शरीर कहे हैं। जैसे–औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस् और कार्मण।

411. (Q.) *Bhante* ! How many kinds of bodies do the human beings have ?

(**Ans.**) Gautam ! They have five kinds of bodies—*Audarik* (gross physical), *Vaikriya* (transmutable), *Aharak* (telemigratory), *Taijas* (fiery) and *Karman* (*karmic*).

४१२. वाणमंतराणं जोइसियाणं वेमाणियाणं जहा नेरइयाणं, वेउव्विय–तेयग–कम्मगा तिन्नि तिन्नि सरीरा भाणियव्वा।

४१२. वाणव्यंतर, ज्योतिष्क और वैमानिक देवों के नारकों के समान वैक्रिय, तैजस् और कार्मण ये तीन–तीन शरीर होते हैं।

412. Like the *naaraks* (infernal beings) the *Vanavyantar*, *Jyotishk* and *Vaimanik* gods have three kinds of bodies, *vaikriya* (transmutable), *taijas* (fiery) and *karman* (*karmic*).

पाँच शरीरों का संख्यापरिमाण

४१३. केवतिया णं भंते ! ओरालियसरीरा पण्णत्ता ?

गो. ! दुविहा पण्णत्ता। तं जहा–बद्धेल्लया य मुक्केल्लया य। तत्थ णं जे ते बद्धेल्लया ते णं असंखेज्जा, असंखेज्जाहिं उस्सप्पिणी–ओसप्पिणीहिं अवहीरंति कालओ, खेत्ततो असंखेज्जा लोगा।

तत्थ णं जे ते मुक्केल्लगा ते णं अणंता, अणंताहि उस्सप्पिणी–ओसप्पिणीहिं अवहीरंति कालओ, खेत्ततो अणंता लोगा दव्वओ अभवसिद्धिएहिं अणंतगुणा सिद्धाणं अणंतभागो।

४१३. (प्र.) भगवन् ! औदारिकशरीर कितने प्रकार के हैं ?

(उ.) गौतम ! औदारिकशरीर दो प्रकार के हैं। जैसे–बद्ध तथा मुक्त। उनमें जो बद्ध औदारिकशरीर हैं वे असंख्यात हैं। वे काल की दृष्टि से असंख्यात उत्सर्पिणियों–अवसर्पिणियों द्वारा अपहृत होते–छोड़े जाते हैं और क्षेत्र की दृष्टि से असंख्यात लोकप्रमाण हैं।

उनमें जो मुक्त हैं, वे अनन्त हैं। काल की दृष्टि से वे अनन्त उत्सर्पिणियों–अवसर्पिणियों से अपहृत होते हैं और क्षेत्र की दृष्टि से अनन्त लोक जितने हैं। द्रव्य की दृष्टि से वे अभवसिद्धिक (अभव्य) जीवों से अनन्त गुणा अधिक और सिद्धों के अनन्तवें भागप्रमाण हैं।

विवेचन—बद्ध अर्थात् बँधे हुए। बद्ध उसे कहते हैं जो प्रश्न के समय जीव के साथ संबद्ध है, जीव सहित है और मुक्त वह है जिसे जीव ने पूर्वभवों में ग्रहण करके त्याग दिया है। ऊपर बद्ध और मुक्त प्रकारों से औदारिकशरीरों की संख्या का परिमाण बतलाया है। (इन पाँचों शरीर के बद्ध-मुक्त की चर्चा का विश्लेषण अनु. ज्ञान मुनि कृत हिन्दी टीका, भाग २, पृ. ७३० से ७५० तक देखें।)

SUB-CATEGORIES OF FIVE KINDS OF BODIES

413. (Q.) *Bhante* ! Of how many kinds are *audarik shariras* (gross physical bodies) ?

(Ans.) Gautam ! *Audarik shariras* (gross physical bodies) are of two kinds—*Baddh* (bound with soul) and *Mukta* (abandoned by soul). Of these, the *baddh audarik shariras* (bound gross physical bodies) are innumerable. (Their number) in terms of time (is such that) it takes innumerable *utsarpini-avasarpini* (progressive-regressive cycles of time) to remove them (if stored in a silo.....—as mentioned in aphorism 370); and in terms of area they are equivalent to innumerable *loks* (innumerable times more than the *lok* or universe).

Of these the *mukta* (abandoned) are infinite. (Their number) in terms of time (is such that) it takes infinite *utsarpini-avasarpini* (progressive-regressive cycles of time) to remove them (if stored in a silo.....—as mentioned in aphorism 370); in terms of area they are equivalent to infinite *loks* (infinite times more than the *lok* or universe); and in terms of substance they are infinite times more than the number of *abhavyas* (souls unworthy of liberation) and infinite fraction of the number of *Siddhas* (liberated souls).

Elaboration—*Baddh* means bound. *Baddh* is that body which is bound with the soul at the time of asking this question. *Mukta* are those that have been abandoned by this soul in its past incarnations. The aforesaid aphorism details the number of *baddh* and *mukta* bodies. (for more details on this topic refer to *Tika of Anuyogadvar Sutra* by Shri Jnana Muni, p. 730-750.)

बद्ध-मुक्त वैक्रियशरीरों की संख्या

४१४. केवतिया णं भंते ! वेउव्वियसरीरा पं. ?

गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता। तं.–बद्धेल्लया य मुक्केल्लया य। तत्थ णं जे ते बद्धेल्लया ते णं असंखेज्जा, असंखेज्जाहिं उस्सप्पिणि-ओसप्पिणीहिं अवहीरंति कालओ, खेत्तओ असंखेज्जाओ सेढीओ पतरस्स असंखेज्जइभागो। तत्थ णं जे ते मुक्केल्लया ते णं अणंता, अणंताहिं उस्सप्पिणि–ओसप्पिणीहिं अवहीरंति कालओ, सेसं जहा ओरालियस्स मुक्केल्लया तहा एते वि भाणियव्वा।

४१४. (प्र.) भगवन् ! वैक्रियशरीर कितने प्रकार के हैं ?

(उ.) गौतम ! वे दो प्रकार के कहे हैं। यथा–बद्ध और मुक्त। उनमें जो बद्ध हैं, वे असंख्यात हैं और काल की दृष्टि से असंख्यात उत्सर्पिणियों–अवसर्पिणियों द्वारा अपहृत होते हैं। क्षेत्र की दृष्टि से वे प्रतर के असंख्यातवें भाग में होने वाली असंख्यात श्रेणियों के आकाशप्रदेश जितने होते हैं। मुक्त वैक्रियशरीर अनन्त हैं। कालतः वे अनन्त उत्सर्पिणियों–अवसर्पिणियों द्वारा अपहृत होते हैं। शेष कथन मुक्त औदारिकशरीरों के समान जानना चाहिए।

NUMBER OF VAIKRIYA SHARIRAS

414. (Q.) *Bhante* ! Of how many kinds are *vaikriya shariras* (transmutable bodies) ?

(Ans.) Gautam ! *Vaikriya shariras* (transmutable bodies) are of two kinds—*Baddh* (bound with soul) and *Mukta* (abandoned by soul). Of these, the *baddh vaikriya shariras* (bound transmutable bodies) are innumerable. (Their number) in terms of time (is such that) it takes innumerable *utsarpini-avasarpini* (progressive-regressive cycles of time) to remove them (if stored in a silo.....—as mentioned in aphorism 370); and in terms of area they are equivalent to the number of space-points in innumerable *Shrenis* in the uncountable fraction of a *pratar* (see aphorism 356-357). Of these, the *mukta* (abandoned) *Vaikriya shariras* are infinite. (Their number) in terms of time (is such that) it takes infinite *utsarpini-avasarpini* (progressive-regressive cycles of time) to remove them (if stored in a silo). Other details are same as in case of *mukta audarik shariras* (abandoned gross physical bodies).

४१५. केवइया णं भंते ! आहारगसरीरा पं. ?

गोयमा ! दुविहा पं.-बद्धेल्लया य मुक्केल्लया य। तत्थ णं जे ते बद्धेल्लया ते णं सिया अत्थि सिया नत्थि, जइ अत्थि जहण्णेणं एगो वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं सहस्सपुहत्तं। मुक्केल्लया जहा ओरालियसरीरस्स तहा भाणियव्वा।

४१५. (प्र.) भगवन् ! आहारकशरीर कितने हैं ?

(उ.) गौतम ! आहारकशरीर दो प्रकार के हैं। यथा-बद्ध और मुक्त। उनमें से बद्ध कभी होते हैं कभी नहीं होते हैं। यदि होते हैं तो जघन्यतः एक, दो या तीन और उत्कृष्टतः दो हजार से नौ हजार तक होते हैं। मुक्त आहारकशरीर अनन्त हैं, जिनकी प्ररूपणा औदारिकशरीर के समान जानना चाहिए।

विवेचन-बद्ध आहारकशरीर चतुर्दशपूर्वधारी संयत मनुष्य के ही होते हैं। बद्ध आहारकशरीर के कभी होने और कभी नहीं होने के दो मुख्य कारण यह हैं कि-(१) आहारकशरीर का अन्तर (विरहकाल) जघन्य एक समय और उत्कृष्ट छह मास का है, निरन्तर नहीं होता। (२) यदि आहारकशरीर होते हैं तो उनकी संख्या जघन्यतः एक, दो या तीन होती है और उत्कृष्ट सहस्रपृथक्त्व हो सकती है। दो से नौ तक की संख्या का नाम पृथक्त्व है। अतः एक समय में उत्कृष्टतः एक साथ दो हजार से लेकर नौ हजार तक आहारकशरीरधारक हो सकते हैं।

NUMBER OF AHARAK SHARIRAS

415. (Q.) *Bhante* ! Of how many kinds are *aharak shariras* (telemigratory bodies) ?

(Ans.) Gautam ! *Aharak shariras* (telemigratory bodies) are of two kinds—*Baddh* (bound with soul) and *Mukta* (abandoned by soul). Of these, the *baddh aharak shariras* (bound telemigratory bodies) sometimes exist and sometimes not. When they exist their number is minimum one, two or three and maximum two to nine thousand. Of these the *mukta* (abandoned) are infinite. Other details are same as in case of *mukta audarik shariras* (abandoned gross physical bodies).

Elaboration—Only the *Chaturdash-purvadhar* sages have the *baddh aharak shariras* (bound telemigratory bodies). The uncertainty about existence of this body is—(1) The intervening time between existence of

two such bodies is not continuous but it is minimum one *Samaya* and maximum six months; (2) When these bodies exist their number is minimum one, two or three and maximum *sahasra prithakatva*. The numbers two to nine are called *prithakatva*. That means, at one time a maximum of two to nine thousand such bodies may exist.

बद्ध-मुक्त तैजस्शरीरों का परिमाण

४१६. केवतिया णं भंते ! तेयगसरीरा पण्णत्ता ?

गोयमा ! दुविहा पं.। तं.-बद्धेल्लया य मुक्केल्लया य। तत्थ णं जे ते बद्धेल्लया ते णं अणंता, अणंताहिं उस्सप्पिणि-ओसप्पिणीहिं अवहीरंति कालओ, खेत्ततो अणंता लोगा, दव्वओ सिद्धेहिं अणंतगुणा सव्वजीवाणं अणंतभागूणा।

तत्थ णं जे ते मुक्केल्लया ते णं अणंता, अणंताहिं उस्सप्पिणि-ओसप्पिणीहिं अवहीरंति कालतो, खेत्ततो अणंता लोगा, दव्वओ सव्वजीवेहिं अणंतगुणा जीववग्गस्स अणंतभागो।

४१६. (प्र.) भगवन् ! तैजस्शरीर कितने कहे हैं ?

(उ.) गौतम ! वे दो प्रकार के हैं-बद्ध और मुक्त। उनमें से बद्ध अनन्त हैं, जो काल की दृष्टि से अनन्त उत्सर्पिणियों-अवसर्पिणियों से अपहृत होते हैं। क्षेत्र की दृष्टि से वे अनन्त लोक जितने हैं। द्रव्य की दृष्टि से सिद्धों से अनन्त गुणा से अधिक और सब जीवों से अनन्त भाग कम हैं।

मुक्त तैजस्शरीर अनन्त हैं, जो कालतः अनन्त उत्सर्पिणियों-अवसर्पिणियों में अपहृत होते हैं। क्षेत्रतः अनन्त लोकप्रमाण हैं, द्रव्यतः समस्त जीवों से अनन्त गुणा अधिक तथा जीववर्ग के अनन्तवें भाग हैं।

विवेचन-बद्ध तैजस्शरीर अनन्त इसलिए हैं कि साधारण शरीरी निगोदिया जीवों के भी तैजस्शरीर पृथक्-पृथक् होते हैं, औदारिकशरीर की तरह एक नहीं। उसकी अनन्तता का काल दृष्टि से परिमाण अनन्त उत्सर्पिणियों और अवसर्पिणियों के समयों के बराबर है। क्षेत्र की अपेक्षा अनन्त लोकप्रमाण है अर्थात् अनन्त लोकाकाशों में जितने प्रदेश हों, इतने प्रदेश प्रमाण वाले हैं। द्रव्य की अपेक्षा बद्ध तैजस्शरीर सिद्धों से अनन्त गुणा अधिक और सर्वजीवों की अपेक्षा से अनन्त भाग न्यून होते हैं। इसका कारण यह है-तैजस्शरीर समस्त संसारी जीवों के होते हैं और संसारी जीव सिद्धों से अनन्त गुणे हैं, इसलिए तैजस्शरीर भी सिद्धों से अनन्त गुणे हुए। किन्तु सर्वजीवराशि की अपेक्षा विचार करने पर समस्त जीवों से अनन्तवें भाग कम इसलिए हैं कि सिद्धों के तैजस्शरीर नहीं होता और सिद्ध

सर्वजीवराशि के अनन्तवें भाग हैं। अतः उन्हें कम कर देने से तैजसशरीर सर्वजीवों के अनन्तवें भाग न्यून हो जाते हैं। (विस्तार के लिए ज्ञान मुनि कृत हिन्दी टीका, भाग २, पृ. ७४५ से ७५५ देखें।)

NUMBER OF TAIJAS SHARIRAS

416. (Q.) *Bhante* ! Of how many kinds are *taijas shariras* (fiery bodies) ?

(Ans.) Gautam ! *Taijas shariras* (fiery bodies) are of two kinds—*Baddh* (bound with soul) and *Mukta* (abandoned by soul). Of these, the *baddh taijas shariras* (bound fiery bodies) are infinite. (Their number) in terms of time (is such that) it takes infinite *utsarpini-avasarpini* (progressive-regressive cycles of time) to remove them (if stored in a silo); and in terms of area they are equivalent to infinite *loks* (infinite times more than the number of *lok* or occupied space); and in terms of substance they are infinite times more than the number of *Siddhas* (liberated souls) and infinite fraction less than the total number of all beings.

Of these the *mukta* (abandoned) are infinite. (Their number) in terms of time (is such that) it takes infinite *utsarpini-avasarpini* (progressive-regressive cycles of time) to remove them (if stored in a silo); in terms of area they are equivalent to infinite *loks* (infinite times more than the *lok* or occupied space); and in terms of substance they are infinite times more than the total number of *Siddhas* (liberated souls) and infinite fraction of the total number of all beings.

Elaboration—The *baddh taijas shariras* (bound fiery bodies) are infinite because the *nigod* (dormant) beings with a clump-body too have independent *taijas shariras* (fiery bodies) unlike having a single *audarik* (gross physical) body. Their number in terms of time is equal to the total number of *Samayas* in infinite *utsarpini-avasarpini* (progressive-regressive cycles of time). In terms of area they are equivalent to infinite *loks,* in other words infinite times more than the total number of space-points in the *lok* or occupied space; and in terms of substance they are infinite times more than the number of *Siddhas* (liberated souls) and infinite fraction less than total number of all beings. The reason for this is that all worldly beings have *taijas sharira* (fiery body) and the number of worldly beings is infinite times more than that of *Siddhas,*

therefore *taijas shariras* (fiery bodies) are infinite times more than *Siddhas* (liberated souls). When considering in terms of total number of beings they are infinite fraction less than the total number of beings because *Siddhas* are devoid of *taijas shariras* (fiery bodies) and *Siddhas* form an infinite fraction of the total number of beings. By deducting the number of *Siddhas* from the total number of beings we get the number of *taijas* bodies. (for more details see *Tika of Anuyogadvar Sutra* by Shri Jnana Muni, p. 745-755).

बद्ध-मुक्त कार्मणशरीरों की संख्या

४१७. केवइया णं भंते ! कम्मयसरीरा पन्नत्ता ?

गो. ! दुविहा पण्णत्ता। तं जहा—बद्धेल्लया य मुक्केल्लया य। जहा तेयगसरीरा तह कम्मगसरीरा वि भाणियव्वा।

४१७. (प्र.) भगवन् ! कार्मणशरीर कितने कहे हैं ?

(उ.) गौतम ! वे दो प्रकार के हैं, यथा—बद्ध और मुक्त। जिस प्रकार से तैजस्शरीर की वक्तव्यता कही है, उसी प्रकार कार्मणशरीर के विषय में भी कहना चाहिए। तैजस् और कार्मण शरीरों की संख्या एवं स्वामी समान हैं तथा ये दोनों शरीर एक साथ रहते हैं।

NUMBER OF KARMAN SHARIRAS

417. (Q.) *Bhante* ! Of how many kinds are *karman shariras* (*karmic* bodies) ?

(Ans.) Gautam ! *Karman shariras* (*karmic* bodies) are of two kinds—*baddh* (bound) and *mukta* (abandoned). The details of *karman sharira* (*karmic* body) are same as those of *taijas sharira* (fiery body). (The number and owners of *taijas* and *karman shariras* are same and these two bodies always exist together).

नारकों में बद्ध-मुक्त पंच शरीरों की प्ररूपणा

४१८. (१) नेरइयाणं भंते ! केवतिया य ओदालियसरीरा पन्नत्ता ?

गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता। तं.—बद्धेल्लया य मुक्केल्लया य। तत्थ णं जे ते बद्धेल्लया ते णं नत्थि। तत्थ णं जे ते मुक्केल्लया ते जहा ओहिया ओरालिया तहा भाणियव्वा।

४१८. (१) (प्र.) भगवन् ! नैरयिक जीवों के कितने औदारिकशरीर कहे हैं ?

(उ.) गौतम ! औदारिकशरीर दो प्रकार के हैं–बद्ध और मुक्त। नैरयिक जीवों के बुद्ध औदारिकशरीर नहीं होते हैं और मुक्त औदारिकशरीर पूर्वोक्त सामान्य मुक्त औदारिकशरीर के बराबर जानना चाहिए। (सूत्र ४१३ के समान)

BODIES OF NAARAKS

418. (1) (Q.) *Bhante* ! How many kinds of *audarik shariras* (gross physical bodies) the *naaraks* (infernal beings) are said to have?

(Ans.) Gautam ! *Audarik shariras* (gross physical bodies) are of two kinds—*baddh* (bound) and *mukta* (abandoned). The *naaraks* (infernal beings) do not have the *baddh* (bound with soul) kind. As regards the *mukta* (abandoned by soul) it should be read just as the general statement regarding *audarik shariras* (gross physical bodies) (Aphorism 413).

(२) नेरइयाणं भंते ! केवइया वेउव्वियसरीरा पन्नत्ता ?

गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता। तं जहा–बद्धेल्लया य मुक्केल्लया य। तत्थ णं जे ते बद्धेल्लया ते णं असंखेज्जा असंखेज्जाहिं उस्सप्पिणी–ओसप्पिणीहिं अवहीरंति कालओ, खेत्तओ असंखेज्जाओ सेढीओ पयरस्स असंखेज्जइभागो, तासि णं सेढीणं विक्खंभसूयी अंगुलपढमवग्गमूलं बितियवग्गमूलपडुप्पण्णं अहव णं अंगुलबितियवग्गमूलघणपमाणमेत्ताओ सेढीओ। तत्थ णं जे ते मुक्केल्लया ते णं जहा ओहिया ओरालियसरीरा तहा भाणियव्वा।

(२) (प्र.) भगवन् ! नारक जीवों के वैक्रियशरीर कितने हैं ?

(उ.) गौतम ! दो प्रकार के हैं–बद्ध और मुक्त। उनमें से बद्ध वैक्रियशरीर तो असंख्यात हैं। काल की दृष्टि से असंख्यात उत्सर्पिणी–अवसर्पिणी में उनका अपहार होता है। क्षेत्र की दृष्टि से वे प्रतर के असंख्यात भाग में होने वाली असंख्य श्रेणियों के आकाशप्रदेश जितने हैं। उन श्रेणियों की विष्कम्भ (सूची लम्बाई लिए हुए एक प्रदेश की श्रेणी) अंगुलप्रमाण प्रतर क्षेत्र में होने वाली श्रेणी के असंख्येय वर्गमूल होते हैं। इसलिए प्रथम वर्गमूल को दूसरे वर्गमूल के गुणित करने पर जितनी श्रेणियाँ प्राप्त होती हैं अथवा अंगुल के द्वितीय वर्गमूल के घनप्रमाण श्रेणियों जितनी है। मुक्त वैक्रियशरीर सामान्य से मुक्त औदारिकशरीरों के बराबर जानना चाहिए।

(2) (Q.) *Bhante* ! How many kinds of *vaikriya shariras* (transmutable bodies) the *naaraks* (infernal beings) are said to have ?

(Ans.) Gautam ! *Vaikriya shariras* (transmutable bodies) are of two kinds—*baddh* (bound) and *mukta* (abandoned). Of these, the *baddh vaikriya shariras* (bound transmutable bodies) are innumerable. (Their number) in terms of time (is such that) it takes innumerable *utsarpini-avasarpini* (progressive-regressive cycles of time) to remove them (if stored in a silo). In terms of area they are equal to space-points in innumerable *Shrenis* (series or progression; in this context all the units like *angul, shreni, pratar* are the paramount units as described in aphorisms 356-357) in the innumerable fraction of one *pratar* (see aphorism 356-357). Expressed in *vishkambh-suchi* (square units) the *Shrenis* are calculated—as the first square root of the *Shrenis* in one *angul* multiplied by its second square root or the cube of the second square root of the *Shrenis* in one *angul*. As regards the *mukta vaikriya shariras* (abandoned transmutable bodies) it should be read just as the general statement regarding *audarik shariras* (gross physical bodies) (Aphorism 413).

(३) णेरइयाणं भंते ! केवइया आहारगसरीरा पण्णत्ता ?

गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता। तं जहा—बद्धेल्लया य मुक्केल्लया य। तत्थ णं जे ते बद्धेल्लया ते णं नत्थि। तत्थ णं जे ते मुक्केल्लया ते जहा ओहिया ओरालिया तहा भाणियव्वा।

(३) (प्र.) भगवन् ! नारक जीवों के कितने आहारकशरीर कहे हैं ?

(उ.) गौतम ! आहारकशरीर दो प्रकार के हैं, यथा—बद्ध और मुक्त। बद्ध आहारकशरीर तो नैरयिकों के नहीं होते हैं तथा मुक्त जितने सामान्य औदारिक शरीर कहे गये हैं, उतने जानना चाहिए। (सूत्र ४१३ के अनुसार)

(3) (Q.) *Bhante* ! How many kinds of *aharak shariras* (telemigratory bodies) the *naaraks* (infernal beings) are said to have ?

(Ans.) Gautam ! *Aharak shariras* (telemigratory bodies) are of two kinds—*baddh* (bound) and *mukta* (abandoned). Of these, *naaraks* (infernal beings) do not have the *baddh aharak shariras* (bound telemigratory bodies). As regards the *mukta aharak shariras* (abandoned telemigratory bodies) it should be read just as the general statement regarding *audarik shariras* (gross physical bodies) (Aphorism 413).

(४) तेयग-कम्मगसरीरा जहा एतेसिं चेव वेउव्वियसरीरा तहा भाणियव्वा।

(४) तैजस् और कार्मणशरीरों के लिए जैसा इनके वैक्रियशरीरों के विषय में कहा गया है, उसी प्रकार समझना चाहिए।

विवेचन—नारक जीव वैक्रियशरीर वाले होने से उनमें बद्ध औदारिकशरीर नहीं होते हैं। मुक्त औदारिकशरीर सामान्य से बताये गये मुक्त औदारिकशरीरों के समान अनन्त हैं। क्योंकि नारक जीव जब पूर्वभवों में तिर्यंच या मनुष्य पर्याय में था, तब वहाँ औदारिकशरीर था और अब उसे छोड़कर नरकपर्याय में आया है। इसीलिए नारक जीवों के मुक्त औदारिकशरीर सामान्यतः अनन्त कहे हैं।

नैरयिकों के बद्ध वैक्रियशरीर उतने ही हैं जितने नैरयिक हैं। नैरयिकों की संख्या असंख्यात है, अतः एक-एक नारक के एक-एक वैक्रियशरीर होने से उनके वैक्रियशरीरों की संख्या भी असंख्यात है। बद्ध और मुक्त तैजस्-कार्मणशरीरों की संख्या बद्ध-मुक्त वैक्रियशरीरों के बराबर बताने का कारण है कि ये दोनों शरीर सभी नारकों के होते हैं, अतएव इनकी संख्या नैरयिकों की संख्या के समान ही जानना।

(4) As regards *taijas* and *karman shariras* (fiery and *karmic* bodies) they should be read just as the statement about their *vaikriya shariras* (transmutable bodies).

Elaboration—As the *naaraks* (infernal beings) essentially have *vaikriya sharira* (transmutable body) they cannot have *baddh audarik sharira* (bound gross physical body). Their *mukta audarik sharira* (abandoned gross physical body) are infinite as the general statement about *audarik shariras* (gross physical bodies). This is because a *naarak* (infernal being) had been an animal or a human being in his earlier incarnation and he had *audarik sharira* (gross physical body). He has abandoned it and reincarnated as a *naarak* (infernal being). Therefore for *naaraks* (infernal beings) the *mukta audarik shariras* (abandoned gross physical bodies) are said to be infinite in general.

The *baddh vaikriya shariras* (bound transmutable bodies) of *naaraks* (infernal beings) are same as the existing number of *naaraks* (infernal beings). The total number of *naaraks* (infernal beings) is innumerable. As one *naarak* (infernal being) has one *vaikriya sharira* (transmutable body) the total number of these bodies is innumerable. The reason for stating the total number of *baddh* and *mukta taijas* and *karman shariras* (bound and abandoned fiery and *karmic* bodies) being same is that all *naaraks* (infernal beings) have these two bodies, therefore their total number is also equal to the total number of existing *naaraks* (infernal beings).

भवनवासियों के बद्ध-मुक्त शरीर

४१९. (१) असुरकुमाराणं भंते ! केवतिया ओरालियसरीरा पन्नत्ता ?

गोयमा ! जहा नेरइयाणं ओरालियसरीरा तहा भाणियव्वा।

४१९. (१) (प्र.) भगवन् ! असुरकुमारों के कितने औदारिकशरीर कहे हैं ?

(उ.) गौतम ! नारकों के बद्ध-मुक्त औदारिकशरीरों की प्ररूपणा के समान ही इनके विषय भी जानना चाहिए।

BODIES OF BHAVANVASIS

419. (1) (Q.) *Bhante* ! How many kinds of *audarik shariras* (gross physical bodies) the *Asurkumars* (a kind of abode-dwelling gods) are said to have ?

(Ans.) Gautam ! It should be read just as the statement regarding *baddh* and *mukta audarik shariras* (bound and abandoned gross physical bodies) of the *naaraks* (infernal beings) (Aphorism 418-1).

(२) असुरकुमाराणं भंते ! केवतिया वेउव्वियसरीरा पन्नत्ता ?

गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता। तं.—बद्धेल्लया य मुक्केल्लया य। तत्थ णं जे ते बद्धेल्लया ते णं असंखेज्जा असंखेज्जाहिं उस्सप्पिणि-ओसप्पिणीहिं अवहीरंति कालतो, खेत्ततो असंखेज्जाओ सेढीओ पयरस्स असंखेज्जइभागो, तासि णं सेढीणं विक्खंभसूई अंगुलपढमवग्गमूलस्स असंखेज्जतिभागो। मुक्केल्लया जहा ओहिया ओरालियसरीरा तहा भाणियव्वा।

(२) (प्र.) भगवन् ! असुरकुमारों के कितने वैक्रियशरीर कहे हैं ?

(उ.) गौतम ! वे दो प्रकार के कहे हैं—बद्ध और मुक्त। उनमें से बद्ध असंख्यात हैं, जो कालतः असंख्यात उत्सर्पिणियों और अवसर्पिणियों में अपहृत होते हैं। क्षेत्र की अपेक्षा वे असंख्यात श्रेणियों जितने हैं और वे श्रेणियाँ प्रतर के असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। उन श्रेणियों की विष्कम्भसूची अंगुल के प्रथम वर्गमूल के असंख्यातवें भागप्रमाण है तथा मुक्त वैक्रियशरीरों के लिए जैसे सामान्य से मुक्त औदारिकशरीरों के लिए कहा गया है, उसी तरह कहना चाहिए।

विवेचन—यहाँ असुरकुमारों के बद्ध-मुक्त वैक्रियशरीरों का परिमाण बताया है। सामान्यतः तो असुरकुमारों के बद्ध वैक्रियशरीर असंख्यात हैं किन्तु वे असंख्यात, काल की अपेक्षा से असंख्यात उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी काल के जितने समय होते हैं, उतने हैं। क्षेत्र की अपेक्षा असंख्यात का परिमाण इस प्रकार बताया है कि प्रतर के असंख्यातवें भाग में वर्तमान असंख्यात श्रेणियों के जितने प्रदेश होते हैं, उतने हैं। यहाँ उन श्रेणियों की विष्कम्भसूची ली गई है जो अंगुलप्रमाण क्षेत्र के प्रदेशों की राशि के प्रथम वर्गमूल का असंख्यातवाँ भाग है। यह विष्कम्भसूची नारकों की विष्कम्भसूची की अपेक्षा उसके भागप्रमाण वाली है। इस प्रकार असुरकुमार, नारकों की अपेक्षा उनके असंख्यातवें भागप्रमाण होते हैं। प्रज्ञापनासूत्र के महादण्डक में रत्नप्रभापृथ्वी के नारकों की संख्या की अपेक्षा समस्त भवनवासी देव असंख्यातवें भागप्रमाण कहे गये हैं। अतः समस्त नारकों की अपेक्षा असुरकुमार उनके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं, अर्थात् अल्प हैं यह सिद्ध हो जाता है।

(2) (Q.) *Bhante* ! How many kinds of *vaikriya shariras* (transmutable bodies) the *Asurkumars* are said to have ?

(Ans.) Gautam ! Their *vaikriya shariras* (transmutable bodies) are of two kinds—*baddh* (bound) and *mukta* (abandoned). Of these, the *baddh vaikriya shariras* (bound transmutable bodies) are innumerable. (Their number) in terms of time (is such that) it takes innumerable *utsarpini-avasarpini* (progressive-regressive cycles of time) to remove them (if stored in a silo). In terms of area they are equal to space-points in innumerable *Shrenis* in the innumerable fraction of one *pratar*. Expressed in *vishkambh-suchi* (square units) the *Shrenis* are calculated as uncountable fraction of the first square root of the total space-points in one *angul*. As regards the *mukta vaikriya shariras* (abandoned transmutable bodies) it should be read just as the general statement regarding *audarik shariras* (gross physical bodies) (Aphorism 413).

Elaboration—This aphorism states the number of *baddh-mukta* (bound and abandoned) bodies of *Asurkumars* (a kind of abode-dwelling gods). Generally speaking their total number is innumerable. However, in terms of time they are equivalent to the total number of *Samayas* in innumerable *utsarpini-avasarpini* (progressive-regressive cycles of time). In terms of area the term innumerable has been explained as the innumerable fraction of the first square root of the total number of space-points in one square *angul* area. This number in *vishkambh-suchi* (square units) is only a fraction of the similar number for *naaraks* (infernal beings). Thus the number of *Asurkumars* is just a fraction of the number of *naaraks* (infernal beings). This is also confirmed by a statement in *Prajnapana Sutra* (Mahadandak) that the total number of all abode-dwelling gods is just a fraction of the *naaraks* (infernal beings) of the *Ratnaprabha* land (the first hell) alone.

(३) असुरकुमाराणं भंते ! केवइया आहारगसरीरा पन्नत्ता ?

गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता। तं जहा–बद्धेल्लया य मुक्केल्लया य। जहा एएसिं चेव ओरालियसरीरा तहा भाणियव्वा।

(३) (प्र.) भगवन् ! असुरकुमारों के कितने आहारकशरीर कहे हैं ?

(उ.) गौतम ! वे दो प्रकार के कहे हैं–बद्ध और मुक्त। ये दोनों प्रकार के आहारकशरीर असुरकुमार देवों में औदारिकशरीर के समान जानने चाहिए।

(3) (Q.) *Bhante* ! How many kinds of *aharak shariras* (telemigratory bodies) the *Asurkumars* are said to have ?

(Ans.) Gautam ! Their *aharak shariras* (telemigratory bodies) are of two kinds—*baddh* (bound) and *mukta* (abandoned). These two should be read just as the statement regarding *audarik shariras* (gross physical bodies) of *Asurkumars.*

(४) तेयग–कम्मगसरीरा जहा एतेसिं चेव वेउव्वियसरीरा तहा भाणियव्वा।

(४) तैजस् और कार्मणशरीर जैसे इनके (असुरकुमारों के) वैक्रियशरीर बताये, उसी प्रकार जानना चाहिए।

(4) As regards *taijas* and *karman shariras* (fiery and *karmic* bodies) they should be read just as the statement about their (*Asurkumars*) *vaikriya shariras* (transmutable bodies).

(५) जहा असुरकुमाराणं तहा जाव थणियकुमाराणं ताव भाणियव्वं।

(५) असुरकुमारों में जैसे इन पाँच शरीरों का कथन किया है, वैसा ही स्तनितकुमार पर्यन्त सब भवनवासी देवों के विषय में जानना चाहिए।

(5) The details about bodies of all other abode-dwelling gods up to *Stanitkumar* should be read just as the details about *Asurkumars*.

पृथ्वी–अप्–तैजस्कायिक जीवों के बद्ध–मुक्त शरीर

४२०. (१) पुढविकाइयाणं भंते ! केवइया ओरालियसरीरा पन्नत्ता ?

गोयमा ! दुविहा पं.–बद्धेल्लया य मुक्केवल्लया य। एवं जहा ओरालियसरीरा तहा भाणियव्वा।

पुढविकाइयाणं भंते ! केवइया वेउव्वियसरीरा पन्नत्ता ?

गोयमा ! दुविहा पं.। तं.–बद्धेल्लया य मुक्केल्लया य। तत्थ णं जे ते बद्धेल्लया ते णं णत्थि। मुक्केल्लया जहा ओहिया ओरालियसरीरा तहा भाणियव्वा।

आहारगसरीरा वि एवं चेव भाणियव्वा। तेयग–कम्मगसरीराणं जहा एएसिं चेव ओरालियसरीरा तहा भाणियव्वा।

४२०. (१) (प्र.) भगवन् ! पृथ्वीकायिकों के कितने औदारिकशरीर कहे हैं ?

(उ.) गौतम ! इनके औदारिकशरीर दो प्रकार के कहे हैं–बद्ध और मुक्त। इनके दोनों शरीरों की संख्या सामान्य बद्ध और मुक्त औदारिकशरीरों जितनी जानना चाहिए।

(प्र.) भगवन् ! पृथ्वीकायिकों के वैक्रियशरीर कितने कहे हैं ?

(उ.) गौतम ! वे दो प्रकार के कहे गये हैं–बद्ध और मुक्त। इनमें से बद्ध तो इनके नहीं होते हैं और मुक्त के लिए औदारिकशरीरों के समान ही जानना चाहिए।

आहारकशरीरों की वक्तव्यता भी इसी प्रकार जानना चाहिए। इनके बद्ध और मुक्त तैजस्–कार्मण शरीरों की प्ररूपणा भी इनके बद्ध और मुक्त औदारिकशरीरों के समान समझना चाहिए।

420. (1) (Q.) *Bhante* ! How many kinds of *audarik shariras* (gross physical bodies) the *Prithvikayiks* (earth-bodied beings) are said to have ?

(Ans.) Gautam ! Their *audarik shariras* (gross physical bodies) are of two kinds—*baddh* (bound) and *mukta* (abandoned). The number of these two should be read just as the general statement regarding *audarik shariras* (gross physical bodies).

(Q.) *Bhante* ! How many kinds of *vaikriya shariras* (transmutable bodies) the *Prithvikayiks* (earth-bodied beings) are said to have ?

(Ans.) Gautam ! *Vaikriya shariras* (transmutable bodies) are of two kinds—*baddh* (bound) and *mukta* (abandoned). Of these, they do not have *baddh* (bound) bodies and as regards the number of *mukta* (abandoned) bodies it should be read just as the general statement regarding *audarik shariras* (gross physical bodies).

The same is true for their *aharak shariras* (telemigratory bodies). The details about their *baddh* and *mukta taijas-karman shariras* (bound and abandoned fiery and *karmic* bodies) are also same as their *baddh* and *mukta audarik shariras* (bound and abandoned gross physical bodies).

(२) जहा पुढविकाइयाणं एवं आउकाइयाणं तेउकाइयाण य सव्वसरीरा भाणियव्वा।

(२) जिस प्रकार पृथ्वीकायिकों के पाँच शरीरों का कथन है, वैसे ही अर्थात् उतनी ही संख्या अप्कायिक और तैजस्कायिक जीवों के पाँच शरीरों की जाननी चाहिए।

(2) The details about (five kinds of) bodies of *Apkayiks* (water-bodied beings) and *Tejaskayiks* (fire-bodied beings) should be read just as the details about the (five kinds of) bodies of *Prithvikayiks* (earth-bodied beings).

वायुकायिकों के बद्ध-मुक्त शरीर

(३) वाउकाइयाणं भंते ! केवइया ओरालियसरीरा पन्नत्ता ?

गो. ! जहा पुढविकाइयाणं ओरालियसरीरा तहा भाणियव्वा।

वाउकाइयाणं भंते ! केवतिया वेउव्वियसरीरा पन्नत्ता ?

गो. ! दुविहा पं.। तं.—बद्धेल्लया य मुक्केल्लया य। तत्थ णं जे ते बद्धेल्लया ते णं असंखेज्जा समए २ अवहीरमाणा २ पलिओवमस्स असंखेज्जइभागमेत्तेणं कालेणं अवहीरंति। नो चेव णं अवहिया सिया। मुक्केल्लया जहा ओहिया ओरालियमुक्केल्लया। आहारयसरीरा जहा पुढविकाइयाणं वेउव्वियसरीरा तहा भाणियव्वा।

तेयग–कम्मयसरीरा जहा पुढविकाइयाणं तहा भाणियव्वा।

(३) (प्र.) भगवन् ! वायुकायिक जीवों के औदारिकशरीर कितने कहे गये हैं ?

(उ.) गौतम ! जिस प्रकार पृथ्वीकायिक जीवों के औदारिकशरीरों की वक्तव्यता है, वैसी ही यहाँ समझना चाहिए।

(प्र.) भगवन् ! वायुकायिक जीवों के वैक्रियशरीर कितने हैं ?

(उ.) गौतम ! वे दो प्रकार के हैं–बद्ध और मुक्त। उनमें से बद्ध असंख्यात हैं। यदि समय-समय में एक-एक शरीर का अपहरण किया जाये तो (क्षेत्र) पल्योपम के असंख्यातवें भाग में जितने प्रदेश हैं, उतने काल में पूर्णतः अपहृत हों। किन्तु उनका किसी ने कभी अपहरण किया नहीं है और मुक्त औधिक औदारिक के बराबर हैं और आहारकशरीर पृथ्वीकायिकों के वैक्रियशरीर के समान कहना चाहिए।

बद्ध, मुक्त तैजस्, कार्मणशरीरों की प्ररूपणा पृथ्वीकायिक जीवों के बद्ध एवं मुक्त तैजस् और कार्मणशरीरों के समान समझना चाहिए।

विवेचन—वायुकायिक जीवों के वैक्रियशरीर सम्बन्धी स्पष्टीकरण इस प्रकार है–

वायुकायिक जीवों के बद्ध वैक्रियशरीर असंख्यात हैं और उस असंख्यात का परिमाण बताने के लिए कहा है कि यदि ये शरीर एक-एक समय में निकाले जायें तो क्षेत्र पल्योपम के असंख्यातवें भाग में जितने आकाशप्रदेश होते हैं, उतने समयों में इनको निकाला जा सकता है। तात्पर्य यह है कि क्षेत्र पल्योपम के असंख्यातवें भाग के आकाश में जितने प्रदेश हैं, उतने ये बद्ध वैक्रियशरीर होते हैं। परन्तु यह प्ररूपणा समझने के लिए है। इस प्रकार अपहरण करके निकाल पाना असाध्य है।

कदाचित् यह कहा जाये कि असंख्यात लोकाकाशों के जितने प्रदेश हैं, उतने वायुकायिक जीव हैं, ऐसा शास्त्रों में उल्लेख है, तो फिर उनमें से बद्ध वैक्रियशरीरधारी वायुकायिक जीवों की इतनी अल्प संख्या बताने का क्या कारण है ? इसका समाधान यह है कि वायुकायिक जीव चार प्रकार के हैं– (१) सूक्ष्म अपर्याप्त, (२) सूक्ष्म पर्याप्त, (३) बादर अपर्याप्त, और (४) बादर पर्याप्त। इनमें से आदि के तीन प्रकार के वायुकायिक जीव तो असंख्यात लोकाकाशों के प्रदेशों जितने हैं और उनमें वैक्रियलब्धि

नहीं होती है। बादर पर्याप्त वायुकायिक जीव प्रतर के असंख्यातवें भाग में जितने आकाशप्रदेश होते हैं, उतने हैं, किन्तु वे उनमें भी सभी वैक्रियलब्धि-सम्पन्न नहीं होते हैं। इनमें भी असंख्यातवें भागवर्ती जीवों के ही वैक्रियलब्धि होती है। वैक्रियलब्धि-सम्पन्नों में भी सब बद्ध वैक्रियशरीरयुक्त नहीं होते, किन्तु असंख्येय भागवर्ती जीव ही बद्ध वैक्रियशरीरधारी होते हैं। इसलिए वायुकायिक जीवों में जो बद्ध वैक्रियशरीरधारी जीवों की संख्या कही गई है, इसी न्याय से समझना चाहिए।

AIR-BODIED BEINGS

(3) (Q.) *Bhante* ! How many kinds of *audarik shariras* (gross physical bodies) the *Vayukayiks* (air-bodied beings) are said to have ?

(Ans.) The details about the *audarik shariras* (gross physical bodies) of *Vayukayiks* (air-bodied beings) should be read just as the details about the *audarik shariras* (gross physical bodies) of *Prithvikayiks* (earth-bodied beings).

(Q.) *Bhante* ! How many kinds of *vaikriya shariras* (transmutable bodies) the *Vayukayiks* (air-bodied beings) are said to have ?

(Ans.) Gautam ! Their *vaikriya shariras* (transmutable bodies) are of two kinds—*baddh* (bound) and *mukta* (abandoned). Of these, the *baddh vaikriya shariras* (bound transmutable bodies) are innumerable. If one body is removed every *Samaya* they will get exhausted in uncountable fraction of (the number equal to the total space-points in) a *(kshetra) Palyopam*. However this has never been done (in other words it is impractical). As regards the number of *mukta* (abandoned) bodies it should be read just as the general statement regarding *audarik shariras* (gross physical bodies). As regards the details about *aharak shariras* (telemigratory bodies) it should be read just as the statement regarding *vaikriya shariras* (transmutable bodies) of the *Prithvikayiks* (earth-bodied beings).

The details about their *baddh* and *mukta taijas-karman shariras* (bound and abandoned fiery and *karmic* bodies) are same as the *baddh* and *mukta taijas-karman shariras* (bound and abandoned fiery and *karmic* bodies) of *Prithvikayiks* (earth-bodied beings).

Elaboration—The explanation regarding *vaikriya shariras* (transmutable bodies) of *Vayukayiks* (air-bodied beings) is as follows—

The total number of *baddh vaikriya shariras* (bound transmutable bodies) of *Vayukayiks* (air-bodied beings) are innumerable. In order to convey the level of this 'innumerable' it is mentioned that if one body is removed every *Samaya* they will get exhausted in uncountable fraction of (the number equal to the total space-points in) a *(kshetra) Palyopam.* This means that the total number of bound transmutable bodies of *Vayukayiks* (air-bodied beings) is equal to the total number of space-points in space measuring innumerable fraction of a *(kshetra) Palyopam.* However, this is just a conceptual explanation because the process of removing mentioned here is impractical.

If it is stated, as mentioned in scriptures, that the total number of *Vayukayiks* (air-bodied beings) is equal to innumerable times the total number of space-points in *Lokakash* (occupied space) than what is the reason for total number of *Vayukayiks* (air-bodied beings) with bound transmutable bodies being so meager ? The explanation is that there are four kinds of *Vayukayiks* (air-bodied beings)—(1) *Sukshma Aparyapt* (minute underdeveloped), (2) *Sukshma Paryapt* (minute fully developed), (3) *Badar Aparyapt* (gross underdeveloped), and (4) *Badar Paryapt* (gross fully developed). Out of these the first three are equal to innumerable times the total number of space-points in *Lokakash* (occupied space) but they lack the capacity of transmutation. The total number of gross fully developed *Vayukayiks* (air-bodied beings) is equal to the total number of space-points in innumerable fraction of a *pratar* but all these do not have the capacity of transmutation. Only an innumerable fraction of these have that capacity. Out of those having this capacity all do not have bound bodies. Only an innumerable fraction of these have. Therefore the statement about the total number of *Vayukayiks* (air-bodied beings) having bound transmutable bodies is, indeed, true.

वनस्पतिकायिकों के बद्ध-मुक्त शरीर

(४) वणस्सइकाइयाणं ओरालिय-वेउव्विय-आहारगसरीरा जहा पुढविकाइयाणं तहा भाणियव्वा।

वणस्सइकाइयाणं भंते ! केवइया तेयग-कम्मगसरीरा पण्णत्ता ?

गो. ! जहा ओहिया तेयग-कम्मगसरीरा तहा वणस्सइकाइयाण वि तेयग-कम्मगसरीरा भाणियव्वा।

(४) वनस्पतिकायिक जीवों के औदारिक, वैक्रिय और आहारकशरीरों को पृथ्वीकायिक जीवों के औदारिकशरीरों के समान समझना चाहिए।

(प्र.) भगवन् ! वनस्पतिकायिक जीवों के तैजस्-कार्मणशरीर कितने कहे गये हैं ?

(उ.) गौतम ! औधिक तैजस्-कार्मणशरीरों के प्रमाण के बराबर वनस्पतिकायिक जीवों के तैजस्-कार्मणशरीरों का प्रमाण जानना चाहिए।

विवेचन-उक्त वनस्पतिकायिकों के बद्ध औदारिकशरीर पृथ्वीकायिक जीवों के समान कहने का कारण यह है कि साधारण वनस्पतिकायिक जीव अनन्त होने पर भी उनका एक शरीर होने के कारण औदारिकशरीर असंख्यात ही हो सकते हैं। इनके वैक्रियलब्धि और आहारकलब्धि नहीं होने से मुक्त वैक्रिय-आहारकशरीर ही होते हैं, बद्ध नहीं। इनके बद्ध और मुक्त तैजस्-कार्मणशरीर अनन्त हैं, क्योंकि वे प्रत्येक जीव के स्वतन्त्र होते हैं और साधारण जीवों के अनन्त होने से इन दोनों को अनन्त जानना चाहिए।

PLANT-BODIED BEINGS

(4) The details about the *audarik, vaikriya* and *aharak shariras* (gross physical, transmutable and telemigratory bodies) of *Vanaspatikayiks* (plant-bodied beings) should be read just as the details about the *audarik shariras* (gross physical bodies) of *Prithvikayiks* (earth-bodied beings).

(Q.) *Bhante* ! How many kinds of *taijas-karman shariras* (fiery and *karmic* bodies) the *Vanaspatikayiks* (plant-bodied beings) are said to have ?

(Ans.) Gautam ! The details about the *taijas-karman shariras* (fiery and *karmic* bodies) of the *Vanaspatikayiks* (plant-bodied beings) should be read just as the general statement about *taijas-karman shariras* (fiery and *karmic* bodies).

Elaboration—Here it is stated that the bound gross physical bodies of plant-bodied beings and earth-bodied beings are same. The reason for this is that although, generally speaking plant-bodied beings are infinite in number, a large number of them are clumped in a single body.

Therefore the total number of gross physical bodies can only be innumerable. They are devoid of the capacities of transmutation and telemigration; therefore they only have *mukta vaikriya* and *aharak* (abandoned transmutable and telemigratory) bodies and not *baddh* (bound) ones. The number of their *baddh* and *mukta taijas* and *karman* (bound and abandoned fiery and *karmic*) bodies is infinite because every individual being has these bodies irrespective of its clumped state. Generally speaking the total number of plant-bodied beings is infinite; therefore the total number of these bodies is also infinite.

विकलेन्द्रियों के बद्ध-मुक्त शरीर

४२१. (१) बेइंदियाणं भंते ! केवइया ओरालियसरीरा पन्नत्ता ?

गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता। तं जहा—बद्धेल्लया य मुक्केल्लया य। तत्थ णं जे ते बद्धेल्लया ते णं असंखेज्जा, असंखेज्जाहिं उस्सप्पिणी-ओसप्पिणीहिं अवहीरंति कालओ, खेत्तओ असंखेज्जाओ सेढीओ पयरस्स असंखेज्जइभागो, तासि णं सेढीणं विक्खंभसूयी असंखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ असंखेज्जाइं सेढिवग्गमूलाइं; बेइंदियाणं ओरालियसरीरेहिं बद्धेल्लएहिं पयरं अवहीरइ असंखेज्जाहिं उस्सप्पिणि-ओसप्पिणीहिं कालओ, खेत्तओ अंगुलपयरस्स आवलियाए य असंखेज्जइभागपडिभागेणं। मुक्केल्लया जहा ओहिया ओरालियसरीरा तहा भाणियव्वा।

वेउव्विय-आहारगसरीरा णं बद्धेल्लया नत्थि, मुक्केल्लया जहा ओरालियसरीरा ओहिया तहा भाणियव्वा।

तेया-कम्मगसरीरा जहा एतेसिं चेव ओरालियसरीरा तहा भाणियव्वा।

४२१. (१) (प्र.) भगवन् ! द्वीन्द्रियों के औदारिकशरीर कितने हैं ?

(उ.) गौतम ! वे दो प्रकार के हैं। यथा—बद्ध और मुक्त। उनमें से बद्ध औदारिकशरीर असंख्यात हैं। काल की अपेक्षा असंख्यात उत्सर्पिणियों और अवसर्पिणियों से अपहृत होते हैं। अर्थात् असंख्यात उत्सर्पिणियों-अवसर्पिणियों के समय जितने हैं। क्षेत्र की अपेक्षा प्रतर के असंख्यातवें भाग में वर्तमान असंख्यात श्रेणियों के प्रदेशों की राशि प्रमाण हैं। उन श्रेणियों की विष्कंभसूची असंख्यात कोटाकोटि योजनप्रमाण है। इतने प्रमाण वाली विष्कम्भसूची असंख्यात श्रेणियों के वर्गमूल रूप है। द्वीन्द्रियों के बद्ध औदारिकशरीरों द्वारा प्रतर अपहृत किया जाये तो काल की अपेक्षा असंख्यात उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी कालों में

अपहृत होता है तथा क्षेत्र की अपेक्षा अंगुल मात्र प्रतर और आवलिका के असंख्यातवें भाग-प्रतिभाग (प्रमाणांश) से अपहृत होता है। जैसा औघिक मुक्त औदारिकशरीरों का परिमाण कहा है, वैसा इनके मुक्त औदारिकशरीरों के लिए भी जानना चाहिए।

द्वीन्द्रियों के बद्ध वैक्रिय-आहारकशरीर नहीं होते हैं और मुक्त के विषय में जैसा औघिक मुक्त औदारिकशरीर के विषय में कहा है, वैसा जानना चाहिए।

तैजस् और कार्मण के बद्ध-मुक्त शरीरों के लिए जैसा इनके औदारिकशरीरों के विषय में कहा है, वैसा ही कहना चाहिए।

VIKALENDRIYA

421. (1) (Q.) *Bhante* ! How many kinds of *audarik shariras* (gross physical bodies) the *Dvindriyas* (two-sensed beings) are said to have ?

(Ans.) Gautam ! Their *audarik shariras* (gross physical bodies) are of two kinds—*baddh* (bound) and *mukta* (abandoned). Of these, the *baddh audarik shariras* (bound gross physical bodies) are innumerable. (Their number) in terms of time (is such that) it takes innumerable *utsarpini-avasarpini* (progressive-regressive cycles of time) to remove them (if stored in a silo). In terms of area they are equal to space-points in innumerable *Shrenis* in the innumerable fraction of one *pratar* (see aphorism 356-357). Expressed in *vishkambh-suchi* (wide rows) the *Shrenis* are equal to innumerable *Kotakoti yojan* which is equal to (the sum of) innumerable square roots (such as first square root, second square root and so on). (An alternative way of arriving at this figure is—) If the bound gross physical bodies are removed from a fully occupied *pratar* it takes innumerable *utsarpini-avasarpini* (progressive-regressive cycles of time) in terms of time. In terms of area they are equal to the number of time units, measured as innumerable fraction of an *avalika,* required to empty the total number of space-points in a *pratar angul.* As regards the *mukta audarik shariras* (bound gross physical bodies) it should be read just as the general statement regarding *mukta audarik shariras* (abandoned gross physical bodies) (Aphorism 413).

The two-sensed beings are devoid of *baddh vaikriya* and *aharak* (bound transmutable and telemigratory) bodies. The details regarding the *mukta vaikriya* and *aharak shariras* (abandoned transmutable and telemigratory bodies) should be read just as the general statement regarding *mukta audarik shariras* (abandoned gross physical bodies).

The details about the *baddh* and *mukta taijas-karman shariras* (bound and abandoned fiery and *karmic* bodies) should be read just as the statement about their *audarik shariras* (gross physical bodies).

(२) जहा बेइंदियाणं तहा तेइंदियाणं चउरिंदियाणं वि भाणियव्वं।

(२) द्वीन्द्रियों के बद्ध-मुक्त पाँच शरीरों के सम्बन्ध में जो निर्देश किया है, वैसा ही त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय जीवों के विषय में भी कहना चाहिए।

विवेचन-प्रस्तुत पाठ में द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय जीवों के बद्ध और मुक्त शरीरों की प्ररूपणा है। उसका द्वीन्द्रिय की अपेक्षा से स्पष्टीकरण इस प्रकार है-

द्वीन्द्रियों के बद्ध औदारिकशरीर असंख्यात हैं और उस असंख्यात का परिमाण काल की अपेक्षा असंख्यात उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी काल के जितने समय होते हैं, उतना है। क्षेत्र की अपेक्षा वे शरीर प्रतर के असंख्यातवें भाग में वर्तमान असंख्यात श्रेणियों के प्रदेशों की राशि जितने हैं। इन श्रेणियों की विष्कंभसूची असंख्यात कोटाकोटि योजनों की जानना चाहिए। इतने प्रमाण वाली विष्कंभ (विस्तार) सूची असंख्यात श्रेणियों के वर्गमूल रूप होती है। किसी राशि को उसी राशि से गुणा करने पर वर्गफल आता है। जिस राशि से गुणा किया था वह उस वर्गफल का वर्गमूल होता है। इसका तात्पर्य यह है कि आकाशश्रेणी में रहे हुए समस्त प्रदेश असंख्यात होते हैं, जिनको कल्पना से ६५,५३६ समझ लें। यह ६५,५३६ की संख्या असंख्यात की सूचक मान लें। इस संख्या का प्रथम वर्गमूल २५६, दूसरा वर्गमूल १६, तीसरा वर्गमूल ४ तथा चौथा वर्गमूल २ हुआ। ये कल्पित वर्गमूल असंख्यात वर्गमूल रूप हैं। इन वर्गमूलों का जोड़ करने पर (२५६ + १६ + ४ + २ = २७८) दो सौ अठहत्तर हुआ। यह २७८ प्रदेशों वाली विष्कम्भसूची है।

अब इसी शरीरप्रमाण को दूसरे प्रकार से बताने के लिए सूत्र में पद दिया है-"...... **पयरं अवहीरइ असंखेज्जाहिं उस्सप्पिणि-ओसप्पिणीहिं कालओ।**" अर्थात् द्वीन्द्रिय जीवों के बद्ध औदारिकशरीरों से यदि सब प्रतर खाली किया जाये तो असंख्यात उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी कालों के समयों से वह समस्त प्रतर द्वीन्द्रिय जीवों के बद्ध औदारिकशरीरों से खाली किया जा सकता है और क्षेत्र की अपेक्षा "**अंगुलपयरस्स आवलियाए यं असंखेज्जइभागं पडिभागेणं।**" अर्थात् अंगुल प्रतर के जितने प्रदेश हैं उनको एक-एक द्वीन्द्रिय जीवों से भरा जाये और फिर उन प्रदेशों से आवलिका के असंख्यातवें भाग रूप समय में

एक-एक द्वीन्द्रिय जीव को निकाला जाये तो आवलिका के असंख्यात भाग लगते हैं। इतने प्रदेश अंगुल प्रतर के हैं। उस प्रतर के जितने प्रदेश हैं, उतने द्वीन्द्रिय जीवों के बद्ध औदारिकशरीर हैं। इस प्रकार से बताई गई संख्या में पूर्वोक्त कथन से कोई भेद नहीं है, मात्र कथन-शैली की भिन्नता है।

(2) The details about (five kinds of) bodies of three and four-sensed beings should be read just as the details about the (five kinds of) bodies of two-sensed beings.

Elaboration—This aphorism details the bound and abandoned bodies of two to four sensed beings. Two sensed beings, being the model, are explained as follows—

The *baddh audarik shariras* (bound gross physical bodies) are innumerable. The quantum of this 'innumerable' in terms of time is the total number of *Samayas* in innumerable *utsarpini-avasarpini* (progressive-regressive cycles of time). In terms of area they are equal to space-points in innumerable *Shrenis* in the innumerable fraction of one *pratar* (see aphorism 356-357). Expressed in *vishkambh-suchi* (wide rows) the *Shrenis* are equal to innumerable *Kotakoti yojans*. This is equal to the sum of square roots of innumerable *Shrenis* (progressions). A number multiplied by the same number gives the square of that number. This number is the square root of the square so obtained. To understand this *vishkambh-suchi* let us take an example of finite numbers. The total number of space-points in an *akash-shreni* is innumerable. Let us assume this 'innumerable' to be 65,536. The first square root of this number is 256, the second square root is 16, the third is 4 and the fourth is 2. When we add these square roots (256 + 16 + 4 + 2), we get the figure 278. This is a *vishkambh-suchi* having 278 space-points.

The same number is conveyed in a different way—In terms of time : If two-sensed beings are removed from all the *pratars* one in one *Samaya* these could be removed in total number of *Samayas* of innumerable *utsarpini-avasarpini* (progressive-regressive cycles of time). In terms of area : If all the space-points in an *angul pratar* are filled with one two-sensed being each and then they are removed one in one innumerable fraction of one *avalika,* the total number of these units is the number of space-points in a *pratar* and thus the total number of bound gross physical bodies of two-sensed beings. This is exactly same as the number derived by the first process, the only difference being in way of expressing it.

४२२. (१) पंचेंदियतिरिक्खजोणियाण वि ओरालियसरीरा एवं चेव भाणियव्वा।

४२२. (१) पंचेन्द्रितिर्यंचयोनिक जीवों के भी औदारिकशरीर इसी प्रकार (द्वीन्द्रिय जीवों के औदारिकशरीरों के समान ही) जानना चाहिए।

FIVE-SNESED ANIMALS

422. (1) The details about the *audarik sharira* (gross physical bodies) of five-sensed animals should be read just as the details about the *audarik sharira* (gross physical bodies) of two-sensed beings.

(२) पंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं भंते ! केवइया वेउव्वियसरीरा पण्णत्ता ?

गोयमा ! दुविहा पं.। तं.—बद्धेल्लया य मुक्केल्लया य। तत्थ णं जे ते बद्धेल्लया ते णं असंखेज्जा, असंखेज्जाहिं उस्सप्पिणि-ओसप्पिणीहिं अवहीरंति कालओ, खेत्तओ जाव विक्खंभसूयी अंगुलपढमवग्गमूलस्स असंखेज्जइभागो। मुक्केल्लया जहा ओहिया ओरालिया। आहारयसरीरा जहा बेइंदियाणं। तेयग-कम्मगसरीरा जहा ओरालिया।

(२) (प्र.) भगवन् ! पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों के वैक्रियशरीर कितने हैं ?

(उ.) गौतम ! वे दो प्रकार के हैं-बद्ध और मुक्त। उनमें से बद्ध वैक्रियशरीर असंख्यात हैं, जिनका काल की अपेक्षा असंख्यात उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी काल से अपहरण होता है और क्षेत्र की अपेक्षा यावत् (श्रेणियों की) विष्कम्भसूची अंगुल के प्रथम वर्गमूल के असंख्यातवें भाग में वर्तमान श्रेणियों जितनी है। मुक्त वैक्रियशरीरों का प्रमाण सामान्य औदारिकशरीरों के प्रमाण तथा इनके आहारकशरीरों का प्रमाण द्वीन्द्रियों के आहारकशरीरों के बराबर है। तैजस्-कार्मणशरीरों का परिमाण औदारिकशरीरों के प्रमाण की तरह है।

विवेचन-यहाँ इतना विशेष जानना चाहिए कि यहाँ त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रियों के लिए सामान्य से असंख्यात कहा गया है। लेकिन असंख्यात के असंख्यात भेद होने से विशेषापेक्षा उनकी संख्या में अल्पाधिकता रहती है। वह इस प्रकार-पंचेन्द्रिय जीव अल्प हैं, उनसे कुछ अधिक चतुरिन्द्रिय, उनसे त्रीन्द्रिय विशेषाधिक, उनसे द्वीन्द्रिय विशेषाधिक और एकेन्द्रिय अनन्त गुणे हैं। इसलिए उनके शरीरों की असंख्यातता में भी भिन्नता होती है।

(2) (Q.) *Bhante* ! How many kinds of *vaikriya shariras* (transmutable bodies) the five-sensed animals are said to have ?

(Ans.) Gautam ! Their *vaikriya shariras* (transmutable bodies) are of two kinds—*baddh* (bound) and *mukta* (abandoned). Of these, the *baddh vaikriya shariras* (bound gross physical bodies) are innumerable. (Their number) in terms of time (is such that) it takes innumerable *utsarpini-avasarpini* (progressive-regressive cycles of time) to remove them (if stored in a silo). In terms of area they are equal to space-points in innumerable *Shrenis* in the innumerable fraction of one *pratar.* Expressed in *vishkambh-suchi* (square units) the *Shrenis* are equal to innumerable fraction of the first square root of (the space-points in a *pratar) angul.* The details regarding the *mukta vaikriya shariras* (abandoned transmutable bodies) should be read just as the general statement regarding *audarik shariras* (gross physical bodies). The details regarding the *aharak shariras* (telemigratory bodies) should be read just as the statement regarding *aharak shariras* (telemigratory bodies) of two-sensed beings. The details about the *taijas-karman shariras* (fiery and *karmic* bodies) should be read just as the statement about their *audarik shariras* (gross physical bodies).

Elaboration—Here one more thing should be kept in mind. For two, three, four and five-sensed beings the term innumerable has been used in general. However, as there are innumerable categories even of innumerable, there is a difference of degree (less or more) in specific context. Here it is like this—Five-sensed beings are minimum, slightly more than these are four-sensed beings, much more than these are three-sensed beings, even more than these are two-sensed beings and one-sensed beings are infinite times more. Therefore, there is a difference of degree in the innumerableness of the total number of these beings.

मनुष्यों के बद्ध-मुक्त पंच शरीर निरूपण

४२३. (१) मणूसाणं भंते ! केवइया ओरालियसरीरा पन्नत्ता ?

गो. ! दुविहा पण्णत्ता। तं जहा—बद्धेल्लया य मुक्केल्लया य। तत्थ णं जे ते बद्धेल्लया ते णं सिय संखेज्जा सिय असंखेज्जा, जहण्णपदे संखेज्जा संखेज्जाओ कोडीओ, एगुणतीसं ठाणाइं। तिजमलपयस्स उवरिं चउजमलपयस्स हेट्ठा, अहवणं छट्ठो वग्गो

पंचमवग्गपडुप्पण्णो, अहवणं छण्णउति-छेयणगदाइरासी, उक्कोसपदे असंखेज्जा, असंखेज्जाहिं उस्सप्पिणि-ओसप्पिणीहिं अवहीरंति कालओ, खेत्तओ उक्कोसपए रूवपक्खित्तेहिं मणूसेहिं सेढी अवहीरंति, असंखेज्जाहिं उस्सप्पिणी-ओसप्पिणीहिं कालओ, खेत्तओ अंगुलपढमवग्गमूलं ततियवग्गमूलपडुप्पण्णं। मुक्केल्लया जहा ओहिया ओरालिया।

४२३. (१) (प्र.) भन्ते ! मनुष्यों के औदारिकशरीर कितने कहे हैं ?

(उ.) गौतम ! वे दो प्रकार के कहे हैं-बद्ध और मुक्त। उनमें से बद्ध तो स्यात् संख्यात और स्यात् असंख्यात होते हैं। जघन्य पद में संख्यात कोटाकोटि होते हैं अर्थात् उनतीस अंक प्रमाण होते हैं। ये उनतीस अंक तीन यमल पद के ऊपर तथा चार यमल पद से नीचे हैं, अथवा पंचम वर्ग से गुणित छठे वर्ग प्रमाण होते हैं, अथवा छियानवे (९६) छेदनकदायी राशि जितनी संख्या प्रमाण हैं। उत्कृष्ट पद में वे शरीर असंख्यात हैं। जो कालतः असंख्यात उत्सर्पिणियों-अवसर्पिणियों द्वारा अपहृत होते हैं और क्षेत्र की अपेक्षा एक रूप प्रक्षिप्त किये जाने पर मनुष्यों से श्रेणी अपहृत होती है। कालतः असंख्यात उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी कालों से अपहार होता है और क्षेत्रतः तीसरे वर्गमूल से गुणित अंगुल के प्रथम वर्गमूल प्रमाण होते हैं। उनके मुक्त औदारिकशरीर औधिक मुक्त औदारिकशरीरों के समान जानना चाहिए।

HUMAN BEINGS

423. (1) (Q.) *Bhante* ! How many kinds of *audarik shariras* (gross physical bodies) the human beings are said to have ?

(Ans.) Gautam ! Their *audarik shariras* (gross physical bodies) are of two kinds—*baddh* (bound) and *mukta* (abandoned). Of these, the *baddh audarik shariras* (bound gross physical bodies) are—may be numerable or may be innumerable. (Their number) in the state of being minimum is numerable, which means numerable *Kotakoti* or twenty nine digits. (This expressed differently is—) the number is more than three *yamal-pad* (multiples of 8) and less than four *yamal-pad* (in other words the number is of more than 24 digits and less than 32 digits). (Another way of expressing is—) The number is sixth square multiplied by fifth square (264 × 232). (Yet another way of expressing—) it is a

number that gives ninety-six *chhedanaks* (a number which when consecutively divided ninety six times by two finally gives a whole number, e.g. 1). (Their number) in the state of being maximum is innumerable. (This innumerable is—) in terms of time (is such that) it takes innumerable *utsarpini-avasarpini* (progressive-regressive cycles of time) to remove them (if stored in a silo). In terms of area if one gross human body is removed in one *Samaya* the total number is removed in innumerable *utsarpini-avasarpini* (progressive-regressive cycles of time). (Expressed in *vishkambh-suchi* or square units) the number is equal to the first square root of (the space-points in a *pratar*) *angul* multiplied by the third square root of the same. As regards the *mukta audarik shariras* (abandoned gross physical bodies) it should be read just as the general statement regarding *mukta audarik shariras* (abandoned gross physical bodies).

(२) मणूसाणं भंते ! केवतिया वेउव्वियसरीरा पण्णत्ता ?

गो. ! दुविहा पं.। तं.—बद्धेल्लया य मुक्केल्लया य। तत्थ णं जे ते संखेज्जा समए २ अवहीरमाणा २ संखेज्जेणं कालेणं अवहीरंति, नो चेव णं अवहिया सिया। मुक्केल्लया जहा ओहिया ओरालिया।

(२) (प्र.) भंते ! मनुष्यों के वैक्रियशरीर कितने कहे हैं ?

(उ.) गौतम ! वे दो प्रकार के कहे हैं—बद्ध और मुक्त। उनमें से बद्ध संख्यात हैं जो समय-समय में अपहृत किये जाने पर संख्यात काल में अपहृत होते हैं किन्तु अपहृत नहीं किये गये हैं। मुक्त वैक्रियशरीर मुक्त औधिक औदारिकशरीरों के बराबर जानना चाहिए।

(2) (Q.) *Bhante* ! How many kinds of *vaikriya shariras* (transmutable bodies) the human beings are said to have ?

(Ans.) Gautam ! Their *vaikriya shariras* (transmutable bodies) are of two kinds—*baddh* (bound) and *mukta* (abandoned). Of these, the *baddh vaikriya shariras* (bound transmutable bodies) are numerable. If one is removed body every *Samaya* they will get exhausted in numerable time. However this has never been done (in other words it is impractical). As regards the *mukta vaikriya shariras* (abandoned transmutable bodies) it should be

read just as the general statement regarding *mukta audarik shariras* (abandoned gross physical bodies).

(३) मणूसाणं भंते ! केवइया आहारयसरीरा पन्नत्ता ?

गो. ! दुविहा पण्णत्ता। तं जहा—बद्धेल्लया य मुक्केल्लया य। तत्थ णं जे ते बद्धेल्लया ते णं सिय अत्थि सिय नत्थि, जइ अत्थि जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा उक्कोसेणं सहस्सपुहत्तं। मुक्केल्लया जहा ओहिया ओरालिया।

(३) (प्र.) भगवन् ! मनुष्यों के आहारकशरीर कितने कहे गये हैं ?

(उ.) गौतम ! वे दो प्रकार के कहे हैं। यथा—बद्ध और मुक्त। उनमें से बद्ध तो कदाचित् होते हैं और कदाचित् नहीं भी होते हैं। जब होते हैं तब जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट सहस्रपृथक्त्व होते हैं। मुक्त आहारकशरीर औधिक मुक्त औदारिकशरीरों के बराबर जानना चाहिए।

(3) (Q.) *Bhante* ! How many kinds of *aharak shariras* (telemigratory bodies) the human beings are said to have ?

(Ans.) Gautam ! Their *aharak shariras* (telemigratory bodies) are of two kinds—*baddh* (bound) and *mukta* (abandoned). Of these, the *baddh aharak shariras* (bound telemigratory bodies) may and may not exist. Where they exist their minimum number is one, two or three and maximum is two thousand to nine thousand (*sahasra prithakatva*). As regards the *mukta* (abandoned by soul) it should be read just as the general statement regarding *mukta audarik shariras* (abandoned gross physical bodies).

विवेचन—मनुष्य मुख्य रूप से औदारिकशरीरधारी हैं। अतः उनके विषय में तनिक विस्तार इस प्रकार है–

मनुष्यों के बद्ध औदारिकशरीर कदाचित् संख्यात, कदाचित् असंख्यात होते हैं। इसका कारण यह है कि मनुष्य दो प्रकार के हैं–गर्भज और संमूर्च्छिम। इनमें से गर्भज मनुष्य तो सदैव होते हैं किन्तु संमूर्च्छिम मनुष्य कभी होते हैं और कभी नहीं होते हैं। उनकी उत्कृष्ट आयु भी अंतर्मुहूर्त्त की होती है और उत्पत्ति का विरहकाल उत्कृष्ट चौबीस मुहूर्त्त प्रमाण कहा गया है। अतएव जब सम्मूर्च्छिम मनुष्य नहीं होते और केवल गर्भज मनुष्य ही होते हैं, तब वे संख्यात होते हैं। इसी अपेक्षा से उस समय बद्ध औदारिकशरीर संख्यात कहे हैं। जब सम्मूर्च्छिम मनुष्य होते हैं तब समुच्चय मनुष्य असंख्यात हो जाते हैं। क्योंकि संमूर्च्छिम मनुष्यों का प्रमाण अधिक से अधिक श्रेणी के असंख्यातवें भाग में स्थित

आकाशप्रदेशों की राशि के तुल्य कहा गया है। ये संमूर्च्छिम मनुष्य प्रत्येकशरीरी होते हैं, इसलिए गर्भज और संमूर्च्छिम-दोनों के बद्ध औदारिकशरीर मिलकर असंख्यात होते हैं।

यद्यपि जघन्य पद में संख्यात होने से गर्भज मनुष्यों के औदारिकशरीरों का परिमाण बताया है, किन्तु संख्यात के भी संख्यात भेद होते हैं। इसलिए संख्यात कहने से निश्चित संख्या का बोध नहीं होता है। निश्चित संख्या बताने के लिए संख्यात कोटाकोटि कहा गया है और इसका विशेष स्पष्टता के साथ कथन करने के लिए तीन यमल पद से ऊपर और चार यमल पद से नीचे कहा है। इसका आशय इस प्रकार है-शास्त्रीय परिभाषा के अनुसार आठ-आठ पदों की एक यमल पद संख्या है। तीन यमल पद का अर्थ चौबीस अंकों की संख्या। चार यमल पद का अर्थ बत्तीस अंकों की संख्या। यहाँ तीन यमल पदों से ऊपर और चार यमल पदों से नीचे कहा गया है। ये संख्यात कोटाकोटि २९ अंक प्रमाण होती है।

इसी बात को विशेष स्पष्ट करने के लिए सूत्र में दूसरी विधि बताई है। पंचम वर्ग से छठे वर्ग को गुणित करने पर जो राशि बनती हो, जघन्य पद में उस राशि प्रमाण मनुष्यों की संख्या है। तात्पर्य इस प्रकार है कि एक का वर्ग नहीं होता। एक को एक से गुणा करने पर गुणनफल एक ही आता है, संख्या में वृद्धि नहीं होने से वर्ग रूप में गणना नहीं होती। वर्ग का प्रारम्भ दो की संख्या से होता है। अतः

२ × २ = ४ यह प्रथम वर्ग हुआ।

४ × ४ = १६ यह दूसरा वर्ग हुआ।

१६ × १६ = २५६ संख्या हुई, यह तृतीय वर्ग हुआ।

२५६ × २५६ = ६५,५३६ संख्या हुई, यह चौथा वर्ग हुआ।

६५,५३६ × ६५,५३६ = ४,२९,४९,६७,२९६ (चार अरब उनतीस करोड़ उनचास लाख सड़सठ हजार दो सौ छियानवे) राशि पंचम वर्ग की हुई।

इस पंचम वर्ग की राशि का उसी से गुणा करने पर १,८४,४६,७४,४०,७३,७०,९५,५१,६१६ राशि हुई, यह छठा वर्ग हुआ।

इस छठे वर्ग का पूर्वोक्त पंचम वर्ग के साथ गुणा करने पर निष्पन्न राशि जघन्य पद में मनुष्यों की संख्या की बोधक है। यह राशि अंकों में इस प्रकार है-७९,२२,८१,६२,५१,४२,६४,३३,७५,९३,५४,३९,५०,३३६। इन अंकों की संख्या २९ है, अतः २९ अंक प्रमाण राशि से गर्भज मनुष्यों की संख्या कही गई है।

प्रकारान्तर से तीसरी व्याख्या मिलती है कि उस राशि के छियानवे छेदनकदायी होते हैं। जो आधे-आधे करते छियानवे बार छेदन (भाग) को प्राप्त हो और अन्त में एक बच जाय उसे **छियानवे छेदनकदायी राशि कहते हैं।** इसको इस प्रकार समझें-

प्रथम वर्गफल २ × २ = ४ का छेदन करने से २ छेदनकदायी होते हैं। जैसे ४ का आधा २ और २ का आधा १।

दूसरा वर्गफल ४ × ४ = १६ का छेदन करने से ४ छेदनक होते हैं। प्रथम ८, द्वितीय ४, तृतीय २ और चतुर्थ १। १६ : २ = ८। ८ : २ = ४। ४ : २ = २। २ : १ = १।

तीसरा वर्गफल १६ × १६ = २५६ के आठ छेदनक होते हैं।

चौथा वर्गफल २५६ × २५६ = ६५,५३६ के १६ छेदनक होते हैं।

पाँचवाँ वर्गफल ६५,५३६ × ६५,५३६ = ४,२९,४९,६७,२९६ के ३२ छेदनक होते हैं।

छट्ठा वर्गफल ४,२९,४९,६७,२९६ × ४,२९,४९,६७,२९६ =
१,८४,४६,७४,४०,७३,७०,९५,५१,६१६ के ६४ छेदनक होते हैं।

फलित की भाषा में अगले-अगले वर्गफल में पूर्व से दुगुने छेदनक होते जाते हैं। पाँचवें वर्गफल के ३२ छेदनक और छट्ठे वर्ग के ६४ छेदनक। इन दोनों का योग करने से ३२ + ६४ = ९६ छेदनक होते हैं।

एक दूसरे प्रकार से यह भी कह सकते हैं-एक के अंक को स्थापित कर उत्तरोत्तर उसे छियानवे बार दुगुना करने पर जितनी राशि आती है वह छियानवे छेदनकदायी राशि कहलाती है। इस छियानवे छेदनकदायी राशि का प्रमाण उतना ही होगा जितना कि पाँचवें वर्गफल और छट्ठे वर्गफल का गुणा करने से आता है।

Elaboration—Human beings mostly have *audarik sharira* (gross physical body), therefore a little more explanation is included here—

The bound gross physical bodies of human beings are said to have both possibilities, numerable and innumerable. The reason for this is that human beings are of two kinds—*garbhaj* (born out of womb or placental) and *sammurchhim* (of asexual origin). Of these the placental type exists always whereas the *sammurchhim* (of minute size spontaneously born in excreted fluids) sometimes exist and sometimes do not. Also their maximum life-span is said to be *antar-muhurt* (less than one *muhurt* or forty eight minutes) and the intervening period between rebirths is maximum twenty four *muhurt*. Thus at the time when the *sammurchhim* human beings do not exist and only placental ones exist, the total number of human beings is numerable. In this context the number of bound gross physical bodies of human beings is said to be numerable. When *sammurchhim* humans exist the total number of humans becomes innumerable. This is because the maximum number of *sammurchhim* human beings is equal to the total space-points in innumerable fraction of a *Shreni* and each individual *sammurchhim* human has one body. Thus the total number of bound gross physical bodies of *sammurchhim* and placental human beings counted together comes to innumerable.

Although in its minimum state the total number of *audarik shariras* (gross physical bodies) of human beings is expressed as innumerable but this innumerable too has innumerable degrees. Therefore by stating

innumerable the exact number is not conveyed. In order to convey innumerable in more exact terms it is alternatively expressed as *sankhyat Kotakoti* (numerable ten million square). To further clarify, it has been stated as over three *yamal-pad* and under four *yamal-pad*. The explanation is—The classical definition of *yamal-pad* is a group of eight numerals. Therefore three *yamal-pad* means a number having twenty four numerals ($8 \times 3 = 24$) and four *yamal-pads* means a number having thirty two numerals. Here it is mentioned that the number is over three *yamal-pad* and under four *yamal-pad*. And *sankhyat Kotakoti* has twenty nine numerals.

To further clarify, this has also been stated as—the minimum number of humans is equal to the multiple of fifth square of 2 with its sixth square. As one multiplied by one gives one only, the square of one is one. As there is no variation in the number it is not included in squares. The squares start with the number 2 and are as follows—

First square is $2 \times 2 = 4$

Second square is $4 \times 4 = 16$

Third square is $16 \times 16 = 256$

Fourth square is $256 \times 256 = 65,536$

Fifth square is $65,536 \times 65,536 = 4,29,49,67,296$ (four billion twenty nine crore forty nine lac sixty seven thousand two hundred ninety six).

Sixth square is $4,29,49,67,296 \times 4,29,49,67,296 = 1,84,46,74,40,73,70,95,51,616$

Multiplying this sixth square with the fifth square gives the minimum number of human bodies. Expressed in numbers it is—79,22,81,62,51,42,64,33,75,93,54,39,50,336. There are 29 numerals in this number therefore it is stated that the total number of human beings is equal to twenty nine numerals.

The third expression of the same idea here is that that number has ninety six *chhedanaks* (a number which when consecutively divided ninety six times by two, finally gives a whole number, e.g. 1). *Chhedanak* in simple terms means divided into two. This can be expressed in mathematical terms as follows—

First square ($2 \times 2 = 4$) has two *Chhedanaks* (4 divided by 2 is 2 and 2 divided by 2 is 1).

Second square (4 × 4 = 16) has four *Chhedanaks* (8, 4, 2, 1).

Third square (16 × 16 = 256) has eight *Chhedanaks* (128, 64, 32, 16, 8, 4, 2, 1).

Fourth square (256 × 256 = 65,536) has sixteen *Chhedanaks.*

Fifth square (65,536 × 65,536 = 4,29,49,67,296) has thirty two *Chhedanaks.*

Sixth square (4,29,49,67,296 × 4,29,49,67,296 =
1,84,46,74,40,73,70,95,51,616) has sixty four *Chhedanaks.*

In mathematical terms each following square has twice the number of *Chhedanaks* its preceeding square has. Fifth square has 32 *Chhedanaks* and sixth square has 64 *Chhedanaks*. Adding these two we get 96 *Chhedanaks.*

Another way of putting it is—the number arrived at by multiplying 1 by two consecutively for 96 times is called a 96 *Chhedanak* number. This will be same as the number arrived at by multiplying sixth square with fifth square.

(४) तेयग–कम्मगसरीरा जहा एतेंसि चेव ओहिया ओरालिया तहा भाणियव्वा।

(४) मनुष्यों के बद्ध–मुक्त तैजस्–कार्मणशरीर का प्रमाण इन्हीं के बद्ध–मुक्त औदारिकशरीरों के समान जानना चाहिए।

(4) As regards the *baddh* and *mukta taijas-karman sharira* (bound and abandoned fiery and *karmic* bodies) of human beings it should be read just as the statement regarding their *baddh* and *mukta audarik shariras* (bound and abandoned gross physical bodies).

वाणव्यंतर देवों के बद्ध–मुक्त शरीर

४२४. (१) वाणमंतराणं ओरालियसरीरा जहा नेरइयाणं।

४२४. (१) वाणव्यंतर देवों के औदारिकशरीरों का प्रमाण नारकों के औदारिकशरीरों जैसा जानना चाहिए। (सूत्र ४१८)

VANAVYANTAR GODS

424. (1) The details regarding the *audarik shariras* (gross physical bodies) of *Vanavyantar* gods should be read just as the

statement regarding *audarik shariras* (abandoned gross physical bodies) of *naaraks* (infernal beings).

(२) वाणमंतराणं भंते ! केवइया वेउव्वियसरीरा पन्नत्ता ?

गो. ! दुविहा पं.। तं.—बद्धेल्लया य मुक्केल्लया य। तत्थ णं जे ते बद्धेल्लया ते णं असंखेज्जा, असंखेज्जाहिं उस्सप्पिणि-ओसप्पिणीहिं अवहीरंति कालओ, खेत्तओ असंखेज्जाओ सेढीओ पयरस्स असंखेज्जइभागो, तासि णं सेढीणं विक्खंभसूई संखेज्जजोयणसयवग्गपलिभागो पतरस्स। मुक्केल्लया जहा ओहिया ओरालिया।

(२) (प्र.) भंते ! वाणव्यंतर देवों के कितने वैक्रियशरीर कहे हैं ?

(उ.) गौतम ! वे दो प्रकार के कहे हैं–बद्ध और मुक्त। उनमें से बद्ध वैक्रियशरीर सामान्य रूप से असंख्यात हैं जो काल की अपेक्षा असंख्यात उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी कालों में अपहृत होते हैं। क्षेत्र की अपेक्षा प्रतर के असंख्यातवें भाग में रही हुई असंख्यात श्रेणियों जितने हैं। उन श्रेणियों की विष्कंभसूची प्रतर के संख्येय सौ योजन के वर्गरूप प्रतिभाग (अंश) जितनी है। मुक्त वैक्रियशरीरों का प्रमाण औघिक औदारिकशरीरों की तरह जानना चाहिए।

(2) (Q.) *Bhante* ! How many kinds of *vaikriya shariras* (transmutable bodies) the *Vanavyantar* gods are said to have ?

(Ans.) Gautam ! *Vaikriya shariras* (transmutable bodies) are of two kinds—*baddh* (bound) and *mukta* (abandoned). Of these, the *baddh vaikriya shariras* (bound transmutable bodies) are generally innumerable. (Their number) in terms of time (is such that) it takes innumerable *utsarpini-avasarpini* (progressive-regressive cycles of time) to remove them. In terms of area they are equal to space-points in innumerable *Shrenis* in the innumerable fraction of one *pratar.* Expressed in *vishkambh-suchi* (square units) the *Shrenis* are calculated as a fraction of the square of the countable hundred *yojans* of a *pratar.* As regards the *mukta vaikriya shariras* (abandoned transmutable bodies) it should be read just as the general statement regarding *audarik shariras* (gross physical bodies) (Aphorism 413).

(३) आहारगसरीरा दुविहा वि जहा असुरकुमाराणं।

(३) दोनों प्रकार के आहारकशरीरों का परिमाण असुरकुमारों के दोनों आहारकशरीरों के प्रमाण जितना जानना चाहिए।

(3) The details regarding their two kinds of *aharak shariras* (telemigratory bodies) should be read just as the statement regarding two kinds of *aharak shariras* (telemigratory bodies) of *Asurkumars.*

(४) वाणमंतराणं भंते ! केवइया तेयग–कम्मगसरीरा पं. ?

गो. ! जहा एएसिं चेव वेउव्वियसरीरा तहा तेयग–कम्मगसरीरा वि भाणियव्वा।

(४) (प्र.) भंते ! वाणव्यंतरों के कितने तैजस्–कार्मणशरीर हैं ?

(उ.) गौतम ! जैसे इनके वैक्रियशरीर हैं, वैसे ही तैजस्–कार्मणशरीर भी जानना चाहिए।

विवेचन–वाणव्यंतर देवों के औदारिकशरीरों का प्रमाण नारकों के औदारिकशरीरों के प्रमाण जितना कहने का तात्पर्य यह है कि वाणव्यंतर देवों के बद्ध औदारिकशरीर तो होते नहीं हैं। मुक्त औदारिकशरीर पूर्वभवों की अपेक्षा अनन्त हैं।

वाणव्यंतर देवों के बद्ध आहारकशरीर होते नहीं हैं और मुक्त आहारकशरीर मुक्त औदारिकशरीरों के समान अनन्त हैं। बद्ध तैजस्–कार्मणशरीर वाणव्यंतरों के बद्ध वैक्रियशरीर के समान असंख्यात हैं और मुक्त तैजस्–कार्मणशरीर अनन्त होते हैं।

(4) (Q.) *Bhante* ! How many kinds of *taijas-karman shariras* (fiery and *karmic* bodies) the *Vanavyantar* gods are said to have ?

(Ans.) The details regarding their *taijas-karman shariras* (fiery and *karmic* bodies) should be read just as the statement regarding their *vaikriya shariras* (transmutable bodies).

Elaboration—The reason for stating that the *audarik shariras* (gross physical bodies) of *Vanavyantar* gods are equal to those of the *naaraks* (infernal beings) is that the *Vanavyantar* gods are devoid of bound gross physical bodies and the abandoned gross physical bodies are infinite in context of past incarnations.

Vanavyantar gods are devoid of bound telemigratory bodies and abandoned telemigratory bodies are infinite like their abandoned gross physical bodies. Their bound fiery and *karmic* bodies are innumerable like their bound transmutable bodies while abandoned fiery and *karmic* bodies are infinite.

४२५. (१) जोइसियाणं भंते ! केवइया ओरालियसरीरा पं. ?

गो. ! जहा नेरइयाणं तहा भाणियव्वा।

४२५. (१) (प्र.) भंते ! ज्योतिष्क देवों के कितने औदारिकशरीर होते हैं ?

(उ.) गौतम ! ज्योतिष्क देवों के औदारिकशरीर नारकों के औदारिकशरीरों के समान जानना चाहिए।

JYOTISHK GODS

425. (1) (Q.) *Bhante* ! How many kinds of *audarik shariras* (gross physical bodies) the *Jyotishk* gods are said to have ?

(Ans.) The details regarding the *audarik shariras* (gross physical bodies) of *Jyotishk* gods should be read just as the statement regarding *audarik shariras* (gross physical bodies) of *naaraks* (infernal beings).

(२) जोइसियाणं भंते ! केवइया वेउव्वियसरीरा पण्णत्ता ?

गो. ! दुविहा पं.। तं.–बद्धेल्लया य मुक्केल्लया य। तत्थ णं जे ते बद्धेल्लया जाव तासि णं सेढीणं विक्खंभसूची बेछप्पण्णंगुलसयवग्गपलिभागो पयरस्स। मुक्केल्लया जहा ओहियओरालिया।

(२) (प्र.) भंते ! ज्योतिष्क देवों के कितने वैक्रियशरीर कहे हैं ?

(उ.) गौतम ! दो प्रकार के कहे हैं–बद्ध और मुक्त। उनमें जो बद्ध हैं यावत् उनकी श्रेणी की विष्कंभसूची दो सौ छप्पन प्रतरांगुल के वर्गमूल रूप अंश प्रमाण समझना चाहिए। मुक्त वैक्रियशरीरों का प्रमाण सामान्य मुक्त औदारिकशरीरों जितना जानना चाहिए।

(2) (Q.) *Bhante* ! How many kinds of *vaikriya shariras* (transmutable bodies) the *Jyotishk* gods are said to have ?

(Ans.) Gautam ! *Vaikriya shariras* (transmutable bodies) are of two kinds—*baddh* (bound) and *mukta* (abandoned). Of these, the *baddh vaikriya shariras* (bound transmutable bodies) are. . . [read same as aphorism 425 (2) up to fraction of one *pratar.*] Expressed in *vishkambh-suchi* (square units) the *Shrenis* are calculated as a

fraction of the square of two hundred and fifty six *anguls* of a *pratar*. As regards the *mukta vaikriya shariras* (abandoned transmutable bodies) it should be read just as the general statement regarding *audarik shariras* (gross physical bodies) (Aphorism 413).

(३) आहारयसरीरा जहा नेरइयाणं तहा भाणियव्वा।

(३) ज्योतिष्क देवों के आहारकशरीरों का प्रमाण नारकों के आहारकशरीरों के बराबर है।

(3) The details regarding their *aharak shariras* (telemigratory bodies) should be read just as the statement regarding *aharak shariras* (telemigratory bodies) of *naaraks* (infernal beings).

(४) तेयग-कम्मगसरीरा जहा एएसिं चेव वेउव्विया तहा भाणियव्वा।

(४) ज्योतिष्क देवों के बद्ध-मुक्त तैजस् और कार्मणशरीरों का प्रमाण इनके बद्ध-मुक्त वैक्रियशरीरों के बराबर है।

(4) The details regarding their *taijas-karman shariras* (fiery and *karmic* bodies) should be read just as the statement regarding their *vaikriya shariras* (transmutable bodies).

वैमानिक देवों के बद्ध-मुक्त शरीर एवं कालप्रमाण का उपसंहार

४२६. (१) वेमाणियाणं भंते ! केवतिया ओरालियसरीरा पन्नत्ता ?

गोयमा ! जहा नेरइयाणं तहा भाणियव्वा।

४२६. (१) (प्र.) भंते ! वैमानिक देवों के कितने औदारिकशरीर कहे हैं ?

(उ.) गौतम ! जिस प्रकार नैरयिकों के औदारिकशरीरों की प्ररूपणा की है, उसी प्रकार वैमानिक देवों की भी जानना चाहिए।

VAIMANIK GODS

426. (1) (Q.) *Bhante* ! How many kinds of *audarik shariras* (gross physical bodies) the *Vaimanik* gods are said to have ?

(Ans.) The details regarding the *audarik shariras* (gross physical bodies) of *Vaimanik* gods should be read just as the

statement regarding *audarik shariras* (gross physical bodies) of *naaraks* (infernal beings).

(२) वेमाणियाणं भंते ! केवइया वेउव्वियसरीरा पण्णत्ता ?

गो. ! दुविहा पं. । तं.—बद्धेल्लया या मुक्केल्लया य। तत्थ णं जे ते बद्धेल्लया ते णं असंखेज्जा, असंखेज्जाहिं उस्सप्पिणि—ओसप्पिणीहिं अवहीरंति कालओ, खेत्तओ असंखेज्जाओ सेढीओ पयरस्स असंखेज्जइभागो, तासि णं सेढीणं विक्खंभसूई अंगुलबितियवग्गमूलं ततियवग्गमूलपडुप्पण्णं, अहवा णं अंगुलततियवग्गमूलघणप्पमाणमेत्ताओ सेढीओ। मुक्केल्लया जहा ओहिया ओरालिया।

(२) (प्र.) वैमानिक देवों के वैक्रियशरीर कितने हैं ?

(उ.) गौतम ! वे दो प्रकार के हैं—बद्ध और मुक्त। उनमें से बद्ध वैक्रियशरीर असंख्यात हैं। उनका काल की अपेक्षा असंख्यात उत्सर्पिणी—अवसर्पिणी कालों में अपहरण होता है और क्षेत्र की अपेक्षा प्रतर के असंख्यातवें भाग में रही हुई असंख्यात श्रेणियों जितने हैं। उन श्रेणियों की विष्कंभसूची अंगुल के तृतीय वर्गमूल से गुणित द्वितीय वर्गमूल प्रमाण है अथवा अंगुल के तृतीय वर्गमूल के घनप्रमाण श्रेणियाँ हैं। मुक्त वैक्रियशरीर औघिक औदारिकशरीर के तुल्य जानना चाहिए।

(2) (Q.) *Bhante* ! How many kinds of *vaikriya shariras* (transmutable bodies) the *Vaimanik* gods are said to have ?

(Ans.) Gautam ! *Vaikriya shariras* (transmutable bodies) are of two kinds—*baddh* (bound) and *mukta* (abandoned). Of these, the *baddh vaikriya shariras* (bound transmutable bodies) are generally innumerable. (Their number) in terms of time (is such that) it takes innumerable *utsarpini-avasarpini* (progressive-regressive cycles of time) to remove them. In terms of area they are equal to space-points in innumerable *Shrenis* in the innumerable fraction of one *pratar*. Expressed in *vishkambh-suchi* (square units) the *Shrenis* are calculated as third square root of an *angul* multiplied by its second square root or the cube of the third square root of an *angul*. As regards the *mukta vaikriya shariras* (abandoned transmutable bodies) it should be read just as the general statement regarding *audarik shariras* (gross physical bodies) (Aphorism 413).

(३) आहारयसरीर जहा नेरइयाणं।

(३) वैमानिक देवों के बद्ध-मुक्त आहारकशरीरों का प्रमाण नारकों के बद्ध-मुक्त आहारकशरीरों के समान जानना चाहिए।

(3) The details regarding their two kinds of *aharak shariras* (telemigratory bodies) should be read just as the statement regarding two kinds of *aharak shariras* (telemigratory bodies) of *naaraks* (infernal beings).

(४) तेयग-कम्मगसरीरा जहा एएसिं चेव वेउव्वियसरीरा तहा भाणियव्वा।

से तं सुहुमे खेत्तपलिओवमे। से तं खेत्तपलिओवमे। से तं पलिओवमे। से तं विभागणिप्फण्णे। से तं कालप्पमाणे।

॥ सरीरे त्ति पयं सम्मत्तं ॥

(४) इनके बद्ध और मुक्त तैजस्-कार्मणशरीरों का प्रमाण इन्हीं के (बद्ध-मुक्त) वैक्रियशरीरों जितना जानना चाहिए।

यह सूक्ष्म क्षेत्र पल्योपम का स्वरूप है। इसके साथ ही क्षेत्र पल्योपम तथा पल्योपम का स्वरूप भी निरूपित हो चुका। साथ ही विभागनिष्पन्न कालप्रमाण एवं समग्र कालप्रमाण का कथन भी पूर्ण हुआ।

॥ शरीरपद प्रकरण समाप्त ॥

(4) The details regarding their *taijas-karman shariras* (fiery and *karmic* bodies) should be read just as the statement regarding their *vaikriya shariras* (transmutable bodies).

This concludes the description of *Sukshma Kshetra Palyopam.* This also concludes the description of *Kshetra Palyopam* and *Palyopam* (metaphor of silo). This concludes the description of *Vibhag nishpanna kaal pramana* (fragmentary standard of measurement of time) as also the description of *Kaal pramana* (standard of measurement of time).

● END OF THE DISCUSSION ON BODY ●

भावप्रमाण-प्रकरण
THE DISCUSSION ON BHAAVA PRAMANA

भावप्रमाण निरूपण

४२७. से किं तं भावप्पमाणे ?

भावप्पमाणे तिविहे पण्णत्ते। तं जहा—१. गुणप्पमाणे, २. णयप्पमाणे, ३. संखप्पमाणे।

४२७. **(प्र.)** भावप्रमाण क्या है ?

(उ.) भावप्रमाण तीन प्रकार का है। यथा—(१) गुणप्रमाण, (२) नयप्रमाण, और (३) संख्याप्रमाण।

BHAAVA PRAMANA

427. (Q.) What is this *Bhaava Pramana* ?

(Ans.) Gautam ! *Bhaava Pramana* (standard of validation of state) is said to be of three kinds—(1) *Guna Pramana,* (2) *Naya Pramana,* and (3) *Sankhya Pramana.*

गुणप्रमाण का स्वरूप

४२८. से किं तं गुणप्पमाणे ?

गुणप्पमाणे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा—१. जीवगुणप्पमाणे य, २. अजीवगुणप्पमाणे य।

४२८. **(प्र.)** गुणप्रमाण क्या है ?

(उ.) गुणप्रमाण दो प्रकार का है—(१) जीवगुणप्रमाण, और (२) अजीवगुणप्रमाण।

GUNA PRAMANA

428. (Q.) What is this *Guna Pramana* ?

(Ans.) *Guna Pramana* (standard of validation by attributes) is of two kinds—(1) *Jiva Guna Pramana,* and (2) *Ajiva Guna Pramana.*

(३) आहारयसरीर जहा नेरइयाणं।

(३) वैमानिक देवों के बद्ध-मुक्त आहारकशरीरों का प्रमाण नारकों के बद्ध-मुक्त आहारकशरीरों के समान जानना चाहिए।

(3) The details regarding their two kinds of *aharak shariras* (telemigratory bodies) should be read just as the statement regarding two kinds of *aharak shariras* (telemigratory bodies) of *naaraks* (infernal beings).

(४) तेयग-कम्मगसरीरा जहा एएसिं चेव वेउव्वियसरीरा तहा भाणियव्वा।

से तं सुहुमे खेत्तपलिओवमे। से तं खेत्तपलिओवमे। से तं पलिओवमे। से तं विभागणिप्फण्णे। से तं कालप्पमाणे।

॥ सरीरे त्ति पयं सम्मत्तं ॥

(४) इनके बद्ध और मुक्त तैजस्-कार्मणशरीरों का प्रमाण इन्हीं के (बद्ध-मुक्त) वैक्रियशरीरों जितना जानना चाहिए।

यह सूक्ष्म क्षेत्र पल्योपम का स्वरूप है। इसके साथ ही क्षेत्र पल्योपम तथा पल्योपम का स्वरूप भी निरूपित हो चुका। साथ ही विभागनिष्पन्न कालप्रमाण एवं समग्र कालप्रमाण का कथन भी पूर्ण हुआ।

॥ शरीरपद प्रकरण समाप्त ॥

(4) The details regarding their *taijas-karman shariras* (fiery and *karmic* bodies) should be read just as the statement regarding their *vaikriya shariras* (transmutable bodies).

This concludes the description of *Sukshma Kshetra Palyopam.* This also concludes the description of *Kshetra Palyopam* and *Palyopam* (metaphor of silo). This concludes the description of *Vibhag nishpanna kaal pramana* (fragmentary standard of measurement of time) as also the description of *Kaal pramana* (standard of measurement of time).

● END OF THE DISCUSSION ON BODY ●

भावप्रमाण-प्रकरण
THE DISCUSSION ON BHAAVA PRAMANA

भावप्रमाण निरूपण

४२७. से किं तं भावप्पमाणे ?

भावप्पमाणे तिविहे पण्णत्ते। तं जहा–१. गुणप्पमाणे, २. णयप्पमाणे, ३. संखप्पमाणे।

४२७. (प्र.) भावप्रमाण क्या है ?

(उ.) भावप्रमाण तीन प्रकार का है। यथा–(१) गुणप्रमाण, (२) नयप्रमाण, और (३) संख्याप्रमाण।

BHAAVA PRAMANA

427. (Q.) What is this *Bhaava Pramana* ?

(Ans.) Gautam ! *Bhaava Pramana* (standard of validation of state) is said to be of three kinds—(1) *Guna Pramana,* (2) *Naya Pramana,* and (3) *Sankhya Pramana.*

गुणप्रमाण का स्वरूप

४२८. से किं तं गुणप्पमाणे ?

गुणप्पमाणे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा–१. जीवगुणप्पमाणे य, २. अजीवगुणप्पमाणे य।

४२८. (प्र.) गुणप्रमाण क्या है ?

(उ.) गुणप्रमाण दो प्रकार का है–(१) जीवगुणप्रमाण, और (२) अजीवगुणप्रमाण।

GUNA PRAMANA

428. (Q.) What is this *Guna Pramana* ?

(Ans.) *Guna Pramana* (standard of validation by attributes) is of two kinds—(1) *Jiva Guna Pramana,* and (2) *Ajiva Guna Pramana.*

४२९. से किं तं अजीवगुणप्पमाणे ?

अजीवगुणप्पमाणे पंचविहे पण्णत्ते। तं जहा-१. वण्णगुणप्पमाणे, २. गंधगुणप्पमाणे, ३. रसगुणप्पमाणे, ४. फासगुणप्पमाणे, ५. संठाणगुणप्पमाणे।

४२९. (प्र.) अजीवगुणप्रमाण क्या है ?

(उ.) अजीवगुणप्रमाण पाँच प्रकार का है-(१) वर्णगुणप्रमाण, (२) गंधगुणप्रमाण, (३) रसगुणप्रमाण, (४) स्पर्शगुणप्रमाण, और (५) संस्थानगुणप्रमाण।

AJIVA GUNA PRAMANA

429. (Q.) What is this *Ajiva Guna Pramana* ?

(Ans.) *Ajiva Guna Pramana* (standard of validation of the non-living by attributes) is of five kinds—(1) *Varna Guna Pramana,* (2) *Gandh Guna Pramana,* (3) *Rasa Guna Pramana,* (4) *Sparsh Guna Pramana,* and (5) *Samsthana Guna Pramana.*

४३०. से किं तं वण्णगुणप्पमाणे ?

वण्णगुणप्पमाणे पंचविहे पण्णत्ते। तं-कालवण्णगुणप्पमाणे जाव सुक्किल्लवण्णगुणप्पमाणे। से तं वण्णगुणप्पमाणे।

४३०. (प्र.) वर्णगुणप्रमाण क्या है ?

(उ.) वर्णगुणप्रमाण पाँच प्रकार का है। यथा-(१) कृष्णवर्णगुणप्रमाण, [(२) नीलवर्ण, (३) लोहित या रक्तवर्ण, (४) हारिद्र या पीतवर्ण,] यावत् ५. शुक्लवर्णगुणप्रमाण। यह वर्णगुणप्रमाण का स्वरूप है। (विशेष वर्णन देखें-सचित्र अनुयोगद्वारसूत्र, भाग १, सूत्र २१९-२२०)

430. (Q.) What is this *Varna Guna Pramana* ?

(Ans.) *Varna Guna Pramana* (standard of validation by appearance or colour-attributes) is of five kinds—(1) *Krishna Varna Guna Pramana* (standard of validation by black colour-attribute), and so on [(2) *Neel Varna* (blue colour), (3) *Lohit* or *Rakta Varna* (red colour), (4) *Haridra* or *Peet Varna* (yellow colour),] (5) *Shukla Varna Guna Pramana* (standard of validation by white colour-attribute).

This concludes the description of *Varna Guna Pramana* (standard of validation by appearance or colour-attributes). (See *Illustrated Anuyogadvar Sutra,* Part I, aphorism 219-220)

४३१. से किं तं गंधगुणप्पमाणे ?

गंधगुणप्पमाणे दुविहे पण्णत्ते। तं.–सुरभिगंधगुणप्पमाणे दुरभिगंधगुणप्पमाणे य। से तं गंधगुणप्पमाणे।

४३१. (प्र.) गंधगुणप्रमाण क्या है ?

(उ.) गंधगुणप्रमाण दो प्रकार का है। यथा–(१) सुरभिगंधगुणप्रमाण, और (२) दुरभिगंधगुणप्रमाण। यह गंधगुणप्रमाण है। *(देखें–सचित्र अनुयोगद्वार सूत्र, भाग १, सूत्र २२१)*

431. (Q.) What is this *Gandh Guna Pramana* ?

(Ans.) *Gandh Guna Pramana* (standard of validation by smell-attributes) is of two kinds—(1) *Surabhi Gandh Guna Pramana* (standard of validation by good smell-attribute), and (2) *Durabhi Gandh Guna Pramana* (standard of validation by bad smell-attribute). (See *Illustrated Anuyogadvar Sutra,* Part I, aphorism 221)

This concludes the description of *Gandh Guna Pramana* (standard of validation by smell-attributes).

४३२. से किं तं रसगुणप्पमाणे ?

रसगुणप्पमाणे पंचविहे पण्णत्ते। तं.–तित्तरसगुणप्पमाणे जाव महुररसगुणप्पमाणे। से तं रसगुणप्पमाणे।

४३२. (प्र.) रसगुणप्रमाण क्या है ?

(उ.) रसगुणप्रमाण पाँच प्रकार का है। यथा–(१) तिक्तरसगुणप्रमाण, [(२) कटुरस, (३) कषायरस, (४) अम्लरस,] यावत् (५) मधुररसगुणप्रमाण। यह रसगुणप्रमाण है। *(देखें–सचित्र अनुयोगद्वार सूत्र, भाग १, सूत्र २२२)*

432. (Q.) What is this *Rasa Guna Pramana* ?

(Ans.) *Rasa Guna Pramana* (standard of validation by taste-attributes) is of five kinds—(1) *Tikta Rasa Guna Pramana* (standard of validation by bitter taste-attribute), and so on

[(2) *Katuk Rasa* (pungent taste), (3) *Kashaya Rasa* (astringent taste), (4) *Amla Rasa* (sour taste),] (5) *Madhura Rasa Guna Pramana* (standard of validation by sweet taste-attribute).

This concludes the description of *Rasa Guna Pramana* (standard of validation by taste-attributes). (See *Illustrated Anuyogadvar Sutra*, Part I, aphorism 222)

४३३. से किं तं फासगुणप्पमाणे ?

फासगुणप्पमाणे अट्ठविहे पण्णत्ते। तं.—कक्खडफासगुणप्पमाणे जाव लुक्खफासगुणप्पमाणे। से तं फासगुणप्पमाणे।

४३३. (प्र.) स्पर्शगुणप्रमाण क्या है ?

(उ.) स्पर्शगुणप्रमाण आठ प्रकार का है। यथा-१. कर्कशस्पर्शगुणप्रमाण, [(२) मृदुस्पर्श, (३) गुरुस्पर्श, (४) लघुस्पर्श, (५) शीतस्पर्श, (६) उष्णस्पर्श, (७) स्निग्धस्पर्श,] यावत् (८) रूक्षस्पर्शगुणप्रमाण। यह स्पर्शगुणप्रमाण है। *(देखें-सचित्र अनुयोगद्वार सूत्र, भाग १, सूत्र २२३)*

433. (Q.) What is this *Sparsh Guna Pramana* ?

(Ans.) *Sparsh Guna Pramana* (standard of validation by touch-attributes) is of eight kinds—(1) *Karkash Sparsh Guna Pramana* (standard of validation by abrassive or hard touch-attribute), and so on [(2) *Mridu Sparsh* (soft touch), (3) *Guru Sparsh* (heavy touch), (4) *Laghu Sparsh* (light touch), (5) *Sheet Sparsh* (cold touch), (6) *Ushna Sparsh* (hot touch), (7) *Snigdha Sparsh* (smooth touch),] (8) *Ruksh Sparsh Guna Pramana* (standard of validation by coarse or dry touch-attribute).

This concludes the description of *Sparsh Guna Pramana* (standard of validation by touch-attributes). (See *Illustrated Anuyogadvar Sutra*, Part I, aphorism 223)

४३४. से किं तं संठाणगुणप्पमाणे ?

संठाणगुणप्पमाणे पंचविहे पण्णत्ते। तं.—परिमंडलसंठाणगुणप्पमाणे, जाव आयतसंठाणगुणप्पमाणे। से तं संठाणगुणप्पमाणे। से तं अजीवगुणप्पमाणे।

४३४. (प्र.) संस्थानगुणप्रमाण क्या है ?

अजीव गुण प्रमाण

चित्र परिचय १३ **Illustration No. 13**
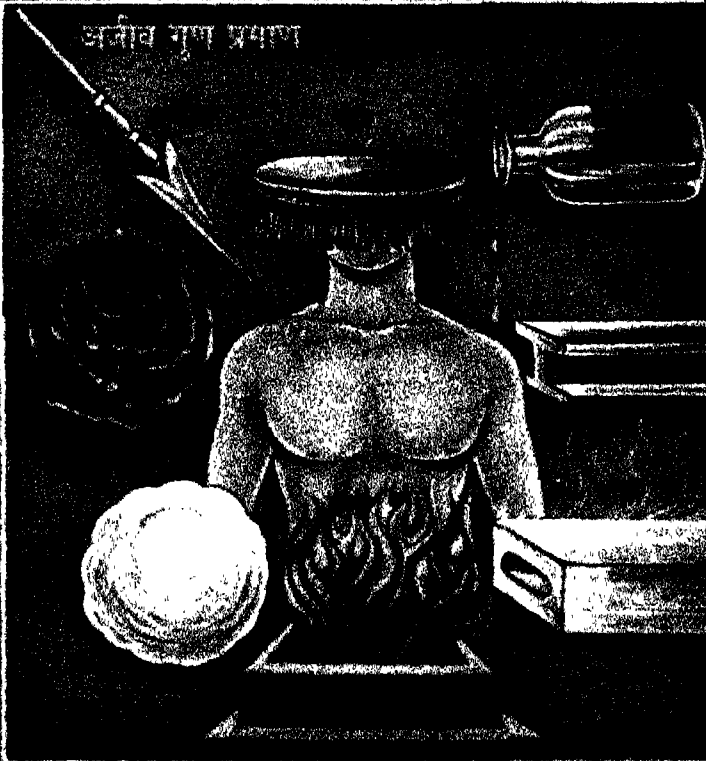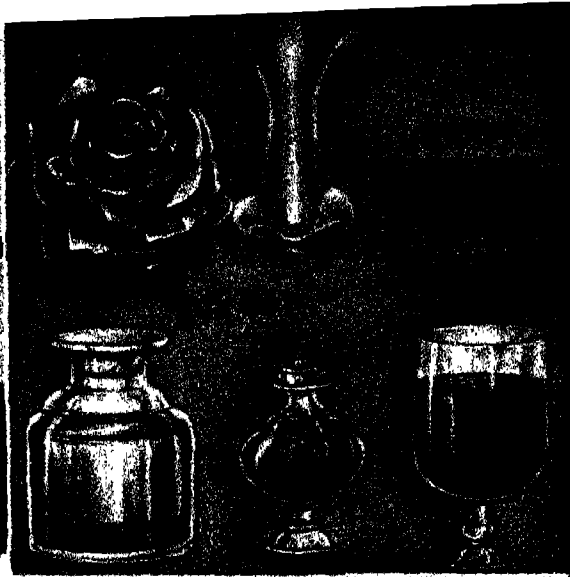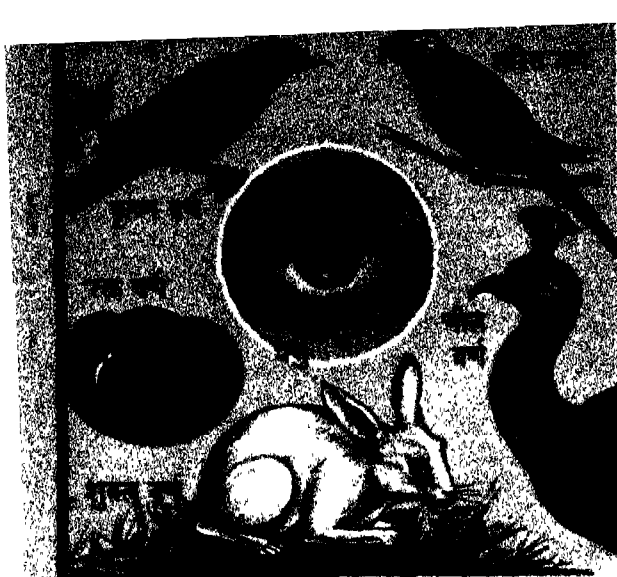
अजीव गुण प्रमाण

(१) **वर्ण गुण प्रमाण**–चक्षु द्वारा कृष्ण, नील, रक्त, हरित और शुक्ल–पाँचों वर्ण ग्रहण किये जाते हैं।

(२) **गंध गुण प्रमाण**–नाक द्वारा सुगंध तथा दुर्गंध दोनों प्रकार की गंध ग्रहण की जाती है।

(३) **रस गुण प्रमाण**–जीभ तिक्त, कटु, कषाय, अम्ल (खट्टा) और मधुर पाँचों रस ग्रहण करती है।

(४) **स्पर्श गुण प्रमाण**–शरीर द्वारा कर्कश, मृदु, गुरु, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध तथा रूक्ष स्पर्श ग्रहण किया जाता है।

(५) **संस्थान गुण प्रमाण**–परिमण्डल आदि पाँचों संस्थान।

--सूत्र ४२९ ४३४, पृष्ठ २७०-२७३

AJIVA GUNA PRAMAAN

(1) Varna Guna Pramaan (Standard of Validation by Appearance or Colour-attributes)—Information acquired through eyes—the five colour attributes black, blue, red, yellow and white.

(2) Gandh Guna Pramaan (Standard of Validation by Smell-attributes)—Information acquired through nose—good smell and bad smell attributes.

(3) Rasa Guna Pramaan (Standard of Validation by Taste-attributes)—Information acquired through tongue—the five taste attributes—bitter, pungent, astringent, sour and sweet.

(4) Sparsh Guna Pramaan (Standard of Validation by Touch-attributes)—Information acquired through body—the eight attributes of touch—abrasive or hard, soft, heavy, light, cold, hot, smooth and coarse or dry.

(5) Samsthan Guna Pramaan (Standard of Validation by Structure-attributes)—Five kinds including *Parimandal Samsthan Guna Pramaan* (circular-plate structure).

—Aphorisms 429-434, pp. 270-273

(उ.) संस्थानगुणप्रमाण पाँच प्रकार का है। जैसे-(१) परिमंडलसंस्थानगुणप्रमाण, [(२) वृत्तसंस्थान, (३) त्र्यस्रसंस्थान, (४) चतुरस्रसंस्थान,] यावत् (५) आयतसंस्थानगुणप्रमाण। यह संस्थानगुणप्रमाण है। यह अजीवगुणप्रमाण का स्वरूप है। *(देखें-सचित्र अनुयोगद्वार सूत्र, भाग १, सूत्र २२५)*

विवेचन-भाव का अर्थ है-वस्तु का परिणाम अथवा परिणमन। जिससे वस्तु का ज्ञान या मान किया जाता है उसे प्रमाण कहते हैं। तीन प्रकार के प्रमाणों में सर्वप्रथम 'गुणप्रमाण' का कथन है। द्रव्य की पहचान या निर्णय उसके गुण से होता है। इसलिए गुण को प्रमाण माना है।

यहाँ जिन गुणों का प्रमाण रूप में वर्णन है, वे मूर्त्तरूपी अजीव द्रव्य के गुण हैं। ये सभी पुद्गल द्रव्य के स्वरूप हैं। पुद्गल वर्ण, गंध, रस, स्पर्श और आकारवान् होता है। इन्हीं के द्वारा पुद्गल की पहचान होती है, इस कारण यहाँ इनको गुणप्रमाण माना है।

434. (Q.) What is this *Samsthana Guna Pramana* ?

(Ans.) *Samsthana Guna Pramana* (standard of validation by structure-attributes) is of five kinds—(1) *Parimandal Samsthana Guna Pramana* (standard of validation by circular-spherical structure-attribute), and so on [(2) *Vritta Samsthana* (circular-ring structure), (3) *Tryasra Samsthana* (triangular structure), (4) *Chaturasra Samsthana* (square structure),] (5) *Ayat Samsthana Guna Pramana* (standard of validation by rectangular structure-attribute).

This concludes the description of *Samsthana Guna Pramana* (standard of validation by structure-attributes). (See *Illustrated Anuyogadvar Sutra,* Part I, aphorism 225). This also concludes the description of *Ajiva Guna Pramana* (standard of validation of the non-living by attributes).

Elaboration—The state or mode of a thing is called *bhaava* and the standard that is used for identification or validation of this state or mode of a thing is called *Pramana.*

First of the three kinds of *Pramana* (standard of validation) mentioned here is *Guna Pramana* (standard of validation by attributes). A thing is identified or assessed with the help of its attributes. That is why attributes are considered as standards of validation.

The attributes primarily discussed here as standards of validation are the attributes of non-living tangible substances having some form. These all are varied forms of material things. Matter has a colour, smell,

taste, touch and structural form. As material things are recognized with the help of these attributes, they are accepted as standards of validation.

जीवगुणप्रमाण का स्वरूप

४३५. से किं तं जीवगुणप्पमाणे ?

जीवगुणप्पमाणे तिविहे पण्णत्ते। तं जहा—णाणगुणप्पमाणे, दंसणगुणप्पमाणे, चरित्तगुणप्पमाणे य।

४३५. (प्र.) जीवगुणप्रमाण क्या है?

(उ.) जिससे जीव की पहचान हो वह जीवगुणप्रमाण तीन प्रकार का है—(१) ज्ञानगुणप्रमाण, (२) दर्शनगुणप्रमाण, और (३) चारित्रगुणप्रमाण।

JIVA GUNA PRAMANA

435. (Q.) What is this *Jiva Guna Pramana* ?

(Ans.) *Jiva Guna Pramana* (standard of validation of the living or soul by attributes) is of three kinds—(1) *Jnana Guna Pramana* (standard of validation by knowledge-attributes), (2) *Darshan Guna Pramana* (standard of validation by perception-attributes), and (3) *Charitra Guna Pramana* (standard of validation by conduct-attributes).

ज्ञानगुणप्रमाण का स्वरूप

४३६. से किं तं नाणगुणप्पमाणे ?

नाणगुणप्पमाणे चउव्विहे पण्णत्ते। तं.—पच्चक्खे, अणुमाणे, ओवम्मे, आगमे।

४३६. (प्र.) ज्ञानगुणप्रमाण क्या है?

(उ.) ज्ञानगुणप्रमाण चार प्रकार का है—(१) प्रत्यक्ष, (२) अनुमान, (३) उपमान, और (४) आगम।

विवेचन—वस्तु या विषय का ज्ञान इन चार साधनों से होता है, इसलिए इन्हें प्रमाण माना जाता है।

JNANA GUNA PRAMANA

436. (Q.) What is this *Jnana Guna Pramana* ?

(Ans.) *Jnana Guna Pramana* (standard of validation by knowledge-attributes) is of four kinds—(1) *Pratyaksh* (direct experience or perceptual cognition), (2) *Anumaan* (inferential

knowledge), (3) *Upamaan* (analogical knowledge), and (4) *Agam* (scriptural knowledge).

Elaboration—As these four are the means of knowing a thing or a subject they have been accepted as standards of validation.

प्रत्यक्षप्रमाण

४३७. से किं तं पच्चक्खे ?

पच्चक्खे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा—इंदियपच्चक्खे य णोइंदियपच्चक्खे य।

४३७. (प्र.) प्रत्यक्षप्रमाण क्या है ?

(उ.) प्रत्यक्षप्रमाण के दो भेद हैं-(१) इन्द्रियप्रत्यक्ष, और (२) नोइन्द्रियप्रत्यक्ष।

PRATYAKSH PRAMANA

437. (Q.) What is this *Pratyaksh Pramana* (standard of validation by perceptual cognition) ?

(Ans.) *Pratyaksh Pramana* (standard of validation by perceptual cognition) is of two kinds—(1) *Indriya Pratyaksh* (perceptual cognition through sense organs; phenomenal), and (2) *Noindriya Pratyaksh* (perceptual cognition independent of sense organs; noumenal).

४३८. से किं तं इंदियपच्चक्खे ?

इंदियपच्चक्खे पंचविहे पण्णत्ते। तं जहा—सोइंदियपच्चक्खे, चक्खुरिंदियपच्चक्खे, घाणिंदियपच्चक्खे, जिब्भिंदियपच्चक्खे, फासिंदियपच्चक्खे। से तं इंदियपच्चक्खे।

४३८. (प्र.) इन्द्रियप्रत्यक्ष किसे कहते हैं ?

(उ.) इन्द्रियप्रत्यक्ष पाँच प्रकार का है। यथा-(१) श्रोत्रेन्द्रियप्रत्यक्ष, (२) चक्षुरिन्द्रियप्रत्यक्ष, (३) घ्राणेन्द्रियप्रत्यक्ष, (४) जिह्वेन्द्रियप्रत्यक्ष, तथा (५) स्पर्शनेन्द्रियप्रत्यक्ष। यह इन्द्रियप्रत्यक्ष है।

438. (Q.) What is this *Indriya Pratyaksh* (perceptual cognition through sense organs) ?

(Ans.) *Indriya Pratyaksh* (perceptual cognition through sense organs) is of five kinds—(1) *Shrotrendriya Pratyaksh* (perceptual cognition through the sense organ of hearing), (2) *Chakshurindriya Pratyaksh* (perceptual cognition through the

sense organ of seeing), (3) *Ghranendriya Pratyaksh* (perceptual cognition through the sense organ of smell), (4) *Jihvendriya Pratyaksh* (perceptual cognition through the sense organ of taste), and (5) *Sparshanendriya Pratyaksh* (perceptual cognition through the sense organ of touch).

This concludes the description of *Indriya Pratyaksh* (perceptual cognition through sense organs).

४३९. से किं तं णोइंदियपच्चक्खे।

णोइंदियपच्चक्खे तिविहे प.। तं.–ओहिणाणपच्चक्खे, मणपज्जवणाणपच्चक्खे, केवलणाणपच्चक्खे। से तं णोइंदियपच्चक्खे। से तं पच्चक्खे।

४३९. (प्र.) नोइन्द्रियप्रत्यक्ष क्या है?

(उ.) नोइन्द्रियप्रत्यक्ष तीन प्रकार का है–(१) अवधिज्ञानप्रत्यक्ष, (२) मनःपर्यवज्ञान-प्रत्यक्ष, तथा (३) केवलज्ञानप्रत्यक्ष। यही प्रत्यक्ष का स्वरूप है।

विवेचन–दार्शनिक साहित्य में ज्ञान और प्रमाण की चर्चा बहुत विस्तार के साथ हुई है। जैन दार्शनिकों ने भी इस विषय में अपने ग्रन्थों में बहुत विस्तृत चर्चाएँ की हैं। भगवती, स्थानांग, नन्दी और अनुयोगद्वारसूत्र में भी इस विषय की चर्चा है। इस चर्चा को विस्तारपूर्वक समझने के लिए अनुयोगद्वार ज्ञान मुनि जी कृत हिन्दी टीका, भाग २, पृष्ठ ७७५ से ८०० तक का अनुशीलन करना चाहिए। यहाँ पर संक्षेप में ही इसकी व्याख्या की गई है।

प्रत्यक्ष में प्रति + अक्ष दो शब्द हैं। 'अक्ष' का अर्थ है–जीव/आत्मा। जीव का गुण है ज्ञान। ज्ञान से वह समस्त पदार्थों को जानता है। जो ज्ञान साक्षात् आत्मा से उत्पन्न हो, जिसमें इन्द्रियादि किसी माध्यम की अपेक्षा न हो, वह प्रत्यक्ष कहलाता है।

प्रत्यक्ष के दो भेद हैं–(१) इन्द्रियप्रत्यक्ष, और (२) नोइन्द्रियप्रत्यक्ष। जिस प्रत्यक्ष ज्ञान की उत्पत्ति में इन्द्रियाँ सहयोगी हों वह इन्द्रियप्रत्यक्ष है और जिस ज्ञान की उत्पत्ति इन्द्रिय आदि की सहायता के बिना ही होती है, उसे नोइन्द्रियप्रत्यक्ष कहते हैं।

इन्द्रियों से होने वाले ज्ञान को लौकिक व्यवहार की अपेक्षा से प्रत्यक्ष कहा गया है, निश्चयनय की अपेक्षा तो इन्द्रियजन्य ज्ञान परोक्ष ही है। नव्य न्यायदर्शन में इसे लौकिकप्रत्यक्ष और अलौकिकप्रत्यक्ष कहा है।

इन्द्रियप्रत्यक्ष के पाँच भेद श्रोत्र आदि पाँचों इन्द्रियों द्वारा ग्रहण किये जाने वाले अपने-अपने विषयों की अपेक्षा से हैं।

नोइन्द्रियप्रत्यक्ष के जो तीन भेद हैं इनकी उत्पत्ति केवल आत्माधीन है। इनमें इन्द्रियों का उपयोग सर्वथा नहीं होता है किन्तु आत्मा अपनी ज्ञान शक्ति द्वारा ही विषय को जानता है।

439. (Q.) What is this *Noindriya Pratyaksh* (perceptual cognition independent of sense organs) ?

(Ans.) *Noindriya Pratyaksh* (perceptual cognition independent of sense organs) is of three kinds—(1) *Avadhi-jnana Pratyaksh* (perceptual cognition through extrasensory perception of the physical dimension), (2) *Manahparyav-jnana Pratyaksh* (perceptual cognition through extrasensory perception and knowledge of thought process and thought-forms of other beings), and (3) *Keval-jnana Pratyaksh* (perceptual cognition through omniscience).

This concludes the description of *Noindriya Pratyaksh* (perceptual cognition independent of sense organs). This also concludes the description of *Pratyaksh Pramana* (standard of validation by perceptual cognition).

Elaboration—In philosophical literature, knowledge and validation has been discussed in great detail. Jain philosophers have also included ample details on this subject in their scriptures. *Bhagavati, Sthananga, Nandi* and *Anuyogadvar Sutras* include these discussions. For more elaboration on this topic, mentioned in brief here, refer to *Tika of Anuyogadvar Sutra* by Shri Jnana Muni, p. 775-800.

The word *pratyaksh* comprises of two components *prati* and *aksh*. *Aksh* means living-being or soul or *jiva*. Knowledge is the attribute of soul. It is through knowledge that a being knows all substances. The knowledge that is acquired, without any outside contribution including that of sense organs, directly by the soul is called direct experience or perceptual cognition.

Direct experience is of two kinds—(1) *Indriya Pratyaksh* (perceptual cognition through sense organs; phenomenal), and (2) *Noindriya Pratyaksh* (perceptual cognition independent of sense organs; noumenal). The perceptual cognition where sense organs are instrumental is *Indriya Pratyaksh* and that which is independent of sense organs is called *Noindriya Pratyaksh.*

In conventional terms or from the phenomenal viewpoint the knowledge acquired through sense organs is called direct perception. But from noumenal viewpoint the knowledge acquired through sense organs is called indirect perception. In the *Navya Nyaya* philosophy

these are called ***Laukik Pratyaksh*** (conventional perception) and ***Alaukik Pratyaksh*** (transcendental perception).

The five categories of perceptual cognition through sense organs are based on the subjects of five sense organs.

The three categories of perceptual cognition independent of sense organs are direct subjects of soul. They originate in soul without any assistance from sense organs. The soul acquires knowledge only through its intrinsic cognitive powers.

अनुमानप्रमाण

४४०. से किं तं अणुमाणे ?

अणुमाणे तिविहे पण्णत्ते। तं.–१. पुव्ववं, २. सेसवं, ३. दिट्ठसाहम्मवं।

४४०. (प्र.) अनुमान क्या है ?

(उ.) अनुमान तीन प्रकार का है–(१) पूर्ववत्, (२) शेषवत्, और (३) दृष्टसाधर्म्यवत्।

विवेचन–'अनु' का अर्थ है पश्चात् और 'मान' का अर्थ है ज्ञान। अर्थात् साधन को देखने से तथा सम्बन्ध के स्मरण के साथ होने वाला ज्ञान अनुमान है। अर्थात् साधन से साध्य का ज्ञान अनुमान है। जैसा कहा है–"**साधनात् साध्यज्ञानमनुमानम्।**"–(प्रमाण मीमांसा १/२/७)। साधन को लिंग या चिन्ह भी कहा जाता है, चिन्ह या लक्षण से चिन्हमान् का ज्ञान करना अनुमान है। इस प्रकार परोक्ष अर्थ की सत्ता जानने वाले ज्ञान को अनुमान कहते हैं।

ANUMAAN PRAMANA

440. (Q.) What is this *Anumaan* (inferential knowledge) ?

(Ans.) *Anumaan* (inferential knowledge) is of three kinds—(1) *Purvavat* (inference by previously known characteristics), (2) *Sheshavat* (inference by available evidence), and (3) *Drisht Sadharmyavat* (inference by known generic or common characteristics).

Elaboration—*'Anu'* means after and *'maan'* means knowledge. The knowledge inferred after seeing the means (evidence, attributes etc.) and associating it with memory (recalling the relationship or connection) is called *anumaan* or inferential knowledge. In other words it is the knowledge of goal inferred through its means (*Pramana Mimamsa* 1/2/7). Means is also called *linga* or *chinha* (characteristics or marks). Therefore to infer with the help of marks or clues is *anumaan*

or inferential knowledge. In conclusion, to percieve the invisible or non-evident reality is *anumaan.*

पूर्ववत् अनुमान

४४१. से किं तं पुव्वं ?

पुव्वं—माता पुत्तं जहा नट्ठं जुवाणं पुणरागतं।
काई पच्चभिजाणेज्जा पुव्वलिंगेण केणइ॥१॥

तं जहा—खतेण वा वणेण वा मसेण वा लंछणेण वा तिलएण वा। से तं पुव्वं।

४४१. (प्र.) पूर्ववत् अनुमान किसे कहते हैं ?

(उ.) (पूर्व में देखे गये लक्षण से जो निश्चय किया जाये उसे पूर्ववत् कहते हैं) जैसे—माता बाल्यकाल से गुम हुए और युवा होकर वापस आये हुए अपने पुत्र को देखकर किसी पूर्व निश्चित चिन्ह से पहचानती है कि यह मेरा ही पुत्र है॥१॥

जैसे—देह में लगे **क्षत**—चोट, **व्रण**—कुत्ता आदि के काटने से हुए घाव, **लांछन**—डाम आदि से बने चिन्ह विशेष, शरीर पर बने मष, तिल आदि से जो अनुमान किया जाता है, वह पूर्ववत् अनुमान है।

PURVAVAT ANUMAAN

441. (Q.) What is this *Purvavat Anumaan* (inference by previously known characteristics) ?

(Ans.) (An example of) *Purvavat Anumaan* (inference by previously known characteristics) is—A mother recognizes her long lost and now youthful son on his return by means of some earlier known characteristic mark. (1)

Some examples of marks being—a scar of an injury or a wound, mole, tattoo, freckles etc.

This concludes the description of *Purvavat Anumaan* (inference by previously known characteristics).

शेषवत् अनुमान

४४२. से किं तं सेसवं ?

सेसवं पंचविहं पण्णत्तं। तं जहा—कज्जेणं, कारणेणं, गुणेणं, अवयवेणं, आसएणं।

४४२. (प्र.) शेषवत् अनुमान क्या है ?

(उ.) शेषवत् अनुमान पाँच प्रकार का है। यथा-(१) कार्य से (कारण का अनुमान), (२) कारण द्वारा (कार्य का अनुमान), (३) गुण से (गुणी का), (४) अवयव से (अवयवी का), और (५) आश्रय से (आश्रयी का)। इन पाँचों द्वारा अनुमान करना शेषवत् अनुमान है।

SHESHVAT ANUMAAN

442. (Q.) What is this *Sheshavat Anumaan* (inference by available evidence) ?

(Ans.) *Sheshavat Anumaan* (inference by available evidence) is of five kinds—(1) *Karyena* (by effect), (2) *Karanena* (by cause), (3) *Gunena* (by attribute), (4) *Avayavena* (by a part or component), and (5) *Ashrayena* (by support).

४४३. से किं तं कज्जेणं ?

कज्जेणं-संखं सद्देणं, भेरिं तालिएणं, वसभं ढंकिएणं, मोरं केकाइएणं, हयं हेसिएणं, गयं गुलगुलाइएणं, रहं घणघणाइएणं। से तं कज्जेणं।

४४३. (प्र.) कार्य से उत्पन्न होने वाला शेषवत् अनुमान क्या है ?

(उ.) जैसे-शंख के शब्द को सुनकर शंख का अनुमान करना, भेरी की ध्वनि सुनकर भेरी का, बैल के रँभाने से बैल का, केकारव सुनकर मोर का, हिनहिनाना सुनकर घोड़े का, गुलगुलाहट सुनकर हाथी का और घनघनाहट सुनकर रथ का अनुमान करना। यह कार्य से उत्पन्न शेषवत् अनुमान है।

443. (Q.) What is this *Karyena Sheshavat Anumaan* (inference by available evidence of effect) ?

(Ans.) The (examples of) *Karyena Sheshavat Anumaan* (inference by available evidence of effect) are as follows—A conch-shell is inferred by its sound, a drum by its beat, a bull by its roar, a pea-cock by its cry, a horse by its neighing, an elephant by its trumpeting and a chariot by its rattle.

This concludes the description of *Karyena Sheshavat Anumaan* (inference by available evidence of effect).

४४४. से किं तं कारणेणं ?

कारणेणं-तंतवो पडस्स कारणं ण पडो तंतुकारणं, वीरणा कडस्स कारणं ण कडो वीरणाकारणं, मिप्पिंडो घडस्स कारणं ण घडो मिप्पिंडकारणं। से तं कारणेणं।

४४४. (प्र.) कारण से उत्पन्न शेषवत् अनुमान क्या है?

(उ.) कारण रूप चिन्ह से उत्पन्न शेषवत् अनुमान इस प्रकार है–तंतु (धागा) पट (वस्त्र) के कारण हैं, किन्तु पट तंतु का कारण नहीं है; वीरणा (तृण) कट (चटाई) के कारण हैं, किन्तु कट वीरणा का कारण नहीं है; मिट्टी का पिंड घड़े का कारण है, किन्तु घड़ा मिट्टी का कारण नहीं है। यह कारण से शेषवत् अनुमान है।

444. (Q.) What is this *Karanena Sheshavat Anumaan* (inference by available evidence of cause)?

(Ans.) The (examples of) *Karanena Sheshavat Anumaan* (inference by available evidence of cause) are as follows—Threads are the cause of cloth, cloth is not the cause of threads; reeds are the cause of a mat, mat is not the cause of reeds; a lump of clay is the cause of a pitcher, a pitcher is not the cause of a lump of clay.

This concludes the description of *Karanena Sheshavat Anumaan* (inference by available evidence of cause).

४४५. से किं तं गुणेणं ?

गुणेणं–सुवण्णं निकसेणं, पुप्फं गंधेणं, लवणं रसेणं, मदिरं आसायिएणं, वत्थं फासेणं। से तं गुणेणं।

४४५. (प्र.) गुण से शेषवत् अनुमान क्या है?

(उ.) निकष–कसौटी से स्वर्ण का, गंध से पुष्प का, रस से नमक का, आस्वाद (चखने) से मदिरा का, स्पर्श से वस्त्र का अनुमान करना गुण से होने वाला शेषवत् अनुमान है।

445. (Q.) What is this *Gunena Sheshavat Anumaan* (inference by available evidence of attribute)?

(Q.) The (examples of) *Gunena Sheshavat Anumaan* (inference by available evidence of attribute) are as follows—Gold is inferred by the streak on touchstone, a flower by its smell, salt by its taste, liquor by its relish and cloth by its touch.

This concludes the description of *Gunena Sheshavat Anumaan* (inference by available evidence of attribute).

४४६. से किं तं अवयवेणं ?

अवयवेणं–महिसं सिंगेणं, कुक्कुडं सिहाए, हत्थिं विसाणेणं, वराहं दाढाए, मोरं पिच्छेणं, आसं खुरेणं, वग्घं नहेणं, चमरिं वालगुंछेणं दुपयं मणूसयाइ, चउप्पयं गवमादि, बहुपयं गोम्हियादि, सीहं केसरेणं, वसहं ककुहेणं, महिलं वलयबाहाए।

परियरबंधेण भडं, जाणिज्जा महिलियं णिवसणेणं।
सित्थेण दोणपागं, कइं च एक्काए गाहाए॥२॥

से तं अवयवेणं।

४४६. (प्र.) अवयव से होने वाला शेषवत् अनुमान क्या है?

(उ.) सींग से महिष का, शिखा से कुक्कुट (मुर्गा) का, दाँत से हाथी का, दाढ़ा से वराह (सूअर) का, पिच्छ (पंख) से मयूर का, खुर से घोड़े का, नखों से व्याघ्र का, बालों के गुच्छे से चमरी गाय का, दो पाँव से मनुष्य का, चार पाँव से गाय आदि का, अनेक पाँवों से गोमिका (कानखजूरा) आदि का, अयाल से सिंह का, ककुद (थूह) से वृषभ का, चूड़ी सहित बाहु से महिला का अनुमान करना। तथा–

बद्धपरिकरता–(–कवच आदि हथियारों से सन्नद्ध होने पर) योद्धा का, वेश से महिला का, एक (चावल का) दाना पकने से द्रोण–पाक (पूरी हांडी) का और एक गाथा से कृति का ज्ञान होना॥२॥

यह अवयव से शेषवत् अनुमान है।

446. (Q.) What is this *Avayavena Sheshavat Anumaan* (inference by available evidence of a part or component) ?

(Ans.) The (examples of) *Avayavena Sheshavat Anumaan* (inference by available evidence of a part or component) are as follows—A buffalo is inferred by its horn, a cock by its crest, an elephant by its tusk, a boar by its molar, a pea-cock by its feathers, a horse by its hoof, a tiger by its claws, a yak (chamari) by its bunch of hair, a monkey by its tail, human being by being a biped, cow (etc.) by being a quadruped, a myriapod by being multi-ped, a lion by its mane, a bull by its hump and a woman by her wrist adorned with bangles.

Also, to identify a soldier by means of his armour or waist-band (etc.), a lady by her dress, to ascertain the extant of cooking of the

contents of a pot by checking one grain and to recognize a poem by a single verse. (2)

This concludes the description of *Avayavena Sheshavat Anumaan* (inference by available evidence of a part or component).

४४७. से किं तं आसएणं ?

आसएणं–अग्गिं धूमेणं, सलिलं बलागाहिं, वुट्टिं अब्भविकारेणं, कुलपुत्तं सीलसमायारेणं।

इङ्गिताकारितैर्ज्ञेयैः क्रियाभिर्भाषितेन च।
नेत्र–वक्त्रविकारैश्च गृह्यतेऽन्तर्गतं मनः॥३॥

से तं आसएणं। से तं सेसवं।

४४७. (प्र.) आश्रय से शेषवत् अनुमान क्या है ?

(उ.) धूम से अग्नि का, बगुलों की पंक्ति से पानी का, अभ्रविकार (आकाश में छाये बादलों) से वृष्टि का और शील सदाचरण से कुलपुत्र (कुलीनता) का। तथा–

शरीर की चेष्टाओं से, भाषण करने से और नेत्र तथा मुख के विकार से अन्तर्गत मन–आन्तरिक मनोभावों का ज्ञान होना॥३॥

यह आश्रय से होने वाला शेषवत् अनुमान है।

447. (Q.) What is this *Ashrayena Sheshavat Anumaan* (inference by available evidence of support or dependence) ?

(Ans.) The (examples of) *Ashrayena Sheshavat Anumaan* (inference by available evidence of support or dependence) are as follows—Fire is inferred by smoke, water by a row of cranes, rain by cloud formation, scion of a good family by his good conduct.

Also, the inside of the mind (inner feelings) is inferred by visible gestures, postures, actions, speech and changes in expression of eyes and countenance of face. (3)

This concludes the description of *Ashrayena Sheshavat Anumaan* (inference by available evidence of support or dependence). This also concludes the description of *Sheshavat Anumaan* (inference by available evidence).

४४८. से किं तं दिट्ठसाहम्मवं ?

दिट्ठसाहम्मवं दुविहं पण्णत्तं। तं जहा—सामन्नदिट्ठं च विसेसदिट्ठं च।

४४८. (प्र.) दृष्टसाधर्म्यवत् अनुमान क्या है ?

(उ.) दृष्टसाधर्म्यवत् अनुमान दो प्रकार का है। यथा-(१) सामान्यदृष्ट, तथा (२) विशेषदृष्ट।

DRISHT SADHARMYAVAT ANUMAAN

448. (Q.) What is this *Drisht Sadharmyavat Anumaan* (inference by known generic or common characteristics) ?

(Ans.) *Drisht Sadharmyavat Anumaan* (inference by known generic or common characteristics) is of two kinds—(1) *Samanya Drisht* (known in general), and (2) *Vishesh Drisht* (known in particular).

४४९. से किं तं सामण्णदिट्ठं ?

सामण्णदिट्ठं—जहा एगो पुरिसो तहा बहवे पुरिसा, जहा बहवे पुरिसा तहा एगो पुरिसो, जहा एगो करिसावणो तहा बहवे करिसावणा, जहा बहवे करिसावणा तहा एगो करिसावणो। से तं सामण्णदिट्ठं।

४४९. (प्र.) सामान्यदृष्ट अनुमान क्या है ?

(उ.) सामान्यदृष्ट अनुमान इस प्रकार है—जैसा एक पुरुष होता है वैसे ही अनेक पुरुष होते हैं। जैसा एक कार्षापण (सिक्का-विशेष) होता है वैसे ही अनेक कार्षापण होते हैं। यह सामान्यदृष्ट साधर्म्यवत् अनुमान है।

449. (Q.) What is this *Samanya Drisht Anumaan* (inference by common characteristics known in general) ?

(Ans.) The (examples of) *Samanya Drisht Anumaan* (inference by common characteristics known in general) are as follows—As is one man, so are many men; as are many men, so is one man. As is one silver coin, so are many silver coins; as are many silver coins, so is one silver coin.

This concludes the description of *Samanya Drisht Anumaan* (inference by common characteristics known in general).

४५०. से किं तं विसेसदिट्ठं ?

विसेसदिट्ठं–से जहा णामए केइ पुरिसे कंचि पुरिसं बहूणं पुरिसाणं मज्झे पुव्वदिट्ठं पच्चभिजाणेज्जा–अयं से पुरिसे, बहूणं वा करिसावणाणं मज्झे पुव्वदिट्ठं करिसावणं पच्चभिजाणिज्जा–अयं से करिसावणे।

तस्स समासतो तिविहं गहणं भवति। तं जहा–तीतकालगहणं, पडुप्पण्णकालगहणं, अणागतकालगहणं।

४५०. (प्र.) विशेषदृष्ट अनुमान क्या है ?

(उ.) विशेषदृष्ट अनुमान इस प्रकार है–जैसे कोई एक पुरुष अनेक पुरुषों के बीच में उपस्थित किसी पूर्वदृष्ट (पहले देखे हुए) पुरुष को पहचान लेता है कि यह वह पुरुष है। इसी प्रकार अनेक कार्षापणों (सिक्कों) के बीच में किसी पूर्व में देखे हुए कार्षापण को पहचान लेता है कि यह वही कार्षापण है।

काल की दृष्टि से उसका विषय संक्षेप में तीन प्रकार का है–(१) अतीतकालग्रहण, (२) प्रत्युत्पन्न (वर्तमान) कालग्रहण, और (३) अनागत (भविष्य) कालग्रहण।

विवेचन–दृष्टसाधर्म्यवत् अनुमान के सामान्यदृष्ट और विशेषदृष्ट में अन्तर यह है कि किसी एक वस्तु को देखकर उसके समान सभी वस्तुओं का ज्ञान करना या बहुत वस्तुओं को देखकर किसी एक का ज्ञान करना सामान्यदृष्ट है। विशेषदृष्ट में अनेक वस्तुओं में से किसी एक को पृथक् करके उसकी विशेषता का ज्ञान किया जाता है।

450. (Q.) What is this *Vishesh Drisht Anumaan* (inference by common characteristics known in particular) ?

(Ans.) The (examples of) *Vishesh Drisht Anumaan* (inference by common characteristics known in particular) are as follows—A person recognizes a previously seen man in the midst of many men as 'He is that particular man'; he also recognizes a previously seen silver coin in the midst of many silver coins as 'It is that particular silver coin'.

In context of time this has three perspectives—(1) *Ateet kaal grahan* (past perspective), (2) *Pratyutpanna kaal grahan* (present perspective), and (3) *Anagat kaal grahan* (future perspective).

Elaboration—The difference between the general and particular category of inference by common characteristics is that the general

category is to see a thing and know about many things of the same class or vice versa, but the particular category is to know about the specific characteristics of a particular thing from among many things of the same class.

४५१. से किं तं तीतकालगहणं ?

तीतकालगहणं–उत्तिणाणि वणाणि, निप्फण्णसस्सं वा मेदिणिं, पुण्णाणि य कुंड–सर–णदि–दीहिया–तलागाइं पासित्ता तेणं साहिज्जइ जहा–सुवुट्ठी आसि। से तं तीतकालगहणं।

४५१. (प्र.) अतीतकालग्रहण अनुमान क्या है ?

(उ.) वनों में उगी हुई घास, धान्यों से परिपूर्ण पृथ्वी, कुंड, सरोवर, नदी और बड़े-बड़े तालाबों को जल से भरे हुए देखकर यह अनुमान करना कि यहाँ अच्छी वर्षा हुई है। यह अतीतकालग्रहण साधर्म्यवत् अनुमान है।

451. (Q.) What is this *Ateet kaal grahan anumaan* (inference from past perspective) ?

(Ans.) The (examples of) *Ateet kaal grahan anumaan* (inference from past perspective) are as follows—To infer that there had been good rains (in an area) by witnessing forests with fresh grown grass or land with abundant crops and wells, tanks, rivers, canals and ponds full of water.

This concludes the description of *Ateet kaal grahan anumaan* (inference from past perspective).

४५२. से किं तं पडुप्पण्णकालगहणं ?

पडुप्पण्णकालगहणं–साहुं गोयरग्गगयं विच्छड्डियपउरभत्त–पाणं पासित्ता तेणं साहिज्जइ जहा–सुभिक्खे वट्टइ। से तं पडुप्पण्णकालगहणं।

४५२. (प्र.) प्रत्युत्पन्न (वर्तमान) कालग्रहण अनुमान क्या है ?

(उ.) गोचरी के लिए गये हुए साधु को गृहस्थों द्वारा दिया हुआ प्रचुर आहार-पानी प्राप्त करते देखकर अनुमान करना कि यहाँ सुभिक्ष है। यह वर्तमान कालग्रहण अनुमान है।

452. (Q.) What is this *Pratyutpanna kaal grahan anumaan* (inference from present perspective) ?

(Ans.) The (examples of) *Pratyutpanna kaal grahan anumaan* (inference from present perspective) are as follows—To infer that a period of bumper harvest prevails, by witnessing an alms-seeking ascetic being offered liberal quantity of food and water by householders.

This concludes the description of *Pratyutpanna kaal grahan anumaan* (inference from present perspective).

४५३. से किं तं अणागयकालगहणं ?

अणागयकालगहणं–अब्भस्स निम्मलत्तं कसिणा य गिरी सविज्जुया मेहा।
थणियं वाउब्भामो संझा रत्ता य णिद्धा य॥४॥

वारुणं वा माहिंदं वा अण्णयरं वा पसत्थं उप्पायं पासित्ता तेणं साहिज्जइ जहा–सुवुट्ठी भविस्सइ। से तं अणागयकालगहणं।

४५३. **(प्र.)** अनागतकालग्रहण क्या है ?

(उ.) आकाश की निर्मलता, पर्वतों का काला दिखाई देना, बिजली सहित मेघों की गर्जना, अनुकूल पवन और संध्या की गाढ़ लालिमा॥१॥

[1]**वारुण**–आर्द्रा आदि नक्षत्रों में एवं [2]**माहेन्द्र**–रोहिणी आदि नक्षत्रों में होने वाले अथवा किसी अन्य प्रशस्त उत्पात–उल्कापात या दिग्दाहादि को देखकर अनुमान करना कि अच्छी वृष्टि होगी। यह अनागतकालग्रहण अनुमान है।

453. (Q.) What is this *Anagat kaal grahan anumaan* (inference from future perspective) ?

(Ans.) The (examples of) *Anagat kaal grahan anumaan* (inference from future perspective) are as follows—To infer that good rains are expected, by witnessing clear sky, darkening mountains, clouds with lightening and thunder, favourable wind, and deep crimson horizon at dusk. (1)

---

१. **वरुण के नक्षत्र**–(१) पूर्वाषाढ़ा, (२) उत्तराभाद्रपद, (३) आश्लेषा, (४) आर्द्रा, (५) मूल, (६) रेवती, और (७) शतभिषग्।

२. **माहेन्द्र के नक्षत्र**–(१) अनुराधा, (२) अभिजित, (३) ज्येष्ठा, (४) उत्तराषाढ़ा, (५) धनिष्ठा, (६) रोहिणी, और (७) श्रवण।

And also by witnessing favourable omens like *Varuna* group of constellations (*Purvashadha, Uttarabhadrapad, Ashlesha, Ardra, Mool, Revati* and *Shatabhishag*); *Mahendra* group of constellations (*Anuradha, Abhijit, Jeshtha, Uttarashadha, Dhanishtha, Rohini* and *Shravan*), or appearance of any other celestial disturbance like comet or conflagration on horizon.

This concludes the description of *Anagat kaal grahan anumaan* (inference from future perspective).

प्रतिकूलविशेषदृष्टसाधर्म्यवत् अनुमान

४५४. एएसिं चेव विवच्चासे तिविहं गहणं भवति। तं जहा—तीतकालगहणं पडुप्पण्णकालगहणं अणागयकालगहणं।

४५४. इन उक्त उदाहरणों की विपरीतता में भी तीन प्रकार से अनुमान का ग्रहण होता है, जैसे–(१) अतीतकालग्रहण, (२) प्रत्युत्पन्नकालग्रहण, और (३) अनागतकालग्रहण।

CONTRA-INDICATORY INFERENCE

454. There are three contra-indicatory inferences also of these perspectives—(1) *Ateet kaal grahan* (past perspective), (2) *Pratyutpanna kaal grahan* (present perspective), and (3) *Anagat kaal grahan* (future perspective).

४५५. से किं तं तीतकालगहणं ?

नित्तिणाइं वणाइं अनिप्फण्णसस्सं च मेइणिं सुक्काणि य कुंड–सर–णदि–दह–तलागाइं पासित्ता तेणं साहिज्जति जहा—कुवुट्ठी आसी। से तं तीतकालगहणं।

४५५. **(प्र.)** अतीतकालग्रहण क्या है ?

(उ.) तृण घासरहित वन, अनिष्पन्न (सूखे) धान्य वाली भूमि और सूखे कुंड, सरोवर, नदी, द्रह और तालाबों को देखकर अनुमान करना कि यहाँ कुवृष्टि–वर्षा नहीं हुई है।

455. (Q.) What is this *Ateet kaal grahan anumaan* (inference from past perspective) ?

(Ans.) The (examples of) *Ateet kaal grahan anumaan* (inference from past perspective) are as follows—To infer that there had been bad monsoon or no rains (in an area) by witnessing forests without grass or land devoid of crops and dried up wells, tanks, rivers, canals and ponds.

पूर्ववत् अनुमान
शेषवत् अनुमान
अनागत काल ग्रहण
वृष्टि

चित्र परिचय १४

Illustration No. 14

अनुमान प्रमाण

(१) **पूर्ववत् अनुमान**–बूढ़ी माँ बचपन में बिछुड़े पुत्र को आया देखकर उसके सिर पर तिल का चिन्ह देखकर अनुमान से पहचान लेती है।

(२) **शेषवत् अनुमान (कारण से कार्य का अनुमान)**–जैसे–सूत, धागे आदि देखकर कपड़ा बुनने वाले का अनुमान करना।

(३) **अवयव से अवयवी का अनुमान**–जैसे–मुर्गे की शिखा (चोटी) तथा मोर का पंख आदि देखकर मुर्गे और मोर होने का अनुमान करना।

(४) **आश्रय से आश्रयी का अनुमान**–जैसे–आकाश में उड़ते बगुलों को देखकर पास ही सरोवर (आश्रय) होने का अनुमान करना।

(५) **अतीतकाल ग्रहण अनुमान**–वन में लहलहाती फसल आदि को देखकर अनुमान करना कि अच्छी वर्षा हुई है।

(६) **अनागतकाल ग्रहण अनुमान**–आकाश में चमकती बिजली व काली घटा देखकर वर्षा होने का अनुमान करना।

–सूत्र ४४२-४५२, पृष्ठ २७९-२८७

ANUMAAN PRAMAAN

(1) Purvavat Anumaan (Inference by Previously Known Characteristics)—An elderly mother recognizes her long lost son on his return by means of a mole on his forehead.

(2) Sheshavat Anumaan (Inference by Available Evidence)—To recognize a weaver by seeing yarn, loom etc.

(3) Avayavena Sheshavat Anumaan (Inference by Available Evidence of a Part or Component)—A cock is inferred by its crest and a pea-cock by its feathers.

(4) Ashrayena Sheshavat Anumaan (Inference by Available Evidence of Support or Dependence)—A water-body is inferred in proximity by a row of cranes in the sky.

(5) Ateetkaal Grahan Anumaan (Inference from Past Perspective)—To infer that there had been good rains by witnessing land with abundant crop.

(6) Anagatkaal Grahan Anumaan (Inference from Future Perspective)—To infer that good rains are expected by witnessing dark clouds with lightening and thunder.

—Aphorisms 442-452, pp. 279-287

This concludes the description of *Ateet kaal grahan anumaan* (inference from past perspective).

४५६. से किं तं पडुप्पण्णकालगहणं ?

पडुप्पण्णकालगहणं साहुं गोयरग्गगयं भिक्खं अलभमाणं पासित्ता तेणं साहिज्जइ जहा—दुभिक्खं वट्टइ। से तं पडुप्पण्णकालगहणं।

४५६. (प्र.) वर्तमानकालग्रहण क्या है ?

(उ.) गोचरी के लिए गये हुए साधु को भिक्षा नहीं मिलते देखकर अनुमान किया जाना कि यहाँ दुर्भिक्ष है। यह वर्तमानकालग्रहण अनुमान है।

456. (Q.) What is this *Pratyutpanna kaal grahan anumaan* (inference from present perspective) ?

(Ans.) The (examples of) *Pratyutpanna kaal grahan anumaan* (inference from present perspective) are as follows—To infer that a period of drought prevails, by witnessing an alms-seeking ascetic being offered no alms by householders.

This concludes the description of *Pratyutpanna kaal grahan anumaan* (inference from present perspective).

४५७. से किं तं अणागयकालगहणं ?

अणागयकालगहणं अग्गेयं वा वायव्वं वा अण्णयरं वा अप्पसत्थं उप्पायं पासित्ता तेणं साहिज्जइ। जहा—कुवुट्ठी भविस्सइ। से तं अणागयकालगहणं। से तं विसेसदिट्ठं। से तं दिट्ठसाहम्मवं। से तं अणुमाणे।

४५७. (प्र.) अनागतकालग्रहण क्या है ?

(उ.) [1]आग्नेय मंडल के नक्षत्र, [2]वायव्य मंडल के नक्षत्र या अन्य कोई उत्पात (दिशा और धुआँ) देखकर अनुमान करना कि कुवृष्टि होगी, अच्छी वर्षा नहीं होगी।

---

१. **आग्नेय मंडल के नक्षत्र**—(१) विशाखा, (२) भरणी, (३) पुष्य, (४) पूर्वाफाल्गुनी, (५) पूर्वाभाद्रपदा, (६) मघा, और (७) कृतिका।

२. **वायव्य मंडल के नक्षत्र**—(१) चित्रा, (२) हस्त, (३) अश्विनी, (४) स्वाति, (५) मार्गशीर्ष, (६) पुनर्वसु, और (७) उत्तराफाल्गुनी।

यह अनागतकालग्रहण है। यही विशेषदृष्ट है। यही दृष्टसाधर्म्यवत् है। इस प्रकार अनुमानप्रमाण का विवेचन समाप्त हुआ।

457. (Q.) What is this *Anagat kaal grahan anumaan* (inference from future perspective) ?

(Ans.) The (examples of) *Anagat kaal grahan anumaan* (inference from future perspective) are as follows—To infer that bad monsoon or no rains are expected, by witnessing inauspicious omens like *Agneya* group of constellations (*Vishakha, Bharani, Pushya, Purvaphalguni, Purvabhadrapada, Magha* and *Kritika*); *Vayavya* group of constellations (*Chitra, Hast, Ashvini, Svati, Margashirsh, Punarvasu* and *Uttaraphalguni*), or appearance of any other celestial disturbance like smoky sky.

This concludes the description of *Anagat kaal grahan anumaan* (inference from future perspective). This also concludes the description of *Vishesh Drisht Anumaan* (inference by common characteristics known in particular). This concludes the description of *Drisht Sadharmyavat Anumaan* (inference by known generic or common characteristics). This also concludes the description of *Anumaan Pramana* (standard of validation by inferential knowledge).

उपमानप्रमाण

४५८. से किं तं ओवम्मे ?

ओवम्मे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा—साहम्मोवणीते य वेहम्मोवणीते य।

४५८. (प्र.) उपमानप्रमाण क्या है ?

(उ.) उपमानप्रमाण दो प्रकार का है, जैसे—(१) साधर्म्योपनीत, और (२) वैधर्म्योपनीत।

विवेचन—उपमान के स्थान पर यहाँ 'औपम्य' शब्द का प्रयोग हुआ है। वृत्तिकार मलयगिरि ने इसका अर्थ इस प्रकार किया है—"**उपमीयते सदृशतया वस्तु गृह्यते अनयेत्युपमया सैवोपम्यम्।**"—एक वस्तु की सदृशता-समानता को लेकर जहाँ वस्तु का ज्ञान किया जाता है उसे उपमा या औपम्य कहते हैं। यहाँ साधर्म्य (समानता) और वैधर्म्य (असमानता) दोनों को आधार मानकर उपमान के दो भेद बताये हैं।

UPAMAAN PRAMANA

458. (Q.) What is this *Upamaan Pramana* (standard of validation by analogical knowledge) ?

(Ans.) *Upamaan Pramana* (standard of validation by analogical knowledge) is of two kinds—(1) *Sadharmyopaneet* (based on similarity), and (2) *Vaidharmyopaneet* (based on non-similarity).

Elaboration—The term *'aupamya'* has been used here instead of *'upamaan'*. The commentator (*Vritti*) has interpreted it as—to acquire knowledge about a thing based on analogy of another thing is called *upama* or *aupamya*. Based on similarity and dissimilarity two categories of *upamaan* have been stated here.

साधर्म्योपनीत उपमान

४५९. से किं तं साहम्मोवणीए ?

साहम्मोवणीए तिविहे पण्णत्ते। तं.—किंचिसाहम्मे, पायसाहम्मे, सव्वसाहम्मे य।

४५९. (प्र.) साधर्म्योपनीत उपमान क्या है?

(उ.) (जिन पदार्थों की सदृशता उपमा द्वारा सिद्ध की जाये उसे साधर्म्योपनीत कहते हैं) उसके तीन प्रकार हैं-(१) किंचित्साधर्म्योपनीत, (२) प्रायःसाधर्म्योपनीत, और (३) सर्वसाधर्म्योपनीत।

SADHARMYOPANEET UPAMAAN

459. (Q.) What is this *Sadharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on similarity)?

(Ans.) *Sadharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on similarity) is of three kinds—(1) *Kinchit sadharmyopaneet* (based on minimum similarity), (2) *Prayah sadharmyopaneet* (based on limited similarity), and (3) *Sarva sadharmyopaneet* (based on complete similarity).

४६०. से किं तं किंचिसाहम्मे ?

किंचिसाहम्मे—जहा मंदरो तहा सरिसवो जहा सरिसवो तहा मंदरो, जहा समुद्दो तहा गोप्पयं जहा गोप्पयं तहा समुद्दो, जहा आइच्चो तहा खज्जोतो जहा खज्जोतो तहा आइच्चो, जहा चंदो तहा कुंदो जहा कुंदो तहा चंदो। से तं किंचिसाहम्मे।

४६०. (प्र.) जिसमें आंशिक समानता हो, वह किंचित्साधर्म्योपनीत उपमान क्या है?

(उ.) जैसा मंदर (मेरु) पर्वत है, वैसा ही सर्षप (सरसों) है और जैसा सर्षप है वैसा ही मेरु पर्वत है। जैसा समुद्र है, उसी प्रकार गोष्पद-(जल से भरा गाय के खुर का निशान जितना स्थान) है और जैसा गोष्पद है, वैसा ही समुद्र है तथा जैसा आदित्य-सूर्य है, वैसा खद्योत-जुगुनू है। जैसा खद्योत है, वैसा आदित्य है। जैसा चन्द्रमा है, वैसा कुंद (सफेद) पुष्प है, और जैसा कुंद है, वैसा चन्द्रमा है। यह किंचित्साधर्म्योपनीत है।

460. (Q.) What is this *Kinchit sadharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on minimum similarity) ?

(Ans.) The (examples of) *Kinchit sadharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on minimum similarity) are as follows—As is the Mandar mountain so is a mustard seed; as is a mustard seed so is the Mandar mountain (similarity of form). As is an ocean so is a puddle; as is a puddle so is an ocean (similarity of content). As is the sun so is a fire-fly; as is a fire-fly so is the sun (similarity of radiance). As is the moon so is a water-lily; as is a water-lily so is the moon (similarity of colour).

This concludes the description of *Kinchit sadharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on minimum similarity).

४६१. से किं तं पायसाहम्मे ?

पायसाहम्मे जहा गो तहा गवयो, जहा गवयो तहा गो। से तं पायसाहम्मे।

४६१. (प्र.) जिसमें अधिक समानता हो, वह प्रायःसाधर्म्योपनीत उपमान क्या है?

(उ.) जैसी गाय है वैसा गवय (रोझ-नीलगाय) होता है और जैसा गवय है, वैसी गाय है। यह प्रायःसाधर्म्योपनीत है।

461. (Q.) What is this *Prayah sadharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on limited similarity) ?

(Ans.) The (examples of) *Prayah sadharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on limited similarity) are as follows—As is a cow so is a black-buck (similarity of body constitution, such as hoof, hump, horns, tail etc.).

This concludes the description of *Prayah sadharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on limited similarity).

४६२. से किं तं सव्वसाहम्मे ?

सव्वसाहम्मे ओवम्मं णत्थि, तहा वि तेणेव तस्स ओवम्मं कीरइ, जहा-अरहंतेहिं अरहंतसरिसं कयं, एवं चक्कवट्टिणा चक्कवट्टिसरिसं कयं, बलदेवेण बलदेवसरिसं कयं, वासुदेवेण वासुदेवसरिसं कयं, साहुणा साहुसरिसं कयं। से तं साहम्मोवणीए।

४६२. (प्र.) जिसमें पूर्ण समानता हो, वह सर्वसाधर्म्योपनीत उपमान क्या है?

(उ.) सर्वसाधर्म्य में उपमा नहीं होती, फिर भी उसी उपमान से उपमेय को उपमित किया जाता है। जैसे अरिहंत ने अरिहंत जैसा कार्य किया, चक्रवर्ती ने चक्रवर्ती जैसा, बलदेव ने बलदेव जैसा, वासुदेव ने वासुदेव के समान, साधु ने साधु के समान कार्य किया। यही सर्वसाधर्म्योपनीत है। यह साधर्म्योपनीत उपमानप्रमाण है।

विवेचन-दो भिन्न पदार्थों में आंशिक गुण-धर्मों की समानता देखकर के एक को दूसरे की उपमा देना साधर्म्योपनीत उपमान है।

किंचित्साधर्म्योपनीत में कुछ-कुछ समानता को लेकर उपमा दी जाती है। जैसे सर्षप और मेरु पर्वत के बीच संस्थान आदि की अपेक्षा बहुत भेद हैं, तथापि दोनों मूर्तिमान हैं और रूप, रस, गंध, स्पर्शवान होने से पौद्गलिक हैं। इसी प्रकार से सूर्य और खद्योत में मात्र प्रकाशकता की अपेक्षा समानता है, किन्तु बाकी बातों में बहुत अन्तर है। इसीलिए ऐसी उपमा किंचित्साधर्म्योपनीत कहलाती है।

किंचित्साधर्म्योपनीत से प्रायःसाधर्म्योपनीत उपमा का क्षेत्र कुछ अधिक व्यापक है। इसमें उपमेय और उपमान पदार्थ में रही समानता अधिक होती है और असमानता बहुत कम रहती है जिससे श्रोता उपमेय वस्तु को तत्काल जान लेता है।

प्रायःसाधर्म्योपनीत के लिए गो और गवय का उदाहरण दिया है। इसमें गो सास्ना (गलकम्बल-गले के नीचे लटकती हुई झालर) वाली है और गवय (नीलगाय) वर्तुलाकार (गोल) कंठ वाला है। लेकिन खुर, ककुद, सींग आदि में समानता है। इसीलिए यह प्रायःसाधर्म्योपनीत का उदाहरण है।

सर्वसाधर्म्योपनीत में सब प्रकारों से समानता बताने के लिए उसी से उसको उपमित किया जाता है। यह सत्य है कि दो वस्तुओं में सर्व प्रकार से समानता नहीं मिलती है, फिर भी सर्व प्रकार से समानता का तात्पर्य यह है कि उस जैसा कार्य अन्य कोई नहीं कर सकता है। जैसे अरिहंत आदि के उदाहरण दिये हैं कि तीर्थ स्थापना करना इत्यादि कार्य अरिहंत करते हैं, उन्हें अन्य कोई नहीं करता है। यहाँ उस कार्य की श्रेष्ठता अथवा असाधारणता बताई गई है। लोक-व्यवहार में भी देखा जाता है कि किसी के किये हुए अद्‌भुत कार्य के लिए कहा जाता है-इस कार्य को आप ही कर सकते हैं अथवा आपके तुल्य जो होगा, वही कर सकता है, अन्य नहीं। सर्वसाधर्म्योपनीत के लिए यह संस्कृत लोकोक्ति प्रसिद्ध है-"**गगनं गगनाकारं सागरः सागरोपमः। रामरावणयोर्युद्धं रामरावणयोरिव।**"-आकाश कैसा है? आकाश जैसा, समुद्र समुद्र जैसा ही है। राम-रावण का युद्ध राम-रावण के समान ही था।

462. (Q.) What is this *Sarva sadharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on complete similarity) ?

(Ans.) There is no analogy in complete similarity, yet an object is compared with itself. For example (it is commonplace to say)—the *Arhat* has acted like an *Arhat;* the *Chakravarti* (emperor) has acted like a *Chakravarti* (emperor); the *Baladev* has acted like a *Baladev;* the *Vasudev* has acted like a *Vasudev;* the ascetic has acted like an ascetic.

This concludes the description of *Sarva sadharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on complete similarity). This also concludes the description of *Sadharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on similarity).

Elaboration—To give an analogy by seeing similarities between attributes and properties of two different things is called *Sadharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on similarity).

In case of *Kinchit sadharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on minimum similarity) the analogy is based on least number of similarities. For example although a mustard seed and a mountain are very much dissimilar in structure (etc.), yet both are tangible and material having attributes of form, taste, smell and touch. In the same way the sun and a fire-fly are similar only in terms of being light emitting and dissimilar otherwise. For this reason such analogy is called an analogy based on minimum similarity.

In case of *Prayah sadharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on limited similarity) the scope of similarity is comparatively wider. For example a cow has a large lobe-like extension under its neck whereas a black-buck has a curved neck. Although of different breed of animals they have similarities in terms of possessing hoofs, hump, horns etc. For this reason such analogy is called an analogy based on limited similarities.

In case of *Sarva sadharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on complete similarity) an object is compared with itself in order to show complete similarity. Although it is true that two things cannot be absolutely similar, here complete similarity has been stated in its negative connotation—'none other is like the object in question or can

act like it'. The example of *Arhat* has been given because none other but the *Arhat* can accomplish the deeds like establishing religious ford. It implies the nature of the act or virtues. In common usage also it is used for some unusual accomplishment—"None other but you or someone like you can accomplish this." For such complete similarity there is a proverb in Sanskrit—Sky is like sky alone and ocean is like ocean alone. In the same way the war between Rama and Ravana was like Rama and Ravana only.

वैधर्म्योपनीत उपमान

४६३. से किं तं वेहम्मोवणीए ?

वेहम्मोवणीए तिविहे पण्णत्ते। तं जहा–किंचिवेहम्मे, पायवेहम्मे, सव्ववेहम्मे।

४६३. (प्र.) वैधर्म्योपनीत क्या है ?

(उ.) वैधर्म्योपनीत के तीन प्रकार हैं, यथा–(१) किंचित्वैधर्म्योपनीत, (२) प्रायःवैधर्म्योपनीत, और (३) सर्ववैधर्म्योपनीत।

VAIDHARMYOPANEET UPAMAAN

463. (Q.) What is this *Vaidharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on dissimilarity) ?

(Ans.) *Vaidharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on dissimilarity) is of three kinds—(1) *Kinchit vaidharmyopaneet* (based on minimum dissimilarity), (2) *Prayah vaidharmyopaneet* (based on limited dissimilarity), and (3) *Sarva vaidharmyopaneet* (based on complete dissimilarity).

४६४. से किं तं किंचिवेहम्मे ?

किंचिवेहम्मे जहा सामलेरो न तहा बाहुलेरो, जहा बाहुलेरो न तहा सामलेरो। से तं किंचिवेहम्मे।

४६४. (प्र.) किंचित्वैधर्म्योपनीत क्या है ?

(उ.) (किसी गुण-विशेष की विलक्षणता प्रकट करने को किंचित्वैधर्म्योपनीत कहते हैं) वह इस प्रकार–जैसा शाबलेय (चितकबरी गाय का बछड़ा) होता है वैसा बाहुलेय (एक रंग वाली या काली गाय का बछड़ा) नहीं और जैसा बहुला गाय का बछड़ा वैसा शबला गाय का नहीं होता है। यह किंचित्वैधर्म्योपनीत है।

464. (Q.) What is this *Kinchit vaidharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on minimum dissimilarity) ?

(Ans.) The (examples of) *Kinchit vaidharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on minimum dissimilarity) are as follows—As is the calf of a speckled cow so is not a calf of a black cow; as is a calf of a black cow so is not the calf of a speckled cow.

This concludes the description of *Kinchit vaidharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on minimum dissimilarity).

४६५. से किं तं पायवेहम्मे ?

पायवेहम्मे जहा वायसो न तहा पायसो, जहा पायसो न तहा वायसो। से तं पायवेहम्मे।

४६५. (प्र.) प्रायःवैधर्म्योपनीत किसे कहते हैं ?

(उ.) (अधिकांश रूप में अनेक अवयवगत विसदृशता-असमानता प्रकट करने को प्रायःवैधर्म्योपनीत कहते हैं)। यथा-जैसा वायस (कौआ) है वैसा पायस (खीर) नहीं होता और जैसा पायस होता है वैसा वायस नहीं। यही प्रायःवैधर्म्योपनीत है।

465. (Q.) What is this *Prayah vaidharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on limited dissimilarity) ?

(Ans.) The (examples of) *Prayah vaidharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on limited dissimilarity) are as follows—As is *vayas* (crow) so is not *payas* (*kheer;* a sweet dish of rice cooked in milk); as is *payas* so is not *vayas* (crow).

This concludes the description of *Prayah vaidharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on limited dissimilarity).

४६६. से किं तं सव्ववेहम्मे ?

सव्ववेहम्मे नत्थि, तहा वि तेणेव तस्स ओवम्मं कीरइ, जहा-णीएणं णीयसरिसं कयं, दासेणं दाससरिसं कयं, काकेणं काकसरिसं कयं, साणेणं साणसरिसं कयं, पाणेणं पाणसरिसं कयं। से तं सव्ववेहम्मे। से तं वेहम्मोवणीए। से तं ओवम्मे।

।। भावप्रमाणे त्ति पयं सम्मत्तं ।।

४६६. (प्र.) सर्ववैधर्म्योपनीत क्या है?

(उ.) (जिसमें किसी भी प्रकार की समानता न हो, उसे सर्ववैधर्म्योपनीत कहते हैं) यद्यपि सर्ववैधर्म्य में उपमा नहीं होती है, तथापि उसी की उपमा उसी को दी जाती है, जैसे—नीच ने नीच के समान, दास ने दास के समान, कौए ने कौए जैसा, श्वान (कुत्ता) ने श्वान जैसा और चांडाल ने चांडाल के समान काम किया। यही सर्ववैधर्म्योपनीत है।

विवेचन—किंचित्वैधर्म्योपनीत में असमानता कम, समानता अधिक रहती है। प्रायःवैधर्म्योपनीत में असमानता अधिक, समानता बहुत ही अल्प मात्र होती है। वायस और पायस नाम में मात्र दो अक्षरों की समानता है। किन्तु वायस चेतन है और पायस जड़ पदार्थ है। इसलिए दोनों में साम्य नहीं हो सकता है। केवल ध्वनि का साम्य प्रतीत होता है।

सर्ववैधर्म्योपनीत सर्वसाधर्म्योपनीत के एकदम विपरीत है। इसमें नीच की अत्यन्त नीचता प्रकट करने के लिए नीच को नीच का ही उदाहरण दिया जाता है। अर्थात् नीच व्यक्ति जैसा महापाप नहीं कर सकता, वैसा इसने किया। यह अर्थ व्यक्त होता है।

॥ भावप्रमाणपद प्रकरण समाप्त ॥

466. (Q.) What is this *Sarva vaidharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on complete dissimilarity)?

(Ans.) There is no analogy in complete dissimilarity, yet an object is compared with itself. For examples (it is commonplace to say)—a mean person has acted like a mean person; a servant has acted like a servant; a crow has acted like a crow; a dog has acted like a dog; a lowly individual has acted like lowly individual.

This concludes the description of *Sarva vaidharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on complete dissimilarity). This also concludes the description of *Vaidharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on dissimilarity). This concludes the description of *Upamaan Pramana* (standard of validation by analogical knowledge).

Elaboration—In case of *Kinchit vaidharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on minimum dissimilarity) the analogy is based on less dissimilarities and more similarities. In case of *Prayah sadharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on limited similarity) the dissimilarities are more and similarities are very little.

For example the only similarities in *vayas* and *payas* is of two syllables *ya* and *sa*. But *vayas* is a living being and *payas* is a material thing, therefore they cannot be similar. The only similarity being that these are like-sounding words.

Sarva vaidharmyopaneet upamaan (analogical knowledge based on complete dissimilarity) is exactly opposite of *Sarva sadharmyopaneet upamaan* (analogical knowledge based on complete similarity) in qualitative sense; that relates to virtues whereas this relates to vices. In order to express the extreme meanness of a person analogy of a mean person is given. It conveys the meaning that this person has committed a great sin that even a mean person cannot commit.

● END OF THE DISCUSSION ON BHAAVA PRAMANA ●

आगमप्रमाण-प्रकरण
THE DISCUSSION ON AGAM PRAMANA

आगमप्रमाण

४६७. से किं तं आगमे ?

आगमे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा—लोइए य लोगुत्तरिए य।

४६७. (प्र.) आगमप्रमाण क्या है?

(उ.) आगम दो प्रकार का है। यथा-(१) लौकिक, और (२) लोकोत्तर।

AGAM PRAMANA

467. (Q.) What is this *Agam Pramana* (standard of validation by scriptural knowledge) ?

(Ans.) *Agam Pramana* (standard of validation by scriptural knowledge) is of two kinds—(1) *Laukik* (mundane), and (2) *Lokottar* (spiritual).

४६८. से किं तं लोइए ?

लोइए जण्णं इमं अण्णाणिएहिं मिच्छादिट्ठीएहिं सच्छंदबुद्धिमतिविगप्पियं। तं जहा—भारहं रामायणं जाव चत्तारि य वेदा संगोवंगा। से तं लोइए आगमे।

४६८. (प्र.) लौकिक आगम किसे कहते हैं?

(उ.) जिसे अज्ञानी मिथ्यादृष्टि जनों ने अपनी स्वच्छन्द बुद्धि और मति से रचा हो, उसे लौकिक आगम कहते हैं। यथा-भारत, रामायण यावत् सांगोपांग चार वेद। ये सब लौकिक आगम हैं। *(विस्तार हेतु देखें सचित्र अनुयोगद्वारसूत्र, भाग १, सूत्र ४९)*

468. (Q.) What is this *Laukik Agam* (mundane scripture) ?

(Ans.) The scriptures written by the ignorant and heretics with their willful mind and perspective is called *Laukik Agam* (mundane scripture). For example *Mahabharat, Ramayan* and so on, and the four *Vedas* with their *Angas* and *Upangas* (auxiliary literature of the *Vedas*). (for details refer to *Illustrated Anuyogadvar Sutra,* Part I, Aphorism 49)

This concludes the description of *Laukik Agam* (mundane scripture).

४६९. से किं तं लोगुत्तरिए ?

लोगुत्तरिए जं इमं अरहंतेहिं भगवंतेहिं उप्पण्णणाण-दंसणधरेहिं तीय-पच्चुप्पण्ण-मणागयजाणएहिं तेलोक्कवहिय-महिय-पूइएहिं सव्वण्णूहिं सव्वदरिसीहिं पणीयं दुवालसंगं गणिपिडगं। तं जहा-आयारो जाव दिट्ठिवाओ। से तं लोगुत्तरिए आगमे।

४६९. (प्र.) लोकोत्तर आगम क्या है ?

(उ.) उत्पन्न ज्ञान-दर्शन के धारक, अतीत, प्रत्युत्पन्न (वर्तमान) और अनागत के ज्ञाता, त्रिलोकवर्ती जीवों द्वारा सहर्ष वंदित, पूजित सर्वज्ञ, सर्वदर्शी अरिहंत, भगवन्तों द्वारा प्रणीत आचारांग यावत् दृष्टिवाद पर्यन्त द्वादशांग रूप गणिपिटक लोकोत्तरिक आगम हैं।

469. (Q.) What is this *Lokottar Agam* (spiritual scripture) ?

(Ans.) *Lokottar Agam* (spiritual scripture) is the canon in the form of *Dvadashanga Ganipitak* (the twelve-part canon compiled by *Ganadharas*) expounded by those who are *Arhantas* (the venerated ones); *Bhagavantas* (the divinely magnificent ones); who have acquired ultimate knowledge and ultimate perception; who know all things of past, present and future; who are all knowing and all seeing; who are beheld, extolled and worshipped in the three worlds; and who are holders of uninterrupted excellent knowledge and perception. This *Ganipitak* includes *Acharanga,* and (so on up to) *Drishtivad.*

४७०. अहवा आगमे तिविहे पण्णत्ते। तं जहा-सुत्तागमे य अत्थागमे य तदुभयागमे य।

अहवा आगमे तिविहे पण्णत्ते। तं.-अत्तागमे, अणंतरागमे, परंपरागमे य।

तित्थगराणं अत्थस्स अत्तागमे, गणहराणं सुत्तस्स अत्तागमे अत्थस्स अणंतरागमे, गणहरसीसाणं सुत्तस्स अणंतरागमे अत्थस्स परंपरागमे, तेण परं सुत्तस्स वि अत्थस्स वि णो अत्तागमे णो अणंतरागमे परंपरागमे। से तं लोगुत्तरिए। से तं आगमे। से तं णाणगुणप्पमाणे।

आत्मागम
गणधर
गुरु
अनन्तरागम
के उपदेष्टा

चित्र परिचय १५

Illustration No. 15
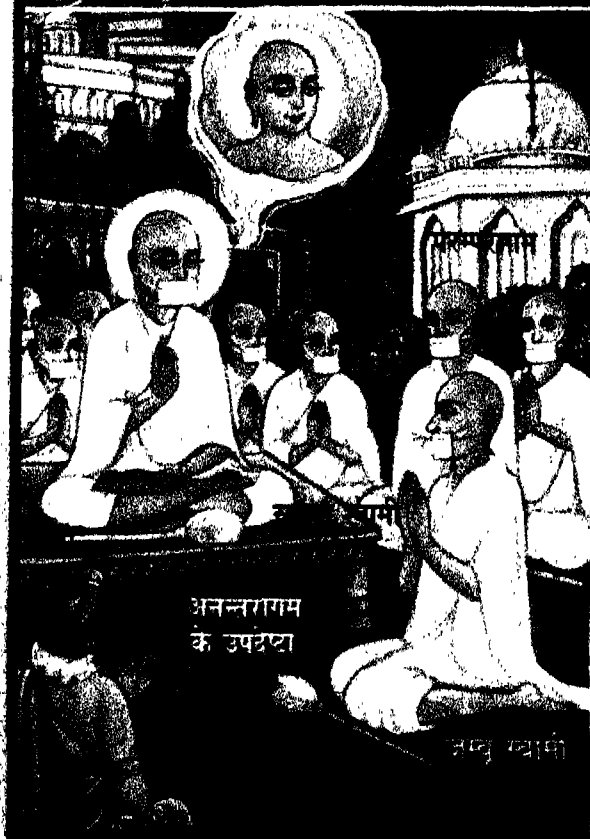
आगम प्रमाण के तीन भेद

(१) **आत्मागम**—तीर्थंकर देव जो अर्थरूप उपदेश देते हैं, वह अर्थागम उनके लिए आत्मागम है तथा साक्षात् सुनने वाले गणधर आदि के लिए वह कथन अनन्तरागम है।

(२) **अनन्तरागम**—तीर्थंकरों के मुख से सुने आगम का कथन सुधर्मा स्वामी आदि गणधरों के लिए अनन्तरागम है तथा जम्बू स्वामी आदि शिष्यों के लिए परम्परागम है।

(३) **परम्परागम**—तीर्थंकर व गणधरों के मुख से सुना हुआ ज्ञान जम्बू स्वामी तथा उनके शिष्यों के लिए परम्परागम है।

—सूत्र ४७०, पृष्ठ ३०१

THREE KINDS OF AGAM PRAMAAN

(1) Atmagam (Self-acquired Scriptural Knowledge)—*Arthagam* (scriptural knowledge of the meaning) is *Atmagam* for Tirthankars and *Anantaragam* (scriptural knowledge acquired in immediate succession) for *Ganadhars* who acquire it directly from the Tirthankar.

(2) Anantaragam—For *Ganadharas* like Sudharma Swami scriptural knowledge of the meaning is *Anantaragam* but for their disciples like Jambu Swami it is *Paramparagam.*

(3) Paramparagam (Scriptural Knowledge Acquired through Lineage)—For the disciples of the *Ganadharas* scriptural knowledge of the meaning is *Paramparagam.*

—Aphorism 470, p. 301

४७०. अथवा आगम तीन प्रकार का है। जैसे-(१) सूत्रागम, (२) अर्थागम, और (३) तदुभयागम।

अथवा (लोकोत्तरिक) आगम तीन प्रकार का है। यथा-(१) आत्मागम, (२) अनन्तरागम, और (३) परम्परागम।

अर्थागम (अर्थरूप शास्त्र) तीर्थंकरों के लिए आत्मागम है। सूत्र का ज्ञान गणधरों के लिए आत्मागम और अर्थ का ज्ञान अनन्तरागम है। गणधरों के शिष्यों के लिए सूत्रज्ञान अनन्तरागम और अर्थ का ज्ञान परम्परागम है। उसके बाद सूत्र और अर्थरूप आगम आत्मागम भी नहीं है, अनन्तरागम भी नहीं है, किन्तु परम्परागम है। यह लोकोत्तर आगम का स्वरूप है।

विवेचन-आगमप्रमाण के सम्बन्ध में जैन न्याय ग्रन्थों में बहुत ही विस्तारपूर्वक चर्चा मिलती है। आगम की जो भिन्न-भिन्न परिभाषाएँ की गई हैं, उनमें वृत्तिकार मलयगिरि द्वारा की गई परिभाषा इस प्रकार है-

(१) **"गुरु पारम्पर्येण आगच्छतीति आगमः।"**-जो गुरु (आचार्य) परम्परा से चला आ रहा है, वह आगम है।

(२) **"आ समन्ताद् गम्यते ज्ञायते जीवादयः पदार्था अनेनैति वा आगमः।"**-जिससे जीवादि पदार्थ भलीभाँति जाने जाते हैं, वह आगम है।

जैन दार्शनिकों के अनुसार आगम की परिभाषा इस प्रकार है-**"आप्तवचनादाविर्भूतमर्थसंवेदनमागमः।"** (न्यायदीपिका) आप्त (सर्वज्ञ) वचनों से प्राप्त होने वाला अर्थ ज्ञान आगम है।

लौकिक एवं लोकोत्तर आगम की चर्चा इसी शास्त्र के भाग १, सूत्र ४७ से ४९ में तथा नन्दीसूत्र के श्रुतज्ञान प्रकरण में की जा चुकी है। यहाँ लोकोत्तर आगम के दो प्रकार से तीन-तीन भेद बताये हैं।

वचन रचना को सूत्रागम, सम्यग् ज्ञान रूप अर्थ (भाव) को अर्थागम और जिसमें शब्द और अर्थ दोनों का ज्ञान हो, वह तदुभयागम है अथवा जिसमें सूत्र और अर्थ-व्याख्या दोनों एक साथ संकलित हों, वह तदुभयागम है।

तीर्थंकर देव अर्थरूप में ज्ञान देते हैं अतः वे अर्थागम के कर्त्ता हैं। सुधर्मादि गणधर उन वचनों को सूत्ररूप में निबद्ध करते हैं अतः वे सूत्रागम के कर्त्ता हैं। जैसा कि आचार्य भद्रबाहु का कथन है-

"अत्थं भासइ अरहा, सुत्तं गंथंति गणहरा निउणा।"

"गुरु-मुख से आगम का पाठ व अर्थ का ज्ञान लेने वालों के लिए वह तदुभयागम है।"

दूसरी दृष्टि से आगम के तीन भेद इस प्रकार हैं-

आत्मागम-गुरु आदि के उपदेश के बिना अपने आप ही आत्मा में अर्थ ज्ञान प्रकट होना। जैसे तीर्थंकर, स्वयंबुद्ध आदि को केवलज्ञान की प्राप्ति होती है अर्थात् स्वयं बोध होना आत्मागम है।

अनन्तरागम–जो बिना अन्तर के गुरु आदि से सीधा प्राप्त किया हो वह अनन्तरागम है। तीर्थंकरों के लिए अर्थागम आत्मागम है, गणधरों के लिए सूत्रागम आत्मागम है और तीर्थंकरों द्वारा प्राप्त ज्ञान अर्थागम अनन्तरागम है।

परम्परागम–गणधरों के शिष्यों के लिए अर्थरूप आगम परम्परागम है और सूत्ररूप आगम अनन्तरागम है जो सीधा गणधरों से प्राप्त होता है। उनके बाद सब मुनियों के लिए सूत्रागम और अर्थागम–दोनों ही परम्परागम हैं। परम्परा से प्राप्त सभी ज्ञान परम्परागम है। *(अनुयोगद्वार उत्तरार्ध आचार्य श्री आत्माराम जी म., खण्ड २, पृ. १९६)*

प्रमाण सम्बन्धी उक्त चर्चा सार रूप में निम्न तालिका से समझी जा सकती है–

अनुयोगद्वारगत प्रमाण व्यवस्था
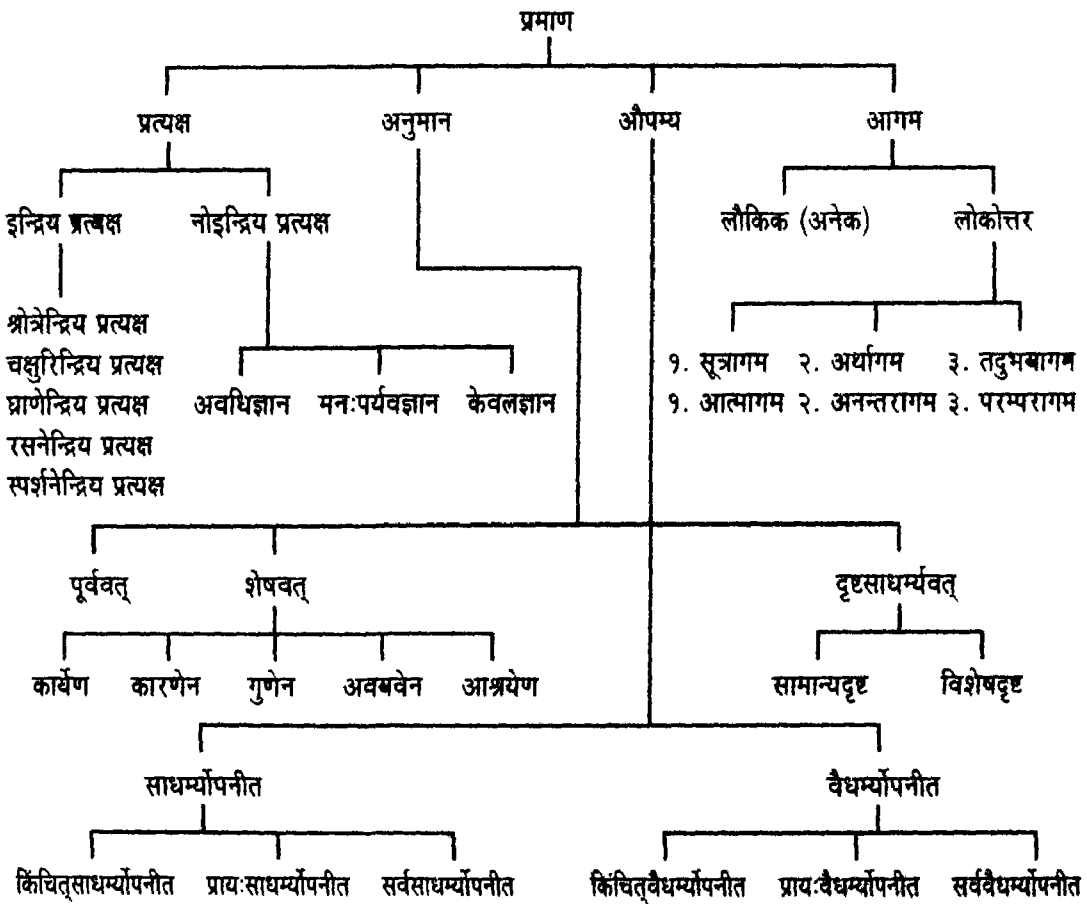
470. Also, *Agam* (scriptural knowledge) is of three kinds—(1) *Sutragam* (scriptural knowledge of the text), (2) *Arthagam*

(scriptural knowledge of the meaning), and (3) *Tadubhayagam* (scriptural knowledge of both, the text and the meaning).

Or, *Agam* (scriptural knowledge) is of three kinds—(1) *Atmagam* (self-acquired scriptural knowledge), (2) *Anantaragam* (scriptural knowledge acquired in immediate succession), and (3) *Paramparagam* (scriptural knowledge acquired through lineage).

Arthagam (scriptural knowledge of the meaning) is *Atmagam* (self-acquired scriptural knowledge) for *Tirthankars.* For *Ganadharas* (principle disciples of *Tirthankar*) *Sutragam* (scriptural knowledge of the text) is *Atmagam* (self-acquired scriptural knowledge) and *Arthagam* (scriptural knowledge of the meaning) is *Anantaragam* (scriptural knowledge acquired in immediate succession). For the disciples of the *Ganadharas* *Sutragam* (scriptural knowledge of the text) is *Anantaragam* (scriptural knowledge acquired in immediate succession) and *Arthagam* (scriptural knowledge of the meaning) is *Paramparagam* (scriptural knowledge acquired through lineage). Beyond this *Sutragam* (scriptural knowledge of the text) and *Arthagam* (scriptural knowledge of the meaning) both are neither *Atmagam* (self-acquired scriptural knowledge) nor *Anantaragam* (scriptural knowledge acquired in immediate succession) but only *Paramparagam* (scriptural knowledge acquired through lineage).

This concludes the description of *Lokottar Agam* (spiritual scripture). This concludes the description of *Agam Pramana* (standard of validation by scriptural knowledge). This also concludes the description of *Jnana Guna Pramana* (standard of validation by knowledge attributes).

Elaboration—Discussions about validation by scriptural knowledge are available in Jain works on logic in great detail. Of the various definitions of *Agam* (scriptures), the one by Malayagiri the commentator (*Vritti*) is—

(1) That which has been handed down through the lineage of *gurus* is called *Agam*.

(2) *Agam* is that through which one acquires proper knowledge of substances including *jiva* (soul).

The definition of *Agam* according to Jain philosophers is—the knowledge in the form of *arth* (essence or meaning) received through the words of an omniscient is called *Agam.*

The details about mundane and spiritual *Agam* have already been included in the first part of this book (aphorisms 47-49) as well as in the chapter on *Shrut Jnana* in *Illustrated Nandi Sutra.* Here the spiritual *Agam* has been categorized two ways into three categories each.

First of these is—*Agam* compiled in the form of text is *Sutragam;* right knowledge in the form of *arth* (meaning or essence) is *Arthagam;* and that where both are included is *Tadubhayagam.*

Tirthankar propounds knowledge in the form of *arth* (essence or meaning), thus he is the creator of *Arthagam. Ganadhars* compile that knowledge in the form of aphorisms and text, thus they are the authors of *Sutragam.* Acharya Bhadrabahu states—

"As a disciple acquires knowledge of text and its meaning from the *guru* it is *Tadubhayagam* for him."

The second way of categorization is—

Atmagam is the knowledge acquired through self-realization without any outside help including that from a *guru.* The examples of this are *Tirthankar* and *Svayambuddha* etc. In other words self-realization is *Atmagam.*

Anantaragam is scriptural knowledge acquired directly from the preceptor *guru.* Thus *Arthagam* (scriptural knowledge of the meaning) is *Atmagam* (self-acquired scriptural knowledge) for *Tirthankars.* For *Ganadharas* (principle disciples of *Tirthankar) Sutragam* (scriptural knowledge of the text) is *Atmagam* (self-acquired scriptural knowledge) and *Arthagam* (scriptural knowledge of the meaning) learned from *Tirthankar* is *Anantaragam* (scriptural knowledge acquired in immediate succession).

Paramparagam is scriptural knowledge acquired through lineage of *gurus.* For the disciples of the *Ganadharas Arthagam* (scriptural knowledge of the meaning) is *Paramparagam* and *Sutragam* (scriptural knowledge of the text) given directly by *Ganadhars* is *Anantaragam* (scriptural knowledge acquired in immediate succession). Beyond this *Sutragam* and *Arthagam* both are *Paramparagam* only. All knowledge acquired through tradition is *Paramparagam.* (*Anuyogadvar Sutra,* Part II by Acharya Shri Atmaram ji M., p. 196)

The aforesaid information given as chart is as follows—

ANUYOGADVAR PRAMANA VYAVASTHA
(THE VALIDATION SYSTEM IN ANUYOGADVAR)

- *Pratyaksh* (direct experience or perceptual cognition)
  - *Indriya Pratyaksh* (p.c. through sense organs)
    - *Shrotrendriya Pratyaksh* (p.c. through the sense organ of hearing)
    - *Chakshurindriya Pratyaksh* (p.c. through the sense organ of seeing)
    - *Ghranendriya Pratyaksh* (p.c. through the sense organ of smell)
    - *Rasanendriya Pratyaksh* (p.c. through the sense organ of taste)
    - *Sparshanendriya Pratyaksh* (p.c. through the sense organ of touch)
  - *Noindriya Pratyaksh* (perceptual cognition independent of sense organs)
    - *Avadhi-jnana* (extrasensory perception of the physical dimension)
    - *Manahparyav-jnana* (extrasensory perception and knowledge of thought process and thought-forms of other beings)
    - *Keval-jnana* (omniscience)
- *Anumaan* (inferential knowledge)
  - *Purvavat* (previously known characteristics)
  - *Sheshavat* (available evidence)
    - *Karyena* (by effect)
    - *Karanena* (by cause)
    - *Gunena* (by attribute)
    - *Avayavena* (by a part or component)
    - *Ashrayena* (by support)
  - *Drisht Sadharmyavat* (known generic or common characteristics)
    - *Samanya Drisht* (known in general)
    - *Vishesh Drisht* (known in particular)
- *Aupamya* (analogical knowledge)
  - *Sadharmyopaneet* (based on similarity)
    - *Kinchit sadharmyopaneet* (based on minimum similarity)
    - *Prayah sadharmyopaneet* (based on limited similarity)
    - *Sarva sadharmyopaneet* (based on complete similarity)
  - *Vaidharmyopaneet* (based on dissimilarity)
    - *Kinchit vaidharmyopaneet* (based on minimum dissimilarity)
    - *Prayah vaidharmyopaneet* (based on limited dissimilarity)
    - *Sarva vaidharmyopaneet* (based on complete dissimilarity)
- *Agam* (scriptural knowledge)
  - *Laukik* (mundane) Many
  - *Lokottar* (spiritual)
    - 1. *Sutragam* (scriptural knowledge of the text)
    - 2. *Arthagam* (scriptural knowledge of the meaning)
    - 3. *Tadubhayagam* (scriptural knowledge of both)
    - 1. *Atmagam* (self-acquired scriptural knowledge)
    - 2. *Anantaragam* (scriptural knowledge acquired in immediate succession)
    - 3. *Paramparagam* (scriptural knowledge acquired through lineage)

४७१. से किं तं दंसणगुणप्पमाणे ?

दंसणगुणप्पमाणे चउव्विहे पण्णत्ते। तं जहा–१. चक्खुदंसणगुणप्पमाणे, २. अचक्खुदंसणगुणप्पमाणे, ३. ओहिदंसणगुणप्पमाणे, ४. केवलदंसणगुणप्पमाणे य।

चक्खुदंसणं चक्खुदंसणिस्स घड–पड–कड–रधादिएसु दव्वेसु,

अचक्खुदंसणं अचक्खुदंसणिस्स आयभावे,

ओहिदंसणं ओहिदंसणिस्स सव्वरूविदव्वेहिं न पुण सव्वपज्जवेहिं,

केवलदंसणं केवलदंसणिस्स सव्वदव्वेहिं सव्वपज्जवेहि य। से तं दंसणगुणप्पमाणे।

४७१. (प्र.) दर्शनगुणप्रमाण क्या है?

(उ.) दर्शनगुणप्रमाण चार प्रकार का है। यथा–(१) चक्षुदर्शनगुणप्रमाण, (२) अचक्षुदर्शनगुणप्रमाण, (३) अवधिदर्शनगुणप्रमाण, और (४) केवलदर्शनगुणप्रमाण।

(१) चक्षुदर्शनी का चक्षुदर्शन घट, पट, कट, रथ आदि द्रव्यों में (रूपी पदार्थ को देखने में) होता है।

(२) अचक्षुदर्शनी का अचक्षुदर्शन आत्मभाव में होता है (अर्थात् चक्षु के अतिरिक्त अन्य चार इन्द्रियों एवं मन से होने वाला सामान्य बोध घटादि पदार्थों (ज्ञेय) के साथ ज्ञाता का संश्लेष–संयोग होने पर होता है)।

(३) अवधिदर्शनी का अवधिदर्शन सभी रूपी द्रव्यों में होता है, किन्तु सभी पर्यायों में नहीं होता है।

(४) केवलदर्शनी का केवलदर्शन सर्व द्रव्यों और सर्व पर्यायों में होता है। यही दर्शनगुणप्रमाण है।

DARSHAN GUNA PRAMANA

471. (Q.) What is this *Darshan Guna Pramana* (standard of validation by perception-attributes) ?

(Ans.) *Darshan Guna Pramana* (standard of validation by perception-attributes) is of four kinds—(1) *Chakshu-darshan Guna Pramana* (standard of validation by attributes of visual perception), (2) *Achakshu-darshan Guna Pramana* (standard of validation by attributes of non-visual perception), (3) *Avadhi-*

darshan Guna Pramana (standard of validation by attributes of extrasensory perception of the physical dimension), and (4) *Keval-darshan Guna Pramana* (standard of validation by attributes of omni-perception).

(1) *Chakshu-darshan* (visual perception) of a person endowed with that capacity covers pitcher, cloth, mat, chariot and other such material things.

(2) *Achakshu-darshan* (non-visual perception) of a person endowed with that capacity covers things that come in contact with the self (this contact is through faculties other than visual perception, i.e. the remaining four sense organs and mind).

(3) *Avadhi-darshan* (extrasensory perception of the physical dimension) of a person endowed with that capacity covers all material things having a form but not all their modes or variant states.

(4) *Keval-darshan* (omni-perception) of a person endowed with that capacity covers all material things having a form and also all their modes or variant states.

This concludes the description of *Darshan Guna Pramana* (standard of validation by perception-attributes).

चारित्रगुणप्रमाण

४७२. से किं तं चरित्तगुणप्पमाणे ?

चरित्तगुणप्पमाणे पंचविहे पण्णत्ते। तं जहा–१. सामाइयचरित्तगुणप्पमाणे, २. छेदोवट्ठावणियचरित्तगुणप्पमाणे, ३. परिहारविसुद्धियचरित्तगुणप्पमाणे, ४. सुहुमसंपरायचरित्तगुणप्पमाणे, ५. अहक्खायचरित्तगुणप्पमाणे।

१. सामाइयचरित्तगुणप्पमाणे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा–इत्तरिए य आवकहिए य।

२. छेदोवट्ठावणियचरित्तगुणप्पमाणे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा–सातियारे य निरतियारे य।

३. परिहारविसुद्धियचरित्तगुणप्पमाणे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा–णिव्विसमाणए य णिव्विट्ठकायिए य।

४. सुहुमसंपरायचरित्तगुणप्पमाणे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा–संकिलिस्समाणयं च विसुज्झमाणयं च।

५. अहक्खायचरित्तगुणप्पमाणे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा–पडिवाई य अपडिवाई य–छउमत्थे य केवलिए य। से तं चरित्तगुणप्पमाणे। से तं जीवगुणप्पमाणे। से तं गुणप्पमाणे।

।। आगम प्रमाणे त्ति पयं सम्मत्तं ।।

४७२. (प्र.) चारित्रगुणप्रमाण क्या है?

(उ.) चारित्रगुणप्रमाण के पाँच भेद हैं। यथा–(१) सामायिकचारित्रगुणप्रमाण, (२) छेदोपस्थापनीयचारित्रगुणप्रमाण, (३) परिहारविशुद्धिचारित्रगुणप्रमाण, (४) सूक्ष्मसंपरायचारित्रगुणप्रमाण, (५) यथाख्यातचारित्रगुणप्रमाण।

(१) सामायिकचारित्रगुणप्रमाण दो प्रकार का है–(क) इत्वरिक, और (ख) यावत्कथिक।

(२) छेदोपस्थापनीयचारित्रगुणप्रमाण के दो भेद हैं–(क) सातिचार, और (ख) निरतिचार।

(३) परिहारविशुद्धिचारित्रगुणप्रमाण दो प्रकार का है–(क) निर्विश्यमानक, और (ख) निर्विष्टकायिक।

(४) सूक्ष्मसंपरायचारित्रगुणप्रमाण दो प्रकार का है–(क) संक्लिश्यमानक, और (ख) विशुद्ध्यमानक।

(५) यथाख्यातचारित्रगुणप्रमाण के दो भेद हैं–(क) प्रतिपाती, और (ख) अप्रतिपाती। अथवा (क) छाद्‌मस्थिक, और (ख) कैवलिक।

यह चारित्रगुणप्रमाण का स्वरूप है। जीव गुणप्रमाण तथा गुणप्रमाण का कथन समाप्त हुआ।

विवेचन–चारित्र के वर्णन में सर्वप्रथम 'चारित्र' शब्द का अर्थ समझें तो अधिक उपयोगी रहेगा। आचार्यों ने शब्द की दृष्टि से और अर्थ की दृष्टि से चारित्र की भिन्न-भिन्न परिभाषाएँ दी हैं।

चारित्र की परिभाषा–वृत्तिकार मलधारी हेमचन्द्र ने शब्द की दृष्टि से चारित्र का अर्थ किया है–**"चरति अनिन्दितमनेनेति चारित्रम्।"**–जिसको धारण करके मनुष्य अनिन्दित-श्रेष्ठ आचरण करता है, वह है चारित्र। (वृत्ति पत्रांक २०१)

निम्न व्याख्या अर्थ या भाव की दृष्टि को अधिक स्पष्ट करती है–

"अष्टविधकर्म चयरिक्तीकरणात् चारित्रम्।"–आठ प्रकार के कर्मों के चय (समूह) को रिक्त–खाली करने की साधना चारित्र है। (विशेषावश्यकभाष्य जिनभद्रगणि)

चारित्र के भेद–आचार्यों ने विविध अपेक्षाओं से चारित्र के अनेक भेद बताये हैं–

एक भेद–सांसारिक प्रवृत्तियों से निवृत्ति रूप चारित्र एक है।

दो भेद–व्यवहार और निश्चय दृष्टि से चारित्र के दो भेद हैं। इन्द्रिय–संयम तथा प्राणि–संयम रूप चारित्र के दो भेद होते हैं।

तीन भेद–औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक चारित्र।

चार भेद–सराग संयम और वीतराग संयम (छद्मस्थ का) अयोग चारित्र और सयोग चारित्र (वीतराग का)।

पाँच भेद–प्रस्तुत सूत्र में बताये हैं।

इसी तरह निवृत्ति रूप परिणामों की तरतमता की अपेक्षा चारित्र के संख्यात, असंख्यात और अनन्त भेद हो सकते हैं।

(१) **सामायिकचारित्र**–आगमों के व्याख्याकार आचार्यों का कथन है कि वास्तव में तो सामायिक रूप चारित्र एक ही प्रकार का है। क्योंकि समस्त सावद्य प्रवृत्तियों का त्याग करना और रागरहित आत्मा का 'सम अवस्था'–समभाव में स्थित रहना, सामायिक है और यही चारित्र है। फिर भी प्रायश्चित्त, विशिष्ट तपश्चरण और विशेष निर्मलता की दृष्टि से यहाँ उसके पाँच भेद बताये हैं। इनमें से सामायिक चारित्र के दो भेद हैं–

(क) इत्वरकालिक (अल्पकालिक) सामायिकचारित्र–प्रथम व अन्तिम तीर्थंकरों के शासन में जब तक पाँच महाव्रतों का आरोपण नहीं किया जाता, तब तक जघन्य ७ दिन, मध्यम ४ मास और उत्कृष्ट ६ मास तक सामायिकचारित्र में रखा जाता है। उसके बाद छेदोपस्थापनीय (बड़ी दीक्षा) चारित्र अंगीकार किया जाता है।

(ख) यावत्कथिक (यावज्जीवन)–बीच के २२ तीर्थंकरों के शासन में सामायिकचारित्र यावज्जीवन काल का होता है। क्योंकि इन तीर्थंकरों के शिष्यों को दूसरी बार सामायिकचारित्र नहीं दिया जाता। प्रथम बार में अंगीकृत मुनि–दीक्षा ही उनके जीवनभर के लिए होती है।

(२) **छेदोपस्थापनीयचारित्र**–छेद + उपस्थापन = जिस चारित्र में पूर्व पर्याय का छेदन (काट) कर पुनः महाव्रतों का आरोपण किया जाता है उसे छेदोपस्थापनीय कहते हैं। इसके दो भेद हैं–

(क) सातिचार–व्रत भंग हो जाने पर या दोष सेवन करने पर उसकी शुद्धि करके पुनः महाव्रतारोपण करना। यह प्रथम व अन्तिम तीर्थंकरों के शासन में ही होता है।

(ख) निरतिचार–प्रथम दीक्षा के बाद (इत्वर सामायिक वाले मुनियों को) पुनः महाव्रतारोपण कराना (बड़ी दीक्षा देना) अथवा एक तीर्थ से दूसरे तीर्थ में जाने वाले साधुओं को महाव्रतारोपण कराना।

(३) **परिहारविशुद्धिचारित्र**–जिस चारित्र साधना में 'परिहार' अर्थात् तप विशेष द्वारा कर्म निर्जरा रूप विशेष शुद्धि होती है, वह परिहार + विशुद्धिचारित्र है।

मलधारीया वृत्ति के आधार पर आचार्य श्री आत्माराम जी म. ने परिहारविशुद्धिचारित्र की निम्न विधि का वर्णन किया है–

परिहारविशुद्धिचारित्र की विधि–स्वयं तीर्थंकर भगवान के समीप या तीर्थंकर भगवान के समीप रहकर जिसने पहले परिहारविशुद्धिचारित्र अंगीकार किया है, उस साधु के पास यह चारित्र अंगीकार किया जाता है। परिहार तप ९ साधुओं का गण अंगीकार करता है। इनमें से ४ साधु तप ग्रहण करते हैं, जो **पारिहारिक** कहलाते हैं। इनमें से चार परस्पर वैयावृत्य (सेवा) करते हैं, जो **आनुपारिहारिक** कहलाते हैं। एक साधु कल्पस्थित होता है जो गुरु रूप में रहता है, जिसके पास पारिहारिक एवं आनुपारिहारिक साधु आलोचना, वन्दना, प्रत्याख्यान करते हैं। वह सभी समाचारी का पालन करता है। पारिहारिक साधु ग्रीष्म ऋतु में जघन्य एक उपवास, मध्यम बेला (दो उपवास) और उत्कृष्ट तेला (तीन उपवास) तप करते हैं तथा शिशिर ऋतु में जघन्य बेला, मध्यम तेला और उत्कृष्ट चौला (४ उपवास) तप करते हैं। इसी प्रकार वर्षाकाल में जघन्य तेला, मध्यम चौला और उत्कृष्ट पचौला (५ उपवास) तप करते हैं। शेष चार आनुपारिहारिक और कल्पस्थित ये पाँचों ही साधु प्रायः प्रतिदिन आहार करते हैं, उपवास आदि नहीं करते। आहार भी आयंबिल के सिवाय और कुछ नहीं करते अर्थात् प्रतिदिन लगातार आयंबिल ही करते हैं। इस प्रकार पारिहारिक साधु छह मास तक तप करते हैं। छह मास तक तप करने के बाद वे (पारिहारिक साधु) आनुपारिहारिक बन जाते हैं। अर्थात्–पारिहारिकों की वैयावृत्य करने वाले हो जाते हैं और जो पहले वैयावृत्य (आनुपारिहारिक) करते थे, वे अब पारिहारिक बन जाते हैं और छह मास तक पूर्ववत् तप करते हैं।

छह मास तप करने के बाद वे आनुपारिहारिक (वैयावृत्यशील) बन जाते हैं, अर्थात् तप करने लग जाते हैं। यह क्रम भी पूर्ववत् छह मास तक चलता है। इसी प्रकार ८ साधुओं के द्वारा तप कर लेने पर एक को गुरुपद पर स्थापित किया जाता है और शेष ७ वैयावृत्य करते हैं और गुरुपद पर रहा हुआ साधु तप करना शुरू करता है। यह भी छह मास तक लगातार तप करता है। यों १८ मास में इस तप का कल्प पूर्ण होता है। परिहार तप के पूर्ण होने पर या तो वे साधु इसी कल्प को पुनः प्रारम्भ करते हैं या जिनकल्प धारण कर लेते हैं, या फिर वे वापस गच्छ में आ जाते हैं। इस प्रकार ये तीन रास्ते हैं, उनके लिए। यह चारित्र (कल्प) सिर्फ छेदोपस्थापनिकचारित्र वालों के ही होता है, दूसरों के नहीं।

परिहारविशुद्धिचारित्र के दो भेद हैं–**(क) निर्विश्यमानक** (आसेव्यमानक) तप करने वाले साधु, तथा **(ख) निर्विष्टकायिक**–सेवा करने वाले तथा आलोचना कराने वाले गुरु का चारित्र।

(४) सूक्ष्मसंपरायचारित्र–संपराय का अर्थ है–क्रोधादि कषाय। जिस चारित्र में संज्वलन आदि सूक्ष्म कषायों का अंश विद्यमान हो। इसके भी दो भेद हैं–

(क) संक्लिश्यमानक–उपशम श्रेणी से गिरते हुए साधु के परिणाम संक्लेशयुक्त होते हैं, अतः उसका चारित्र संक्लिश्यमानक है।

तपाराधक–पारिहारिक

चित्र परिचय १६

Illustration No. 16
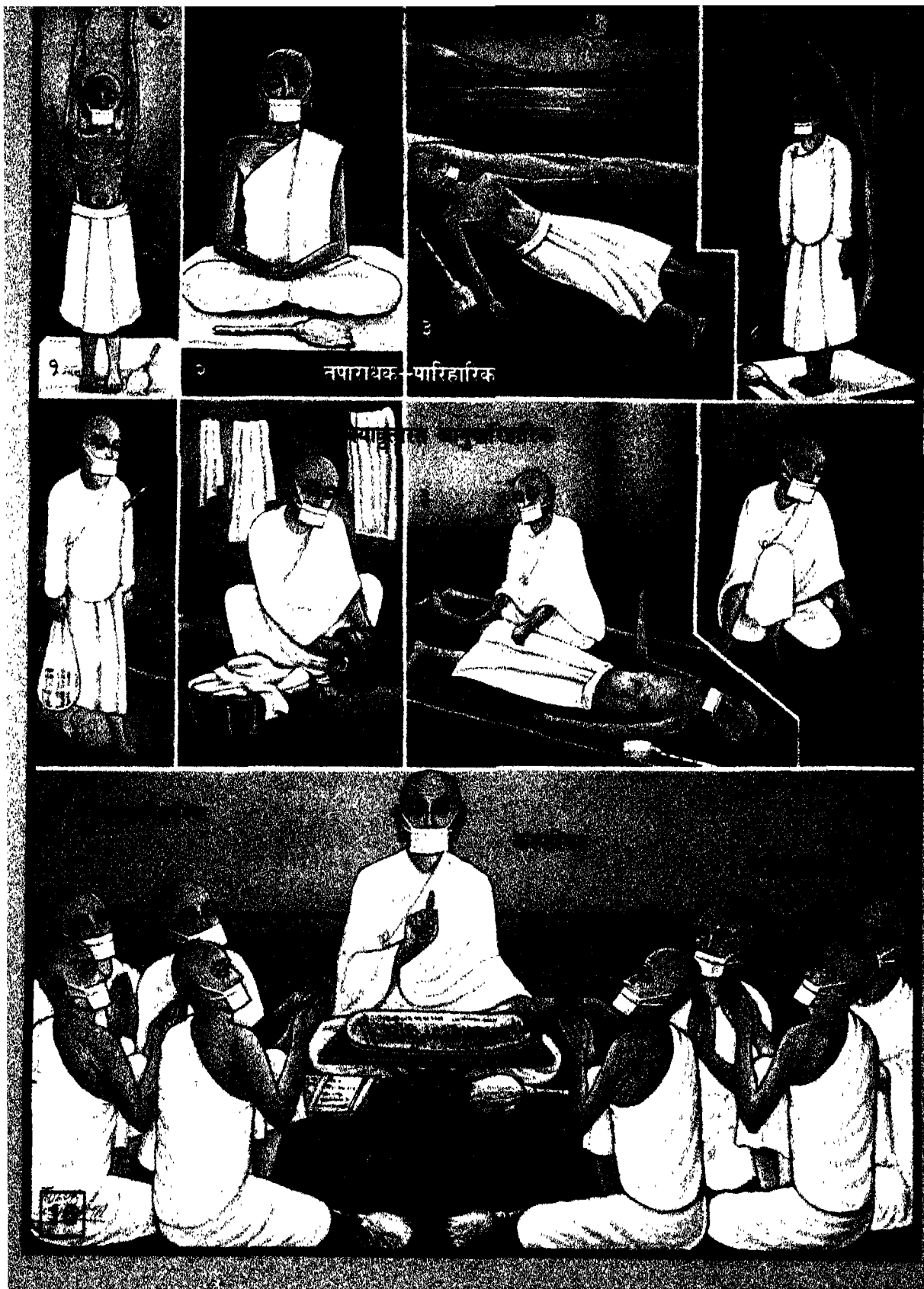
परिहारविशुद्धि चारित्र की आराधना

परिहारविशुद्धि चारित्र की आराधनाकाल में ६ मास तक चार मुनि तप करते हैं वे **पारिहारिक** तथा चार उनकी वैयावृत्य करते हैं वे **आनुपारिहारिक** कहलाते हैं। गुरु स्थान पर आसीन मुनि **कल्पस्थित**, जो उनको प्रत्याख्यान, आलोचना आदि कराते हैं। यह तप आराधना १८ मास में पूर्ण होती है।

—सूत्र ४७२, पृष्ठ ३१०

PROCEDURE OF PARIHARAVISHUDDHI CHARITRA

During this practice four ascetics actually perform the austerities for 6 months and they are called *Pariharik*. Four other ascetics render services and are called *Anupariharik*. An ascetic who acts like a guru and supervises all activities including the rituals of critical review, paying homage and atonement is called *Kalpasthit*. This practice is concluded in 18 months.

—Aphorism 472, p. 310

(ख) **विशुद्ध्यमानक**–उपशम श्रेणी तथा क्षपक श्रेणी पर चढ़ते हुए साधु के परिणाम उत्तरोत्तर विशुद्ध होते हैं, उसका चारित्र।

(५) **यथाख्यातचारित्र**–कषायोदय का सर्वथा अभाव होने से अतिचाररहित विशुद्ध चारित्र। इसके दो भेद हैं–

(क) **छाद्मस्थिक**–११वें गुणस्थानवर्ती छद्मस्थ मुनि का चारित्र–इसमें मोह सर्वथा क्षीण नहीं होता, उपशान्त रहता है। अतः यह प्रतिपाति कहा जाता है।

(ख) **कैवलिक**–बारहवें गुणस्थान में प्रवेश करते ही मोह क्षीण हो जाता है। फिर वह आगे १३वें तथा १४वें गुणस्थान में ही पहुँचता है। क्षीण मोह मुनि का चारित्र अप्रतिपाति है। पाँच चारित्र के सम्बन्ध में विस्तृत वर्णन के लिए ज्ञान मुनि कृत हिन्दी टीका पृ. ८१०-८१८ तथा जैन सिद्धान्त बोल संग्रह, भाग १ देखना चाहिए।

॥ आगम प्रमाणपद प्रकरण समाप्त ॥

CHARITRA GUNA PRAMANA

472. (Q.) What is this *Charitra Guna Pramana* (standard of validation by conduct-attributes)?

(Ans.) *Charitra Guna Pramana* (standard of validation by conduct-attributes) is of five kinds—(1) *Samayik Charitra Guna Pramana* (standard of validation by attributes of conduct of abstinence from all sinful activities including killing of living beings), (2) *Chhedopasthaniya Charitra Guna Pramana* (standard of validation by attributes of conduct of re-initiation after rectifying faults), (3) *Pariharavishuddhi Charitra Guna Pramana* (standard of validation by attributes of conduct of higher austerities leading to purity), (4) *Sukshmasamparaya Charitra Guna Pramana* (standard of validation by attributes of conduct of the level where only residual subtle passions exist), (5) *Yathakhyat Charitra Guna Pramana* (standard of validation by attributes of conduct defined as perfect).

(1) *Samayik Charitra Guna Pramana* is of two kinds—(a) *Itvarik* (temporary), and (b) *Yavatkathit* (life-long).

(2) *Chhedopasthaniya Charitra Guna Pramana* is of two kinds—(a) *Satichar* (with rectification of faults), and (b) *Niratichar* (without rectification of faults as no faults appear).

(3) *Pariharavishuddhi Charitra Guna Pramana* is of two kinds—(a) *Nirvishyamanak* (conduct of the ascetic observing austerities), and (b) *Nirvishtakayik* (conduct of the serving and supervising ascetics).

(4) *Sukshmasamparaya Charitra Guna Pramana* is of two kinds—(a) *Sanklishyamanak* (tending to deteriorate), and (b) *Vishudhyamanak* (tending to get purified).

(5) *Yathakkhyat Charitra Guna Pramana* is of two kinds—(a) *Pratipati* (with chances of falling), and (b) *Apratipati* (without chances of falling). Or (a) *Chhadmastik* (related to the state of bondage), and (b) *Kaivalik* (related to the state of omniscience).

This concludes the description of *Charitra Guna Pramana* (standard of validation by conduct-attributes). This concludes the description of *Jiva Guna Pramana* (standard of validation of the living or soul by attributes). This also concludes the description of *Guna Pramana* (standard of validation by attributes).

Elaboration—While describing *charitra* (conduct) it is important to first understand the meaning of the word. *Acharyas* have given various definitions of *charitra* in context of etymology and meaning.

The definition—The verbal meaning given by Maladhari Hemachandra, the commentator (*Vritti*), is—following which man behaves in a pleasant (excellent) manner is called *charitra* (conduct). (*Vritti* leaf 201)

The following elaboration further clarifies the meaning or the idea contained—

The practice of getting rid of the heap of eight types of *karmas* is called *charitra* (ascetic-conduct). (*Visheshavashyak Bhashya* by Jinabhadragani)

Kinds of *charitra*—From different angles different categories have been stated by *acharyas*—

One kind—The *charitra* (ascetic-conduct) of renouncing mundane indulgences is of single kind.

Two kinds—From empirical and transcendental viewpoints *charitra* (ascetic-conduct) is of two kinds. Two kinds are also discipline of the sense organs and discipline in behaviour with beings.

Three kinds—*Aupashamik charitra* (ascetic-conduct leading to pacification of *karmas*), *kshayik charitra* (ascetic-conduct leading to extinction of *karmas*) and *kshayopashamik charitra* (ascetic-conduct leading to pacification-cum-extinction of *karmas*).

Four kinds—*Sarag* (with attachment) and *Vitarag* (without attachment in case of *Chhadmasth*); *Ayoga* (not involving mind, speech and body activities) and *Sayoga* (involving activities of mind, speech and body) in case of omniscients.

Five kinds—As mentioned in this aphorism.

This way there can be countable, innumerable and infinite kinds of conduct depending on the degree of detachment.

(1) *Samayik Charitra*—The *acharyas* who have written commentaries on *Agams* say that *charitra* (ascetic-conduct) in the form of *Samayik* (equanimity), in fact, is only of one kind. This is because, to renounce all sinful attitudes and indulgences and maintain a detached and equanimous state of the soul is called *Samayik;* and the definition of *charitra* (ascetic-conduct) is also the same. However, here five categories of *charitra* (ascetic-conduct) have been classified based on atonement, special austerities and higher levels of purity. Of these *Samayik Charitra* is of two kinds—

(a) *Itvarik* or *Itvarkalik* (temporary or for a limited period)—During the period of influence of the first and the last *Tirthankars,* prior to accepting five great vows an initiate accepts *Samayik Charitra* temporarily for a limited duration of seven days or four months or six months. After completion of this period he is finally initiated as an ascetic for life. At this point he accepts the *Chhedopasthapaniya Charitra.*

(b) *Yavatkathit* (life-long)—During the period of influence of the remaining twenty two *Tirthankars* the initiation as an ascetic into the *Samayik Charitra* is for the duration of life right at the first instance. There is no probation-type short-term initiation.

(2) *Chhedopasthaniya Charitra*—When earlier mode or status of initiation is rectified and the person is re-initiated into the five great vows it is called *Chhedopasthaniya Charitra.* This is of two kinds—

(a) *Satichar*—To get re-initiated after rectifying and atoning for committed faults or breaking vows. This practice prevails only during the period of influence of the first and last *Tirthankars.*

(b) *Niratichar*—To get re-initiated after the end of the periodic temporary initiation. This is also done when an ascetic shifts from one *Tirth* (religious ford to another), as in case of the ascetics of the tradition of *Parshvanath* shifting to that of *Mahavir*.

(3) *Pariharavishuddhi Charitra*—The conduct where higher purity (*vishuddhi*) of soul by way of shedding *karmas* is pursued through specific rigorous austerities (*parihar*) is called *Pariharavishuddhi Charitra*.

On the basis of the commentary (*Vritti*) by Maladhari Hemachandra, Acharya Atmaram ji M. has described the following procedure of *Pariharavishuddhi Charitra*—

This *charitra* is accepted under the guidance of the *Tirthankar* himself or some ascetic who has successfully followed *Pariharavishuddhi Charitra* under the *Tirthankar*. It is accepted and performed in a batch of nine ascetics. Of these, four actually perform the austerities and are called *Pariharik*. Four other ascetics render services and look after the needs of the actual performers; they are called *Anupariharik*. All these activities are supervised and guided by the ninth ascetic who acts like a *guru* and is called *Kalpasthit*. He observes the complete ascetic-praxis and the other ascetics perform the rituals of critical review, paying homage and atonement. The *Pariharik* ascetics observe one, two or three day fasting during the summer season; two day, three day or four day fasting during the winter season; and three day, four day or five day fasting during the monsoon season. The remaining five, four *Anupariharik* and one *Kalpasthit*, eat almost everyday avoiding any fasting. During this six month period the only food all these nine ascetics eat is the *Ayambil* food (food cooked with a single ingredient even without any salt or other condiments and taken once a day). This continues for six months, after which the functions of *Pariharik* and *Anupariharik* ascetics are interchanged for the next six months.

After this, in the thirteenth month, one of the eight becomes *Kalpasthitik* ascetic or the *guru* and the remaining seven attend to him. For next six months this *guru* performs the austerities. Thus this specific practice is concluded in 18 months. After its completion the ascetics either commence it once again or accept *Jinakalp* (even higher level of austerities) or they may return to their parent *Gachh* (sect).

These are the three paths open to such ascetics. This practice is meant only for those at the *Chhedopasthaniya Charitra* level and none other.

As already explained, this is of two kinds—**(a)** ***Nirvishyamanak*** (conduct of the ascetic observing austerities), and **(b)** ***Nirvishtakayik*** (conduct of the serving and supervising ascetics).

(4) ***Sukshmasamparaya Charitra***—*Samparaya* means passions (anger, conceit, deceit and greed). The *Charitra* (ascetic-conduct) where the residue of subtle passions continues to exist is called *Sukshmasamparaya Charitra.* This is of two kinds—

(a) ***Sanklishyamanak***—An ascetic tending to fall from the higher levels of state of pacification of *karmas (Upasham Shreni)* has a tendency of continuously tarnishing or deteriorating attitude; the *Charitra* (ascetic-conduct) of such individual is *Sanklishyamanak.*

(b) ***Vishudhyamanak***—An ascetic tending to rise on the higher levels of state of pacification of *karmas (Upasham Shreni)* and extinction of *karmas (Kshapak Shreni)* has a tendency of progressively purifying attitude; the *Charitra* (ascetic-conduct) of such individual is *Vishudhyamanak.*

(5) ***Yathakhyat Charitra***—In complete absence of fruition of passions the perfect *Charitra* (ascetic-conduct) free of any transgressions is *Yathakhyat Charitra.* This is of two kinds—

(a) ***Chhadmastik***—This is the *Charitra* (ascetic-conduct) of a *Chhadmast* ascetic (in the state of bondage) at the eleventh *Gunasthan* (level of purity of soul). As fondness is only pacified and not completely extinct here, there are chances of his regression or fall. Therefore it is also called *Pratipati.*

(b) ***Kaivalik***—As the aspirant reaches the twelfth *Gunasthan* (level of purity of soul) the fondness reduces to very subtle level. From here he only progresses to thirteenth and fourteenth *Gunasthans* (levels of purity of soul). There is no chance of his regression or fall. Therefore it is also called *Apratipati.* (for more details refer to *Tika of Anuyogadvar Sutra* by Shri Jnana Muni, p. 810-818)

● END OF THE DISCUSSION ON AGAM PRAMANA ●

नयप्रमाण-प्रकरण
THE DISCUSSION ON NAYA PRAMANA

नयप्रमाण

४७३. से किं तं नयप्पमाणे ?

नयप्पमाणे तिविहे पण्णत्ते। तं जहा–पत्थयदिट्ठंतेणं वसहिदिट्ठंतेणं पएसदिट्ठंतेणं।

४७३. (प्र.) नयप्रमाण क्या है?

(उ.) नयप्रमाण का स्वरूप तीन दृष्टान्तों द्वारा स्पष्ट किया गया है। जैसे कि–(१) प्रस्थक के दृष्टान्त द्वारा, (२) वसति के दृष्टान्त द्वारा, और (३) प्रदेश के दृष्टान्त द्वारा।

NAYA PRAMANA

473. (Q.) What is this *naya pramana* ?

(Ans.) *Naya pramana* (standard of validation of viewpoints) is said to be of three kinds—(explained by—) (1) *Prasthak dristant* (example of wooden measuring pot), (2) *Vasati dristant* (example of an abode), and (3) *Pradesh dristant* (example of space-point).

प्रस्थकदृष्टान्त द्वारा नय निरूपण

४७४. से किं तं पत्थगदिट्ठंतेणं ?

पत्थगदिट्ठंतेणं से जहानामए केइ पुरिसे परसुं गहाय अडविहुत्ते गच्छेज्जा, तं च केइ पासित्ता वदेज्जा–कत्थ भवं गच्छसि ? अविसुद्धो नेगमो भणति–पत्थगस्स गच्छामि।

तं च केइ छिंदमाणं पासित्ता वइज्जा–किं भवं छिंदसि ? विसुद्धो नेगमो भणति–पत्थयं छिंदामि।

तं च केइ तच्छेमाणं पासित्ता वदेज्जा–किं भवं तच्छेसि ? विसुद्धतराओ णेगमो भणति–पत्थयं तच्छेमि।

तं च केइ उक्किरमाणं पासित्ता वदेज्जा–किं भवं उक्किरसि ? विसुद्धतराओ णेगमो भणति–पत्थयं उक्किरामि।

तं च केइ लिहमाणं पासेत्ता वदेज्जा–किं भवं लिहसि ? विसुद्धतराओ णेगमो भणति–पत्थयं लिहामि।

एवं विसुद्धतरागस्स णेगमस्स नामाउडिओ पत्थओ।

एवमेव ववहारस्स वि।

संगहस्स चिओ मिओ मिज्जसमारूढो पत्थओ।

उजुसुयस्स पत्थओ वि पत्थओ मिज्जं पि से पत्थओ।

तिण्हं सद्दणयाणं पत्थयाहिगारजाणओ पत्थओ जस्स वा वसेणं पत्थओ निप्फज्जइ। से तं पत्थयदिट्ठंतेणं।

४७४. (प्र.) प्रस्थकदृष्टान्त (द्वारा प्ररूपित नयप्रमाण) क्या है?

(उ.) जैसे कोई पुरुष परशु (कुल्हाड़ी) लेकर वन की ओर जाता है। उसे देखकर किसी ने पूछा–"आप कहाँ जा रहे हैं?" तब अविशुद्ध नैगमनय के मतानुसार उसने कहा–"प्रस्थक लेने के लिए जा रहा हूँ।"

फिर वृक्ष को छेदन करते–काटते हुए देखकर कोई कहता है–"आप क्या काट रहे हैं?" तब उसने विशुद्ध नैगमनय के अनुसार उत्तर दिया–"मैं प्रस्थक काट रहा हूँ।"

तदनन्तर कोई उस लकड़ी को छीलते देखकर पूछता है–"आप यह क्या छील रहे हैं?" तब विशुद्धतर नैगमनय की दृष्टि से उसने कहा–"प्रस्थक छील रहा हूँ।"

तत्पश्चात् कोई काष्ठ के मध्य भाग को उत्कीर्ण करते (उकेरते) देखकर पूछता है–"आप यह क्या उकेर रहे हैं।" तब विशुद्धतर नैगमनय के अनुसार उसने उत्तर दिया–"मैं प्रस्थक उकेर रहा हूँ।"

फिर कोई उस उत्कीर्ण काष्ठ पर प्रस्थक का आकार लिखते देखकर कहता है–"आप यह क्या लिख रहे हैं?" तो विशुद्धतर नैगमनयानुसार उत्तर देता है–"प्रस्थक अंकित कर रहा हूँ।"

इसी प्रकार से जब तक सम्पूर्ण प्रस्थक बनकर तैयार न हो जाये, तब तक प्रस्थक सम्बन्धी प्रश्नोत्तर करना चाहिए।

इसी प्रकार व्यवहारनय भी पूर्वोक्त सभी अवस्थाओं को प्रस्थक मानता है।

संग्रहनय के मत से धान्य से भरा हुआ प्रस्थक ही प्रस्थक कहा जाता है।

ऋजुसूत्रनय के मत से प्रस्थक भी प्रस्थक है और मेय वस्तु (उससे मापी गई धान्यादि वस्तु) भी प्रस्थक है।

तीनों शब्दनयों (शब्द, समभिरूढ़ और एवंभूत) के मतानुसार प्रस्थक के अर्थाधिकार को जानने वाले व्यक्ति को अथवा प्रस्थक के स्वरूप के परिज्ञान में उपयुक्त जीव अथवा प्रस्थककर्त्ता का वह उपयोग जिससे प्रस्थक निष्पन्न होता है उसमें वर्तमान कर्त्ता प्रस्थक है।

इस प्रकार प्रस्थक के दृष्टान्त द्वारा नयप्रमाण का स्वरूप जानना चाहिए।

विवेचन—जैनदर्शन अनेकान्तवादी दर्शन है। इसकी मान्यता है कि संसार में प्रत्येक वस्तु अनन्त धर्मात्मक होती है। एक व्यक्ति एक बार में वस्तु के सभी धर्मों (गुणों) का कथन नहीं कर सकता, एक बार में उसके एक ही धर्म का कथन किया जा सकता है और बाकी धर्मों के प्रति मौन या तटस्थभाव रखा जाता है। इस शैली को जैनदर्शन में 'नय' कहा जाता है। जैसे वृत्तिकार मलयगिरि ने कहा है—"**अनन्तधर्मणो वस्तुनः एकांशेन नयनं नयः।**"—अनन्त धर्मात्मक वस्तु के किसी एक पक्ष का निरूपण करना तथा अन्य पक्षों के प्रति तटस्थ या मौन रहना नय है। यहाँ इसे ही नयप्रमाण कहा गया है। नय का विस्तृत वर्णन आगे सूत्र ६०६ में किया गया है। यहाँ पर प्रासंगिक होने से संक्षेप में इसका वर्णन किया जाता है।

संक्षेप में नय के दो भेद हैं—द्रव्यार्थिकनय और पर्यायार्थिकनय। वस्तु में रहे समान गुण-धर्म का कथन करना अर्थात् अभेद को प्रधानता देने वाला द्रव्यार्थिकनय है तथा विशेषगामी विचार अथवा भेद को मुख्यता देने वाला पर्यायार्थिकनय है। द्रव्यार्थिक के तीन भेद हैं—(१) नैगम, (२) संग्रह, और (३) व्यवहार; तथा पर्यायार्थिक के चार भेद हैं—(४) ऋजुसूत्र, (५) शब्द, (६) समभिरूढ़, तथा (७) एवंभूत।

(१) **नैगमनय** का विषय सबसे विशाल है। वह लोक रूढ़ि के अनुसार सामान्य और विशेष सबका ग्रहण करता है। इसके अविशुद्ध, विशुद्ध और विशुद्धतर तीन भेद प्रस्तुत सूत्र में बताये हैं।

(२) **संग्रहनय** केवल सामान्य को ग्रहण करता है। भिन्न-भिन्न वस्तुओं या व्यक्तियों में रही भिन्नता को गौण करके सामान्य समानता का प्रतिपादन करना इसका विषय है।

(३) **व्यवहारनय** का क्षेत्र उससे भी सीमित है। संग्रहनय के अनुसार ग्रहीत वस्तुओं में व्यावहारिक प्रयोजन के लिए यह भेद करता है।

ये तीनों नय एक-दूसरे से क्रमशः संकुचित हैं। फिर भी तीनों सामान्य का ग्रहण करते हैं अतः द्रव्यार्थिक कहे जाते हैं।

(४) **ऋजुसूत्रनय**—यह भूत-भविष्य की उपेक्षा करके वर्तमान पर्याय को ही ग्रहण करता है। इसी सरलता के कारण इसे 'ऋजु' कहा है।

(५) **शब्दनय**—ये शब्द के अर्थ को नहीं, किन्तु भाव को प्रधानता देता है। शब्द के लिंग, कारक आदि भेदों के कारण अर्थ में भेद मानता है।

(६) **समभिरूढ़नय**–जो विचार शब्द के रूढ़ अर्थ पर निर्भर नहीं रहकर व्युत्पत्ति के अनुसार समान अर्थ वाले शब्दों में भी भेद करता है, वह समभिरूढ़नय है।

(७) **एवंभूतनय**–शब्दार्थ के अनुसार क्रिया होने पर ही उस वस्तु को तद्रूप स्वीकार करता है। ये चारों उत्तरोत्तर संकुचित हैं। इन्हें पर्यायार्थिकनय कहा जाता है।

प्रस्तुत सूत्रों में नयप्रमाण को तीन दृष्टान्तों द्वारा समझाया गया है। उस समय मगध देश में प्रचलित धान्य मापने के एक 'पात्र' को प्रस्थक कहा जाता था। कल्पना करो कोई व्यक्ति 'प्रस्थक' बनाने के उद्देश्य से काठ लाने के लिए जंगल में जाता है। कोई रास्ते में उसे पूछता है–"तुम कहाँ जा रहे हो ?" वह कहता है–"मैं प्रस्थक के लिए जा रहा हूँ।" अविशुद्ध नैगमनय की दृष्टि से उसका यह उत्तर सही है। काठ कारण है और प्रस्थक कार्य है। कारण में कार्य का उपचार करना, यह नैगमनय का विषय है।

काष्ठ काटते समय पूछने पर वह कहता है–"मैं प्रस्थक काट रहा हूँ।" यह कथन विशुद्ध नैगमनय है। काष्ठ काटने और प्रस्थक बनाने में पहले की अपेक्षा कुछ निकटता है। काठ को छीलते समय–"मैं प्रस्थक को छील रहा हूँ।" यह उत्तर विशुद्धतर नैगमनय है।

व्यवहारनय नैगमनय के समान ही है। किन्तु संग्रहनय के अनुसार जो प्रस्थक धान्य से भरा हो, उसे ही प्रस्थक कहना चाहिए।

ऋजुसूत्र के अनुसार प्रस्थक और उसके द्वारा मापी गई वस्तु दोनों को ही प्रस्थक कहा जा सकता है।

अन्तिम तीनों शब्दनयों के अनुसार प्रस्थक के अर्थ को जानने वाला ही वास्तव में प्रस्थक कहलाता है अथवा उसके उपयोग–चैतन्य व्यापार को ही प्रस्थक माना जा सकता है।

प्रस्तुत सूत्र में नयों की परिभाषा नहीं करके नयों का प्रयोजन तथा उपयोग की दृष्टि से वर्णन है, जिसमें प्रस्थक, वसति और प्रदेश के तीन दृष्टान्त देकर नय शैली को उदाहरणों के साथ स्पष्ट कर दिया है।

PRASTHAK DRISTANT

474. (Q.) What is this *prasthak dristant* (example of wooden measuring pot) ?

(Ans.) *Prasthak dristant* (example of wooden measuring pot) is : For instance, a person goes into a forest carrying an axe. On seeing him someone asks—"Where do you go ?" He answers from *avishuddha Naigam naya* (the ambiguous co-ordinated viewpoint)—"I go for a *prasthak*." (it is a wooden measuring pot used as a measure for cereals in the Magadh country during that period).

Later, seeing him cutting a tree someone asks—"What do you cut ?" He answers from *vishuddha Naigam naya* (the

unambiguous or clear co-ordinated viewpoint)—"I cut a *prasthak* (wooden measuring pot)."

Then, seeing him chiseling the piece of wood someone asks—"What do you chisel ?" He answers from *vishuddhatar Naigam naya* (clearer co-ordinated viewpoint)—"I chisel a *prasthak* (wooden measuring pot)."

Then, seeing him carving the middle portion of the piece of wood someone asks—"What do you carve ?" He answers from *vishuddhatar Naigam naya* (still clear co-ordinated viewpoint)—"I carve a *prasthak* (wooden measuring pot)."

Then, seeing him engraving the carved piece of wood someone asks—"What do you engrave ?" He answers from *vishuddhatar Naigam naya* (still clear co-ordinated viewpoint)—"I engrave a *prasthak* (wooden measuring pot)."

This way questions and answers should be stated till the process of making a *prasthak* (wooden measuring pot) is concluded.

Same is true for *Vyavahar naya* (particularized viewpoint). (In other words the particularized viewpoint also accepts the aforesaid stages involved in the process of making a *prasthak* as *prasthak*).

According to *Samgraha naya* (generalized viewpoint) only a *prasthak* (wooden measuring pot) filled with grains is called *prasthak* (wooden measuring pot).

According to the *Rijusutra naya* (precisionistic viewpoint) a *prasthak* is, indeed, a *prasthak* but the measured thing (grains etc.) is also a *prasthak.*

According to the three *Shabda nayas* (verbal viewpoints) the person who knows the purview of the meaning of the word *prasthak* or he who is conversant with and involved in the use and making of a *prasthak* is called a *prasthak.*

This concludes the description of *prasthak dristant* (example of wooden measuring pot).

Elaboration—Jain philosophy is the philosophy of non-absolutism. It believes that everything in this world has infinite properties. No person

can describe all the properties and attributes of a thing at once. At one moment only one attribute can be stated and while doing that other attributes either remain untold or are ignored. This system of logic is called the *naya* system (system of viewpoints) in Jain philosophy. As has been stated by Malayagiri the commentator (*Vritti*)—To explicate one facet of a multifaceted thing and remain uninvolved with or silent about the other facets is called *naya*, Here this is taken to be *naya pramana* (standard of validation of viewpoints).

In simple terms there are two kinds of *naya*—*Dravyarthik naya* (existent material aspect) and *Paryayarthik naya* (transformational aspects). The first deals with the common properties and attributes of things and the second with the specific or special attributes. The first has assimilative approach and the second has analytical or reductionist approach. *Dravyarthik naya* (existent material aspect) has three categories—(1) *Naigam naya* (co-ordinated viewpoint), (2) *Samgraha naya* (generalized viewpoint), and (3) *Vyavahar naya* (particularized viewpoint); and *Paryayarthik naya* (transformational aspects) has four categories—(4) *Rijusutra naya* (precisionistic viewpoint), (5) *Shabda naya* (verbal viewpoint), (6) *Samabhirudha naya* (conventional etymological viewpoint), and (7) *Evambhuta naya* (viewpoint of exactness or that related to words used in original derivative sense and significance).

(1) *Naigam naya* (co-ordinated viewpoint) has the widest range. It accepts everything conventional, common or special. Here its three sub-categories have been mentioned—ambiguous, clear and more clear.

(2) *Samgraha naya* (generalized viewpoint) covers the generalities. It ignores the differences in different things or persons and establishes the common similarities.

(3) *Vyavahar naya* (particularized viewpoint) has even more limited scope. It separates the things covered in *Samgraha naya* (generalized viewpoint) from utilitarian angle based on specific use.

Although these three viewpoints have progressively diminishing range they still cover the generalities and are, therefore, called *Dravyarthik naya* (existent material aspect).

(4) *Rijusutra naya* (precisionistic viewpoint or that related to specific point or period of time) ignores past and future and covers only the

present state. For this inherent simplicity it is called *Rijusutra* (*riju* being minute or small).

(5) *Shabda naya* (verbal viewpoint or that related to language and grammar) is not much concerned with the meaning of a word but the message it conveys. It accepts variance in meaning based on grammatical attributes like gender, tense, number etc.

(6) *Samabhirudha naya* (conventional etymological viewpoint)—The standpoint that examines different etymological meanings of synonyms even. For example Indra, Shakra and Purandar being names of the king of gods are synonymous but there etymological meaning are different. Indra is one who has grandeur, Shakra is one who has power and Purandar is one who destroys cities.

(7) *Evambhuta naya* (viewpoint of exactness or that related to words used in original derivative sense and significance)—The standpoint that calls for use of right word for right action and not otherwise. For example the term Indra should be used only when the context is of grandeur and not when he is worshipping.

In these aphorisms *naya pramana* (standard of validation of viewpoints) has been explained with the help of three examples or illustrations. *Prasthak* was the name given to a wooden measuring pot used as a measure for cereals in the Magadh country during that period. Consider a person going into a forest to fetch wood for making a *prasthak*. On the way someone asks—"Where do you go ?" He replies—"I am going for a *prasthak.*" His answer is correct from *avishuddha Naigam naya* (the ambiguous co-ordinated viewpoint). Wood is cause and *prasthak* is effect. To install effect on cause is the subject of *Naigam naya* (co-ordinated viewpoint).

Putting the same question while he is cutting a tree, his answer is—"I cut a *prasthak* (wooden measuring pot)." This is an example of *vishuddha Naigam naya* (the unambiguous or clear co-ordinated viewpoint). As compared to the earlier stage, he is nearer to the final act of producing a *prasthak*. Then while chiseling, his answer is—"I chisel a *prasthak* (wooden measuring pot)," conforms to *vishuddhatar Naigam naya* (clearer co-ordinated viewpoint).

Vyavahar naya (particularized viewpoint) is like *Naigam naya* (co-ordinated viewpoint) only. But according to *Samgraha naya*

(generalized viewpoint) only a *prasthak* (wooden measuring pot) filled with grains is called *prasthak* (wooden measuring pot).

According to the *Rijusutra naya* (precisionistic viewpoint) a *prasthak* is, indeed, a *prasthak* and the measured thing (grains etc.) is also a *prasthak.*

According to the three *Shabda nayas* (verbal viewpoints) the person who knows the purview of the meaning of the word *prasthak* or he who is conversant with and involved in the use and making of a *prasthak* is called a *prasthak.*

In this aphorism the *nayas* have not been defined but their purpose and use has been described. The *naya* system has been explained with the three examples of *prasthak* (wooden measuring pot), *Vasati* (abode), and *Pradesh* (space-point).

वसतिदृष्टान्त द्वारा नय निरूपण

४७५. से किं तं वसहिदिट्ठंतेणं ?

वसहिदिट्ठंतेणं से जहानामए केइ पुरिसे कंचि पुरिसं वदिज्जा, कहिं भवं वससि ? तत्थ अविसुद्धो णेगमो भणइ–लोगे वसामि।

लोगे तिविहे पण्णत्ते, तं जहा–उड्ढलोए, अधोलोए, तिरियलोए, तेसु सव्वेसु भवं वससि ? विसुद्धो णेगमो भणइ–तिरियलोए वसामि।

तिरियलोए जंबूद्दीवादीया सयंभूरमणपज्जवसाणा असंखेज्जा–दीव–समुद्दा पण्णत्ता, तेसु सव्वेसु भवं वससि ? विसुद्धतराओ णेगमो भणति–जंबुद्दीवे वसामि।

जम्बुद्दीवे दस खेत्ता पण्णत्ता, तं जहा–१. भरहे, २. एरवए, ३. हेमवए, ४. एरण्णवए, ५. हरिवस्से, ६. रम्मगवस्से, ७. देवकुरा, ८. उत्तरकुरा, ९. पुव्वविदेहे, १०. अवरविदेहे, तेसु सव्वेसु भवं यससि ? विसुद्धतराओ णेगमो भणति–भरहे वसामि।

भरहे वासे दुविहे पण्णत्ते, तं जहा–दाहिणड्ढभरहे य उत्तरड्ढभरहे य, तेसु सव्वेसु भवं वससि ? विसुद्धतराओ णेगमो भणति–दाहिणड्ढभरहे वसामि।

दाहिणड्ढभरहे अणेगाइं गाम–णगर–खेड–कब्बड–मडंब–दोणमुह–पट्टणा–ऽऽगर–संवाह–सण्णिवेसाइं, तेसु सव्वेसु भवं वससि ? विसुद्धतराओ णेगमो भणति–पाडलिपुत्ते वसामि।

पाडलिपुत्ते अणेगाइं गिहाइं, तेसु सव्वेसु भवं वससि ? विसुद्धतराओ णेगमो भणति–देवदत्तस्स घरे वसामि।

देवदत्तस्स घरे अणेगा कोट्ठगा, तेसु सव्वेसु भवं वससि ? विसुद्धतराओ णेगमो भणति–गब्भघरे वसामि।

एवं विसुद्धतरागस्स णेगमस्स वसमाणो वसति।

एवमेव ववहारस्स वि।

संगहस्स संथारसमारूढो वसति।

उज्जुसुयस्स जेसु आगासपएसेसु ओगाढो तेसु वसइ।

तिण्हं सद्दनयाणं आयभावे वसइ। से तं वसहिदिट्ठंतेणं।

४७५. (प्र.) जिसके द्वारा नयों का स्वरूप जाना जाता है वह वसतिदृष्टान्त क्या है ?

(उ.) वसति के दृष्टान्त द्वारा नयों का स्वरूप इस प्रकार है–जैसे किसी पुरुष ने किसी अन्य पुरुष से पूछा–"आप कहाँ रहते हैं ?" उसने अविशुद्ध नैगमनय के अनुसार उत्तर दिया–"मैं लोक में रहता हूँ।"

पुनः पूछा–"लोक के तो तीन भेद हैं–ऊर्ध्वलोक, अधोलोक, तिर्यग्लोक। तो क्या आप इन सबमें रहते हैं ?" विशुद्ध नैगमनय के अनुसार उसने कहा–"मैं तिर्यग्लोक में रहता हूँ।"

प्रश्नकर्त्ता ने पुनः प्रश्न किया–"तिर्यग्लोक में जम्बूद्वीप आदि स्वयंभूरमण समुद्र पर्यन्त असंख्यात द्वीप-समुद्र हैं। तो क्या आप इन सभी में रहते हैं ?" प्रत्युत्तर में विशुद्धतर नैगमनय के अभिप्रायानुसार उसने कहा–"मैं जम्बूद्वीप में रहता हूँ।"

प्रश्नकर्त्ता ने पुनः प्रश्न किया–"जम्बूद्वीप में दस क्षेत्र हैं, यथा–(१) भरत, (२) ऐरवत, (३) हैमवत, (४) ऐरण्यवत, (५) हरिवर्ष, (६) रम्यकवर्ष, (७) देवकुरु, (८) उत्तरकुरु, (९) पूर्वविदेह, और (१०) अपरविदेह। क्या आप इन दसों क्षेत्रों में रहते हैं ?" विशुद्धतर नैगमनय के अभिप्रायानुसार उसने उत्तर दिया–"मैं भरतक्षेत्र में रहता हूँ।"

प्रश्नकर्त्ता ने पुनः पूछा–''भरतक्षेत्र के दो विभाग हैं–दक्षिणार्धभरत और उत्तरार्धभरत। क्या आप उन दोनों विभागों में रहते हैं ?'' विशुद्धतर नैगमनय की दृष्टि से उसने उत्तर दिया–''दक्षिणार्धभरत में रहता हूँ।''

प्रश्नकर्त्ता ने पुनः पूछा–''दक्षिणार्धभरत में तो अनेक ग्राम, नगर, खेड, कर्वट, मडंब, द्रोणमुख, पट्टन, आकर, संवाह, सन्निवेश हैं। क्या आप उन सबमें रहते हैं ?'' विशुद्धतर नैगमनयानुसार उसने उत्तर दिया–''मैं पाटलिपुत्र में रहता हूँ।''

प्रश्नकर्त्ता ने पुनः पूछा–''पाटलिपुत्र में अनेक घर हैं। तो क्या आप उन सभी में निवास करते हैं ?'' तब विशुद्धतर नैगमनय की दृष्टि से उत्तर दिया–''देवदत्त के घर में बसता हूँ।''

प्रश्नकर्त्ता ने पुनः पूछा–''देवदत्त के घर में अनेक प्रकोष्ठ–कोठे (कमरे) हैं। तो क्या आप उन सबमें रहते हैं ?'' उसने विशुद्धतर नैगमनय के अनुसार उत्तर दिया–''(नहीं, मैं उन सबमें तो नहीं रहता, किन्तु) गर्भगृह में रहता हूँ।''

इस प्रकार विशुद्ध नैगमनय के मत से निवास करते हुए–वसते हुए को वसता हुआ माना जाता है।

व्यवहारनय का मंतव्य भी इसी प्रकार का है।

संग्रहनय के मतानुसार शय्या पर बैठे या लेटे हुए व्यक्ति को ही वसता हुआ कहा जा सकता है।

ऋजुसूत्रनय के मत से जितने आकाशप्रदेशों में व्यक्ति विद्यमान हैं, उनमें ही वसता हुआ माना जाता है।

तीनों शब्दनयों के अभिप्राय से आत्मभाव (अपने स्वरूप) में ही निवास होता है।

इस प्रकार वसति के दृष्टान्त द्वारा नयों का स्वरूप जानना चाहिए।

VASATI DRISTANT

475. (Q.) What is this *Vasati dristant* (example of an abode) ?

(Ans.) *Vasati dristant* (example of an abode) is : For instance a person asks another person—"Where do you live ?" He answers from *avishuddha Naigam naya* (the ambiguous co-ordinated viewpoint)—"I live in the *Lok* (universe)."

On further inquiry—"There are three divisions of the *Lok*—*Urdhva Lok* (heavens), *Adho Lok* (hells) and *Tiryag Lok* (middle

world). Do you live in all these ?" He answers from *vishuddha Naigam naya* (the unambiguous or clear co-ordinated viewpoint)—"I live in the middle world."

He is again asked—"In the middle world there are said to be innumerable continents and oceans starting from *Jambudveep* and ending in *Svayambhuraman* ocean. Do you live in all these ?" He answers from *vishuddhatar Naigam naya* (clearer co-ordinated viewpoint)—"I live in *Jambudveep*."

He is further asked—"In *Jambudveep* there are said to be ten regions—(1) Bharat, (2) Airavat, (3) Haimavat, (4) Airanyavat, (5) Harivarsh, (6) Ramyakvarsh, (7) Deva-kuru, (8) Uttar-kuru, (9) Purvavideh, and (10) Aparvideh. Do you live in all these ?" He answers from *vishuddhatar Naigam naya* (still clear co-ordinated viewpoint)—"I live in Bharat region."

He is asked again—"In *Dakshinardh* (Southern) Bharat there are many types of settlements like *gram* (village), *nagar* (city), *khet* (a settlement surrounded by a temporary mud wall), *karbat* (untidy and ragged settlement), *madamb* (a remote or isolated town), *dron-mukh* (a city connected by both waterways and roads), *pattan* (commercial city), *aakar* (a settlement near mines), *samvaha* (a castle like settlement atop hill) and *sannivesh* (a suburb). Do you live in all these ?" He answers from *vishuddhatar Naigam naya* (still clear co-ordinated viewpoint)—"I live in Pataliputra (name of a city)."

He is again asked—"In Pataliputra there are many houses. Do you live in them all ?" He answers from *vishuddhatar Naigam naya* (clearer co-ordinated viewpoint)—"I live in the house of Devadatt (name of a person)."

He is again asked—"In the house of Devadatt there are many rooms. Do you live in them all ?" He answers from *vishuddhatar Naigam naya* (clearer co-ordinated viewpoint)—"I live in the inner room."

This way according to *vishuddha Naigam naya* (the unambiguous or clear co-ordinated viewpoint) a person actually living in an abode is said to be living there.

Same is true for *Vyavahar naya* (particularized viewpoint).

According to *Samgraha naya* (generalized viewpoint) a person actually lying in or sitting on a bed is said to be living there (*vasati* means to settle in an abode and unless one makes himself comfortable on a bed he cannot be called settled).

According to the *Rijusutra naya* (precisionistic viewpoint) the person lives only in the space-points he occupies.

According to the three *Shabda naya* (verbal viewpoints) the person lives within his own self.

This concludes the description of *Vasati dristant* (example of an abode).

प्रदेशदृष्टान्त द्वारा नय निरूपण

४७६. से किं तं पदेसदिट्ठंतेणं ?

पदेसदिट्ठंतेणं णेगमो भणति–छण्हं पदेसो, तं जहा–१. धम्मपदेसो, २. अधम्मपदेसो, ३. आगासपदेसो, ४. जीवपदेसो, ५. खंधपदेसो, ६. देसपदेसो।

एवं वयंतं णेगमं संगहो भणति–जं भणसि–छण्हं पदेसो तं न भवइ।

कम्हा ? जम्हा जो देसपदेसो सो तस्सेव दव्वस्स।

जहा को दिट्ठंतो ?

दासेण मे खरो कीओ दासो वि मे खरो वि मे, तं मा भणाहि–छण्हं पएसो, भणाहि पंचण्हं पएसो, तं जहा–धम्मपएसो अधम्मपएसो आगासपदेसो जीवपएसो खंधपदेसो।

एवं वयंतं संगहं ववहारो भणइ–जं भणसि–पंचण्हं पएसो तं ण भवइ।

कम्हा ? जइ पंचण्हं गोट्ठियाणं केइ दव्वजाए सामण्णं, तं जहा–हिरण्णे वा सुवण्णे वा धणे वा धण्णे वा, तो जुत्तं वत्तुं जहा पंचण्हं पएसो ? तं मा भणाहि–पंचण्हं पएसो, भणाहि–पंचविहो पएसो, तं जहा–धम्मपदेसो अधम्मपदेसो आगासपदेसो जीवपदेसो खंधपदेसो।

एवं वदंतं ववहारं उज्जुसुओ भणति–जं भणसि–पंचविहो पदेसो तं न भवइ।

कम्हा ? जइ ते पंचविहो पएसो एवं ते एक्केक्को पएसो पंचविहो एवं ते पणुवीसतिविहो पदेसो भवति, तं मा भणाहि–पंचविहो पएसो, भणाहि–भइयव्वो पदेसो–सिया धम्मपदेसो सिया अधम्मपदेसो सिया आगासपदेसो सिया जीवपदेसो सिया खंधपदेसो।

एवं वयंतं उज्जुसुयं संपतिसद्दो भणति–जं भणसि भइयव्वो पदेसो तं न भवति।

कम्हा ? जइ ते भइयव्वो पदेसो एवं ते १. धम्मपदेसो वि सिया अधम्मपदेसो सिया आगासपदेसो सिया जीवपदेसो सिया खंधपदेसो, २. अधम्मपदेसो वि सिया धम्मपदेसो सिया आगासपएसो सिया जीवपएसो सिया खंधपएसो, ३. आगासपएसो वि सिया धम्मपदेसो सिया अहम्मपएसो सिया जीवपएसो सिया खंधपएसो, ४. जीवपएसो वि सिया धम्मपएसो सिया अधम्मपएसो सिया आगासपदेसो सिया खंधपएसो, ५. खंधपएसो वि सिया धम्मपदेसो सिया अधम्मपदेसो सिया आगासपदेसो सिया जीवपदेसो।

एवं ते अणवत्था भविस्सई, तं मा भणाहि–भइयव्वो पदेसो, भणाहि–धम्मे पदेसे से पदेसे धम्मे, अहम्मे पदेसे से पदेसे अहम्मे, आगासे पदेसे से पदेसे आगासे, जीव पदेसे से पदेसे णो जीवे, खंधे पदेसे से पदेसे णोखंधे।

एवं वयंतं सद्दणयं समभिरूढो भणति–जं भणसि–धम्मे पदेसे से पदेसे धम्मे जाव खंधे पदेसे से पदेसे नोखंधे तं न भवइ।

कम्हा ? एत्थ दो समासा भवंति, तं जहा–तप्पुरिसे य कम्मधारए य। तं ण णज्जइ कतरेणं समासेणं भणसि–किं तप्पुरिसेणं किं कम्मधारएणं? जइ तप्पुरिसेणं भणसि तो मा एवं भणाहि, अह कम्मधारएणं भणसि तो विसेसओ भणाहि–धम्मे य से पदेसे य से पदेसे धम्मे, अहम्मे य से पदेसे य से से पदेसे अहम्मे, आगासे य से पदेसे य से से से पदेसे आगासे, जीवे य से पदेसे य से से पदेसे नोजीवे, खंधे य से पदेसे य से से पदेसे नोखंधे।

एवं वयंतं संपयं समभिरूढं एवंभूओ भणइ–जं जं भणसि तं तं सव्वं कसिणं पडिपुण्णं निरवसेसं एगगहणगहितं देसे वि मे अवत्थू पदेसे वि मे अवत्थू। से तं पदेसदिट्ठंतेणं। से तं णयप्पमाणे।

॥ नयपमाणे त्ति पयं सम्मत्तं ॥

४७६. (प्र.) प्रदेशदृष्टान्त द्वारा प्रतिपादित नयों का स्वरूप क्या है?

(उ.) प्रदेशों के दृष्टान्त द्वारा नयों का स्वरूप इस प्रकार है–

नैगमनय कहता है–"छह द्रव्यों के प्रदेश होते हैं, जैसे–(१) धर्मास्तिकाय का प्रदेश, (२) अधर्मास्तिकाय का प्रदेश, (३) आकाशास्तिकाय का प्रदेश, (४) जीवास्तिकाय का प्रदेश, (५) स्कन्ध का प्रदेश, और (६) देश का प्रदेश।"

ऐसा कहने पर नैगमनय से संग्रहनय कहता है–"जो तुम कहते हो कि 'छहों के प्रदेश हैं', वह उचित नहीं है।"

"क्यों (नहीं है) ?"

"इसलिए कि जो देश का प्रदेश है, वह उसी द्रव्य का है (उससे भिन्न नहीं है)।"

"इसके लिए कोई दृष्टान्त है ?"

"हाँ, दृष्टान्त है। जैसे मेरे दास ने गधा खरीदा और दास मेरा है और गधा भी मेरा है। इसलिए यह मत कहो कि 'छहों के प्रदेश हैं', यह कहो कि 'पाँचों का प्रदेश है।' यथा–(१) धर्मास्तिकाय का प्रदेश, (२) अधर्मास्तिकाय का प्रदेश, (३) आकाशास्तिकाय का प्रदेश, (४) जीवास्तिकाय का प्रदेश, और (५) स्कन्ध का प्रदेश।"

संग्रहनय के ऐसा कहने पर व्यवहारनय ने कहा–"तुम कहते हो कि पाँचों के प्रदेश हैं, वह उचित नहीं है।"

"क्यों नहीं है ?"

प्रत्युत्तर में व्यवहारनय ने कहा–"जैसे पाँच गोष्ठिक पुरुषों (मित्रों या भागीदारों) का कोई द्रव्य सामान्य (सबके अधिकार का) है–हिरण्य, स्वर्ण, धन, धान्य आदि (वैसे ही पाँचों के प्रदेश सामान्य होते) तो तुम्हारा कहना उचित था कि पाँचों के प्रदेश हैं। (परन्तु ऐसा है नहीं) इसलिए ऐसा मत कहो कि 'पाँचों के प्रदेश हैं', किन्तु कहो–'प्रदेश पाँच प्रकार का है', जैसे–(१) धर्मास्तिकाय का प्रदेश, (२) अधर्मास्तिकाय का प्रदेश, (३) आकाशास्तिकाय का प्रदेश, (४) जीवास्तिकाय का प्रदेश, और (५) स्कन्ध का प्रदेश।"

व्यवहारनय के ऐसा कहने पर ऋजुसूत्रनय कहता है–"तुम भी जो कहते हो कि 'पाँच प्रकार के प्रदेश हैं', वह उचित नहीं है।"

"क्यों नहीं है ?"

"क्योंकि यदि 'पाँच प्रकार के प्रदेश हैं' यह कहो तो एक-एक प्रदेश पाँच-पाँच प्रकार का हो जाने से तुम्हारे मत से पच्चीस प्रकार का प्रदेश होगा। इसलिए ऐसा मत कहो कि 'पाँच प्रकार का प्रदेश है।' यह कहो कि 'प्रदेश भजनीय (विकल्पयुक्त) है।'' यथा- (१) स्यात् धर्मास्तिकाय का प्रदेश, (२) स्यात् अधर्मास्तिकाय का प्रदेश, (३) स्यात् आकाशास्तिकाय का प्रदेश, (४) स्यात् जीव का प्रदेश, और (५) स्यात् स्कन्ध का प्रदेश है।''

ऐसा कहने पर ऋजुसूत्रनय से संप्रतिशब्दनय कहता है-"तुम जो कहते हो कि 'प्रदेश भजनीय है', यह कहना उचित नहीं है।''

"क्यों नहीं है?''

"क्योंकि 'प्रदेश भजनीय है', ऐसा मानने से तो (१) धर्मास्तिकाय का प्रदेश अधर्मास्तिकाय का प्रदेश, आकाशास्तिकाय का प्रदेश, जीवास्तिकाय का प्रदेश और स्कन्ध का भी प्रदेश हो सकता है। इसी प्रकार (२) अधर्मास्तिकाय का प्रदेश धर्मास्तिकाय का प्रदेश, आकाशास्तिकाय का प्रदेश, जीवास्तिकाय का प्रदेश एवं स्कन्ध का प्रदेश हो सकता है। (३) आकाशास्तिकाय का प्रदेश भी धर्मास्तिकाय का प्रदेश, अधर्मास्तिकाय का प्रदेश, जीवास्तिकाय का प्रदेश एवं स्कन्ध का प्रदेश हो सकता है। (४) जीवास्तिकाय का प्रदेश भी धर्मास्तिकाय का प्रदेश, अधर्मास्तिकाय का प्रदेश, आकाशास्तिकाय का प्रदेश या स्कन्ध का प्रदेश हो सकता है। (५) स्कन्ध का प्रदेश भी धर्मास्तिकाय का प्रदेश, अधर्मास्तिकाय का प्रदेश, आकाशास्तिकाय का प्रदेश अथवा जीवास्तिकाय का प्रदेश हो सकता है।

इस प्रकार से अनवस्था (जहाँ तर्क व युक्ति का कहीं भी अन्त न हो उसे अनवस्था दोष कहा जाता है) हो जायेगी। अतः ऐसा मत कहो-'प्रदेश भजनीय है', किन्तु ऐसा कहो-'धर्मरूप जो प्रदेश है, वही प्रदेश धर्म है-धर्मात्मक है, जो अधर्मास्तिकाय का प्रदेश है, वही प्रदेश अधर्मास्तिकायात्मक है; जो आकाशास्तिकाय का प्रदेश है, वही प्रदेश आकाशात्मक है, जो जीवास्तिकाय का प्रदेश है, वही प्रदेश नोजीव है; इसी प्रकार जो स्कन्ध का प्रदेश है, वही प्रदेश नोस्कन्धात्मक है'।''

शब्दनय के ऐसा कहने पर सम्प्रति समभिरूढ़नय कहता है-"तुम कहते हो कि धर्मास्तिकाय का जो प्रदेश है, वही प्रदेश धर्मास्तिकाय रूप है, यावत् स्कन्ध का जो प्रदेश है, वही प्रदेश नोस्कन्धात्मक है, किन्तु तुम्हारा यह कथन युक्तिसंगत नहीं है।''

"किसलिए?''

"क्योंकि यहाँ (धम्मे पएसे आदि में) तत्पुरुष और कर्मधारय यह दो समास होते हैं। इसलिए संदेह होता है कि उक्त दोनों समासों में से तुम किस समास की दृष्टि से 'धर्मप्रदेश' आदि कह रहे हो? यदि तत्पुरुष समासदृष्टि से कहते हो तो ऐसा मत कहो और यदि कर्मधारय समास की अपेक्षा कहते हो तब विशेषण सहित कहना चाहिए-धर्म और उसका जो प्रदेश है (उसका समस्त धर्मास्तिकाय के साथ समानाधिकर हो जाने से), वही प्रदेश धर्मास्तिकाय है। इसी प्रकार अधर्म और उसका जो प्रदेश है, वही प्रदेश अधर्मास्तिकाय रूप है; आकाश और उसका जो प्रदेश है, वही प्रदेश आकाशास्तिकाय है; एक जीव और उसका जो प्रदेश है, वही प्रदेश नोजीवास्तिकाय है तथा स्कन्ध और उसका जो प्रदेश है, वही प्रदेश नोस्कन्धात्मक है।

समभिरूढ़नय के ऐसा कहने पर एवंभूतनय कहता है-"(धर्मास्तिकाय आदि के विषय में) जो कुछ भी तुम कहते हो वह समीचीन नहीं। मेरे मत से वे सब कृत्स्न (देश-प्रदेश की कल्पना से रहित) हैं, प्रतिपूर्ण और निरवशेष (अवयवरहित) हैं, एक ग्रहणगृहीत हैं-एक नाम से ग्रहण किये गये हैं। अतः देश भी अवास्तविक है एवं प्रदेश भी अवास्तविक है।"

यही प्रदेशदृष्टान्त है। इस प्रकार नयप्रमाण का वर्णन पूर्ण हुआ।

विवेचन-प्रदेशदृष्टान्त-द्रव्य के साथ जुड़ा (संलग्न) हुआ कल्पित भाग देश तथा उसका अत्यन्त सूक्ष्म भाग प्रदेश कहलाता है। निरंश देश, निर्विभागी भाग, अविभागी परिच्छेद ये प्रदेश के पर्यायवाची शब्द हैं।

धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाश और एक जीव ये चारों अखण्ड द्रव्य हैं। देश उसका कल्पित भाग है तथा प्रदेश उसका परमाणु जितना भाग है। प्रदेशदृष्टान्त में सातों नयों का अभिमत इस प्रकार है-

(१) नैगमनय-

नैगमनय सामान्य और विशेष दोनों को मान्य करता है इसलिए धर्मास्तिकाय आदि छहों के प्रदेश को स्वीकृत करता है।

(२) संग्रहनय-

संग्रहनय के अनुसार देश कोई स्वतन्त्र द्रव्य नहीं है इसलिए वह 'देश का प्रदेश' इस विकल्प को स्वीकार नहीं करता। धर्मास्तिकाय आदि द्रव्यों से सम्बन्धित देश का जो प्रदेश है वह उन द्रव्यों का ही प्रदेश है क्योंकि वह देश उससे भिन्न नहीं है। इसलिए छहों का प्रदेश नहीं होता, पाँचों का होता है। 'पाँचों का प्रदेश' यह संग्रहनय की स्वीकृति है।

(३) व्यवहारनय–

व्यवहारनय कहता है–एक ही प्रदेश पाँचों द्रव्यों से सम्बन्धित हो तब यह कथन उचित हो सकता है। जैसे पाँच भाइयों का सोना, घर, बगीचा आदि। यहाँ पाँचों द्रव्यों के प्रदेश भिन्न-भिन्न हैं इसलिए द्रव्य और लक्षण की संख्या के आधार पर यह कहा जा सकता है कि प्रदेश पाँच प्रकार का होता है।

(४) ऋजुसूत्रनय–

व्यवहारनय के कथन से अपनी असहमति व्यक्त करता हुआ ऋजुसूत्रनय कहता है–पाँच प्रकार का प्रदेश मानने से उसके पच्चीस भेद हो जायेंगे। प्रत्येक प्रदेश के पाँच प्रकार पाँच द्रव्य प्रदेशों से गुणित होने पर पच्चीस होते हैं। इसलिए यह कहना उचित होगा कि प्रदेश धर्म आदि पाँच विभागों से विकल्पनीय है। इस प्रकार मानने से प्रदेश के पाँच भेद घटित हो जाते हैं।

(५) शब्दनय–

प्रदेश की उक्त स्वीकृति पर आपत्ति करता हुआ शब्दनय कहता है–विकल्प की स्थिति में धर्मास्तिकाय का प्रदेश अधर्मास्तिकाय का हो जायेगा। अधर्मास्तिकाय का प्रदेश धर्मास्तिकाय का हो जायेगा। जैसे कोई व्यक्ति कभी राजा का सेवक हो जाता है और कभी अमात्य हो जाता है। नियत व्यवस्था के अभाव में प्रदेश के साथ भी यही घटित होगा। इसलिए अनवस्था दोष के प्रसंग को टालने के लिए यह मानना उचित है कि जो धर्मात्मक प्रदेश है–धर्मास्तिकाय से अभिन्न प्रदेश है वह प्रदेश धर्म है। इसी प्रकार अधर्म और आकाश का प्रदेश है। जीव और स्कन्ध संख्या में अनन्त हैं। इनका प्रदेश जीवत्व और स्कन्धत्व से अभिन्न न होने के कारण जीवात्मक प्रदेश नोजीव है, स्कन्धात्मक प्रदेश नोस्कन्ध है। यहाँ 'नो' शब्द देशवाचक है। एक जीव का प्रदेश सकल जीव में व्याप्त नहीं है इसलिए वह उसके एक भाग में है अर्थात् सफल जीव का एक देश है।

(६) समभिरूढ़नय–

'धर्म-प्रदेश' शब्द में दो समास संभावित हैं। **'धर्मे-प्रदेशः'** इस विग्रह वाक्य में तत्पुरुष समास होता है, जैसे–**वनेहस्ती, तीर्थेकाकः**। यह सप्तमी तत्पुरुष समास है। यदि विग्रह वाक्य में प्रथमा विभक्ति की विवक्षा करते हैं, जैसे–**'धर्मश्चासौ प्रदेशश्च'** (धर्म का प्रदेश) तो कर्मधारय समास होता है, जैसे–**नीलं च तद् उत्पलं च तद्।**

तत्पुरुष समास भेद और अभेद दोनों में होता है, जैसे–**कुण्डे बदराणि** (कुंड में बेर), **घटे रूपम्** (घड़े में रूप), **राज्ञः पुरुषः** (राजा का पुरुष), **राज्ञः शरीरम्** (राजा का शरीर)। 'कुण्डे बदराणि' एवं 'राज्ञः पुरुषः' भेदपरक समास हैं। 'घटे रूपम्' और 'राज्ञः शरीरम्' अभेदपरक हैं। धर्मे-प्रदेशः–इसमें तत्पुरुष समास होने से भेद और अभेद का सन्देह हो सकता है। इसलिए समभिरूढ़नय विशेषण सहित कर्मधारय को स्वीकार करता है।

(७) एवंभूतनय–

एवंभूतनय का अभिमत है द्रव्य अखण्ड होता है। उसमें देश और प्रदेश की कल्पना करना व्यर्थ है। इसलिए देश भी अवास्तविक है, प्रदेश भी अवास्तविक है।

सातों नय ज्ञानात्मक हैं। ज्ञान जीव का गुण है। इसलिए इनका अन्तर्भाव गुणप्रमाण में भी हो सकता है। किन्तु वहाँ ज्ञान के भेदों में प्रत्यक्ष, अनुमान आदि प्रमाणों की चर्चा है। 'नयप्रमाण' इनसे भिन्न रूप में प्रसिद्ध है, इसलिए इनको जीव-गुणप्रमाण से पृथक् नयप्रमाण के रूप में बताया गया है।

तीनों दृष्टान्तों का तात्पर्यार्थ

द्रव्य और वस्तु की विचारणा के अनेक मार्ग हैं। वह विचारणा कभी स्थूल, सूक्ष्म और सूक्ष्मतर तथा कभी अशुद्ध, शुद्ध और शुद्धतर होती है। द्रव्य के अनेक पर्याय हैं। स्थूल विचार के द्वारा स्थूल पर्याय, सूक्ष्म विचार के द्वारा सूक्ष्म पर्याय और सूक्ष्मतर विचार के द्वारा सूक्ष्मतर पर्याय का ग्रहण होता है। स्थूल विचार को सापेक्ष दृष्टि से अशुद्ध, सूक्ष्म विचार को सापेक्ष दृष्टि से शुद्ध और सूक्ष्मतर विचार को सापेक्ष दृष्टि से शुद्धतर कहा जाता है।

नैगमनय की दृष्टि में प्रस्थक का संकलन भी प्रस्थक है, प्रस्थक का निर्माण भी प्रस्थक है किन्तु तीन शब्दनयों की दृष्टि में प्रस्थक कोई काष्ठ पात्र नहीं है, वह प्रस्थक का ज्ञान और उपयोग है। इस दृष्टान्त का तात्पर्य है कि ज्ञेय एक अवस्था में ज्ञाता से भिन्न होता है और एक अवस्था में ज्ञाता से अभिन्न हो जाता है। इस अनेकान्तात्मक दृष्टि से ही वस्तु को समग्र दृष्टिकोणों से जाना जा सकता है।

वसति दृष्टान्त के द्वारा आधार और आधेय की मीमांसा की गई है। शब्दनयत्रयी के अनुसार सब द्रव्य निरालम्ब अथवा स्वप्रतिष्ठ होते हैं। किसी द्रव्य के लिए आधार आवश्यक नहीं होता। नैगमनय दृष्टि में आधार और आधेय का सम्बन्ध आवश्यक है। इसीलिए आधारभूमि के अनेक विकल्प किये गये हैं।

प्रदेशदृष्टान्त में अवयव और अवयवी के सम्बन्ध की मीमांसा की गई है। एवंभूतनय द्रव्य के अवयवों को अस्वीकार करता है। नैगमनय अवयव और अवयवी के सम्बन्ध को मान्य करता है।

इस प्रकार नय वस्तु के विभिन्न धर्मों और विभिन्न नियमों को सापेक्ष दृष्टि से जानने की प्रक्रिया है। (साभार : अनु. आचार्य महाप्रज्ञ जी, पृ. ३२३-३२४)

॥ नयप्रमाणपद प्रकरण समाप्त ॥

PRADESH DRISTANT

476. (Q.) What is this *Pradesh dristant* (example of space-point) ?

(Ans.) *Pradesh dristant* (example of space-point) is—

Naigam naya (co-ordinated viewpoint) says—"*Pradesh* (space-point) is of six entities—(1) *Pradesh* (space-point) of *Dharmastikaya* (motion entity), (2) *Pradesh* (space-point) of *Adharmastikaya* (rest entity), (3) *Pradesh* (space-point) of *Akashastikaya* (space entity), (4) *Pradesh* (space-point) of *Jivastikaya* (life entity), (5) *Pradesh* (space-point) of *Skandha* (an

aggregate of matter particles), and (6) *Pradesh* (space-point) of *Desh* (a section of any of these five)."

At this statement of *Naigam naya* (co-ordinated viewpoint), *Samgraha naya* (generalized viewpoint) says—"Your statement that '*Pradesh* (space-point) is of six entities' is wrong."

"Why so ?"

"Because the *Pradesh* (space-point) of *Desh* (a section) belongs to the same entity (under consideration)."

"Is there some example for this ?"

"Yes, there is—for instance my servant purchases a donkey (on my behalf). Here the servant belongs to me and the donkey also belongs to me. Therefore do not say that '*Pradesh* (space-point) is of six entities', say that '*Pradesh* (space-point) is of five entities', and they are—(1) *Pradesh* (space-point) of *Dharmastikaya* (motion entity), (2) *Pradesh* (space-point) of *Adharmastikaya* (rest entity), (3) *Pradesh* (space-point) of *Akashastikaya* (space entity), (4) *Pradesh* (space-point) of *Jivastikaya* (life entity), and (5) *Pradesh* (space-point) of *Skandha* (an aggregate of matter particles)."

To *Samgraha naya* (generalized viewpoint), stating thus, *Vyavahar naya* (particularized viewpoint) says—"Your statement that *Pradesh* (space-point) is of five entities is not correct."

"Why so ?"

Your statement that " '*Pradesh* (space-point) is of five entities' would be proper if like a common property belonging to five persons (or partners), such as silver, gold, wealth or food-grains, the particular space-point was common to all the five entities. Therefore do not say that '*Pradesh* (space-point) is of five entities' but say that '*Pradesh* (space-point) is of five kinds'—(1) *Pradesh* (space-point) of *Dharmastikaya* (motion entity), (2) *Pradesh* (space-point) of *Adharmastikaya* (rest entity), (3) *Pradesh* (space-point) of *Akashastikaya* (space entity), (4) *Pradesh* (space-point) of *Jivastikaya* (life entity), and (5) *Pradesh* (space-point) of *Skandha* (an aggregate of matter particles)."

To *Vyavahar naya* (particularized viewpoint), stating thus, *Rijusutra naya* (precisionistic viewpoint) says—"Your statement that '*Pradesh* (space-point) is of five kinds' is not correct."

"Why so ?"

"Because if you say that '*Pradesh* (space-point) is of five kinds' then the aforesaid five *Pradeshas* will have five kinds each, making the total types of *Pradeshas* to be twenty five in your opinion. Therefore, do not say that '*Pradesh* (space-point) is of five kinds' but say that '*Pradesh* is *bhajaniya* (open to alternatives)'—(1) there may be a *Pradesh* (space-point) of *Dharmastikaya* (motion entity), (2) there may be a *Pradesh* (space-point) of *Adharmastikaya* (rest entity), (3) there may be a *Pradesh* (space-point) of *Akashastikaya* (space entity), (4) there may be a *Pradesh* (space-point) of *Jivastikaya* (life entity), and (5) there may be a *Pradesh* (space-point) of *Skandha* (an aggregate of matter particles)."

To *Rijusutra naya* (precisionistic viewpoint), stating thus, *Samprati-shabda naya* (present verbal viewpoint) says—"Your statement that '*Pradesh* is *bhajaniya* (open to alternatives)' is not correct."

"Why so ?"

"Because if you say that '*Pradesh* is *bhajaniya* (open to alternatives)' then—(1) a *Pradesh* (space-point) of *Dharmastikaya* (motion entity) might also be a *Pradesh* (space-point) of *Adharmastikaya* (rest entity) or a *Pradesh* (space-point) of *Akashastikaya* (space entity) or a *Pradesh* (space-point) of *Jivastikaya* (life entity) or a *Pradesh* (space-point) of *Skandha* (an aggregate of matter particles). And in the same way—(2) a *Pradesh* of *Adharmastikaya* might also be a *Pradesh* of *Dharmastikaya* or a *Pradesh* of *Akashastikaya* or a *Pradesh* of *Jivastikaya* or a *Pradesh* of *Skandha;* (3) a *Pradesh* of *Akashastikaya* might also be a *Pradesh* of *Dharmastikaya* or a *Pradesh* of *Adharmastikaya* or a *Pradesh* of *Jivastikaya* or a *Pradesh* of *Skandha;* (4) a *Pradesh* of *Jivastikaya* might also be a

Pradesh **of** ***Dharmastikaya*** **or a** ***Pradesh*** **of** ***Adharmastikaya*** **or a** ***Pradesh*** **of** ***Akashastikaya*** **or a** ***Pradesh*** **of** ***Skandha;*** **(5) a** ***Pradesh*** **of** ***Skandha*** **might also be a** ***Pradesh*** **of** ***Dharmastikaya*** **or a** ***Pradesh*** **of** ***Adharmastikaya*** **or a** ***Pradesh*** **of** ***Akashastikaya*** **or a** ***Pradesh*** **of** ***Jivastikaya.***

This would lead to a fallacy (endless or inconclusive logic). Therefore do not simply say that '*Pradesh* is *bhajaniya* (open to alternatives)', say that—'only that *Pradesh* is *Dharmastikaya-pradesh* which is in the form of *Dharma;* only that *Pradesh* is *Adharmastikaya-pradesh* which is in the form of *Adharm;*, only that *Pradesh* is *Akashastikaya-pradesh* which is in the form of *Akash;* only that *Pradesh* is *Jivastikaya-pradesh* which is in the form of *No-jiva* (a particular *jiva* or soul), only that *Pradesh* is *Skandhastikaya-pradesh* which is in the form of *No-skandh* (a particular aggregate of matter)'."

To *Samprati-shabda naya* (present verbal viewpoint), stating thus, *Samprati-samabhirudha naya* says—"Your statement that only that *Pradesh* is *Dharmastikaya-pradesh* which is in the form of *Dharma,* (and so on up to—) only that *Pradesh* is *Skandhastikaya-pradesh* which is in the form of *No-Skandh* (a particular aggregate of matter) is not correct."

"Why so ?"

"Because there are two kinds of compounds involved here (in the word *Dharma-pradesh*)—dependent determinative compound and descriptive determinative compound. It is not clear which out of the two you intend when you say *Dharma-pradesh* (etc.). If you intend to conform to the dependent determinative compound do not say thus. However if you intend to conform to descriptive determinative compound then you should be specific and say—*Dharma* and that *Pradesh* of it, which is in the form of *Dharma* is *Dharmastikaya-pradesh*; *Adharma* and that *Pradesh* of it, which is in the form of *Adharma* is *Adharmastikaya-pradesh*; *Akash* and that *Pradesh* of it, which is in the form of *Akash* is *Akashastikaya-pradesh*; *No-jiva* and that *Pradesh* of it, which is in the form of *No-*

jiva is *No-jivastikaya-pradesh*; *No-skandha* and that *Pradesh* of it, which is in the form of *No-skandha* is *No-skandhastikaya-pradesh.*"

To *Samprati-samabhirudha naya*, stating thus, *Evambhuta naya* says—"Whatever you say (about *Dharmastikaya* etc.) is not correct. According to me they all are whole (without any sections or space-points), complete (in themselves), undivided (without components) and comprehended unitarily (by just one word). Thus, to me a section is unreal and a space-point is also unreal."

This concludes the description of *Pradesh dristant* (example of space-point.

Elaboration—An imaginary section of an entity or substance is called *Desh* and its extremely minute part is called *Pradesh* or space-point. A section without further sections, indivisible part, a fraction without further fractions, all these terms mean *Pradesh.*

Dharmastikaya (motion entity), *Adharmastikaya* (rest entity), *Akashastikaya* (space entity) and a single *Jivastikaya* (life entity), these four are indivisible entities. *Desh* is an imaginary section and *Pradesh* is a minute section equal to a single *paramanu* (ultimate particle). In this example of space-point the seven opinions conforming to the seven *nayas* are as follows—

(1) Naigam naya—

Naigam naya (co-ordinated viewpoint) accepts both common and special. Therefore it accepts *Pradeshas* of all the six entities including *Dharmastikaya.*

(2) Samgraha naya—

According to *Samgraha naya* (generalized viewpoint) *Desh* (section) is not an independent entity, therefore it does not accept the alternative 'the *Pradesh* of *Desh*'. The sections of these entities are not independent of the entities, therefore, a *Pradesh* of a section of an entity is a *Pradesh* of that entity only. Thus according to the *Samgraha naya* (generalized viewpoint) only five out of the said six entities have *Pradeshas.*

(3) Vyavahar naya—

Vyavahar naya (particularized viewpoint) maintains that the aforesaid statement is true only if a single *Pradesh* is related to all the

five entities. For example gold, house or garden jointly belonging to five brothers. Here the *Pradeshas* of five different entities are different. Therefore only based on the number of entities and its attributes it can be said that *Pradesh* is of five kinds.

(4) Rijusutra naya—

Deviating from *Vyavahar naya* (particularized viewpoint), *Rijusutra naya* (precisionistic viewpoint or that related to specific point or period of time) maintains that if five kinds of *Pradeshas* are accepted there will be twenty five types, five each for five entities. Therefore, it would be proper to say that *Pradesh* has a scope of or is open to five alternatives including that of *Dharmastikaya.* This way the five kinds are acceptable.

(5) Shabda naya—

Objecting to the aforesaid statement, *Shabda naya* (verbal viewpoint or that related to language and grammar) states that if alternatives are accepted a *Pradesh* of *Dharmastikaya* could become that of *Adharmastikaya.* For example a person becomes a servant of a king at one time and at the other the same person may become a servant of the minister. In absence of proper ruling the same could happen to *Pradesh.* Therefore, in order to avoid such ambiguity it is proper to accept that only a *Pradesh* in the form of *Dharma* is *Dharmastikaya-pradesh.* The same holds good for *Adharma* and *Akash.* The *Jivastikaya* and *Skandhastikaya* are infinite in number. As a *Pradesh* of a *jiva* (soul) is inseparable from that particular *jiva* (soul) it is named *No-jiva.* Same is true for *Skandha.* Here the prefix *'No'* indicates a section or a part. A *Pradesh* of one *jiva* (soul) is not common to all *jivas* (souls), thus it is only a part of the entity *jiva* (soul) taken as a generic term or an aggregate of all *jivas* (souls).

(6) Samabhirudha naya—

The word *Dharma-pradesh* is a compound word that could be made two ways. Dependent determinative compound and descriptive determinative compound. The declension of the first is *Dharma-pradeshah* (*pradesh* from *dharma*), just like *Vane-hasti* (elephant from jungle) and *Tirthe-kakah* (crow from pilgrimage center). It is according to the seventh case ending called *Tatpurush Samas* and is not applicable here. If we apply the first declension here it means—*Dharmashchasau*

pradeshashcha (*pradesh* of *dharma*) and it is descriptive determinative compound.

This compounding carries two meanings—one conveys the sense of sameness and the other that of difference. For example *'kunde badarani'* (berries in a bowl) and *'ghate rupam'* (shape in a pitcher) are the examples of the first and *'rajnah purushah'* (man of the king) and *'rajnah shariram'* (body of the king) are that of the second. As in *'Dharm pradeshah' Karmadharaya Samas* or descriptive determinative compound has been used it may create a doubt with respect to two different nuances of sameness and difference. Therefore *Samabhirudha naya* accepts descriptive determinative compound but with an unambiguous adjective.

(7) Evambhuta naya—

Evambhuta naya (viewpoint of exactness or that related to words used in original derivative sense and significance) maintains that an entity is indivisible. It is useless to conceive sections or space-points in it. Therefore *Desh* (section) is unreal as also is *Pradesh.*

All the seven *nayas* have intellectual base. Intelligence or knowledge is the attribute of *jiva* (soul). Therefore these can be included in the *Guna pramana* also. But there the kinds of knowledge refer to validity of direct perception, conception etc. As *naya pramana* is popularly accepted as an independent topic it has been discussed here under the heading *Naya Pramana.*

THEMES OF THE THREE EXAMPLES

There are various methods of contemplation regarding entities and substances. This contemplation sometimes takes the path of gross to subtle to still subtler and at other that of impure to pure to still purer. Entity has numerous modes or alternative transformations. The object of gross contemplation is gross mode, that of subtle contemplation is subtle mode and that of still subtle contemplation is still subtle mode. In relative terms gross contemplation is called impure, subtle contemplation is called pure and still subtle contemplation is called still pure.

Prasthak—From the *Naigam naya* (co-ordinated viewpoint) acquisition of *prasthak* is *prasthak* and the making of a *prasthak* is also *prasthak.* But from the three *Shabda naya* (verbal viewpoints) *prasthak*

is not some wooden measuring pot but it is the knowledge and use of ***prasthak***. This example conveys that a thing which is to be known is different from the knower from one perspective, becomes same as the knower from another perspective. Only with this perspective of non-absolutism a thing can be understood from all angles.

Vasati—The example of *vasati* explains the relationship of support and the supported. According to the three *Shabda nayas* (verbal viewpoints) all entities are self-supported or have an independent existence. No entity needs any support. But according to *Naigam naya* (co-ordinated viewpoint) the inter-relation of support and the supported is essential. Therefore many alternatives of support or basis have been formulated or conceived.

Pradesh—In the example of *Pradesh* the whole and its components have been discussed. According to *Evambhuta naya* there is no existence of components or parts. *Naigam naya* (co-ordinated viewpoint) accepts the relationship of the whole and its parts.

Thus *naya* is the process of understanding various attributes and properties of things from a relative angle. (*Anuogadaraim* by Acharya Mahaprajna, p. 323-324)

● END OF THE DISCUSSION ON NAYA PRAMANA ●

संख्याप्रमाण-प्रकरण
THE DISCUSSION ON SAMKHYA PRAMANA

संख्याप्रमाण के आठ प्रकार

४७७. से किं तं संखप्पमाणे ?

संखप्पमाणे अट्ठविहे पण्णत्ते। तं जहा—१. नामसंखा, २. ठवणसंखा, ३. दव्वसंखा, ४. ओवम्मसंखा, ५. परिमाणसंखा, ६. जाणणासंखा, ७. गणणासंखा, ८. भावसंखा।

४७७. (प्र.) संख्याप्रमाण क्या है ?

(उ.) संख्याप्रमाण आठ प्रकार का है। यथा—(१) नामसंख्या, (२) स्थापनासंख्या, (३) द्रव्यसंख्या, (४) औपम्यसंख्या, (५) परिमाणसंख्या, (६) ज्ञानसंख्या, (७) गणनासंख्या, और (८) भावसंख्या।

विवेचन—जिसके द्वारा संख्या-गणना की जाये उसे गणनासंख्या कहते हैं। प्राकृत भाषा में 'संख' शब्द से 'संख्या' और 'शंख' दोनों ही रूप बनते हैं। इस कारण यहाँ नाम-स्थापना आदि के विचार में जहाँ-जहाँ संख्या अथवा शंख शब्द उपयुक्त घटित होता हो वहाँ-वहाँ उस-उस शब्द की योजना-संगति कर लेना चाहिए। संख्या के प्रकरण में आगे क्रमशः निम्न संख्या प्रमाणों का वर्णन किया जायेगा—

औपम्यसंख्या—उपमा द्वारा वस्तु का बोध कराना औपम्यसंख्या है। (सूत्र ४९२)

परिमाणसंख्या—इससे आगम का ग्रन्थ परिमाण जाना जाता है। (सूत्र ४९४)

ज्ञानसंख्या—इससे विषय-वस्तु के ज्ञान के आधार पर जानने वाले का बोध होता है। (सूत्र ४९६)

गणनासंख्या। (सूत्र ४९७)

भावशंख—तिर्यंचगति के अन्तर्गत द्वीन्द्रिय जाति के औदारिक शरीरधारी जो जीव शंखगति नाम-गोत्र का विपाकानुभव करते हैं, वे जीव भावशंख हैं। (सूत्र ५२०)

EIGHT TYPES OF SAMKHYA PRAMANA

477. (Q.) What is this *Samkhya Pramana* (standard of validity of *samkhya*)?

(Ans.) *Samkhya Pramana* (standard of validity of *samkhya*) is of eight types—(1) *Naam Samkhya* (*samkhya* as name), (2) *Sthapana Samkhya* (*samkhya* as notional installation),

(3) *Dravya Samkhya* (physical aspect of *samkhya*), (4) *Aupamya Samkhya* (*samkhya* determined through a metaphor), (5) *Parimaan Samkhya* (*samkhya* as measure or extent), (6) *Jnana Samkhya* (*samkhya* as determinant of knowledge), (7) *Ganana Samkhya* (*samkhya* as counting), and (8) *Bhaava Samkhya* (*samkhya* as essence).

Elaboration—The common meaning of *samkhya* is number or that which is employed for counting; to separate it from other meanings of the term it is mentioned here as *Ganana Samkhya* (*samkhya* as counting). The word *samkh* of Prakrit language is transcribed two ways—*samkhya* (number) and *shankh* (conch-shell). Therefore in each of the eight way attribution of this term, relevant of the two meanings should be considered. In this discussion of *samkhya* the following standards of validation will be discussed—

Aupamya Samkhya—To convey the measure of a thing with the help of a metaphor. (aphorism 492)

Parimaan Samkhya—This is employed to express the number of books of the canon. (aphorism 494)

Jnana Samkhya—This informs about an expert of a field or subject based on the knowledge he has. (aphorism 496)

Ganana Samkhya—*Samkhya* as counting. (aphorism 497)

Bhaava Samkhya—This relates to the two-sensed beings having a gross body popularly known as *shankh* or conch shell.

(१-२) नाम-स्थापनासंख्या

४७८. से किं तं नामसंखा ?

नामसंखा जस्स णं जीवस्स वा अजीवस्स वा, जीवाण वा अजीवाण वा, तदुभयस्स वा तदुभयाण वा संखा ति णामं कज्जति। से तं नामसंखा।

४७८. (प्र.) नामसंख्या क्या है ?

(उ.) जिस जीव का अथवा अजीव का, जीवों का अथवा अजीवों का (बहुवचन) अथवा तदुभय (एक जीव, एक अजीव दोनों) का अथवा तदुभयों (अनेक जीवों-अजीवों दोनों) का 'संख्या' ऐसा नाम किया जाता है, वह नामसंख्या है।

(1-2) NAAM AND STHAPANA SAMKHYA/SHANKH

478. (Q.) What is this *Naam Samkhya* (*samkhya* as name) ?

(Ans.) *Naam samkhya / shankh* (*samkhya / shankh* as name) stands for a *jiva* (living being; soul) or an *ajiva* (non-living thing; non-soul) or many *jivas* (souls) or many *ajivas* (non-souls) or a combination of both or many combinations of both to which the name *samkhya / shankh* is attributed.

This concludes the description of *Naam samkhya / shankh* (*samkhya / shankh* as name).

४७९. से किं तं ठवणासंखा ?

ठवणासंखा जण्णं कट्ठकम्मे वा पोत्थकम्मे वा चित्तकम्मे वा लेप्पकम्मे वा गंथिकम्मे वा वेढिमे वा पूरिमे वा संघाइमे वा अक्खे वा वराडए वा एक्को वा अणेगा वा सब्भावठवणाए वा असब्भावठवणाए वा संखा ति ठवणा ठवेज्जति । से तं ठवणासंखा।

४७९. (प्र.) स्थापनासंख्या क्या है ?

(उ.) जिस काष्ठकर्म (काष्ठाकृति) में, पुस्तकर्म में या चित्रकर्म (चित्राकृति) में या लेप्यकर्म में अथवा ग्रन्थिकर्म (गूँथकर बनाई आकृति) में अथवा वेष्टित कर अथवा पूरित कर (भरकर या जोड़कर बनी आकृति में) अथवा संघातिम (पुतली की आकृति) में अथवा अक्ष में अथवा वराटक (कोडी) में अथवा एक या अनेक में सद्भूत (यथार्थ) स्थापना या असद्भूत (कल्पित) स्थापना द्वारा 'संख्या' इस प्रकार का स्थापन (रूपांकन या आरोप) किया जाता है, वह स्थापनासंख्या है।

479. (Q.) What is this *Sthapana samkhya / shankh* (*samkhya/ shankh* as notional installation) ?

(Ans.) The notional installation or illustration or imagination of *samkhya / shankh* in or through (things or medias like—) wood work, painting, book or doll, clay moulding, fiber or cloth work, knit work or applique work, casting, combining many cloth pieces or flowers, blocks or dices made of fossils or wood and shells; one or many; realistically or unrealistically is called *sthapana samkhya / shankh* (*samkhya / shankh* as notional installation).

This concludes the description of *Sthapana samkhya / shankh* (*samkhya / shankh* as notional installation).

४८०. नाम-ठवणाणं को पतिविसेसो ?

नामं आवकहियं, ठवणा इत्तिरिया वा होज्जा आवकहिया वा।

४८०. (प्र.) नाम और स्थापना में क्या अन्तर है?

(उ.) नाम यावत्कथिक (वस्तु के रहने पर्यन्त) होता है लेकिन स्थापना इत्वरिक (स्वल्पकालिक) भी होती है और यावत्कथिक भी होती है। (विशेष : सूत्र १२ के अनुसार समझें)

480. (Q.) What is the difference between *naam* and *sthapana samkhya/shankh* (*samkhya/shankh* as name and as notional installation) ?

(Ans.) Name is lifelong whereas *sthapana* can be temporary as well as lifelong both. (for details see *Illustrated Anuyogadvar Sutra,* Part I, Aphorism 12)

(३) द्रव्यसंख्या

४८१. से किं तं दव्वसंखा ?

दव्वसंखा दुविहा पं. । तं-आगमओ य नोआगमओ य।

४८१. (प्र.) द्रव्यशंख (संख्या) क्या है?

(उ.) द्रव्यशंख (संख्या) के दो प्रकार हैं, जैसे-(१) आगमतः द्रव्यशंख, और (२) नोआगमतः द्रव्यशंख।

(3) DRAVYA SAMKHYA/SHANKH

481. (Q.) What is this *dravya shankh/samkhya* (physical aspect of *shankh/samkhya*) ?

(Ans.) *Dravya shankh/samkhya* (physical aspect of *shankh/samkhya*) is of two kinds—(1) *Agamatah dravya shankh/samkhya* (physical aspect of *shankh/samkhya* in context of *Agam* or in context of knowledge), (2) *No-Agamatah dravya shankh/samkhya* (physical aspect of *shankh/samkhya* not in context of *Agam* or only in context of action).

४८२. से किं तं आगमओ दव्वसंखा ?

दव्वसंखा जस्स णं संखा ति पदं सिक्खितं ठियं जियं मियं परिजियं जाव कंगिण्ह (कंठोट्ठ) विप्पमुक्कं (गुरुवायणोवगयं), से णं तत्थ वायणाए पुच्छणाए परियट्टणाए धम्मकहाए, नो अणुप्पेहाए।

कम्हा ? अणुवओगो दव्वमिति कट्टु।

४८२. (प्र.) आगमतः द्रव्यशंख क्या है ?

(उ.) आगमतः द्रव्यशंख (संख्या) का स्वरूप इस प्रकार है–जिसने शंख (संख्या) यह पद सीख लिया, हृदय में स्थिर किया, जित किया–तत्काल स्मरण हो जाये ऐसा याद किया, मित किया–मनन किया, अधिकृत कर लिया अथवा (आनुपूर्वी–अनानुपूर्वीपूर्वक जिसको सर्व प्रकार से बार-बार दुहरा लिया) यावत् निर्दोष स्पष्ट स्वर से शुद्ध उच्चारण किया तथा गुरु से वाचना ली, जिस कारण वाचना, पृच्छना, परावर्तना एवं धर्मकथा से युक्त भी हो गया परन्तु जो अर्थ का अनुचिन्तन करने रूप अनुप्रेक्षा से रहित हो, उपयोग न होने से वह आगम से द्रव्यशंख (संख्या) कहलाता है।

क्योंकि सिद्धान्त में '**अनुपयोगो द्रव्यम्**'–उपयोग से शून्य को द्रव्य कहा है।

482. (Q.) What is this *Agamatah dravya shankh/samkhya* (physical *shankh/samkhya* with scriptural knowledge) ?

(Ans.) Physical *shankh/samkhya* in context of *Agam* is like this—(For instance) a person (an ascetic) has studied properly (*shikshit*); understood and absorbed (*jit*); retained in mind (*chitt*); made assessment in terms of number of verses, words, syllables etc. (*mit*); perfected by revising in normal and reverse sequence (*parijit*); committed to memory as firmly as one's own name (*naam samam*) the term *shankh/samkhya* (*Sutra*) and recited it fluently with phonetic perfection (*ghoshasamam*) without shortening syllables (*ahinaksharam*), without extending syllables (*anatyakshar*), without shifting syllables (*avyaviddhakshar*) and without skipping syllables (*askhalit*); without mixing up of different phrases (*amilit*); and without combining different phrases and aphorisms (*avyatyamredit*). When such person proceeds to study, inquire into, revise and teach this term *shankh/samkhya* acquired through the discourse of the *guru* (*guruvachanopagat*) emanating from vocal cords and lips

(*kanthoshtavipramukta*) and rendered eloquently (*pratipurna*) in perfect accent (*pratipurnaghosh*), but is incapable of contemplating the meaning (spirit), he is known as physical a *shankh/samkhya* in context of *Agam*. This is so due to the fact that he is devoid of the faculty of contemplating the meaning (spirit) of the text and it is a principle that any action devoid of the faculty of contemplating is only physical (*dravya*).

आगमतः द्रव्यसंख्या : नयदृष्टियाँ

४८३. (१) (णेगमस्स) एक्को अणुवउत्तो आगमतो एका दव्वसंखा, दो अणुवउत्ता आगमतो दो दव्वसंखाओ, तिन्नि अणुवउत्ता आगमतो तिन्नि दव्वसंखाओ, एवं जावतिया अणुवउत्ता तावतियाओ (णेगमस्स आगमतो) दव्वसंखाओ।

४८३. (१) (नैगमनय की अपेक्षा) एक अनुपयुक्त आत्मा आगमतः एक द्रव्यशंख (संख्या), दो अनुपयुक्त आत्मा आगमतः दो द्रव्यशंख, तीन अनुपयुक्त आत्मा आगमतः तीन द्रव्यशंख हैं। इस प्रकार जितनी अनुपयुक्त आत्माएँ हैं नैगमनय की अपेक्षा उतने ही आगमतः द्रव्यशंख हैं।

AGAMATAH DRAVYA SHANKH/SAMKHYA AND NAYA ASPECTS

483. (1) According to the *Naigam naya* (co-ordinated viewpoint that includes ordinary and special both) one non-contemplative soul is one *agamatah dravya shankh/samkhya* (physical *shankh/samkhya* with scriptural knowledge). Two non-contemplative souls are two physical *shankh/samkhyas* with scriptural knowledge. Three non-contemplative souls are three physical *shankh/samkhyas* with scriptural knowledge. In the same way as many non-contemplative souls are, there are that many *agamatah dravya shankh/samkhyas* (physical *shankh/samkhyas* with scriptural knowledge).

(२) एवामेव ववहारस्स वि।

(२) नैगमनय के समान ही व्यवहारनय आगम द्रव्यशंख को मानता है।

(2) Same is true for *Vyavahara naya* (particularized viewpoint). (The style of stating is same for both co-ordinated and particularized viewpoints).

(३) संगहस्स एको वा अणेगा वा अणुवुत्तो वा अणुवउत्ता वा (आगमओ) दव्वसंखा वा दव्वसंखाओ वा (सा एगा दव्वसंखा)।

(३) संग्रहनय (सामान्य मात्र को ग्रहण करने वाला होने से) एक अनुपयुक्त आत्मा (आगम से) एक द्रव्यशंख और अनेक अनुपयुक्त आत्माएँ अनेक आगम द्रव्यशंख, ऐसा स्वीकार नहीं करता किन्तु सभी को एक ही आगम द्रव्यशंख मानता है।

(3) According to *Samgraha naya* (generalized viewpoint) one non-contemplative soul is one *agamatah dravya shankh/samkhya* (physical *shankh/samkhya* with scriptural knowledge). (But it does not accept that many non-contemplative souls are many physical *shankh/samkhyas* with scriptural knowledge. According to this, all non-contemplative souls fall into just one category of physical *shankh/samkhya* with scriptural knowledge. This is because it is collective standpoint.

(४) उज्जुसुयस्स (एगो अणुवउत्तो) आगमओ एका दव्वसंखा, पुहत्तं णेच्छति।

(४) ऋजुसूत्रनय की अपेक्षा (एक अनुपयुक्त आत्मा) एक आगम द्रव्यशंख है। वह भेद को स्वीकार नहीं करता है।

(4) According to *Rijusutra naya* (precisionistic viewpoint; viewpoint related to specific point or period of time) one non-contemplative soul is one *agamatah dravya shankh/samkhya* (physical *shankh/samkhya* with scriptural knowledge). This viewpoint has no scope for variations or differences.

(५) तिण्हं सद्दणयाणं जाणए अणुवउत्ते अवत्थू, कम्हा ? जति जाणए अणुवउत्ते ण भवति। से तं आगमओ दव्वसंखा।

(५) तीनों शब्दनय (शब्दनय, समभिरूढ़नय और एवंभूतनय) अनुपयुक्त ज्ञायक को अवस्तु-असत् मानते हैं। क्योंकि यदि कोई ज्ञायक है तो अनुपयुक्त (उपयोगरहित) नहीं होता है और यदि अनुपयुक्त हो तो वह ज्ञायक नहीं होता है। इसलिए आगमतः द्रव्यशंख सम्भव नहीं है। यह आगम द्रव्यशंख का स्वरूप है।

विवेचन-विस्तार हेतु देखें सचित्र अनुयोगद्वार सूत्र, भाग १, सूत्र १३-१५।

(5) According to the three *Shabda nayas* (*Shabda naya, Samabhirudha naya* and *Evambhuta naya*) or verbal viewpoints

(verbal viewpoint, conventional viewpoint and etymological viewpoint) if a knower is devoid of the faculty of contemplation he is unreal. This is because without the faculty of contemplation he cannot be a knower. Thus if he is non-contemplative he is not a knower.

This concludes the description of *agamatah dravya shankh/samkhya* (physical *shankh/samkhya* with scriptural knowledge).

Elaboration—For more details refer to *Illustrated Anuyogadvar Sutra,* Part I, Aphorisms 13-15.

नोआगमतः द्रव्यसंख्या

४८४. से किं तं नोआगमतो दव्वसंखा ?

नोआगमतो दव्वसंखा तिविहा पं.। तं.–जाणयसरीरदव्वसंखा, भवियसरीरदव्वसंखा, जाणयसरीर–भवियसरीर–वतिरित्ता दव्वसंखा।

४८४. (प्र.) नोआगमतः द्रव्यसंख्या क्या है ?

(उ.) नोआगमतः द्रव्यसंख्या के तीन भेद हैं–(१) ज्ञायकशरीरद्रव्यसंख्या, (२) भव्यशरीरद्रव्यसंख्या, और (३) ज्ञायकशरीर–भव्यशरीर–व्यतिरिक्तद्रव्यसंख्या।

NO-AGAMATAH DRAVYA SHANKH/SAMKHYA

484. (Q.) What is this *No-agamatah dravya shankh/samkhya* (physical *shankh/samkhya* without scriptural knowledge) ?

(Ans.) *No-agamatah dravya shankh/samkhya* (physical *shankh/samkhya* without scriptural knowledge) is of three types—(1) *Jnayak sharir dravya shankh/samkhya*, (2) *Bhavya sharir dravya shankh/samkhya*, and (3) *Jnayak sharir-bhavya sharir-vyatirikta dravya shankh/samkhya.*

ज्ञायकशरीरद्रव्यसंख्या

४८५. से किं तं जाणगसरीरदव्वसंखा ?

जाणगसरीरदव्वसंखा संखा ति पयत्थाहिकार–जाणगस्स जं सरीरयं ववगय–चुय–चइत–चत्तदेहं जीवविप्पजढं जाव अहो ! णं इमेणं सरीरसमूसएणं संखा ति पयं आघवितं जाव उवदंसियं।

जहा कोदिट्ठंतो ? अयं घयकुंभे आसि। से तं जाणगसरीरदव्वसंखा।

४८५. (प्र.) ज्ञायकशरीरद्रव्यसंख्या क्या है ?

(उ.) 'संख्या' इस पद के अर्थाधिकार को जानने वाले व्यक्ति का जो शरीर है वह व्यपगत–चैतन्य से रहित हो गया हो, च्युत-च्यवित-त्यक्त देह यावत् जीवरहित शरीर को देखकर यदि कोई कहे–अहो ! इस शरीर रूप पुद्गलसंघात (समुदाय) ने संख्या पद को (गुरु से) ग्रहण किया था, पढ़ा था यावत् उपदर्शित किया था–नय और युक्तियों द्वारा शिष्यों को समझाया था, (उसका वह शरीर ज्ञायकशरीरद्रव्यसंख्या है।)

(प्र.) इसका कोई दृष्टान्त है ?

(उ.) (हाँ, दृष्टान्त है–जैसे घड़े में से घी निकालने के बाद भी कहा जाता है कि) यह घी का घड़ा है। यह ज्ञायकशरीरद्रव्यसंख्या का स्वरूप है।

विशेष–चुय–चइत्त–चत्तदेह का अर्थ–आयुकर्म क्षय होने पर पके हुए फल के समान अपने आप पतित होने वाले शरीर को चुय (च्युत) विषादि के द्वारा आयु के छिन्न होने पर निर्जीव हुए शरीर को च्यवितशरीर तथा संलेखना-संथारापूर्वक स्वेच्छा से त्यागे गये शरीर को चत्तदेह (त्यक्त शरीर) कहा जाता है।

JNAYAK SHARIR DRAVYA SHANKH/SAMKHYA

485. (Q.) What is this *Jnayak sharir dravya shankh/samkhya* (physical *shankh/samkhya* as body of the knower) ?

(Ans.) *Jnayak sharir dravya shankh/samkhya* (physical *shankh/samkhya* as body of the knower) is explained thus : It is such a body of the knower of the purview of the meaning of *shankh/samkhya* that is dead or devoid of life naturally because of end of life-span defining *karmas* (*chyut*), that has been killed or deprived of life using a weapon or other means (*chyavit*) or that has voluntarily embraced death or has been voluntarily abandoned by the soul through fasting or other such religious act (*tyakta deha*). (This is because it is a natural reaction that) seeing such a body lying on a bed, mattress, cremation ground or *Siddhashila* someone utters—Oh ! This physical body was the instrument of learning the term *shankh/samkhya,* as preached by the Jina, from the guru; reciting and explaining it to disciples, confirming it by demonstration, giving its special lessons to weak

students and affirming it with the help of logic and multiple perspectives (*naya*).

(Question asked by a disciple) Is there some analogy to confirm this ?

(Answer by the guru) Yes, for example (it is conventionally said that) this was a pot of butter (although at present it contains no butter).

This concludes the description of *Jnayak sharir dravya shankh/samkhya* (physical *shankh/samkhya* as body of the knower). (for more details refer to *Illustrated Anuyogadvar Sutra*, Part I, Aphorisms 16-17)

भव्यशरीरद्रव्यसंख्या

४८६. से किं तं भवियसरीरदव्वसंखा ?

भवियसरीरदव्वसंखा जे जीवे जोणीजम्मणणिक्खंते इमेण चेव आदत्तएणं सरीरसमुस्सएणं जिणदिट्ठेणं भावेणं संखा ति पयं सेकाले सिक्खिस्सति।

जहा को दिट्ठंतो ? अयं घयकुंभे भविस्सति। से तं भवियसरीरदव्वसंखा।

४८६. (प्र.) भव्यशरीरद्रव्यसंख्या क्या है ?

(उ.) जन्म समय प्राप्त होने पर जो जीव योनि (गर्भ) से बाहर निकला और भविष्य में उसी पौद्‌गलिक शरीर द्वारा जिनोपदिष्ट भावानुसार संख्या पद को सीखेगा (वर्तमान में नहीं सीख रहा है) तब तक उस जीव का वह शरीर भव्यशरीरद्रव्यसंख्या है।

(प्र.) इसका कोई दृष्टान्त है ?

(उ.) हाँ (जैसे घी भरने के लिए कोई घड़ा हो किन्तु अभी उसमें घी नहीं भरा हो तो उसके लिए कहना) यह घृतकुंभ-घी का घड़ा होगा। यह भव्यशरीरद्रव्यसंख्या है। (आवश्यक के समान सम्पूर्ण विवेचन सूत्र १६ से १९ के अनुसार जानें।)

BHAVYA SHARIR DRAVYA SHANKH/SAMKHYA

486. (Q.) What is this *Bhavya sharir dravya shankh/samkhya* (physical *shankh/samkhya* as body of the potential knower) ?

(Ans.) On maturity a being comes out of the womb or is born and it has the potential to learn the *shankh/samkhya* (*Sutra*), as preached by the Jina, but it is not learning at present. As long as

it is not learning this being is called *Bhavya sharir dravya shankh/samkhya* (physical *shankh/samkhya* as body of the potential knower).

(Question asked by a disciple) Is there some analogy to confirm this ?

(Answer by the guru) Yes, for example (it is conventionally said that) this will be a pot of butter (although at present it contains no butter).

This concludes the description of *Bhavya sharir dravya shankh/samkhya* (physical *shankh/samkhya* as body of the potential knower). (for more details refer to *Illustrated Anuyogadvar Sutra,* Part I, Aphorisms 16-19)

ज्ञायकशरीर– भव्यशरीर– व्यतिरिक्तद्रव्यसंख्या

४८७. से किं तं जाणयसरीर–भवियसरीर–वइरित्ता दव्वसंखा ?

जाणयसरीर–भवियसरीर–वइरित्ता दव्वसंखा तिविहा पण्णत्ता। तं जहा– एगभविए, बद्धाउए, अभिमुहणामगोत्ते य।

४८७. (प्र.) ज्ञायकशरीर-भव्यशरीर-व्यतिरिक्तद्रव्यसंख्या क्या है ?

(उ.) ज्ञायकशरीर-भव्यशरीर-व्यतिरिक्तद्रव्यसंख्या के तीन प्रकार हैं– (१) एकभविक, (२) बद्धयुष्क, और (३) अभिमुखनामगोत्र।

विवेचन–एकभविक आदि का आशय–जिस जीव ने अभी तक शंखपर्याय की आयु का बंध नहीं किया है, परन्तु मरण के पश्चात् तुरन्त शंखपर्याय प्राप्त करने वाला है अर्थात् शंखभव की प्राप्ति के बीच में एक वर्तमान भव है, इस अपेक्षा से वह एकभविक कहा गया है। जिस जीव ने शंखपर्याय में उत्पन्न होने योग्य आयुष्य कर्म का बंध कर लिया है, ऐसा जीव बद्धायुष्क कहलाता है। जो जीव अति निकट भविष्य में शंखयोनि में उत्पन्न होने वाला है तथा जिस जीव के द्वीन्द्रिय जाति आदि नामकर्म एवं नीचगोत्र रूप गोत्रकर्म जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त के बाद उदय होने वाला है, उस जीव को अभिमुखनामगोत्रशंख कहते हैं। ये तीनों प्रकार के जीव भावशंखता के कारण होने से ज्ञशरीर और भव्यशरीर इन दोनों से व्यतिरिक्त (भिन्न) द्रव्यशंख कहे गये हैं।

JNAYAK SHARIR-BHAVYA SHARIR-VYATIRIKTA DRAVYA SHANKH/SAMKHYA

487. (Q.) What is this *Jnayak sharir-bhavya sharir-vyatirikta dravya shankh/samkhya* (physical *shankh/samkhya* other than the body of the knower and the body of the potential knower) ?

(Ans.) *Jnayak sharir-bhavya sharir-vyatirikta dravya shankh* (physical *shankh* other than the body of the knower and the body of the potential knower) is of three kinds—(1) *Ekabhavik*, (2) *Baddhayushk*, and (3) *Abhimukh-naam-gotra*.

Elaboration—A being who has not yet actually bound the *karmas* leading to a life in the form of a *shankh* (conch-shell) in the next birth but is going to be born as a *shankh* immediately on death is called *Ekabhavik*. In other words he is going to be born as a *shankh* after an interval of only one birth (*eka bhava*) that is the present one. A being who has actually bound the *karmas* leading to a specific life-span as a *shankh* for the immediately following birth is called *Baddhayushk*. A being who is on the verge of being born as a *shankh* and his *Naam-karma* (*karma* that determines the destinies and body types responsible for a body as two-sensed being etc.) and *Gotra-karma* (*karma* responsible for the higher or lower status of a being) are going to come to fruition in a minimum of one *Samaya* and maximum of *antar-muhurt* (less than forty eight minutes) is called *Abhimukh-naam-gotra*. All these three types are called *Jnayak sharir-bhavya sharir-vyatirikta dravya shankh/samkhya* (physical *shankh/samkhya* other than the body of the knower and the body of the potential knower) because although they have a physical existence, they neither fall in the category of the body of the knower nor that of the body of the potential knower.

४८८. एगभविए णं भंते ! एगभविए त्ति कालतो केवचिरं होति ?

जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं पुव्वकोडी।

४८८. (प्र.) भंते ! एकभविक जीव 'एकभविक' ऐसा नाम वाला कितने समय तक रहता है ?

(उ.) एकभविक जीव जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट एक पूर्वकोटि पर्यन्त (एकभविक नाम वाला) रहता है।

488. (Q.) *Bhante* ! For how long does an *Ekabhavik* being remain as *Ekabhavik* ?

(Ans.) An *Ekabhavik* being remains as *Ekabhavik* for a minimum of one *antarmuhurt* (less than 48 minutes) and maximum of one *Purvakoti* (*Illustrated Anuyogadvar Sutra*, Part I, Aphorism 202).

४८९. बद्धाउए णं भंते ! बद्धाउए त्ति कालतो केवचिरं होति ?

जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं पुव्वकोडीतिभागं।

४८९. (प्र.) बद्धायुष्क जीव बद्धायुष्क रूप में कितने काल तक रहता है ?

(उ.) जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट एक पूर्वकोटि वर्ष के तीसरे भाग तक रहता है।

489. (Q.) *Bhante* ! For how long does a *Baddhayushk* being remain as *Baddhayushk* ?

(Ans.) A *Baddhayushk* being remains as *Baddhayushk* for a minimum of one *antarmuhurt* (less than 48 minutes) and maximum of one-third of *Purvakoti.*

४९०. अभिमुहनामगोत्ते णं भंते ! अभिमुहनामगोत्ते त्ति कालतो केवचिरं होति ?

जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं।

४९०. (प्र.) भंते ! अभिमुखनामगोत्र (शंख) का अभिमुखनामगोत्र नाम कितने काल तक रहता है ?

(उ.) जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त काल तक रहता है।

490. (Q.) *Bhante* ! For how long does an *Abhimukh-naam-gotra* being remain as *Abhimukh-naam-gotra* ?

(Ans.) An *Abhimukh-naam-gotra* being remains as *Abhimukh-naam-gotra* for a minimum of one *Samaya* (less than 48 minutes) and maximum of one *antarmuhurt* (less than 48 minutes).

एकभविक आदि शंखविषयक नयदृष्टि

४९१. इयाणिं को णओ कं संखं इच्छति ?

तत्थ णेगम-संगह-ववहारा तिविहं संखं इच्छंति, तं जहा-एक्कभवियं बद्धाउयं अभिमुहनामगोत्तं च। उजुसुओ दुविहं संखं इच्छति, तं जहा-बद्धाउयं च अभिमुहनामगोत्तं च। तिण्णि सद्दणया अभिमुहणामगोत्तं संखं इच्छंति। से तं जाणयसरीर-भवियसरीर-वइरित्ता दव्वसंखा। से तं नोआगमओ दव्वसंखा। से तं दव्वसंखा।

४९१. (प्र.) इन तीन शंखों में से कौन नय किस शंख को मानता है ?

(उ.) नैगमनय, संग्रहनय और व्यवहारनय एकभविक, बद्धायुष्क और अभिमुखनामगोत्र तीनों प्रकार के शंखों को शंख मानते हैं। ऋजुसूत्रनय बद्धायुष्क और अभिमुखनामगोत्र, इन दोनों का शंख स्वीकार करता है। (आगे के) तीनों शब्दनय मात्र अभिमुखनामगोत्र शंख को ही शंख मानते हैं।

यह ज्ञायकशरीर-भव्यशरीर-व्यतिरिक्तद्रव्यशंख का स्वरूप है। यही नोआगम से द्रव्यशंख (संख्या) का स्वरूप है। द्रव्यसंख्या का वर्णन पूर्ण हुआ।

विवेचन–नैगम आदि प्रथम तीन नय स्थूल दृष्टि वाले होने से तीनों प्रकार के शंखों को शंख रूप में मानते हैं। क्योंकि वे आगे होने वाले कार्य के कारण में कार्य का उपचार करके वर्तमान में उसे कार्य रूप में मान लेते हैं। जैसे भविष्य में राजा होने वाले राजकुमार को भी राजा कहते हैं। इसी प्रकार एकभविक, बद्धायुष्क और अभिमुखनामगोत्र, ये तीनों प्रकार के द्रव्यशंख अभी तो नहीं किन्तु भविष्य में भावशंख होंगे, इसीलिए ये तीनों नय इनको भावशंख रूप में स्वीकार करते हैं।

ऋजुसूत्रनय पूर्व के तीन नयों की अपेक्षा विशेष शुद्ध है। अतः यह बद्धायुष्क और अभिमुखनामगोत्र–इन दो प्रकार के शंखों को मानता है। इसका मत है कि एकभविक जीव को शंख नहीं मानना चाहिए, क्योंकि वह भावशंख से बहुत अन्तर पर है।

शब्द, समभिरूढ़ और एवंभूतनय ऋजुसूत्रनय से भी शुद्धतर हैं। इस कारण भावशंख के समीप होने से तीसरे–अभिमुखनामगोत्र शंख को तो शंख मानते हैं, किन्तु प्रथम दोनों प्रकार के (एकभविक, बद्धायुष्क) शंख, भावशंख के प्रति बहुत अन्तर पर होने से उन्हें शंख के रूप में स्वीकार नहीं करते।

THE NAYA ANGLE

491. (Q.) Of these three kinds of *shankh* which conforms to which particular *naya* (viewpoint) ?

(Ans.) *Naigam naya, Samgraha naya* and *Vyavahar naya* accept all the three, *Ekabhavik, Baddhayushk* and *Abhimukh-naam-gotra,* as *shankh. Rijusutra naya* accepts *Baddhayushk* and *Abhimukh-naam-gotra* as *shankh.* The following three *Shabd nayas* accept only *Abhimukh-naam-gotra,* as *shankh.*

This concludes the description of *Jnayak sharir-bhavya sharir-vyatirikta dravya shankh* (physical *shankh* other than the body of the knower and the body of the potential knower). This concludes the description of *No-agamatah dravya shankh/samkhya* (physical *shankh/samkhya* without scriptural knowledge). This also concludes the description of *Dravya samkhya/shankh* (physical aspect of *samkhya/shankh*).

Elaboration—As the scope of the first three *nayas* including *Naigam* is broader they accept all the aforesaid three kinds of *shankh* as *shankh.* This is because they install the future effect on the cause and accept it as the consequence. For example a 'would be king' is called king even when he is still a prince. In the same way the three kinds of physical *shankh, Ekabhavik, Baddhayushk* and *Abhimukh-naam-gotra,* although not *shankh* at present, are accepted as *shankh* because they are to become *shankh* in future.

Rijusutra naya is more specific as compared to the former three *nayas.* Therefore, it only accepts *Baddhayushk* and *Abhimukh-naam-gotra* as *shankh.* It says that *Ekabhavik* cannot be accepted as *shankh* because it is considerably far from actually becoming a *shankh.*

Shabd, Samabhirudha and *Evambhuta nayas* are even more specific than *Rijusutra naya.* Therefore, they accept *Abhimukh-naam-gotra* as *shankh* because it is on the threshold of becoming a *shankh* but do not accept the other two because they are comparatively farther from becoming an actual *shankh.*

(४) औपम्यसंख्या

४९२. (१) से किं तं ओवम्मसंखा ?

ओवम्मसंखा चउव्विहा पण्णत्ता। तं जहा—१. अत्थि संतयं संतएणं उवमिज्जइ २. अत्थि संतयं असंतएणं उवमिज्जइ ३. अत्थि असंतयं संतएणं उवमिज्जइ ४. अत्थि असंतयं असंतएणं उवमिज्जइ।

४९२. (१) (प्र.) औपम्यसंख्या क्या है ?

(उ.) (उपमा देकर किसी वस्तु का स्वरूप समझाना औपम्यसंख्या है।) उसके चार प्रकार हैं। जैसे—(१) सद् वस्तु को सद् वस्तु की उपमा देना, (२) सद् वस्तु को असद् वस्तु की उपमा देना, (३) असद् वस्तु को सद् वस्तु की उपमा देना, तथा (४) असद् वस्तु को असद् वस्तु की उपमा देना।

(4) AUPAMYA SAMKHYA

492. (1) (Q.) What is this *Aupamya samkhya* (*samkhya* determined through a metaphor) ?

(Ans.) *Aupamya samkhya* (*samkhya* determined through a metaphor) is of four kinds—(1) To give analogy of a *sat* (existent)

thing to a *sat* (existent) thing, (2) To give analogy of an *asat* (non-existent) thing to a *sat* (existent) thing, (3) To give analogy of a *sat* (existent) thing to an *asat* (non-existent) thing, (4) To give analogy of an *asat* (non-existent) thing to an *asat* (non-existent) thing.

सद्–सद् रूप औपम्यसंख्या

(२) तत्थ संतयं संतएणं उवमिज्जइ, जहा–संता अरहंता संतएहिं पुरवरेहिं संतएहिं कवाडएहिं संतएहिं वच्छएहिं उवमिज्जंति, तं जहा–

पुरवर–कवाड–वच्छा फलिहभूया दुंदुभि–त्थणियघोसा।
सिरिवच्छंकियवच्छा सव्वे वि जिणा चउव्वीसं॥१॥

(२) जब सद् वस्तु को सद् वस्तु से उपमित किया जाता है, वह इस प्रकार है–

सद्रूप अरिहंत भगवन्तों के प्रशस्त वक्षस्थल को सद्रूप श्रेष्ठ नगरों के सत् कपाटों की उपमा देना, जैसे–सभी चौबीस जिन–तीर्थंकर प्रधान–उत्तम नगर के (तोरणद्वार–फाटक के कपाटों के समान वक्षस्थल, अर्गला के समान भुजाओं, देवदुन्दुभि या स्तनित–(मेघ गर्जना) के समान स्वर और श्रीवत्स (स्वस्तिक विशेष) से अंकित वक्षस्थल वाले होते हैं॥१॥

ANALOGY OF SAT TO A SAT

(2) The (examples of) analogy of a *sat* (existent) thing to a *sat* (existent) thing are as follows—

To give analogy of the existing gates of great cities to the prominent chest of existent *Arhants* (*Tirthankars*) as—All the twenty four Jinas (*Tirthankars*) have chests like the (doors of) main gates of a great city, arms like (their) door-bolt, voice like sound of drums (alike the rumbling of clouds) and are embellished with the *Srivatsa* mark (a specific auspicious sign).

सद्–असद् रूप औपम्यसंख्या

(३) संतयं असंतएणं उवमिज्जइ जहा–संताइं नेरइय–तिरिक्खजोणिय–मणूस–देवाणं आउयाइं असंतएहिं पलिओवम–सागरोवमेहिं उवमिज्जंति।

(३) विद्यमान पदार्थ को अविद्यमान पदार्थ से उपमित करना। जैसे–नारक, तिर्यंच, मनुष्य और देवों की विद्यमान आयु के प्रमाण को अविद्यमान पल्योपम और सागरोपम द्वारा बतलाना।

ANALOGY OF ASAT TO A SAT

(3) The (examples of) analogy of an *asat* (non-existent) to a *sat* (existent) thing are as follows—To express the life-spans of existent infernal beings, animals, human beings and divine beings in conceptual terms like *Palyopam* and *Sagaropam* that are non-existent.

असद्–सद् रूप औपम्यसंख्या

(४) असंतयं संतएणं उवमिज्जति। जहा–

परिजूरियपेरंतं चलंतबेंटं पडंत निच्छीरं।
पत्तं वसणप्पत्तं कालप्पत्तं भणइ गाहं॥२॥

जह तुब्भे तह अम्हे, तुम्हे वि य होहिहा जहा अम्हे।
अप्पाहेति पडंतं पंडुयपत्तं किसलयाणं॥३॥

णवि अत्थि णवि य होही उल्लावो किसल–पंडुपत्ताणं।
उवमा खलु एस कया भवियजणविबोहणट्ठाए॥४॥

(४) अविद्यमान–असद् वस्तु को विद्यमान–सद् वस्तु से उपमित करने को असत्–सत् औपम्यसंख्या कहते हैं। जैसे–

सर्व प्रकार से जीर्ण, डंठल से टूटे, वृक्ष से नीचे गिरे हुए, निस्सार और वृक्ष से वियोग हो जाने से दुःखित ऐसे पुराने पत्ते ने वसंत ऋतु में खिले हुए नवीन पत्ते (किसलय–कोंपल) से कहा।

(किसी गिरते हुए पुराने–जीर्ण पीले पत्ते ने नवोद्गत किसलयों–कोंपलों से कहा–)– "इस समय जैसे तुम हो, हम भी पहले वैसे ही थे, तथा इस समय जैसे हम हो रहे हैं, वैसे ही आगे चलकर तुम भी हो जाओगे।"

यहाँ जो जीर्ण पत्तों और किसलयों के संवाद का उल्लेख किया गया है, वह न तो कभी हुआ है, न होता है और न होगा, किन्तु भव्य जनों को प्रतिबोध के लिए (संसार की क्षणभंगुरता बताने के लिए तथा अपने अभ्युदय में अहंकार और दूसरों की शिक्षा का अनादर नहीं करना चाहिए) कहा है॥ २-३-४॥

ANALOGY OF SAT TO AN ASAT

(4) The (examples of) analogy of a *sat* (existent) to an *asat* (non-existent) thing are as follows—

A leaf withered in all respects, split from the stalk, fallen from the tree, sapless and mournful for the impending separation from the tree addresses a sprout in the spring time. (2)

"As you are at present so were we in the past and as we are now so will you be in the future", tells a falling gray leaf to the newly sprouting leaves. (3)

Neither there is, nor will there be such a dialogue between the sprouting and the withered leaves. Such comparison has, in fact, been made for the enlightenment of the deserving. (In order to stress on the ephemeral nature of the world and to warn not to ignore an advise out of the conceit of attainment.) (4)

असद्–असद् रूप औपम्यसंख्या

(५) असंतयं असंतएण उवमिज्जति—जहा खरविसाणं तहा ससविसाणं। से तं ओवम्मसंखा।

(५) अविद्यमान पदार्थ को अविद्यमान पदार्थ से उपमित करना असद्–असद् रूप औपम्यसंख्या है। जैसे–खर (गधे) का विषाण (सींग) है वैसा ही शश (खरगोश) का सींग है। (–दोनों ही अविद्यमान हैं। न गधे के सींग होते हैं और न ही खरगोश के)

यह औपम्यसंख्या का निरूपण है।

ANALOGY OF ASAT TO AN ASAT

(5) The (examples of) analogy of an *asat* (non-existent) to an *asat* (non-existent) thing are as follows—As is the horn of an ass so is the horn of a rabbit. (both are non-existent as neither an ass has horns nor a rabbit)

This concludes the description of *Aupamya samkhya* (*samkhya* determined through a metaphor).

(५) परिमाणसंख्या

४९३. से किं तं परिमाणसंखा ?

परिमाणसंखा दुविहा पण्णत्ता। तं.—कालियसुयपरिमाणसंखा दिट्ठिवायसुयपरिमाणसंखा य।

४९३. (प्र.) परिमाणसंख्या क्या है ?

गिरे हुए पत्ते

चित्र परिचय १७

Illustration No. 17
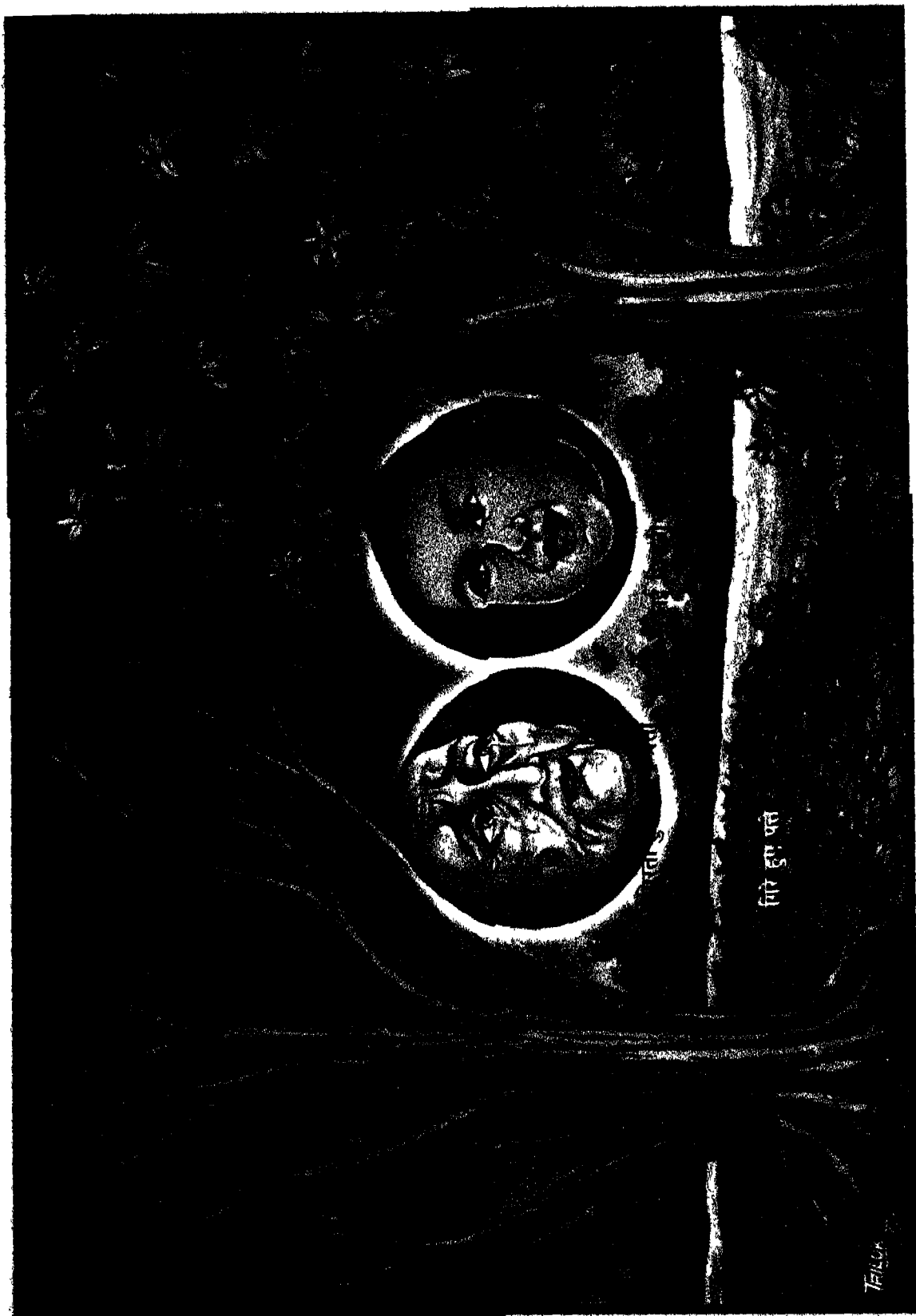
असत् को सत् की उपमा

पुराने जीर्ण वृक्ष से नीचे गिरता हुआ पीला जीर्ण पत्ता नई खिलती कलियों (कोंपलों) से कहता है–"आज जैसे तुम हो, हम भी कभी वैसे ही थे। इस समय जो हम हो रहे हैं, वैसे ही एक दिन तुम हो जाओगे।" यह असत् उपमा है। कभी पत्तों में ऐसा संवाद नहीं हुआ किन्तु इस कथन का भाव सत्–सत्य है, जीव–जगत् की क्षण–भंगुरता ऐसी ही है जिसे असत् उपमा द्वारा समझाया गया है।

-सूत्र ४९२, पृष्ठ ३५७

ANALOGY OF SAT TO AN ASAT

A pale and withered leaf falling from the tree addresses buds and sprouts—"As you are at present so were we in the past and as we are now so will you be in the future." Such dialogue is non-existent but the sentiment conveyed is true. It stresses the ephemeral nature of the world.

—Aphorism 492, p. 357

(उ.) परिमाणसंख्या दो प्रकार की है, जैसे–(१) कालिकश्रुतपरिमाणसंख्या, और (२) दृष्टिवादश्रुतपरिमाणसंख्या।

(5) PARIMAAN SAMKHYA

493. (Q.) What is this *Parimaan samkhya* (*samkhya* as measure or extent) ?

(Ans.) *Parimaan samkhya* (*samkhya* or number as measure or extent) is of two kinds—(1) *Kalik Shrut Parimaan samkhya* (number as measure of the scriptures studied at specific time), and (2) *Drishtivad Shrut Parimaan samkhya* (number as measure of the corpus of scriptures called *Drishtivad*).

कालिकश्रुतपरिमाणसंख्या

४९४. से किं तं कालियसुयपरिमाणसंखा ?

कालियसुयपरिमाणसंखा अणेगविहा पण्णत्ता। तं जहा–पज्जवसंखा अक्खरसंखा संघायसंखा पदसंखा पादसंखा गाहासंखा सिलोगसंखा वेढसंखा निज्जुत्तिसंखा अणुओगदारसंखा उद्देसगसंखा अज्झयणसंखा सुयखंधसंखा अंगसंखा। से तं कालियसुयपरिमाणसंखा।

४९४. (प्र.) कालिकश्रुतपरिमाणसंख्या क्या है ?

(उ.) कालिकश्रुतपरिमाणसंख्या अनेक प्रकार की है। यथा–(१) पर्यव (पर्याय) संख्या, (२) अक्षरसंख्या, (३) संघातसंख्या, (४) पदसंख्या, (५) पादसंख्या, (६) गाथासंख्या, (७) श्लोकसंख्या, (८) वेढ (वेष्टक) संख्या, (९) निर्युक्तिसंख्या, (१०) अनुयोगद्वारसंख्या, (११) उद्देशसंख्या, (१२) अध्ययनसंख्या, (१३) श्रुतस्कन्धसंख्या, और (१४) अंगसंख्या आदि। ये कालिकश्रुतपरिमाणसंख्या हैं।

विवेचन–जिस श्रुत का रात व दिन के प्रथम और अन्तिम प्रहर में स्वाध्याय किया जाता है उसे कालिकश्रुत कहते हैं। जैसे–उत्तराध्ययनसूत्र, दशाश्रुतस्कन्धकल्प (बृहत्कल्प), व्यवहारसूत्र, निशीथसूत्र आदि (कालिकश्रुत के विशेष वर्णन के लिए देखिए नन्दीसूत्र, सूत्र ८१) जिसके द्वारा इनके श्लोक आदि के परिमाण का विचार किया जाता है, उसे कालिकश्रुतपरिमाणसंख्या कहते हैं।

विशेष शब्दों के अर्थ–(१) पर्यव, पर्याय अथवा धर्म और उसकी संख्या को पर्यवसंख्या कहते हैं। प्रत्येक अक्षर के अनन्त पर्याय होते हैं।

(२) अकार आदि अक्षरों की संख्या–गणना अक्षरसंख्या है। अक्षरों की संख्या ६४ है।

(३) दो–तीन आदि अक्षरों के संयोग को संघात कहा जाता है।

(४) स्यादि विभक्ति और तिबादि धातु पद जिसके अन्त में हो ऐसे पदों की संख्या पदसंख्या है।

(५) श्लोक आदि के चतुर्थांश को पाद कहा जाता है।

(६) प्राकृत भाषा में लिखे गये आर्या आदि छन्दविशेष को गाथा कहते हैं।

(७) अनुष्टुप आदि श्लोकों की संख्या श्लोकसंख्या है।

(८) वेष्टकों (वेढा छन्दविशेष) की संख्या वेष्टकसंख्या है।

(९) शब्द और अर्थ की सम्यक् योजना निर्युक्ति है।

(१०) व्याख्या के उपायभूत सत्पदप्ररूपण अथवा उपक्रम, नय, निक्षेप आदि अनुयोगद्वार कहे जाते हैं।

(११) अध्ययनों के अंशविशेष अथवा एक दिन की वाचना, विभाग को उद्देशक कहते हैं।

(१२) शास्त्र के एक भाग विशेष को अध्ययन कहते हैं।

(१३) अध्ययनों के समूह को श्रुतस्कन्ध कहते हैं।

(१४) आचारांग आदि आगम अंग हैं।

KALIK SHRUT PARIMAAN SAMKHYA

494. (Q.) What is this *Kalik Shrut Parimaan samkhya* (number as measure of scriptures studied at specific time) ?

(Ans.) *Kalik Shrut Parimaan samkhya* (number as measure of the scriptures studied at specific time) is of many kinds—(1) *Paryav* or *Prayaya samkhya*, (2) *Akshar samkhya*, (3) *Sanghat samkhya*, (4) *Pad samkhya*, (5) *Paad samkhya*, (6) *Gatha samkhya*, (7) *Shlok samkhya*, (8) *Vedh* or *Veshtak samkhya*, (9) *Niryukti samkhya*, (10) *Anuyogadvar samkhya*, (11) *Uddesh samkhya*, (12) *Adhyayan samkhya*, (13) *Shrutskandh samkhya*, (14) *Anga samkhya* etc.

This concludes the description of *Kalik Shrut Parimaan samkhya* (*samkhya* as measure of scriptures studied at specific time).

Elaboration—The scripture that is studied during the first and last quarter of the day or the night is called *Kalik Shrut*. For example—*Uttaradhyayan Sutra, Dashashrutskandh Kalp (Vrihatkalp), Vyavahar Sutra, Nisheeth Sutra* etc. (for more details see *Illustrated Nandi Sutra*, aphorism 81). That which indicates the number of verses or other parts of such scriptures is called *Kalik Shrut Parimaan samkhya* (*samkhya* as measure of the scriptures studied at specific time).

Technical Terms—

(1) **Paryav or Prayaya samkhya**—is the number of modes, alternatives or properties. Each syllable is said to have infinite modes.

(2) **Akshar samkhya**—is the number of alphabets like '*a*'. It is said to be 64.

(3) **Sanghat samkhya**—is the number of compounds of two or more alphabets.

(4) **Pad samkhya**—is the number of meaningful phrases or sentences.

(5) **Paad samkhya**—is the number of quarters of a verse (*shlok* etc.).

(6) **Gatha samkhya**—is the number of *Gathas* (specific metric verses like *Arya* in Prakrit language).

(7) **Shlok samkhya**—is the number of *Shlokas* (metric verses like *Anushtup* in Sanskrit language).

(8) **Vedh or Veshtak samkhya**—is the number of *Veshtaks* (a specific type of metric verse).

(9) **Niryukti samkhya**—is the number of *Niryuktis* (the proper arrangement of words and parts of speech and their meanings).

(10) **Anuyogadvar samkhya**—is the number of *anuyogadvars* (doors of disquisition or approaches of understanding the meaning of a text).

(11) **Uddesh samkhya**—is the number of sections of chapters generally included in one discourse or study.

(12) **Adhyayan samkhya**—is the number of chapters (independent composite sections of a book).

(13) **Shrutskandh samkhya**—is the number of *Shrutskandhs* (a group of chapters combined to make a part of the book; volume).

(14) **Anga samkhya**—is the number of *Angas* (the name given to the books making the corpus of basic Jain scriptures said to have been propagated by a *Tirthankar*, viz. *Acharanga*).

दृष्टिवादश्रुतपरिमाणसंख्या

४१५. से किं तं दिट्ठिवायसुयपरिमाणसंखा ?

दिट्ठिवायसुयपरिमाणसंखा अणेगविहा पण्णत्ता। तं जहा—पज्जवसंखा जाव अणुओगदारसंखा पाहुडसंखा पाहुडियासंखा पाहुडपाहुडियासंखा वत्थुसंखा पुव्वसंखा। से तं दिट्ठिवायसुयपरिमाणसंखा। से तं परिमाणसंखा।

४९५. (प्र.) दृष्टिवादश्रुतपरिमाणसंख्या क्या है?

(उ.) दृष्टिवादश्रुतपरिमाणसंख्या के अनेक प्रकार हैं। यथा–पर्यवसंख्या यावत् अनुयोगद्वारसंख्या, प्राभृतसंख्या, प्राभृतिकासंख्या, प्राभृत-प्राभृतिकासंख्या, वस्तुसंख्या और पूर्वसंख्या।

यह दृष्टिवादश्रुतपरिमाणसंख्या का स्वरूप है। यही परिमाणसंख्या का निरूपण है।

विवेचन–जिसमें पर्यवसंख्या से लेकर अनुयोगद्वारसंख्या तक के नाम तो कालिकश्रुतपरिमाणसंख्या के अनुरूप हैं और शेष प्राभृत आदि अधिक नामों का कथन सूत्र ४९५ के अनुसार है। ये प्राभृत आदि सब पूर्वान्तर्गत श्रुताधिकार हैं।

प्राभृत–वस्तु का एक अध्याय।

प्राभृतिका–अध्याय का एक प्रकरण।

प्राभृत-प्राभृतिका–अध्याय का अवान्तर प्रकरण।

वस्तु–अनेक प्राभृतों का समुदाय।

पूर्व–दृष्टिवादश्रुत का एक स्वतंत्र विभाग जिसमें विषयविशेष की चर्चा हो।

DRISHTIVAD SHRUT PARIMAAN SAMKHYA

495. (Q.) What is this *Drishtivad Shrut Parimaan samkhya* (number as measure of the corpus of scriptures called *Drishtivad*)?

(Ans.) *Drishtivad Shrut Parimaan samkhya* (number as measure of the corpus of scriptures called *Drishtivad*) is of many kinds—*Paryav* or *Prayaya samkhya*, (and so on up to) *Anuyogadvar samkhya, Prabhrit samkhya, Prabhritika samkhya, Prabhrit-prabhritika samkhya, Vastu samkhya* and *Purva samkhya.*

This concludes the description of *Drishtivad Shrut Parimaan samkhya* (number as measure of the corpus of scriptures called *Drishtivad*). This also concludes the description of *Parimaan samkhya* (*samkhya* as measure or extent).

Elaboration—Here the first ten terms are same as the preceding aphorism. The following terms that are names of portions exclusively of *Purvas* (subtle canon) are explained as follows—

Prabhrit—one chapter of a *Vastu.*

Prabhritika—one section of a chapter.

Prabhrit-prabhritika—a section within a section of a chapter.

Vastu—A group of many chapters.

Purva—An independent section of *Drishtivad shrut* dealing with a specific subject.

(६) ज्ञानसंख्या

४९६. से किं तं जाणणासंखा ?

जाणणासंखा जो जं जाणइ सो तं जाणति, तं जहा—सद्दं सद्दिओ, गणियं गणिओ, निमित्तं नेमित्तिओ, कालं कालनाणी, वेज्जो वेज्जियं। से तं जाणणासंखा।

४९६. (प्र.) ज्ञानसंख्या क्या है ?

(उ.) जो जिसको जानता है उसे ज्ञानसंख्या कहते हैं। जैसे–शब्द को जानने वाला शाब्दिक, गणित को जानने वाला गणितज्ञ, निमित्त को जानने वाला नैमित्तिक, काल को जानने वाला कालज्ञानी (कालज्ञ) और वैद्यक को जानने वाला वैद्य।

यह ज्ञानसंख्या का स्वरूप है।

विवेचन–जिसके द्वारा वस्तु का स्वरूप जाना जाता है वह 'ज्ञान' और इस ज्ञान रूप संख्या को ज्ञानसंख्या कहा जाता हैं।

(6) JNANA SAMKHYA

496. (Q.) What is this *Jnana samkhya* (*samkhya* as determinant of knowledge) ?

(Ans.) *Jnana samkhya* (*samkhya* as determinant of knowledge) defines the knower in context of what he knows. For example—One who knows *shabd* (words) is a *shabdik* (grammarian), one who knows *ganit* (mathematics) is a *ganitajna* (mathematician), one who knows *nimitta* (augury) is a *naimittik (augur)*, one who knows *kaal* (time; also past, present and future) is a *kalajna* (timekeeper; also astrologer) and one who knows *vaidyak* (medicine) is a *vaidya* (doctor).

This concludes the description of *Jnana samkhya* (*samkhya* as determinant of knowledge).

Elaboration—What defines the knower in context of the subject he knows is *samkhya* (symbol) of that particular knowledge or subject.

(७) गणनासंख्या

४९७. से किं तं गणणासंखा ?

गणणासंखा एक्को गणणं न उवेति, दुप्पभितिसंखा। तं जहा—१. संखेज्जए, २. असंखेज्जए, ३. अणंतए।

४९७. (प्र.) गणनासंख्या क्या है ?

(उ.) 'एक' (१) की गणना नहीं होती है इसलिए दो से गणना प्रारम्भ होती है। वह गणनासंख्या–(१) संख्यात, (२) असंख्यात, और (३) अनन्त, इस तरह तीन प्रकार की जानना चाहिए।

विवेचन—गणना दो से प्रारम्भ होती है। एक संख्या तो है, किन्तु गणना नहीं है। एक का वर्ग करने से १ × १ = १ ही आता है, अर्थात् संख्या में वृद्धि नहीं होती, इसलिए 'एक' गणनासंख्या में नहीं गिना जाता। (लोक प्रकाश ४/३१०) यह गणनासंख्या संख्येय (संख्यात), असंख्येय (असंख्यात) और अनन्त के भेद से तीन प्रकार की है।

(7) GANANA SAMKHYA (SAMKHYA AS COUNTING)

497. (Q.) What is this *Ganana samkhya* (*samkhya* as counting)?

(Ans.) As one (1) is beyond the scope of counting, the numbers (*samkhya*) start from two (2) and *Ganana samkhya* (*samkhya* as counting) is as follows—(1) *Samkhyat* (countable), (2) *Asamkhyat* (uncountable or innumerable), and (3) *Anant* (infinite).

Elaboration—Counting starts with the numeral two (2). Although one (1) is a numeral it has no mathematical significance. The square of one is one only, which means it does not increase and that is the reason it is not included in *Ganana samkhya* (number as counting) (*Lok Prakash* 4/310). This *Ganana samkhya* (number as counting) is of three kinds—countable, uncountable and infinite.

संख्यात आदि के तीन भेद

४९८. से किं तं संखेज्जए ?

संखेज्जए तिविहे पण्णत्ते। तं जहा—जहण्णए उक्कोसए अजहण्णमणुक्कोसए।

४९८. (प्र.) संख्यात का स्वरूप क्या है ?

(उ.) संख्यात तीन प्रकार का है, जैसे–(१) जघन्य संख्यात, (२) उत्कृष्ट संख्यात, और (३) अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) संख्यात।

SUB-CATEGORIES

498. (Q.) What is this *Samkhyat* (countable) ?

(Ans.) *Samkhyat* (countable) is of three kinds—(1) *Jaghanya samkhyat* (countable minimum), (2) *Utkrisht samkhyat* (countable maximum), and (3) *Ajaghanya-anutkrisht samkhyat* (countable intermediate, i.e. neither maximum nor minimum).

४९९. से किं तं असंखेज्जए ?

असंखेज्जए तिविहे पण्णत्ते। तं जहा—परित्तासंखेज्जए, जुत्तासंखेज्जए, असंखेज्जासंखेज्जए।

४९९. (प्र.) असंख्यात क्या है ?

(उ.) असंख्यात के तीन प्रकार हैं, जैसे–(१) परीतासंख्यात, (२) युक्तासंख्यात, और (३) असंख्यातासंख्यात।

499. (Q.) What is this *Asamkhyat* (innumerable) ?

(Ans.) *Asamkhyat* (innumerable) is of three kinds—(1) *Parit Asamkhyat* (lower innumerable), (2) *Yukt Asamkhyat* (innumerable raised to the power of itself), and (3) *Asamkhyat-asamkhyat* (innumerable-innumerable).

५००. से किं तं परित्तासंखेज्जए ?

परित्तासंखेज्जए तिविहे पण्णत्ते। तं.—जहण्णए उक्कोसए अजहण्णमणुक्कोसए।

५००. (प्र.) परीतासंख्यात क्या है ?

(उ.) परीतासंख्यात तीन प्रकार का है–(१) जघन्य परीतासंख्यात, (२) उत्कृष्ट परीतासंख्यात, और (३) अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) परीतासंख्यात।

500. (Q.) What is this *Parit Asamkhyat* (lower innumerable) ?

(Ans.) *Parit Asamkhyat* (lower innumerable) is of three kinds—(1) *Jaghanya Parit Asamkhyat* (minimum lower innumerable), (2) *Utkrisht Parit Asamkhyat* (maximum lower innumerable), and (3) *Ajaghanya-anutkrisht Parit Asamkhyat* (intermediate lower innumerable, i.e. neither maximum nor minimum).

५०१. से किं तं जुत्तासंखेज्जए ?

जुत्तासंखेज्जए तिविहे पण्णत्ते। तं.—जहण्णए उक्कोसए अजहण्णमणुक्कोसए।

५०१. (प्र.) युक्तासंख्यात क्या है?

(उ.) युक्तासंख्यात तीन प्रकार का है। यथा-(१) जघन्य युक्तासंख्यात, (२) उत्कृष्ट युक्तासंख्यात, और (३) अजघन्यानुत्कृष्ट (मध्यम) युक्तासंख्यात।

501. (Q.) What is this *Yukt Asamkhyat* (innumerable raised to the power of itself)?

(Ans.) *Yukt Asamkhyat* (innumerable raised to the power of itself) is of three kinds—(1) *Jaghanya Yukt Asamkhyat* (innumerable raised to the power of itself, minimum), (2) *Utkrisht Yukt Asamkhyat* (innumerable raised to the power of itself, maximum), and (3) *Ajaghanya-anutkrisht Yukt Asamkhyat* (innumerable raised to the power of itself, intermediate, i.e. neither maximum nor minimum).

५०२. से किं तं असंखेज्जासंखेज्जए ?

असंखेज्जासंखेज्जए तिविहे पण्णत्ते। तं जहा—जहण्णए उक्कोसए अजहण्णमणुक्कोसए।

५०२. (प्र.) असंख्यातासंख्यात क्या है?

(उ.) असंख्यातासंख्यात तीन प्रकार का है। यथा-(१) जघन्य असंख्यातासंख्यात, (२) उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात, और (३) अजघन्यानुत्कृष्ट (मध्यम) असंख्यातासंख्यात।

502. (Q.) What is this *Asamkhyat-asamkhyat* (innumerable-innumerable)?

(Ans.) *Asamkhyat-asamkhyat* (innumerable-innumerable) is of three kinds—(1) *Jaghanya Asamkhyat-asamkhyat* (minimum innumerable-innumerable), (2) *Utkrisht Asamkhyat-asamkhyat* (maximum innumerable-innumerable), and (3) *Ajaghanya-anutkrisht Asamkhyat-asamkhyat* (intermediate innumerable-innumerable, i.e. neither maximum nor minimum).

५०३. से किं तं अणंतए ?

अणंतए तिविहे पण्णत्ते। तं जहा—परित्ताणंतए जुत्ताणंतए अणंताणंतए।

५०३. (प्र.) अनन्त क्या है?

(उ.) अनन्त के तीन प्रकार हैं। यथा-(१) परीतानन्त, (२) युक्तानन्त, और (३) अनन्तानन्त।

503. (Q.) What is this *Anant* (infinite) ?

(Ans.) *Anant* (infinite) is of three kinds—(1) *Parit Anant* (lower infinite), (2) *Yukt Anant* (infinite raised to the power of itself), and (3) *Anant-anant* (infinite-infinite).

५०४. से किं तं परित्ताणंतए ?

परित्ताणंतए तिविहे पण्णत्ते। तं.-जहण्णए उक्कोसए अजहण्णमणुक्कोसए।

५०४. (प्र.) परीतानन्त किसे कहते हैं ?

(उ.) परीतानन्त तीन प्रकार का है। यथा-(१) जघन्य परीतानन्त, (२) उत्कृष्ट परीतानन्त, और (३) अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) परीतानन्त।

504. (Q.) What is this *Parit Anant* (lower infinite) ?

(Ans.) *Parit Anant* (lower infinite) is of three kinds—(1) *Jaghanya Parit Anant* (minimum lower infinite), (2) *Utkrisht Parit Anant* (maximum lower infinite), and (3) *Ajaghanya-anutkrisht Parit Anant* (intermediate lower infinite, i.e. neither maximum nor minimum).

५०५. से किं तं जुत्ताणंतए ?

जुत्ताणंतए तिविहे पण्णत्ते। तं जहा-जहण्णए उक्कोसए अजहण्णमणुक्कोसए।

५०५. (प्र.) युक्तानन्त किसे कहते हैं ?

(उ.) युक्तानन्त के तीन प्रकार हैं, जैसे-(१) जघन्य युक्तानन्त, (२) उत्कृष्ट युक्तानन्त, और (३) अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) युक्तानन्त।

505. (Q.) What is this *Yukt Anant* (infinite raised to the power of itself) ?

(Ans.) *Yukt Anant* (infinite raised to the power of itself) is of three kinds—(1) *Jaghanya Yukt Anant* (infinite raised to the power of itself, minimum), (2) *Utkrisht Yukt Anant* (infinite raised to the power of itself, maximum), and (3) *Ajaghanya-anutkrisht Yukt Anant* (infinite raised to the power of itself, intermediate, i.e. neither maximum nor minimum).

५०६. से किं तं अणंताणंतए ?

अणंताणंतए दुविहे पण्णत्ते। तं जहा–जहण्णए य अजहण्णमणुक्कोसए य।

५०६. (प्र.) अनन्तानन्त क्या है ?

(उ.) अनन्तानन्त के दो प्रकार हैं। यथा–(१) जघन्य अनन्तानन्त, और (२) अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) अनन्तानन्त।

विवेचन–उक्त प्रश्नोत्तरों में गणना संख्या के संख्यात, असंख्यात और अनन्त ये तीन मुख्य भेद बताकर तीन मुख्य भेदों के अवान्तर बीस भेद-प्रभेदों का निरूपण है। संख्यात के तो जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट ये तीन अवान्तर भेद हैं। लेकिन असंख्यात और अनन्त के मुख्य तीन अवान्तर भेदों के नामों में परीत और युक्त तो समान हैं किन्तु तीसरे भेद का नाम असंख्यातासंख्यात और अनन्तानन्त है। अनन्तानन्त में उत्कृष्ट अनन्तानन्त असम्भव होने से यह भेद नहीं बनता है। अतएव अनन्त के आठ ही भेद होते हैं। उक्त कथन की संक्षिप्त तालिका इस प्रकार बनती है–
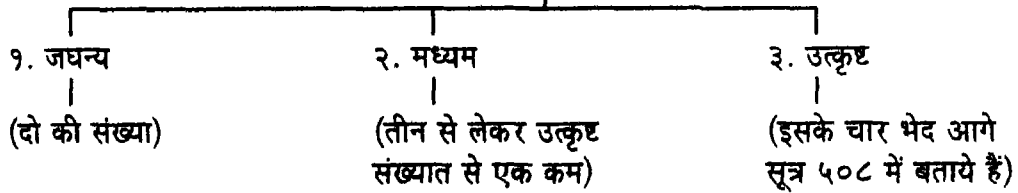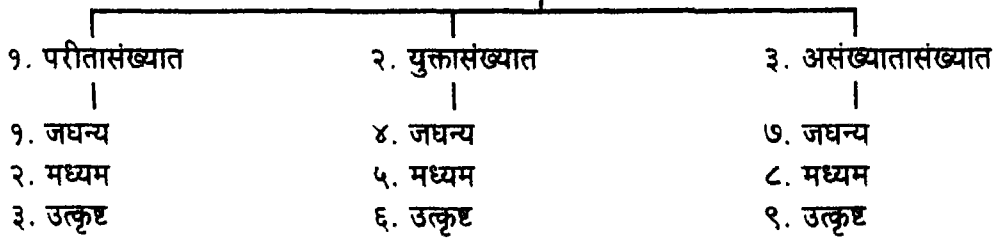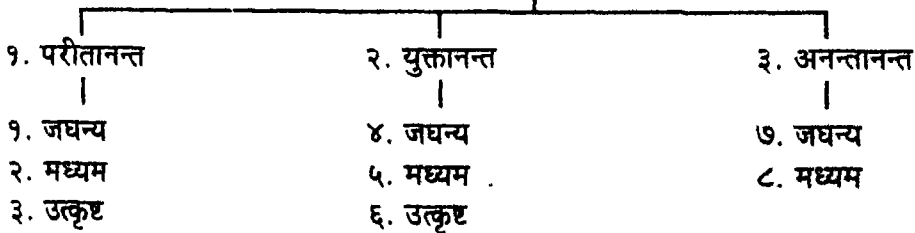
506. (Q.) What is this *Anant-anant* (infinite-infinite) ?

(Ans.) *Anant-anant* (infinite-infinite) is of two kinds—(1) *Jaghanya Anant-anant* (minimum infinite-infinite), and (2) *Ajaghanya-anutkrisht Anant-anant* (intermediate infinite-infinite, i.e. neither maximum nor minimum).

Elaboration—In the aforesaid question-answers three basic categories of counting have been enumerated as countable, innumerable and infinite. Further, their sub-categories have been defined. Countable has three sub-categories, viz. maximum, intermediate and minimum. In case of innumerable and infinite the first two categories, *Parit* and *Yukt*, are same but the third one is called innumerable-innumerable and infinite-infinite respectively. In case of infinite-infinite there is no scope of maximum, therefore this sub-category is absent. Thus Infinite has only eight kinds. This information compressed as a table is as follows—

५०७. जहण्णयं संखेज्जयं केत्तियं होइ ?

दोरूवाइं, तेण परं अजहण्णमणुक्कोसयाइं ठाणाइं जाव उक्कोसयं संखेज्जयं ण पावइ।

५०७. (प्र.) जघन्य संख्यात कितना होता है? (अर्थात् किस संख्या से लेकर किस संख्या तक जघन्य संख्यात माना जाता है?)

(उ.) दो की संख्या जघन्य संख्यात है, उसके पश्चात् (तीन, चार आदि) यावत् उत्कृष्ट संख्यात में एक कम रहने तक संख्यात है।

TYPES OF SAMKHYAT

507. (Q.) How much is *Jaghanya samkhyat* (minimum countable)?

(Ans.) *Jaghanya samkhyat* (minimum countable) is number two (2). After that (three, four etc.) up to one less than *Utkrisht samkhyat* (maximum countable) are *Ajaghanya-anutkrisht samkhyat* (intermediate numbers).

५०८. उक्कोसयं संखेज्जयं केत्तियं होइ ?

उक्कोसयं संखेज्जयस्स परूवणं करिस्सामि—से जहानामए पल्ले सिया, एगं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खंभेणं, तिण्णि जोयणसयसहस्साइं सोलस य सहस्साइं दोण्णि य सत्तावीसे जोयणसते तिण्णि य कोसे अट्ठावीसं च धणुसतं तेरस य अंगुलाइं अद्धंगुलयं च किंचिविसेसाहियं परिक्खेवेणं पण्णत्ते। से णं पल्ले सिद्धत्थयाणं भरिए। ततो णं तेहिं सिद्धत्थएहिं दीव—समुद्दाणं उद्धारे घेप्पति, एगे दीवे एगे समुद्दे २ एवं पक्खिप्पमाणेहिं २ जावइया णं दीव—समुद्दा तेहिं सिद्धत्थएहिं अप्फुण्णा एस णं एवतिए खेत्ते पल्ले आइट्ठे।

से णं पल्ले सिद्धत्थयाणं भरिए। ततो णं तेहिं सिद्धत्थएहिं दीव—समुद्दाणं उद्धारे घेप्पति एगे दीवे एगे समुद्दे २ एवं पक्खिप्पमाणेहिं २ जावइया णं दीव—समुद्दा तेहिं सिद्धत्थएहिं अप्फुन्ना एस णं एवतिए खेत्ते पल्ले पढमा सलागा, एवइयाणं सलागाणं असंलप्पा लोगा भरिया तहा वि उक्कोसयं संखेज्जयं ण पावइ।

जहा को दिट्ठंतो ?

से जहाणामए मंचे सिया आमलगाणं भरिते, तत्थ णं एगे आमलए पक्खित्ते से माते, अण्णे वि पक्खित्ते से वि माते, अन्ने वि पक्खित्ते से वि माते, एवं पक्खिप्पमाणे २ होही से आमलए जम्मि पक्खित्ते से मंचए भरिज्जिहिइ जे वि तत्थ आमलए न माहिति।

५०८. (प्र.) उत्कृष्ट संख्यात कितना है ?

(उ.) उत्कृष्ट संख्यात की प्ररूपणा इस प्रकार करूँगा-(असत्कल्पना से) जैसे एक लाख योजन लम्बा-चौड़ा और तीन लाख सोलह हजार दो सो सत्ताईस योजन, तीन कोश, अट्ठाईस सौ धनुष एवं साढ़े तेरह अंगुल से कुछ अधिक परिधि वाला कोई एक (अनवस्थित नामक) पल्य (कोठा/कुआँ) हो। रत्नप्रभापृथ्वी इस पल्य को सर्षपों-सरसों के दानों से भर दिया जाये। उन सर्षपों से द्वीप और समुद्रों का उद्धार (परिमाण) जाना जाता है अर्थात् उन सर्षपों में से एक को द्वीप (जम्बूद्वीप) में, एक को समुद्र (लवण-समुद्र) में फिर एक द्वीप में, एक समुद्र में इस क्रम से गिराते जाने से उन दानों से जितने द्वीप-समुद्र भर जायें-(व्याप्त हो जायें) उतने क्षेत्र का अनवस्थित पल्य बुद्धि से परिकल्पित करके उस पल्य को सरसों के दानों से भर दिया जाये। तदनन्तर उन सरसों के दानों से द्वीप-समुद्रों की संख्या का प्रमाण जाना जाता है। अनुक्रम से एक द्वीप में और एक समुद्र में इस तरह गिराते हुए जितने द्वीप-समुद्र उन सरसों के दानों से भर जायें, उनके समाप्त होने पर एक दाना शलाकापल्य में डाल दिया जाये। इस प्रकार के शलाका रूप पल्य में भरे सरसों के दानों से असंलप्य-अकथनीय लोक भरे हुए हों तब भी उत्कृष्ट संख्या का स्थान प्राप्त नहीं होता है।

इसके लिए कोई दृष्टान्त है ? (जिज्ञासु ने पूछा।)

(आचार्य ने उत्तर दिया)-जैसे कोई एक मंच (मचान) हो और वह आँवलों से भरा हो, वहाँ एक आँवला डाला तो वह भी समा गया, दूसरा डाला तो वह भी समा गया, तीसरा डाला तो वह भी समा गया, इस प्रकार उन्हें डालते-डालते अन्त में एक आँवला ऐसा होगा कि जिसके डालने से मंच पूर्ण भर जाता है। उसके बाद वहाँ आँवला नहीं समाता है। (इसी प्रकार बारम्बार डाले गये सरसों से जब असंलप्य-बहुत से पल्य नीचे से ऊपर तक भर जायें, उनमें एक सरसों जितना भी स्थान खाली न रहे तब उत्कृष्ट संख्या का स्थान प्राप्त होता है।)

विवेचन-प्रस्तुत सूत्रों में संख्यात गणनासंख्या के जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट-इन तीनों भेदों का स्वरूप बताया है।

जघन्य संख्यात-दो की संख्या जघन्य संख्यात है।

मध्यम संख्यात—जघन्य संख्यात–दो से ऊपर और उत्कृष्ट संख्यात से पूर्व तक की मध्यवर्ती सब संख्यायें मध्यम संख्यात हैं। इसके लिए कल्पना से मान लें कि १०० की संख्या उत्कृष्ट और २ की संख्या जघन्य संख्यात है तो २ और १०० के बीच ३ से लेकर ९९ तक की सभी संख्याएँ मध्यम संख्यात हैं।

उत्कृष्ट संख्यात—दो से लेकर दहाई, सैकड़ा, हजार, लाख, करोड़ शीर्षप्रहेलिका आदि जो संख्यात की राशियाँ हैं, उनका तो किसी न किसी प्रकार कथन किया जाना शक्य है, लेकिन संख्या इतनी ही नहीं है। अतएव उसके बाद की संख्या का कथन उपमा द्वारा ही सम्भव है। इसलिए सूत्र में उपमा-कल्पना का आधार लेकर उत्कृष्ट संख्यात का स्वरूप स्पष्ट किया है।

शास्त्र में सत् और असत् दो प्रकार की कल्पना होती है। कार्य में परिणत हो सकने वाली कल्पना को सत्कल्पना और जो किसी वस्तु का स्वरूप समझाने में तो उपयोगी हो, किन्तु कार्य में परिणत न की जा सके उसे असत्कल्पना कहते हैं। सूत्रोक्त पल्य का विचार असत्कल्पना है और उसका प्रयोजन उत्कृष्ट संख्यात का स्वरूप समझाना मात्र है। मलधारीयावृत्ति तथा तिलोयपण्णत्ति आदि ग्रन्थों के आधार पर आचार्य महाप्रज्ञ जी ने उत्कृष्ट संख्यात आदि का जो स्वरूप समझाया है, वह बहुत विस्तृत, जटिल गणित का विषय होने से परिशिष्ट में दिया गया है। (परिशिष्ट ३ देखें)

508. (Q.) How much is *Utkrisht samkhyat* (maximum countable) ?

(Ans.) I will explain *Utkrisht samkhyat* (maximum countable) as follows—Suppose there is an imaginary circular *palya* (silo) which is said to be one hundred thousand *yojan* in length and breadth and a little more than three hundred sixteen thousand two hundred twenty seven (3,16,227) *yojan,* three *Kosa,* twenty eight hundred *Dhanush* and thirteen and a half *Anguls* in circumference. (This is the measure of Jambudveep.) This silo is filled with mustard seeds. Then those mustard seeds are emptied in continents and oceans by throwing one mustard seed in one ocean and one in one continent consecutively. Now imagine a silo of such vast area as the total number of continents and oceans thus touched by all those mustard seeds thrown one after another. This latter silo (called *anavasthit-palya*) is now filled with mustard seeds. Then those mustard seeds are emptied in continents and oceans by throwing one mustard seed in one ocean and one in one continent consecutively. Now imagine a silo of such vast area as the total number of continents and oceans thus touched by all those mustard seeds thrown one after another. One mustard seed is now put in this enormous silo (called *Shalaka-palya*). Even if unimaginable number of *Loks* (islands and oceans) are filled with mustard seeds from such enormous silo one does not arrive at *Utkrisht samkhyat* (maximum countable).

(Q.) Is there an example for this ?

(Ans.) Yes. Suppose there is a platform filled with *amla* (hog-plum) fruits. If one more is added it gets accommodated, yet another is added, that too is accommodated. When this process of adding is continued again and again there will be one last fruit on adding which the platform will be absolutely full. After this, no more fruits can be accommodated there. (In the same way when many said silos are filled completely by adding mustard seeds one by one and there is no place even for a single mustard seed then we arrive at the maximum number.)

Elaboration—In these aphorisms minimum, intermediate and maximum, the three kinds of *samkhyat* (countable numbers), have been explained.

Jaghanya samkhyat (minimum countable)—It is the numerical number two (2).

Madhyam or Ajaghanya-anutkrisht samkhyat (intermediate numbers)—All the numbers after that two (three, four etc.) up to one less than *Utkrisht samkhyat* (maximum countable). Suppose 100 is the maximum *samkhyat*; 2 being the minimum *samkhyat* all the numbers from 3 to 99 become *madhyam samkhyat.*

Utkrisht samkhyat (maximum countable)—It is possible to express in realistic terms numbers like two, tens, hundreds, thousands, hundred thousands, millions and so on up to *Sheersh Prahelika* (10^{273}) but the counting does not end there. Therefore beyond these realistically expressed numbers it is possible to express higher numbers by analogies or metaphors. Here this concept of maximum number has been explained with the help of an imaginary analogy.

In scriptures there is a mention of two kinds of concepts—real and imaginary. A concept that can be transformed into action is called realistic concept and that which cannot be transformed into action but used as an analogy to explain something is called imaginary concept. The concept of silo in this aphorism is an imaginary concept and the only purpose it serves is to explain the term *Utkrisht samkhyat.* The detailed explanation given by Acharya Mahaprajna in his commentary is based on *Maladhariya Vritti, Tiloyanapannati,* and other such works. It is a complex mathematical topic therefore it has been included as appendix for those who have mathematical bent. (Appendix 3)

५०९. एवामेव उक्कोसए संखेज्जए रूवं पक्खित्तं जहण्णयं परित्तासंखेज्जयं भवति, तेण परं अजहण्णमणुक्कोसयाइं ठाणाइं जाव उक्कोसयं परित्तासंखेज्जयं ण पावइ।

५०९. इसी प्रकार उत्कृष्ट संख्यात में (एक) बढ़ाने से जघन्य परीतासंख्यात होती है। जघन्य परीतासंख्यात के आगे और उत्कृष्ट परीतासंख्यात से पहले अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) परीतासंख्यात का स्थान है।

PARIT ASAMKHYAT

509. In the same way when one is added to *Utkrisht samkhyat* (maximum countable) we arrive at *Jaghanya Parit Asamkhyat* (minimum lower innumerable). After *Jaghanya Parit Asamkhyat* (minimum lower innumerable) and before *Utkrisht Parit Asamkhyat* (maximum lower innumerable) is the position of *Ajaghanya-anutkrisht Parit Asamkhyat* (intermediate lower innumerable).

५१०. उक्कोसयं परित्तासंखेज्जयं केत्तियं होति ?

उक्कोसयं परित्तासंखेज्जयं जहण्णयं परित्तासंखेज्जयं जहण्णयपरित्तासंखेज्जयमेत्ताणं रासीणं अण्णमण्णब्भासो रूवूणो उक्कोसयं परित्तासंखेज्जयं होति, अहवा जहन्नयं जुत्तासंखेज्जयं रूवूणं उक्कोसयं परित्तासंखेज्जयं होइ।

५१०. (प्र.) उत्कृष्ट परीतासंख्यात कितना होता है ?

(उ.) जघन्य परीतासंख्यात राशि को जघन्य परीतासंख्यात राशियों से परस्पर गुणित करने पर जो राशि आती है अथवा एक कम जघन्य युक्तासंख्यात उत्कृष्ट परीतासंख्यात का होता है।

विवेचन-उक्त दो सूत्रों में असंख्यात के प्रथम भेद परीतासंख्यात के जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट इन तीनों भेदों का स्वरूप बताया गया है।

जघन्य और मध्यम का स्वरूप सुगम है। उत्कृष्ट संख्यात राशि में एक और मिलाने से जघन्य परीतासंख्यात राशि हो जाती है। कल्पना करें जैसे उत्कृष्ट संख्यात की राशि १०० है, इस राशि में एक (१) मिलाने पर प्राप्त राशि जघन्य परीतासंख्यात होगी अर्थात् १०० उत्कृष्ट संख्यात और १०० + १ = १०१ जघन्य परीतासंख्यात राशि हुई तथा जघन्य से ऊपर और उत्कृष्ट से नीचे (एक कम) तक की संख्याएँ मध्यम परीतासंख्यात हैं।

जघन्य परीतासंख्यात राशि को उतने ही प्रमाण वाली राशि से अभ्यास (गुणा) करने से प्राप्त राशि में से एक कम कर देने पर प्राप्त राशि उत्कृष्ट परीतासंख्यात होती है। जिसका स्पष्टीकरण इस प्रकार है-

जिस संख्या का अभ्यास करना है उसके अंकों को उतनी बार लिखकर आपस में गुणा करने को अभ्यास गुणित कहते हैं। अर्थात् पहले अंक को दूसरे अंक से गुणा करना और जो गुणनफल आये उसका तीसरे अंक से गुणा करना और उसके गुणनफल का चौथे अंक से गुणा करना। इस प्रकार पूर्व-पूर्व के गुणनफल का अगले अंक से गुणा करना और अन्त में जो गुणनफल प्राप्त हो वही कही जाने वाली संख्या का अभ्यास है। अतएव कल्पना से मान लें कि जघन्य परीतासंख्यात का प्रमाण ५ है। इस पाँच को पाँच बार (५-५-५-५-५) स्थापित कर परस्पर गुणा करते जाने पर इस प्रकार संख्या होगी ५ × ५ = २५, २५ × ५ = १२५, १२५ × ५ = ६२५, ६२५ × ५ = ३,१२५। इसमें से एक न्यून संख्या (३,१२५ - १ = ३,१२४) उत्कृष्ट परीतासंख्यात है और यदि एक कम न किया जाये तो जघन्य युक्तासंख्यात रूप मानी जायेगी। इसीलिए प्रकारान्तर से उत्कृष्ट परीतासंख्यात का प्रमाण बताने के लिए कहा है कि जघन्य युक्तासंख्यात में से एक कम करने पर उत्कृष्ट परीतासंख्यात का प्रमाण होता है।

510. (Q.) How much is *Utkrisht Parit Asamkhyat* (maximum lower innumerable) ?

(Ans.) The *Utkrisht Parit Asamkhyat* (maximum lower innumerable) is equal to one less than *Jaghanya Parit Asamkhyat* (minimum lower innumerable) raised to the power of itself. Or it is one less than *Jaghanya Yukt Asamkhyat* (minimum medium innumerable).

Elaboration—In these aphorisms minimum, intermediate and maximum, the three kinds of *Parit Asamkhyat* (lower innumerable), which is the first kind of a *samkhyat* (innumerable numbers), have been explained.

Minimum and maximum are simple. When one is added to *Utkrisht samkhyat* (maximum countable) we arrive at *Jaghanya Parit Asamkhyat* (minimum lower innumerable). Suppose the *Utkrisht samkhyat* (maximum countable) number is 100. When we add one to it we get 101 which is the *Jaghanya Parit Asamkhyat* (minimum lower countable) number. After it and before *Utkrisht Parit Asamkhyat* (maximum lower innumerable) number are the intermediate *Asamkhyat* (maximum lower innumerable) numbers.

When *Jaghanya Parit Asamkhyat* (minimum lower innumerable) is raised to the power of itself and one is subtracted from it the result is *Utkrisht Parit Asamkhyat* (maximum lower innumerable). An example is—

Raising to a power means multiplying a number with itself as many times as the given number of power. Raising to its own power means write the number as many times as its value and then multiply first with second, the multiple with third, and so on. The last multiple in this

series will be value of the number raised to its own power. For instance, suppose the *Jaghanya Parit Asamkhyat* (minimum lower innumerable) is 5. Write it five times (5–5–5–5–5) and do the multiplication—5 × 5 = 25, 25 × 5 = 125, 125 × 5 = 625, 625 × 5 = 3,125. Subtracting one from this (3,125 – 1 = 3,124) we get *Utkrisht Parit Asamkhyat* (maximum lower innumerable). If one is not subtracted it is *Jaghanya Yukt Asamkhyat* (minimum medium innumerable). Thus the alternative expression of *Utkrisht Parit Asamkhyat* (maximum lower innumerable) is one less *Jaghanya Yukt Asamkhyat* (minimum medium innumerable).

युक्तासंख्यात

५११. जहन्नयं जुत्तासंखेज्जयं केत्तियं होइ ?

जहन्नयं जुत्तासंखेज्जयं जहन्नयं परित्तासंखेज्जयं जहण्णयपरित्तासंखेज्जयमेत्ताणं रासीणं अण्णमण्णब्भासो पडिपुण्णो जहन्नयं जुत्तासंखेज्जयं हवति, अहवा उक्कोसए परित्तासंखेज्जए रूवं पक्खित्तं जहण्णयं जुत्तासंखेज्जयं होति, आवलिया वि तत्तिया चेव, तेण परं अजहण्णमणुक्कोसयाइं ठाणाइं जाव उक्कोसयं जुत्तासंखेज्जयं ण पावइ।

५११. (प्र.) जघन्य युक्तासंख्यात का कितना प्रमाण है ?

(उ.) जघन्य परीतासंख्यात राशि को जघन्य परीतासंख्यात राशि का परस्पर अभ्यास–गुणा करने पर जो राशि आती है, वह प्रतिपूर्ण राशि जघन्य युक्तासंख्यात है। अथवा उत्कृष्ट परीतासंख्यात के प्रमाण में एक का प्रक्षेप करने से, जोड़ने से जघन्य युक्तासंख्यात होता है। एक आवलिका की समय राशि भी उतनी ही होती है। जघन्य युक्तासंख्यात से आगे जहाँ तक उत्कृष्ट युक्तासंख्यात प्राप्त न हो, उसके बीच की मध्यम (अजघन्य, अनुत्कृष्ट) युक्तासंख्यात है।

YUKT ASAMKHYAT

511. (Q.) How much is *Jaghanya Yukt Asamkhyat* (minimum medium innumerable) ?

(Ans.) *Jaghanya Yukt Asamkhyat* (minimum medium innumerable) is equal to *Jaghanya Parit Asamkhyat* (minimum lower innumerable) raised to the power of itself. Or it is one more than *Utkrisht Parit Asamkhyat* (maximum lower innumerable). The number of *Samayas* in one *Avalika* is also the same. All the numbers after *Jaghanya Yukt Asamkhyat* (minimum medium innumerable) and before *Utkrisht Yukt Asamkhyat* (maximum

medium innumerable) are *Ajaghanya-anutkrisht Yukt Asamkhyat* (intermediate medium innumerable).

५१२. उक्कोसयं जुत्तासंखेज्जयं केत्तियं होति ?

उक्कोसयं जुत्तासंखेज्जयं जहण्णएणं जुत्तासंखेज्जएणं आवलिया गुणिया अण्णमण्णब्भासो रूवूणो उक्कोसयं जुत्तासंखेज्जयं होइ, अहवा जहन्नयं असंखेज्जासंखेज्जयं रूवूणं उक्कोसयं जुत्तासंखेज्जयं होति।

५१२. (प्र.) उत्कृष्ट युक्तासंख्यात कितना होता है ?

(उ.) जघन्य युक्तासंख्यात राशि को आवलिका से (जघन्य युक्तासंख्यात से) परस्पर अभ्यास रूप गुणा करने से प्राप्त राशि में से एक कम उत्कृष्ट युक्तासंख्यात है। अथवा एक कम जघन्य असंख्यात-असंख्यात उत्कृष्ट युक्तासंख्यात होता है।

512. (Q.) How much is *Utkrisht Yukt Asamkhyat* (maximum lower innumerable) ?

(Ans.) *Utkrisht Yukt Asamkhyat* (maximum lower innumerable) is equal to one less *Jaghanya Yukt Asamkhyat* (minimum lower innumerable) raised to the power of *Avalika* (which is same as *Jaghanya Yukt Asamkhyat*). Or it is one less than *Jaghanya Asamkhyat-asamkhyat* (minimum innumerable-innumerable).

असंख्यातासंख्यात

५१३. जहण्णयं असंखेज्जासंखेज्जयं केत्तियं होइ ?

जहन्नएणं जुत्तासंखेज्जएणं आवलिया गुणिया अण्णमण्णब्भासो पडिपुण्णो जहण्णयं असंखेज्जासंखेज्जयं होइ, अहवा उक्कोसए जुत्तासंखेज्जए रूवं पक्खित्तं जहण्णयं असंखेज्जासंखेज्जयं होति, तेण परं अजहण्णमणुक्कोसयाइं ठाणाइं जाव उक्कोसयं असंखेज्जासंखेज्जयं ण पावति।

५१३. (प्र.) जघन्य असंख्यातासंख्यात कितना होता है ?

(उ.) जघन्य युक्तासंख्यात को आवलिका की राशि से गुणा करने पर प्राप्त परिपूर्ण संख्या जघन्य असंख्यातासंख्यात है। अथवा उत्कृष्ट युक्तासंख्यात में एक का प्रक्षेप करने (जोड़ने) से जघन्य असंख्यातासंख्यात होता है। जघन्य असंख्यात-असंख्यात से आगे उत्कृष्ट असंख्यात-असंख्यात के पहले बीच के सभी स्थान मध्यम स्थान होते हैं।

513. (Q.) How much is *Jaghanya Asamkhyat-asamkhyat* (minimum innumerable-innumerable) ?

(Ans.) *Jaghanya Asamkhyat-asamkhyat* (minimum innumerable-innumerable) is equal to *Jaghanya Yukt Asamkhyat* (minimum medium innumerable) raised to the power of itself or *Avalika.* Or it is one more than *Utkrisht Yukt Asamkhyat* (maximum medium innumerable). All the numbers after *Jaghanya Asamkhyat-asamkhyat* (minimum innumerable-innumerable) and before *Utkrisht Asamkhyat-asamkhyat* (maximum innumerable-innumerable) are *Ajaghanya-anutkrisht Asamkhyat-asamkhyat* (intermediate innumerable-innumerable).

५१४. उक्कोसयं असंखेज्जासंखेज्जयं केत्तियं होति ?

जहण्णयं असंखेज्जासंखेज्जयं जहण्णयअसंखेज्जासंखेज्जयमेत्ताणं रासीणं अण्णमण्णब्भासो रूवूणो उक्कोसयं असंखेज्जासंखेज्जयं होइ, अहवा जहण्णयं परित्ताणंतयं रूवूणं उक्कोसयं असंखेज्जासंखेज्जयं होति।

५१४. (प्र.) उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात कितना होता है ?

(उ.) जघन्य असंख्यातासंख्यात राशि का उसी जघन्य असंख्यातासंख्यात राशि से परस्पर गुणा करने पर जो राशि आती है, उससे एक कम संख्या उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात है। अथवा एक कम जघन्य परीतानन्त उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात का प्रमाण है।

विवेचन—उत्कृष्ट असंख्यात-असंख्यात का स्वरूप सूत्र में बताया गया है, उस विषय को आचार्यों ने अन्य दूसरे प्रकार से भी परिभाषित किया है। जैसे—वर्ग की जो राशि आये, उसका भी पुनः वर्ग करना, फिर उस वर्ग की जो राशि आए, उसका भी पुनः वर्ग करना। इस तरह तीन बार वर्ग कर लें। फिर उस वर्ग राशि में निम्नलिखित दस असंख्यात राशियाँ जोड़नी चाहिए—

''लोगागासपएसा धम्माधम्मेगजीवदेसा य।
दव्वटिआ निओआ, पत्तेया चेव बोद्धव्वा॥

ठिइबंधज्झवसाणा अणुभागा जोगच्छेअपलिभागा।
दोण्ह य समाण समया असंखपक्खेवया दसउ॥''

अर्थात् (१) लोकाकाश के प्रदेश, (२) धर्मास्तिकाय के प्रदेश, (३) अधर्मास्तिकाय के प्रदेश, (४) एकजीव के प्रदेश, (५) द्रव्यार्थिक निगोद (सूक्ष्म-बादर अनन्तकायिक वनस्पति जीवों के शरीर), (६) अनन्तकाय को छोड़कर शेष प्रत्येककायिक जातियों के जीव (अनन्तकायिकों को छोड़कर प्रत्येकशरीरी पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, वनस्पति और त्रस जीव), (७) कर्मों के स्थितिबंध के असंख्यात

अध्यवसायस्थान, (८) अनुभागबंध के कारणभूत अध्यवसाय स्थान, (९) मनोयोग, वचनयोग और काययोग के अविभाज्य विभाग–**योगच्छेद प्रतिभाग**, और (१०) उत्सर्पिणी तथा अवसर्पिणी कालों के समय।

उक्त दसों के बाद पुनः इस समस्त राशि का तीन बार वर्ग करके प्राप्त संख्या में से एक न्यून करने से उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात का प्रमाण होता है। किसी संख्या के तीन बार वर्ग करने की विधि इस प्रकार है–सर्वप्रथम उस संख्या का वर्ग करना। फिर वर्गजन्य संख्या का वर्ग करना, फिर वर्गजन्यसंख्या का वर्ग करना। उदाहरणार्थ–४ संख्या है। ४ × ४ = १६ वर्गजन्यसंख्या, फिर १६ × १६ = २५६ वर्गजन्यसंख्या, फिर २५६ × २५६ = ६५,५३६। (विशेष : परिशिष्ट ३ देखें)

514. (Q.) How much is *Utkrisht Asamkhyat-asamkhyat* (maximum innumerable-innumerable) ?

(Ans.) The *Utkrisht Asamkhyat-asamkhyat* (maximum innumerable-innumerable) is equal to one less *Jaghanya Asamkhyat-asamkhyat* (minimum innumerable-innumerable) raised to the power of itself. Or it is one less than *Jaghanya Parit Anant* (minimum lower infinite).

Elaboration—Here *Utkrisht Asamkhyat-asamkhyat* (maximum innumerable-innumerable) has been defined. Some *acharyas* have defined this another way also—The square of minimum innumerable-innumerable is squared and then this square is once again squared. To this number arrived after squaring three times add the following ten *Asamkhyat* (innumerable) numbers—

(1) *Pradeshas* (space-points) of *Lokakash* (occupied space), (2) *Pradeshas* (space-points) of *Dharmastikaya* (motion entity), (3) *Pradeshas* (space-points) of *Adharmastikaya* (rest entity), (4) *Pradeshas* (space-points) of one *Jiva* (single soul), (5) Bodies of *Dravyarthik Nigods* (dormant beings in the form of clusters of infinite minute plant-bodied beings), (6) All the other-bodied beings besides the said clustered beings (this includes earth-, water-, fire-, air-, plant- and mobile-bodied beings), (7) the infinite causes of duration-bondage (*sthiti-bandh*) of *karmas,* (8) the infinite causes of potency-bondage (*anubhag-bandh*) of *karmas,* (9) the indivisible parts of *mano yoga* (mind association), *vachan yoga* (speech association), and *kaya yoga* (body association), and (10) the total number of *Samayas* in cycles of time (progressive and regressive).

After adding the total of these numbers to the aforesaid number the result is once again squared three times. When one is subtracted from this number it is equal to *Utkrisht Asamkhyat-asamkhyat* (maximum high innumerable-innumerable).

५१५. जहण्णयं परित्ताणंतयं केत्तियं होति ?

जहण्णयं परित्ताणंतयं जहण्णयं असंखेज्जासंखेज्जयं जहण्णयअसंखेज्जासंखेजयमेत्ताणं रासीणं अण्णमण्णब्भासो पडिपुण्णो जहण्णयं परित्ताणंतयं होति। अहवा उक्कोसए असंखेज्जासंखेज्जए रूवं पक्खित्तं जहण्णयं परित्ताणंतयं होइ। तेण परं अजहण्णमणुक्कोसयाइं ठाणाइं जाव उक्कोसयं परित्ताणंतयं ण पावइ।

५१५. (प्र.) जघन्य परीतानन्त कितना होता है ?

(उ.) जघन्य असंख्यातासंख्यात राशि को उसी जघन्य असंख्यातासंख्यात राशि से परस्पर गुणित करने से प्राप्त परिपूर्ण संख्या जघन्य परीतानन्त है। अथवा उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात में एक का प्रक्षेप करने से भी जघन्य परीतानन्त का प्रमाण जाना जाता है। इससे आगे तथा उत्कृष्ट परीतानन्त से पूर्व बीच के सभी स्थान अजघन्य-अनुत्कृष्ट (मध्यम) परीतानन्त के स्थान हैं।

PARIT ANANT

515. (Q.) How much is *Jaghanya Parit Anant* (minimum lower infinite) ?

(Ans.) When one is added to *Jaghanya Asamkhyat-asamkhyat* (minimum innumerable-innumerable) raised to the power of itself we arrive at *Jaghanya Parit Anant* (minimum lower infinite). Another way of arriving at it is to add one to *Utkrisht Asamkhyat-asamkhyat* (maximum innumerable-innumerable). After *Jaghanya Parit Anant* (minimum lower infinite) and before *Utkrisht Parit Anant* (maximum lower infinite) is the position of *Ajaghanya-anutkrisht Parit Anant* (intermediate lower infinite).

५१६. उक्कोसयं परित्ताणंतयं केत्तियं होइ ?

जहण्णयं परित्ताणंतयं जहण्णयपरित्ताणंतयमेत्ताणं रासीणं अण्णमण्णब्भासो रूवूणो उक्कोसयं परित्ताणंतयं होइ। अहवा जहण्णयं जुत्ताणंतयं रूवूणं उक्कोसयं परित्ताणंतयं होइ।

५१६.(प्र.) उत्कृष्ट परीतानन्त कितना होता है ?

(उ.) जघन्य परीतानन्त और जघन्य परीतानन्त प्रमाण राशियों के परस्पर गुणित करने पर जो संख्या आती है, उससे एक कम उत्कृष्ट परीतानन्त होता है। अथवा एक कम जघन्य युक्तानन्त उत्कृष्ट परीतानन्त होता है।

516. (Q.) How much is *Utkrisht Parit Anant* (maximum lower infinite) ?

(Ans.) *Utkrisht Parit Anant* (maximum lower infinite) is equal to one less *Jaghanya Parit Anant* (minimum lower infinite) raised to the power of itself. Or it is one less than *Jaghanya Yukt Anant* (minimum medium infinite).

युक्तानन्त

५१७. जहण्णयं जुत्ताणंतयं केत्तियं होति ?

जहण्णयं परित्ताणंतयं जहण्णयपरित्ताणंतयमेत्ताणं रासीणं अण्णमण्णब्भासो पडिपुण्णो जहण्णयं जुत्ताणंतयं होई, अहवा उक्कोसए परित्ताणंतए रूवं पक्खित्तं जहन्नयं जुत्ताणंतयं होइ, अभवसिद्धिया वि तेत्तिया चेव, तेण परं अजहण्णमणुक्कोसयाइं ठाणाइं जाव उक्कोसयं जुत्ताणंतयं ण पावति।

५१७. (प्र.) जघन्य युक्तानन्त कितना होता है ?

(उ.) जघन्य परीतानन्त और जघन्य परीतानन्त प्रमाण राशियों को परस्पर गुणा करने से जो राशि आती है वह प्रतिपूर्ण राशि जघन्य युक्तानन्त होती है। अथवा उत्कृष्ट परीतानन्त में एक का प्रक्षेप (योग) करने से जघन्य युक्तानन्त होता है। अभवसिद्धिक (अभव्य) जीव भी इतने ही (जघन्य युक्तानन्त जितने) होते हैं। उसके पश्चात् अजघन्योत्कृष्ट (मध्यम) युक्तानन्त के स्थान हैं और वे उत्कृष्ट युक्तानन्त के स्थान के पूर्व तक हैं।

YUKT ANANT

517. (Q.) How much is *Jaghanya Yukt Anant* (minimum medium infinite) ?

(Ans.) *Jaghanya Yukt Anant* (minimum medium infinite) is equal to *Jaghanya Parit Anant* (minimum lower infinite) raised to the power of itself. Or it is one more than *Utkrisht Parit Anant* (maximum lower infinite). The number of *Abhavyasiddhik* (beings unworthy of liberation) is also the same. All the numbers after *Jaghanya Yukt Anant* (minimum medium infinite) and before *Utkrisht Yukt Anant* (maximum medium infinite) are *Ajaghanya-anutkrisht Yukt Anant* (intermediate medium infinite).

५१८. उक्कोसयं जुत्ताणंतयं केत्तियं होति ?

जहण्णएणं जुत्ताणंतएणं अभवसिद्धिया गुणिता अण्णमण्णब्भासो रूवूणो उक्कोसयं जुत्ताणंतयं होइ। अहवा जहण्णयं अणंताणंतयं रूवूणं उक्कोसयं जुत्ताणंतयं होइ।

५१८. (प्र.) उत्कृष्ट युक्तानन्त कितना होता है?

(उ.) जघन्य युक्तानन्त राशि के साथ अभवसिद्धिक राशि का परस्पर गुणा करने पर प्राप्त संख्या में से एक कम करने पर प्राप्त राशि उत्कृष्ट युक्तानन्त की संख्या है। अथवा एक कम जघन्य अनन्तानन्त = उत्कृष्ट युक्तानन्त है।

518. (Q.) How much is *Utkrisht Yukt Anant* (maximum medium infinite)?

(Ans.) *Utkrisht Yukt Anant* (maximum medium infinite) is equal to one less *Jaghanya Yukt Anant* (minimum medium infinite) raised to the power of *Abhavyasiddhik* (which is same as *Jaghanya Yukt Anant*). Or it is one less than *Jaghanya Anant-anant* (minimum infinite-infinite).

अनन्तानन्त

५१९. जहण्णयं अणंताणंतयं केत्तियं होति ?

जहण्णएणं जुत्ताणंतएणं अभवसिद्धिया गुणिया अण्णमण्णब्भासो पडिपुण्णो जहण्णयं अणंताणंतयं होइ, अहवा उक्कोसए जुत्ताणंतए रूवं पक्खित्तं जहण्णयं अणंताणंतयं होति, तेण परं अजहण्णमणुक्कोसयाइं ठाणाइं। से तं गणणासंखा।

५१९. (प्र.) जघन्य अनन्तानन्त कितना होता है?

(उ.) जघन्य युक्तानन्त के साथ अभवसिद्धिक जीवों (जघन्य युक्तानन्त) को परस्पर गुणित करने पर प्राप्त पूर्ण संख्या जघन्य अनन्तानन्त का प्रमाण है। अथवा उत्कृष्ट युक्तानन्त में एक का प्रक्षेप करने से जघन्य अनन्तानन्त होता है। जघन्य अनन्तानन्त के बाद सभी स्थान अजघन्योत्कृष्ट (मध्यम) अनन्तानन्त के होते हैं। (क्योंकि उत्कृष्ट अनन्तानन्त राशि नहीं होती है)।

यह गणनासंख्या का निरूपण पूर्ण हुआ।

विवेचन—प्रस्तुत सूत्र में अनन्तानन्त संख्या के जघन्य और मध्यम इन दो भेदों का प्रमाण बतलाया है, किन्तु उत्कृष्ट अनन्तानन्त संख्या संभव नहीं होने से उसका निरूपण नहीं किया गया है।

उक्त कथन सैद्धान्तिक आचार्यों का है, लेकिन अन्य आचार्यों ने उत्कृष्ट अनन्तानन्त संख्या का भी निरूपण किया है। उनका मत है—

जघन्य अनन्तानन्त का तीन बार वर्ग करके फिर उसमें निम्नलिखित छह अनन्तों का प्रक्षेप करना चाहिए–

"सिद्धानिगोयजीवा वणस्सई काल पुग्गला चेव।
सव्वमलोगागासं छप्पेतेऽणंतपक्खेवा॥"

अर्थात् (१) सिद्ध जीव, (२) निगोद के जीव, (३) वनस्पतिकायिक, (४) तीनों कालों (भूत, वर्तमान, भविष्यत् काल) के समय, (५) सर्व पुद्गलद्रव्य, तथा (६) लोकाकाश और अलोकाकाश प्रदेश।

इनको मिलाकर फिर सर्व राशि का तीन बार वर्ग करके उस राशि में केवलद्विक = केवलज्ञान-केवलदर्शन–की अनन्त पर्यायों को जोड़ने पर उत्कृष्ट अनन्तानन्त की संख्या का परिमाण होता है। अनन्त के विविध भेदोपभेदों की चर्चा कर्मग्रन्थ के आचार्यों के मतानुसार बहुत विस्तृत है। (देखें–अनु. महाप्रज्ञ जी, पृ. ३३२–३३३)

ANANT-ANANT

519. (Q.) How much is *Jaghanya Anant-anant* (minimum infinite-infinite) ?

(Ans.) *Jaghanya Anant-anant* (minimum infinite-infinite) is equal to *Jaghanya Yukt Anant* (minimum medium infinite) raised to the power of itself or *Abhavasiddhik*. Or it is one more than *Utkrisht Yukt Anant* (maximum medium infinite). All the numbers after *Jaghanya Anant-anant* (minimum infinite-infinite) and before *Utkrisht Anant-anant* (maximum infinite-infinite) are *Ajaghanya-anutkrisht Anant-anant* (intermediate infinite-infinite).

This concludes the description of *Ganana samkhya* (*samkhya* as counting).

Elaboration—This aphorism explains the minimum and intermediate categories of the *Anant-anant* (infinite-infinite) number. As the maximum infinite-infinite number is inconceivable it has not been discussed here.

This is the belief of the conservative *acharyas*. Some later *acharyas* have described maximum infinite-infinite number also. Their view is—

Square the *Jaghanya Anant-anant* (minimum infinite-infinite) number thrice and add the following six infinite numbers—

(1) *Siddha Jiva* (liberated souls), (2) *Nigod Jivas* (dormant beings), (3) *Vanaspatikayik* (plant-bodied beings), (4) *Samayas* of past, present and future, (5) All material substances, and (6) Space-points of occupied and unoccupied space.

The number arrived at thus should now be squared thrice and to the result add the infinite modes of *Keval-jnana* (omniscience) and *Keval-darshan* (omni-perception). This final figure is called *Utkrisht Anant-anant* (maximum infinite-infinite). The discussion of numerous categories and sub-categories of infinite is voluminous according to the authors of *Karma Granth.* (for more details refer to *Anuogadaraim* by Acharya Mahaprajna, p. 332-333).

(८) भावसंख्या

५२०. से किं तं भावसंखा ?

भावसंखा जे इमे जीवा संखगइनाम-गोत्ताइं कम्माइं वेदेंति। से तं भावसंखा। से तं संखप्पमाणे। से तं भावप्पमाणे। से तं पमाणे।

॥ पमाणे त्ति पयं सम्मत्तं ॥

५२०. (प्र.) भावसंख्या (शंख) क्या है?

(उ.) इस लोक में जो जीव शंखगतिनाम-गोत्र कर्मादिकों का वेदन कर रहे हैं वे भावशंख हैं।

यही भाव संख्या है, यही भावप्रमाण का वर्णन है तथा यहीं प्रमाण सम्बन्धी वक्तव्यता पूर्ण हुई।

॥ प्रमाणपद समाप्त ॥

(8) BHAAVA SAMKHYA/SHANKH

520. (Q.) What is this *Bhaava samkhya/shankh* (*samkhya/shankh* as essence)?

(Ans.) *Bhaava samkhya/shankh* (*samkhya/shankh* as essence) are those souls who undergo sufferings caused by *naam karma* (*karma* that determines the destinies and body types) and *gotra karma* (*karma* responsible for the higher or lower status of a being) related to a birth as *shankh* (conch-shell).

This concludes the description of *Bhaava samkhya/shankh* (*samkhya/shankh* as essence). This concludes the description of *Bhaava pramana* (standard of measurement of state). This also concludes the description of *Pramana* (standard of measurement).

● END OF THE DISCUSSION ON SAMKHYA PRAMANA ●

वक्तव्यता-प्रकरण
THE DISCUSSION ON VAKTAVYATA

वक्तव्यता के भेद-प्रभेद

५२१. से किं तं वत्तव्वया ?

वत्तव्वया तिविहा पण्णत्ता। तं.—ससमयवत्तव्वया परसमयवत्तव्वया ससमय-परसमयवत्तव्वया।

५२१. (प्र.) वक्तव्यता क्या है ?

(उ.) वक्तव्यता तीन प्रकार की है, यथा-(१) स्वसमयवक्तव्यता, (२) परसमयवक्तव्यता, और (३) स्वसमय-परसमयवक्तव्यता।

TYPES OF VAKTAVYATA

521. (Q.) What is this *vaktavyata* (explication) ?

(Ans.) *Vaktavyata* (explication) is of three kinds—(1) *Svasamaya vaktavyata* (explication of one's own doctrine), (2) *Parasamaya vaktavyata* (explication of doctrine of others), and (3) *Svasamaya-parasamaya vaktavyata* (explication of doctrines of self and others).

स्वसमयवक्तव्यता निरूपण

५२२. से किं तं ससमयवत्तव्वया ?

ससमयवत्तव्वया जत्थ णं ससमए आघविज्जति पण्णविज्जति परूविज्जति दंसिज्जति निदंसिज्जति। से तं ससमयवत्तव्वया।

५२२. (प्र.) स्वसमयवक्तव्यता क्या है ?

(उ.) स्वसिद्धान्त का कथन (आख्यान), प्रज्ञापन, प्ररूपण, दर्शन, निदर्शन और उपदर्शन करना स्वसमयवक्तव्यता है। यही स्वसमयवक्तव्यता है।

विशेष शब्दों के अर्थ—

आघविज्जति—सामान्य रूप से कथन करना, व्याख्यान करना।

पण्णविज्जति—विषय की पृथक्-पृथक् लाक्षणिक व्याख्या करना।

परूविज्जति–अधिकृत विषय की विस्तृत प्ररूपणा करना।

दंसिज्जति–दृष्टान्त द्वारा सिद्धान्त को स्पष्ट करना।

निदंसिज्जति–उपनय द्वारा अधिकृत विषय का स्वरूप बताना।

उवदंसिज्जति–समस्त कथन का उपसंहार करके अपने सिद्धान्त की स्थापना करना।

SVASAMAYA VAKTAVYATA

522. (Q.) What is this *Svasamaya vaktavyata* (explication of one's own doctrine) ?

(Ans.) To state (*akhyan*), define (*prajnapan*), explain (*prarupan*), exemplify (*darshan*), validate (*nidarshan*) and propound (*upadarshan*) one's own doctrine is *Svasamaya vaktavyata* (explication of one's own doctrine).

This concludes the description of *Svasamaya vaktavyata* (explication of one's own doctrine).

Technical Terms—

Aghavijjati (akhyan)—To simply state.

Pannavijjati (prajnapan)—To define the included concepts individually.

Paruvijjati (prarupan)—To explain the subject in details.

Dansijjati (darshan)—To exemplify the doctrine with the help of examples.

Nidansijjati (nidarshan)—To validate logically and analogically.

Uvadansijjati (upadarshan)—To conclude the discussion and propound one's own doctrine.

परसमयवक्तव्यता निरूपण

५२३. से किं तं परसमयवत्तव्वया ?

परसमयवत्तव्वया जत्थ णं परसमए आघविज्जति जाव उवदंसिज्जति। से तं परसमयवत्तव्वया।

५२३. (प्र.) परसमयवक्तव्यता क्या है ?

(उ.) जिस वक्तव्यता में पर-समय = अन्य मत के सिद्धान्त का कथन यावत् विवेचन किया जाता है, वह परसमयवक्तव्यता है।

523. (Q.) What is this *Parasamaya vaktavyata* (explication of doctrine of others) ?

(Ans.) To state (*akhyan*), (and so on up to...) propound (*upadarshan*) doctrine of others is *Parasamaya vaktavyata* (explication of doctrine of others).

This concludes the description of *Parasamaya vaktavyata* (explication of doctrine of others).

ससमय–परसमयवक्तव्यता

५२४. से किं तं ससमय–परसमयवत्तव्वया ?

ससमय–परसमयवत्तव्वा जत्थ णं ससमए–परसमए आघविज्जइ जाव उवदंसिज्जइ। से तं ससमय–परसमयवत्तव्वया।

५२४. (प्र.) स्वसमय-परसमयवक्तव्यता क्या है ?

(उ.) जिस वक्तव्यता में स्वसिद्धान्त और परसिद्धान्त दोनों का कथन यावत् विवेचन किया जाता है, उसे स्वसमय-परसमयवक्तव्यता कहते हैं।

विवेचन–एक विषय की प्ररूपणा तथा आगमसम्मत नियत अर्थ का प्रतिपादन करना 'वक्तव्यता' है।

(१) **स्वसमयवक्तव्यता**–अपने सिद्धान्त का प्रतिपादन करना स्वसमयवक्तव्यता है। जैसे–अस्तिकाय पाँच हैं–धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय आदि। धर्मास्तिकाय गति सहायक द्रव्य है। आदि स्व–सिद्धान्त कथन करना।

(२) **परसमयवक्तव्यता**–अन्यतीर्थिकों के सिद्धान्त का प्रतिपादन परसमयवक्तव्यता है। जैसे–

"संति पंच महब्भूया, इहमेगेसिं आहिया।" –सूत्रकृतांग १/१/७

लोकायतिकों (नास्तिकों) के मतानुसार पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश ये सर्वलोकव्यापी पंच महाभूत हैं। यह पर–सिद्धान्त का कथन है।

(३) **उभयसमयवक्तव्यता**–अपने तथा अन्यतीर्थिक दोनों के सिद्धान्त का प्रतिपादन करना–उभयसमय (स्वसमय, परसमय-वक्तव्यता है, जैसे–

"अगारमावसंता वि, आरण्णा वा वि पव्वया।
इमं दरिसणमावण्णा, सव्वदुक्खा विमुच्चंति॥" –सूत्रकृतांग १/१/१९

"कोई व्यक्ति गृहस्थ हो, तापस हो अथवा प्रव्रजित शाक्य आदि हो, हमारे दर्शन का आश्रय लेकर वह सब दुःखों से मुक्त हो जाता है।"

सांख्यदर्शन को मानने वाले व्यक्तियों द्वारा उक्त प्रतिपादन परसमयवक्तव्यता है और जैनदर्शन द्वारा यह प्रतिपादन स्वसमयवक्तव्यता है। इसलिए इसमें उभयसमयवक्तव्यता है।

एगे आया (स्थानांग १/१) आत्मा एक है–इस वचन को एक उदाहरण के रूप में लें तो परसमय की दृष्टि से इसकी व्याख्या करने वाले कहते हैं–आत्मा एक है–

"एक एव हि भूतात्मा, भूते भूते व्यवस्थितः।
एकधा बहुधा चैव, दृश्यते जलचन्द्रवत्॥" –ब्रह्म. उप. १२

एक ही आत्मा प्रत्येक प्राणी में प्रतिष्ठित है। वह एक होने पर भी अनेक रूप में दिखाई देती है जैसे–चन्द्रमा एक है। जल से भरे हुए अनेक पात्रों में उसके स्वतन्त्र अस्तित्व की प्रतीति होती है, वैसे ही आत्मा एक होने पर भी अनेक रूपों में दिखाई देता है।

स्वसमय की दृष्टि से इसका विवेचन इस प्रकार किया जायेगा–"सब जीवों में शुद्धोपयोग रूप लक्षण समान हैं। **"उपयोगलक्षणो जीवः।"**–जीव का लक्षण उपयोग है। उपयोग सब जीवों में है इस समानता की दृष्टि से आत्मतत्त्व एक है। उभयसमयवक्तव्यता का यह प्रसंग तुलनात्मक अध्ययन का संकेत देता है।

SVASAMAYA-PARASAMAYA VAKTAVYATA

524. (Q.) What is this *Svasamaya-parasamaya vaktavyata* (explication of doctrines of self and others) ?

(Ans.) To state (*akhyan*), (and so on up to...) propound (*upadarshan*) doctrine of self as well as others is *Svasamaya-parasamaya vaktavyata* (explication of doctrines of self and others).

This concludes the description of *Svasamaya-parasamaya vaktavyata* (explication of doctrines of self and others).

Elaboration—To explain a subject in details and propound the meaning according to the *Agam* (canon) is called *vaktavyata* (explication).

(1) *Svasamaya vaktavyata* (explication of one's own doctrine)—To explicate and propound one's own doctrine. For example, to state and establish that there are five *astikayas* (entities), such as *Dharmastikaya* (motion entity), *Adharmastikaya* (rest entity) etc. *Dharmastikaya* is the entity that helps motion and so on.

(2) *Parasamaya vaktavyata* (explication of doctrine of others)—To explicate and propound doctrines of others. For example, to state and

explain that according to *Lokayatiks* (heretics) earth, water, fire, air and space are the five all pervading fundamental entities.

(3) *Svasamaya-parasamaya vaktavyata* (explication of doctrines of self and others)—To explicate and propound doctrines of self and others. For example—

"Irrespective of a person being a householder, hermit or a Buddhist monk, he can attain salvation from all miseries by following our philosophy."

Coming from an adherent of Samkhya school this statement is a doctrine of others and coming from an adherent of Jain school this statement is one's own doctrine. Thus such statements fall under the category of *Svasamaya-parasamaya vaktavyata* (explication of doctrines of self and others).

If we take the statement *'Ege aya'*—Soul is one—as an example the interpretation of others is—One single soul resides in every being. Although it is one, it appears to be many. An example is the moon, which is one but appears to be many in its independent reflections in numerous water filled pots.

The same statement according to one's own (Jain) interpretation means—As the attribute of endeavour for purity of attitude is common to all beings, the soul is one (same). The action or endeavour is the attribute of a being. This sameness of attributes points at the generic singularity of all beings. This example indicates the comparative nature of *Svasamaya-parasamaya vaktavyata* (explication of doctrines of self and others).

वक्तव्यता के विषय में नयदृष्टियाँ

५२५. (१) इयाणिं को णओ कं वत्तव्वयमिच्छति ?

तत्थ णेगम-संगह-ववहारा तिविहं वत्तव्वयं इच्छंति। तं जहा-ससमयवत्तव्वयं-परसमयवत्तव्वयं ससमय-परसमयवत्तव्वयं।

५२५. (१) (प्र.) (इन तीनों वक्तव्यताओं में से) कौन नय किस वक्तव्यता को स्वीकार करता है ?

(उ.) नैगम, संग्रह और व्यवहारनय तीनों प्रकार की वक्तव्यता को स्वीकार करते हैं।

525. (1) (Q.) Which *naya* (viewpoint or perspective) accepts which *vaktavyata* (explication) (of the three) ?

(Ans.) *Naigam, Samgraha* and *Vyavahara nayas* (co-ordinated, generalized and particularized viewpoints) accept all the three said types of *vaktavyata* (explication), namely *Svasamaya vaktavyata* (explication of one's own doctrine), *Parasamaya vaktavyata* (explication of doctrine of others) and *Svasamaya-parasamaya vaktavyata* (explication of doctrines of self and others).

(२) उज्जुसुओ दुविहं वत्तव्वयं इच्छति। तं जहा–ससमयवत्तव्वयं परसमयवत्तव्वयं। तत्थ णं जा सा ससमयवत्तव्वया सा ससमयं पविट्ठा, जा सा परसमयवत्तव्वया सा परसमयं पविट्ठा, तम्हा दुविहा वत्तव्वया, णत्थि तिविहा वत्तव्वया।

(२) ऋजुसूत्रनय स्वसमय और परसमय–इन दो वक्तव्यताओं को ही स्वीकार करता है। क्योंकि स्वसमयवक्तव्यता का प्रथम भेद स्वसमयवक्तव्यता में और परसमय की वक्तव्यता द्वितीय भेद परसमयवक्तव्यता में समाविष्ट हो जाता है। इसलिए वक्तव्यता के दो ही प्रकार हैं, तीन प्रकार नहीं हैं।

(2) *Rijusutra naya* (precisionistic viewpoint) accepts only two kinds of *vaktavyata* (explication), namely *Svasamaya vaktavyata* (explication of one's own doctrine) and *Parasamaya vaktavyata* (explication of doctrine of others). This is because strictly speaking *Svasamaya vaktavyata* (explication of one's own doctrine) belongs only to *Svasamaya* (one's own doctrine) and *Parasamaya vaktavyata* (explication of doctrine of others) belongs only to *Parasamaya* (doctrine of others). Therefore *vaktavyata* (explication) is of two kinds only and not three.

(३) तिण्णि सद्दणया (एगं) ससमयवत्तव्वयं इच्छंति, नत्थि परसमयवत्तव्वयं। कम्हा ? जम्हा परसमए अणट्ठे अहेऊ असब्भावे अकिरिया उम्मग्गे अणुवएसे मिच्छादंसणमिति कट्टु, तम्हा सव्वा ससमयवत्तव्वया। णत्थि परसमयवत्तव्वया णत्थि ससमय–परसमयवत्तव्वया। से तं वत्तव्वया।

(३) तीनों शब्दनय (शब्दनय, समभिरूढ़नय, एवंभूतनय) एक स्वसमयवक्तव्यता को ही मान्य करते हैं। उनके मतानुसार परसमयवक्तव्यता वास्तविक नहीं है। क्योंकि परसमय अनर्थ, अहेतु, असद्भाव, अक्रिया (निष्क्रिय), उन्मार्ग, अनुपदेश (कु-उपदेश) और मिथ्यादर्शन रूप है। इसलिए स्वसमय की वक्तव्यता है किन्तु परसमयवक्तव्यता नहीं है और न स्वसमय-परसमयवक्तव्यता ही है।

यह वक्तव्यताविषयक निरूपण हुआ।

विवेचन-पूर्वोक्त तीन वक्तव्यताओं में से कौन नय किसको अंगीकार करता है, इस सूत्र में इनका स्पष्टीकरण है।

नयदृष्टियाँ लोकव्यवहार से लेकर वस्तु के अपने स्वरूप रूप तक का विचार करती हैं। इसी अपेक्षा यहाँ वक्तव्यताविषयक नयों का मंतव्य स्पष्ट किया गया है।

सातों नयों में से-अनेक प्रकार से वस्तु का प्रतिपादन करने वाले नैगमनय, समुच्चय अर्थ के संग्राहक संग्रहनय और लोकव्यवहार के अनुसार व्यवहार करने में तत्पर व्यवहारनय की मान्यता है कि लोक में इसी प्रकार की रूढ़ि-परम्परा प्रचलित होने से तीनों ही-स्व, पर और उभय समय की वक्तव्यताएँ मानने योग्य हैं।

ऋजुसूत्र वर्तमान पर्याय को ग्रहण करता है। यह प्रथम दो वक्तव्यता को स्वीकार करता है। चूँकि वर्तमान क्षण में केवल स्वसमय का प्रतिपादन होगा या केवल परसमय का; दोनों का एक साथ कथन नहीं हो सकता। उभयसमयवक्तव्यता के प्रसंग में स्वसमय सम्बन्धी बातें प्रथम भेद में आ जाती हैं और परसमय सम्बन्धी द्वितीय भेद में। इसलिए वक्तव्यता तीन प्रकार की नहीं होती।

तीन शब्दनय (शब्द, समभिरूढ़ व एवंभूत) विशुद्धतर हैं। ये केवल स्वसमयवक्तव्यता को स्वीकार करते हैं। परसमय की अस्वीकृति के पक्ष में निम्न सात हेतु दिये जाते हैं-

(१) **अनर्थ**-स्वसमय के अनुसार आत्मा है। परसमय कहता है-"नास्त्येव आत्मा।"-"आत्मा नहीं है।" यह प्रतिपादित करने के कारण परसमय अनर्थ है, विसंगति है। क्योंकि प्रतिषेध करने वाला स्वयं ही तो आत्मा है।

(२) **अहेतु**-आत्मा के अस्तित्व का निषेध करने के लिए हेतु दिया जाता है-"अत्यन्तानुपलब्धेः।" -आत्मा नहीं है, क्योंकि वह दिखाई नहीं देता। यह हेतु नहीं हेत्वाभास है। आत्मा का गुण है ज्ञान। ज्ञान प्रत्यक्ष है। अतः आत्मा का नास्तित्व प्रमाणित करने वाला हेतु वास्तव में अहेतु है।

(३) **असद्भाव**-जो सुकृत, दुष्कृत, परलोक आदि को अस्वीकार करता है।

(४) **अक्रिया**-जो दर्शन एकान्त शून्यता का प्रतिपादक होने के कारण क्रिया करने वाले का प्रतिषेध करता है। क्रिया करने वाले (कर्त्ता-आत्मा) के अभाव में क्रिया की संगति भी नहीं हो सकती है।

(५) उन्मार्ग—जो परस्पर विरोधी तथ्यों का प्रतिपादन करता है। जैसे कभी कहता है—"न हिंस्यात् सर्व भूतानि।"—"किसी जीव की हिंसा मत करो।" और कभी यज्ञ के लिए पशु बलि का विधान करता है।

(६) अनुपदेश—सर्व क्षणिकवादी प्रत्येक पदार्थ को क्षण-क्षण में विनाश होता मानते हैं। प्रथम क्षण जो आत्मा है, वह दूसरे क्षण में विनष्ट हो जाता है। ऐसी स्थिति में कौन किसे उपदेश दे सकता है?

(७) मिथ्यादर्शन—मिथ्या दृष्टिकोण या मिथ्या उपदेश है।

इन सात कारणों से एकान्तवादी दर्शन दुर्नय हैं। इसलिए शब्दनय परसमयवक्तव्यता को स्वीकार नहीं करता। एकान्त आग्रह टूटने की स्थिति में वे 'स्याद्' पद की सापेक्षता के साथ सुनय होकर स्वसमयवक्तव्यता के अन्तर्गत आ जाते हैं। (अनु., मलधारी वृत्ति, पत्र २४४)

(3) All the three *Shabda nayas* (verbal viewpoints) accept only one kind of *vaktavyata* (explication), namely *Svasamaya vaktavyata* (explication of one's own doctrine). This is because *Parasamaya vaktavyata* (explication of doctrine of others) is not real due to being perverse, irrational, unreal, inactive, wrong path, non-teaching and false teaching. Therefore the only (worthy) *vaktavyata* (explication) is *Svasamaya vaktavyata* (explication of one's own doctrine) and not *Parasamaya vaktavyata* (explication of doctrine of others) or *Svasamaya-parasamaya vaktavyata* (explication of doctrines of self and others).

This concludes the description of *vaktavyata* (explication).

Elaboration—This aphorism clarifies which of the aforesaid explications conforms to which *naya* (viewpoint).

The different *nayas* cover the complete range of perspectives starting from the mundane angle to the precise form of a thing. The clarification of *nayas* related to *vaktavyata* (explication) have been explained here in this context.

Of the seven *nayas,* the first three *Naigam, Samgraha* and *Vyavahar* (co-ordinated, generalized and particularized viewpoints) convey that following the existing convention and tradition all the said three types of *vaktavyata* (explication) are acceptable.

Rijusutra naya (precisionistic viewpoint) is concerned only with the present. According to it, the first two types are acceptable. At a given moment either doctrine of the self or that of the other is explicable. Thus

both angles cannot be stated at the same moment. Moreover, while considering both together the two independent angles are simply repeated. This repetition is redundant, therefore, *vaktavyata* (explication) is only of two types.

The three *Shabd nayas* (verbal viewpoints) are even more precise. According to them only one's own doctrine is acceptable. Seven reasons for not accepting the doctrine of others are mentioned—

(1) Anarth (perverse)—According to *svasamaya vaktavyata* (explication of one's own doctrine) soul exists. According to *parasamaya vaktavyata* (explication of doctrine of others) it does not. As the refuter of the existence of soul is itself a soul this propagation of *parasamaya vaktavyata* (explication of doctrine of others) is perverse.

(2) Ahetu (irrational)—The reason for denying the existence of soul is given as—it is invisible. In fact this is not reason but semblance of reason. Knowledge is an attribute of soul and it is perceivable. Therefore the reason given for denying the existence of soul is irrational, it is no reason.

(3) Asadbhava (unreal)—As it denies the existent realities like good deeds, bad deeds and the other life (reincarnation) it is unreal.

(4) Akriya (inactive)—As it denies the existence of soul, by inference it also denies action and goes against evident reality.

(5) Unmarg (wrong path)—It propagates mutually contradicting concepts. Sometimes it states that no being should be killed and at others formulates codes for animal sacrifice in *yajna*.

(6) Anupadesh (non-teaching)—According to the doctrine that every substance is destroyed every moment, every soul gets destroyed the next moment. In such fluid state who can teach whom ?

(7) Mithya Darshan—False perspective or false teaching.

For these seven reasons the doctrines of absolutism are illogical. Therefore, *Shabda nayas* (verbal viewpoints) do not accept *parasamaya vaktavyata* (explication of doctrine of others). When the dogmatic attitude is shattered *parasamaya vaktavyata* (explication of doctrine of others) gets included in *svasamaya vaktavyata* (explication of one's own doctrine) by incorporating the prefix *'syat'* for relativity. (*Anuyogadvar, Maladhari Vritti*, leaf 244)

अर्थाधिकार पद
DISCUSSION ON ARTHADHIKAR

अर्थाधिकार निरूपण

५२६. से किं तं अत्थाहिगारे ?

अत्थाहिगारे जो जस्स अज्झयणस्स अत्थाहिगारो। तं जहा–

१. सावज्जजोगविरती, २. उक्कित्तण, ३. गुणवओ य पडिवत्ती।

४. खलियस्स निंदणा, ५. वणतिगिच्छ, ६. गुणधारणा चेव॥१॥

५२६. (प्र.) अर्थाधिकार क्या है ?

(उ.) (आवश्यकसूत्र के) जिस अध्ययन का जो अर्थ-वर्ण्य विषय है, उसका कथन अर्थाधिकार कहलाता है। यथा–

(१) (सावद्ययोगविरति)–अर्थात् सावद्य प्रवृत्तियों का त्याग प्रथम (सामायिक) अध्ययन का अर्थ (विषय) है।

(२) (चतुर्विंशतिस्तव नामक) दूसरे अध्ययन का अर्थ उत्कीर्तन–स्तुति करना है।

(३) (वंदना नामक) तृतीय अध्ययन का अर्थ गुणवान् पुरुषों का सम्मान, वन्दना, नमस्कार करना है।

(४) (प्रतिक्रमण अध्ययन में) आचार में हुई स्खलनाओं–पापों आदि की निन्दा करने का अर्थाधिकार है।

(५) (कायोत्सर्ग अध्ययन में) व्रणचिकित्सा करने रूप दोष विशुद्धि का अर्थाधिकार है।

(६) (प्रत्याख्यान अध्ययन का) गुण धारण करने रूप अर्थाधिकार है।

यही अर्थाधिकार है।

विवेचन–वक्तव्यता और अर्थाधिकार में अन्तर–वक्तव्यता और अर्थाधिकार में अन्तर यह है कि अर्थाधिकार अध्ययन के आदि पद (शब्द) से लेकर अन्तिम पद तक सम्बन्धित एवं अनुगत रहता है, जबकि वक्तव्यता देशादि–नियत होती है। अर्थाधिकार का क्षेत्र विस्तृत है जबकि वक्तव्यता सीमित अर्थ में होती है।

ARTHADHIKAR

526. (Q.) What is this *Arthadhikar* (synopsis or purview) ?

(Ans.) To provide a synopsis or purview of the subject included in a particular chapter (of *Avashyak Sutra*) is called *Arthadhikar* (synopsis). For example—

(1) Abstinence from all sinful activities (including killing of beings) is the subject included in the first chapter called Samayik.

(2) Eulogizing or praising the twenty four Tirthankars is the subject included in the second chapter called Chaturvinshatistava.

(3) Offering of homage to the venerable is the subject included in the third chapter called Vandana.

(4) Critical review of the faults and transgressions committed is the subject included in the fourth chapter called Pratikraman.

(5) Mending the ways of transgression (mentioned as healing the wounds) is the subject included in the fifth chapter called Kayotsarg.

(6) Acquiring virtues is the subject included in the sixth chapter called Pratyakhyan.

This concludes the description of *Arthadhikar* (synopsis or purview).

Elaboration—The difference between *Vaktavyata* (explication) and *Arthadhikar* (synopsis) is that the former is specific and covers even smaller sections or individual concepts included in a chapter whereas the latter covers the whole chapter or the overall theme of the chapter from the beginning to the end. *Arthadhikar* (synopsis) is wider in scope and *Vaktavyata* (explication) is limited.

समवतार पद
DISCUSSION ON SAMAVATAR

समवतार निरूपण

५२७. से किं तं समोयारे ?

समोयारे छव्विहे पण्णत्ते। तं.–१. णामसमोयारे, २. ठवणसमोयारे, ३. दव्वसमोयारे, ४. खेत्तसमोयारे, ५. कालसमोयारे, ६. भावसमोयारे।

५२७. (प्र.) समवतार क्या है?

(उ.) समवतार के छह प्रकार हैं, जैसे-(१) नामसमवतार, (२) स्थापनासमवतार, (३) द्रव्यसमवतार, (४) क्षेत्रसमवतार, (५) कालसमवतार, और (६) भावसमवतार।

विवेचन–समवतार का अर्थ है अन्तर्भाव। लघु का बृहत् में समावेश या नियोजन करना समवतार कहलाता है। वह समवतार तीन प्रकार का है–

(१) **आत्मसमवतार**–निश्चयनय के अनुसार जीव द्रव्य जीवभाव के अतिरिक्त कहीं नहीं रहता है। इसलिए इसका समवतार जीवभाव में ही होता है। यदि जीव का अजीव में समवतार हो तो स्वभाव परित्याग के कारण वह अवास्तविक हो जायेगा।

(२) **परसमवतार**–व्यवहारनय की दृष्टि अनुसार प्रत्येक द्रव्य परभाव में (पराश्रित) भी रहता है और स्वभाव से (स्वाश्रित) तो रहता ही है। जैसे–**कुण्डे बदराणि**–कुण्डे में बेर। यद्यपि बेर अपने स्वभाव में स्थित है फिर भी कुण्ड में आधेय के रूप में भी रहता है।

(३) **तदुभयसमवतार**–निश्चयनय से द्रव्य स्वभाव में और व्यवहारनय से परभाव में भी रहता है। इसे तदुभयसमवतार कहा है। जैसे–**गृहे स्तंभः**–घर में स्तंभ। स्तम्भ गृह का ही एक अंश है इसलिए उसका समवतार गृह में भी होता है और आत्मभाव में तो है ही।

वैकल्पिक रूप में समवतार के दो ही प्रकार बतलाए गये हैं–(१) आत्मसमवतार, तथा (२) तदुभयसमवतार।

आत्मभाव में समवतार हुए बिना परभाव में समवतार नहीं हो सकता।

तात्पर्य यह है कि जब यह विचार किया जाता है कि प्रत्येक द्रव्य कहाँ रहता है? तब इस प्रश्न का उत्तर निश्चय और व्यवहार इन दो नयों की दृष्टि से दिया जाता है। जब निश्चयनय का आश्रय लेकर सोचा जाता है, तब इस प्रश्न का उत्तर होता है–प्रत्येक द्रव्य अपने आत्मभाव–स्व–स्वरूप में ही रहता है। जब व्यवहारनय की दृष्टि से इस प्रश्न का उत्तर सोचा जाता है, तब उसका अभिप्राय यह निकलता है कि जिस प्रकार कुण्ड में बदरीफल (बेर) रहते हैं, उसी प्रकार प्रत्येक द्रव्य पराश्रित (परभाव में) भी रहता है और स्वाश्रित (आत्मभाव में) तो रहता ही है। दीवार, देहली, पट्ट, स्तम्भ आदि संघात रूप घर में (परभाव में) भी रहता है और आत्मभाव में भी।

SAMAVATAR

527. (Q.) What is this *Samavatar* (assimilation)?

(Ans.) *Samavatar* (assimilation) is of six types—(1) *Naam Samavatar* (name assimilation), (2) *Sthapana Samavatar* (assimilation as notional installation), (3) *Dravya Samavatar* (physical assimilation), (4) *Kshetra Samavatar* (area-assimilation), (5) *Kaal Samavatar* (time-assimilation), and (6) *Bhaava Samavatar* (essence-assimilation).

Elaboration—*Samavatar* means assimilation or inclusion. To assimilate smaller into the larger is *Samavatar*. This is of three types—

(1) Atmasamavatar (self-dependent assimilation)—According to *Nishchaya naya* (noumenal viewpoint) the entity *jiva* (soul) does not exist in any state other than its own, the *jiva*-state. That is why its assimilation is possible only in the soul-state. If a soul could be assimilated in *ajiva* (non-soul), the process would alter its intrinsic attributes and thereby making it unreal.

(2) Parasamavatar (assimilation dependent on others)—According to *Vyavahar naya* (phenomenal viewpoint), besides being self-dependent every entity is also dependent on other entities. For example—'berry in a bowl' although the berry in question is self-dependent as regards its existence, it also exists as a dependent on the bowl in this context.

(3) Tadubhayasamavatar (assimilation dependent on self and others both)—This kind of assimilation is inclusive of both. The existence of a thing is self-dependent according to *Nishchaya naya* (noumenal viewpoint) but at the same time it is dependent on other things according to *Vyavahar naya* (phenomenal viewpoint). For example—'pillar in a building'. As pillar is essentially a part of the building it is included in the building. However, at the same time it is also included in its independent definition as a pillar.

In an alternative theory there are said to be only two kinds of assimilation—(1) *Atmasamavatar* (self-dependent assimilation), and (2) *Tadubhayasamavatar*.

In absence of *atmasamavatar* (self-dependent assimilation) it is not possible to have *parasamavatar* (assimilation dependent on others). The question—'Where each substance exists ?' is answered from both *Nishchaya* (noumenal) as well as *Vyavahar* (phenomenal) *nayas* (viewpoints). From the first *naya* the answer is—each substance exists in its own form or state. From the second *naya* the answer is that like berries in a bowl every substance exists in its own state as also dependent on other substances. Wall, door-step, platform, pillar and other such things exist as components of a building (dependent existence) but at the same time they also exist in their specifically defined forms or states (independent existence).

५२८. से किं तं णामसमोयारे ?

नाम–ठवणाओ पुव्ववण्णियाओ।

५२८. (प्र.) नाम-स्थापनासमवतार क्या है ?

(उ.) नाम और स्थापना (समवतार) का वर्णन पूर्ववत्-सूत्र १०-११ के समान जानना चाहिए।

NAAM, STHAPANA AND DRAVYA SAMAVATAR

528. (Q.) What is this *Naam* and *Sthapana Samavatar* (assimilation as name and notional installation) ?

(Ans.) *Naam* and *Sthapana Samavatar* (assimilation as name and notional installation) should be taken to be same as *Naam-avashyak* and *Sthapana-avashyak* (aphorism 10-11).

५२९. से किं तं दव्वसमोयारे ?

दव्वसमोयारे दुविहे पण्णत्ते। तं.–आगमतो य णोआगमतो य। जाव से तं भवियसरीर–दव्वसमोयारे।

५२९. (प्र.) द्रव्यसमवतार क्या है ?

(उ.) द्रव्यसमवतार दो प्रकार का है-(१) आगमतःद्रव्यसमवतार, तथा (२) नोआगमतःद्रव्यसमवतार। आगमतःद्रव्यसमवतार का तथा नोआगमतःद्रव्यसमवतार के भेद ज्ञायकशरीर और भव्यशरीर नोआगमतःद्रव्यसमवतार का स्वरूप पूर्ववत् द्रव्यावश्यक के प्रकरण में बताये भेदों के समान जानना चाहिए।

529. (Q.) What is this *dravya samavatar* (physical aspect of assimilation) ?

(Ans.) *Dravya samavatar* (physical aspect of assimilation) is of two kinds—*Agamatah-dravya samavatar* (physical aspect of assimilation in context of *Agam*) and *No-Agamatah-dravya samavatar* (physical aspect of assimilation not in context of *Agam* or only in context of action). From this point up to *Jnayak sharir-bhavya sharir vyatirikta dravya samavatar* (physical-assimilation other than the body of the knower and the body of the potential

knower) should be considered same as mentioned earlier (Discussion on *Avashyak*).

५३०. (१) से किं तं जाणयसरीर-भवियसरीर वइरित्ते दव्वसमोयारे ?

जाणयसरीर-भवियसरीर वइरित्ते दव्वसमोयारे तिविहे पण्णत्ते। तं जहा- आयसमोयारे परसमोयारे तदुभयसमोयारे। सव्वदव्वा वि य णं आयसमोयारेणं आयभावे समोयरंति, परसमोयारेणं जहा कुंडे बदराणि, तदुभयसमोयारेणं जहा घरे थंभो आयभावे य, जहा घडे गीवा आयभावे य।

५३०. (१) (प्र.) ज्ञायकशरीर-भव्यशरीर-व्यतिरिक्तद्रव्यसमवतार कितने प्रकार का है ?

(उ.) ज्ञायकशरीर-भव्यशरीर-व्यतिरिक्तद्रव्यसमवतार तीन प्रकार का है-यथा- (१) आत्मसमवतार, (२) परसमवतार, और (३) तदुभयसमवतार।

आत्मसमवतार की अपेक्षा सभी द्रव्य आत्मभाव-अपने स्वरूप में ही रहते हैं, परसमवतारापेक्षया कुंड में बेर की तरह परभाव में रहते हैं तथा तदुभयसमवतार से (सभी द्रव्य) घर में स्तम्भ अथवा घट में ग्रीवा (गर्दन) की तरह परभाव तथा आत्मभाव दोनों में रहते हैं।

530. (1) (Q.) Of how many kinds is *Jnayak sharir-bhavya sharir vyatirikta dravya samavatar* (physical-assimilation other than the body of the knower and the body of the potential knower) ?

(Ans.) *Jnayak sharir-bhavya sharir vyatirikta dravya samavatar* (physical-assimilation other than the body of the knower and the body of the potential knower) is of three types—(1) *Atmasamavatar* (self-dependent assimilation), (2) *Parasamavatar* (assimilation dependent on others), and (3) *Tadubhayasamavatar* (assimilation dependent on self and others both).

According to *Atmasamavatar* (self-dependent assimilation) all substances exist in their own form or state. According to *Parasamavatar* (assimilation dependent on others) they exist in a state dependent on others, in the same way as berries in a bowl. And according to *Tadubhayasamavatar* (assimilation dependent on self and others both) they exist both independently and

dependent on others, in the same way as pillar in the house and neck of a pitcher.

(२) अहवा जाणयसरीर—भवियसरीर वइरित्ते दव्वसमोयारे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा—आयसमोयारे य तदुभयसमोयारे य।

चउसट्ठिया आयसमोयारेणं आयभावे समोयरति, तदुभयसमोयारेणं बत्तीसियाए समोयरति आयभावे य।

बत्तीसिया आयसमोयारेणं आयभावे समोयरति, तदुभयसमोयारेणं सोलसियाए समोयरति आयभावे य।

सोलसिया आयसमोयारेणं आयभावे समोयरति, तदुभयसमोयारेणं अट्ठभाइयाए समोयरति आयभावे य।

अट्ठभाइया आयसमोयारेणं आयभावे समोयरति, तदुभयसमोयारेणं चउभाइयाए समोयरति आयभावे य।

चउभाइया आयसमोयारेणं आयभावे समोयरति, तदुभयसमोयारेणं अद्धमाणीए समोयरइ आयभावे य।

अद्धमाणी आयसमोयारेणं आयभावे समोयरति, तदुभयसमोयारेणं माणीए समोयरति आयभावे य।

से तं जाणयसरीर—भवियसरीर वइरित्ते दव्वसमोयारे। से तं नोआगमओ दव्वसमोयारे। से तं दव्वसमोयारो।

(२) अथवा ज्ञायकशरीर-भव्यशरीर-व्यतिरिक्तद्रव्यसमवतार दो प्रकार का है—(१) आत्मसमवतार, और (२) तदुभयसमवतार।

जैसे आत्मसमवतार से चतुष्षष्टिका (चौंसठिया = चार पल) आत्मभाव में रहती है और तदुभयसमवतार की अपेक्षा द्वात्रिंशिका (बत्तीसिया = आठ पल) में भी और अपने निजरूप में भी रहती है।

द्वात्रिंशिका आत्मसमवतार की अपेक्षा आत्मभाव में और उभयसमवतार की अपेक्षा षोडशिका (सोलह पल वाली) में भी रहती है और आत्मभाव में भी रहती है।

षोडशिका आत्मसमवतार से आत्मभाव में समवतीर्ण होती है और तदुभयसमवतार की अपेक्षा अष्टभागिका में भी तथा अपने निजरूप में भी रहती है।

अष्टभागिका आत्मसमवतार की अपेक्षा आत्मभाव में तथा तदुभयसमवतार की अपेक्षा चतुर्भागिका में भी समवतरित होती है और अपने निज स्वरूप में भी समवतरित होती है।

आत्मसमवतार की अपेक्षा चतुर्भागिका आत्मभाव में और तदुभयसमवतार से अर्धमानिका में समवतीर्ण होती है एवं आत्मभाव में भी।

आत्मसमवतार से अर्धमानिका आत्मभाव में एवं तदुभयसमवतार की अपेक्षा मानिका आत्मभाव में भी समवतरित होती है।

यह ज्ञायकशरीर-भव्यशरीर-व्यतिरिक्तद्रव्यसमवतार का वर्णन है। इस तरह नोआगमतःद्रव्यसमवतार और द्रव्यसमवतार की प्ररूपणा पूर्ण हुई।

विवेचन-(चतुःषष्टिका आदि का विवरण सूत्र ३२१ में रसमान प्रमाण-प्रकरण में देखें।)

माणी, अर्धमाणी, चतुर्भागिका आदि उस समय मगध देश के प्रचलित माप हैं। यहाँ इस कथन का तात्पर्य यह है कि चतुष्षष्टिका (चार पल) का कोई मान या वस्तु अपने से बड़ी द्वात्रिंशिका आठ पल की वस्तु में समाहित हो जाती है। माणी आदि तो मात्र एक उदाहरण है, समवतार का क्षेत्र बहुत व्यापक है। इसका उपयोग तत्त्वज्ञान तथा व्यवहार के प्रत्येक क्षेत्र में उपयुक्त स्थान पर किया जा सकता है।

(2) Also, *Jnayak sharir-bhavya sharir vyatirikta dravya samavatar* (physical-assimilation other than the body of the knower and the body of the potential knower) is of two types—(1) *Atmasamavatar* (self-dependent assimilation), (2) *Tadubhayasamavatar* (assimilation dependent on self and others both). For example—

According to *Atmasamavatar* (self-dependent assimilation) a *chatushshashtika* (measurement of weight equal to one sixty-fourth part of a *mani* or four *pals*) is assimilated in its own state and according to *Tadubhayasamavatar* (assimilation dependent on self and others both) in a *dvatrinshika* (measurement of weight equal to one thirty second part of a *mani* or eight *pals*) as well as its own state.

According to *Atmasamavatar* (self-dependent assimilation) a *dvatrinshika* (measurement of weight equal to one thirty second part of a *mani* or eight *pals*) is assimilated in its own state and

according to *Tadubhayasamavatar* (assimilation dependent on self and others both) in *shodashika* (measurement of weight equal to one sixteenth part of a *mani* or sixteen *pals*) as well as its own state.

According to *Atmasamavatar* (self-dependent assimilation) a *shodashika* (measurement of weight equal to one sixteenth part of a *mani*) is assimilated in its own state and according to *Tadubhayasamavatar* (assimilation dependent on self and others both) in an *ashtabhagika* (measurement of weight equal to one eighth part of a *mani*) as well as its own state.

According to *Atmasamavatar* (self-dependent assimilation) an *ashtabhagika* (measurement of weight equal to one eighth part of a *mani*) is assimilated in its own state and according to *Tadubhayasamavatar* (assimilation dependent on self and others both) in a *chaturbhagika* (measurement of weight equal to one fourth part of a *mani*) as well as its own state.

According to *Atmasamavatar* (self-dependent assimilation) a *chaturbhagika* (measurement of weight equal to one fourth part of a *mani*) is assimilated in its own state and according to *Tadubhayasamavatar* (assimilation dependent on self and others both) in an *ardhamanika* (measurement of weight equal to half a *mani*) as well as its own state.

According to *Atmasamavatar* (self-dependent assimilation) an *ardhamanika* (measurement of weight equal to half a *mani*) is assimilated in its own state and according to *Tadubhayasamavatar* (assimilation dependent on self and others both) in a *manika* (measurement of weight equal to one *mani*) as well as its own state.

This concludes the description of *Jnayak sharir-bhavya sharir vyatirikta dravya samavatar* (physical-assimilation other than the body of the knower and the body of the potential knower). This concludes the description of *No-Agamatah-dravya samavatar* (physical aspect of assimilation not in context of *Agam* or only in context of action). This also concludes the description of *dravya samavatar* (physical-assimilation).

Elaboration—For details of terms like *chatushashtika* see aphorism 321.

Mani, ardhamani, chaturbhagika etc. are the weight measures prevalent in *Magadh* during that period. Here they have been used to illustrate that a small measure like *chatushashtika* gets assimilated into a larger measure like *dvatrinshika. Mani* is just one example of *samavatar* (assimilation), which covers a very wide field. It is applicable in all fields including metaphysical.

क्षेत्रसमवतार का स्वरूप

५३१. से किं तं खेत्तसमोयारे ?

खेत्तसमोयारे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा–आयसमोयारे य तदुभयसमोयारे य।

भरहे वासे आयसमोयारेणं आयभावे समोयरति, तदुभयसमोयारेणं जंबूद्दीवे समोयरति आयभावे य।

जंबूद्दीवे दीवे आयसमोयारेणं आयभावे समोयरति, तदुभयसमोयारेणं तिरियलोए समोयरति आयभावे य।

तिरियलोए आयसमोयारेणं आयभावे समोयरति, तदुभयसमोयारेणं लोए समोयरति आयभावे य।

से तं खेत्तसमोयारे।

५३१. (प्र.) क्षेत्रसमवतार क्या है ?

(उ.) क्षेत्रसमवतार (लघु क्षेत्र से बृहत् क्षेत्र में समवतरित करना क्षेत्रसमवतार है) दो प्रकार का है, यथा–(१) आत्मसमवतार, और (२) तदुभयसमवतार।

आत्मसमवतार की अपेक्षा भरतक्षेत्र आत्मभाव (अपने) में रहता है और तदुभयसमवतार की अपेक्षा आत्मभाव में भी रहता है और जम्बूद्वीप में भी रहता है।

आत्मसमवतार की अपेक्षा जम्बूद्वीप आत्मभाव में रहता है और तदुभयसमवतार की अपेक्षा तिर्यक्लोक (मध्यलोक) में भी रहता है और आत्मभाव में भी।

आत्मसमवतार से तिर्यक्लोक आत्मभाव में समवतरित होता है और तदुभयसमवतार की अपेक्षा लोक में समवतरित होता है और आत्मभाव–निजरूप में भी।

यही क्षेत्रसमवतार का स्वरूप है।

531. (Q.) What is this *kshetra samavatar* (area-assimilation)?

(Ans.) *Kshetra samavatar* (assimilation of smaller area into larger area or area-assimilation) is of two kinds—(1) *Atmasamavatar* (self-dependent assimilation), and (2) *Tadubhayasamavatar* (assimilation dependent on self and others both). (For example—)

According to *Atmasamavatar* (self-dependent assimilation) *Bharat Kshetra* (a country) is assimilated in its own form or dimension and according to *Tadubhayasamavatar* (assimilation dependent on self and others both) in Jambudveep (a continent) as well as its own form or dimension.

According to *Atmasamavatar* (self-dependent assimilation) Jambudveep (a continent) is assimilated in its own form or dimension and according to *Tadubhayasamavatar* (assimilation dependent on self and others both) in *Tiryak Lok* (the transverse space or a specific sector of space) as well as its own form or dimension.

According to *Atmasamavatar* (self-dependent assimilation) *Tiryak Lok* (the transverse space) is assimilated in its own form or dimension and according to *Tadubhayasamavatar* (assimilation dependent on self and others both) in *Lok* (total occupied space) as well as its own form or dimension.

This concludes the description of *kshetra samavatar* (area-assimilation).

कालसमवतार का स्वरूप

५३२. से किं तं कालसमोयारे ?

कालसमोयारे दुविहे पण्णत्ते। तं.–आयसमोयारे य तदुभयसमोयारे य।

समए आयसमोयारेणं आयभावे समोयरति, तदुभयसमोयारेणं आवलियाए समोयरति आयभावे य। एवं आणापाणू थोवे लवे मुहुत्ते अहोरत्ते पक्खे मासे उऊ अयणे संवच्छरे जुगे वाससते वाससहस्से वाससतसहस्से पुव्वंगे पुव्वे तुडियंगे तुडिए अडडंगे अडडे अववंगे अववे हुहुयंगे हुहुए उप्पलंगे उप्पले पउमंगे पउमे णलिणंगे णलिणे

अत्थिनिउरंगे अत्थिनिउरे अउयंगे अउए णउयंगे णउए पउयंगे पउए चूलियंगे चूलिया सीसपहेलियंगे सीसपहेलिया पलिओवमे सागरोवमे आयसमोयारेणं आयभावे समोयरइ, तदुभयसमोयारेणं ओसप्पिणि-उस्सप्पिणीसु समोयरति आयभावे य।

ओसप्पिणि-उस्सप्पिणीओ आयसमोयारेणं आयभावे समोयरंति, तदुभयसमोयारेणं पोग्गलपरियट्टे समोयरंति आयभावे य।

पोग्गलपरियट्टे आयसमोयारेणं आयभावे समोयरति, तदुभयसमोयारेणं तीतद्धाअणागतद्धासु समोयरति आयभावे य; तीतद्धा-अणागतद्धाओ आयसमोयारेणं आयभावे समोयरंति, तदुभयसमोयारेणं सव्वद्धाए समोयरंति आयभावे य।

से तं कालसमोयारे।

५३२. **(प्र.)** कालसमवतार क्या है?

(उ.) कालसमवतार-(सूक्ष्म समय आदि से आवलिका आदि में समवतरित होना) दो प्रकार का है। यथा-(१) आत्मसमवतार, तथा (२) तदुभयसमवतार। जैसे-

आत्मसमवतार की अपेक्षा समय आत्मभाव में रहता है और तदुभयसमवतार की अपेक्षा आवलिका में भी और आत्मभाव में भी रहता है। इसी प्रकार आन-प्राण, स्तोक, लव, मुहूर्त्त, अहोरात्र (दिन-रात), पक्ष, मास, ऋतु, अयन, संवत्सर, युग, वर्षशत, वर्षसहस्र, वर्षशतसहस्र, पूर्वांग, पूर्व, त्रुटितांग, त्रुटित, अटटांग, अटट, अववांग, अवव, हूहूकांग, हूहूक, उत्पलांग, उत्पल, पद्मांग, पद्म, नलिनांग, नलिन, अक्षनिपुरांग, अक्षनिपुर, अयुतांग, अयुत, नयुतांग, नयुत, प्रयुतांग, प्रयुत, चूलिकांग, चूलिका, शीर्षप्रहेलिकांग, शीर्षप्रहेलिका, पल्योपम, सागरोपम ये सभी आत्मसमवतार से आत्मभाव में और तदुभयसमवतार से अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी में भी और आत्मभाव में भी रहते हैं।

अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी काल आत्मसमवतार की अपेक्षा आत्मभाव में रहता है और तदुभयसमवतार की अपेक्षा पुद्गलपरावर्तन में भी और आत्मभाव में भी रहता है।

पुद्गलपरावर्तनकाल आत्मसमवतार की अपेक्षा निजरूप में रहता है और तदुभयसमवतार से अतीत और अनागत (भविष्यत्) काल में भी एवं आत्मभाव में भी रहता है। अतीत-अनागत काल आत्मसमवतार की अपेक्षा आत्मभाव में रहता है, तथा तदुभयसमवतार की अपेक्षा सर्वाद्धाकाल में भी रहता है।

यह कालसमवतार का प्ररूपण है।

विवेचन–समय आदि का वर्णन इसी सूत्र में पहले किया जा चुका है। (देखें भाग १, पृ. २९० पर)

पुद्‌गलपरावर्तन–जितने समय में एक जीव समस्त लोकाकाश के प्रदेशों, समस्त पुद्‌गलों का स्पर्श करता है, वह एक पुद्‌गलपरावर्तन है। उसका कालमान अनन्त उत्सर्पिणी–अवसर्पिणी जितना है।

पुद्‌गलपरावर्तन का तदुभयसमवतार की अपेक्षा अतीत–अनागतकाल में समवतार बताने का कारण यह है कि पुद्‌गलपरावर्तन असंख्यात अवसर्पिणी–उत्सर्पिणीकाल के बराबर है। जिससे समयमात्र प्रमाण वाले वर्तमानकाल में उस बृहत्कालविभाग का समवतार सम्भव नहीं होने से अनन्त समय वाले अतीत–अनागतकाल का कथन किया है।

पुद्‌गलपरावर्तन के मुख्यतः चार भेद हैं–द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव। प्रत्येक के दो–दो प्रकार हैं–बादर और सूक्ष्म। कुल मिलाकर पुद्‌गलपरावर्तन के आठ प्रकार होते हैं।

लोक में अनन्त परमाणु ठसाठस भरे हुए हैं। उनमें एक समान जाति वाले पुद्‌गल समूह को वर्गणा कहते हैं। (१) औदारिकशरीर, (२) वैक्रियशरीर, (३) आहारकशरीर, (४) तैजस्‌शरीर, (५) भाषा, (६) उच्छ्‌वास, (७) मन, और (८) कर्म; ये आठ प्रकार की वर्गणाएँ हैं। पुद्‌गलपरावर्तन में आहारकशरीर को छोड़कर शेष सात वर्गणाओं का ग्रहण और परित्याग होता है। आहारकशरीर चौदह पूर्व के धारक लब्धिमान्‌ मुनि को प्राप्त होता है। ऐसे मुनि अर्धपुद्‌गलपरावर्तन से अधिक संसार परिभ्रमण नहीं करते। इस कारण पुद्‌गलपरावर्तन में आहारकशरीर का ग्रहण नहीं किया जाता है। इनका विशेष वर्णन परिशिष्ट १, पृष्ठ ४८१ पर देखें।

KAAL SAMAVATAR

532. (Q.) What is this *kaal samavatar* (time-assimilation) ?

(Ans.) *Kaal samavatar* (assimilation of minute fraction of time into higher units like *Avalika* or time-assimilation) is of two kinds—(1) *Atmasamavatar* (self-dependent assimilation), and (2) *Tadubhayasamavatar* (assimilation dependent on self and others both). (For example—)

According to *Atmasamavatar* (self-dependent assimilation) *Samaya* (the indivisible fraction of time) is assimilated in its own form or dimension and according to *Tadubhayasamavatar* (assimilation dependent on self and others both) in *Avalika* (a unit of time) as well as its own form or dimension. In the same way according to *Atmasamavatar* (self-dependent assimilation) various units of time like *aan, apaan, pran, stoka, lava, muhurt, divas, ahoratra, paksha, maas, ritu, ayan, samvatsar, yug, varshashat, varshasahasra, varshashatsahasra, purvanga, purva, trutilang, trutit, adadanga, adada, avavanga, avava, huhukanga, huhuka,*

आठ प्रकार की वर्गणा
त्रस नाड़ी
परिभ्रमण करता जीव
त्रस नाड़ी
आठ प्रकार की वर्गणा

चित्र परिचय १८

Illustration No. 18
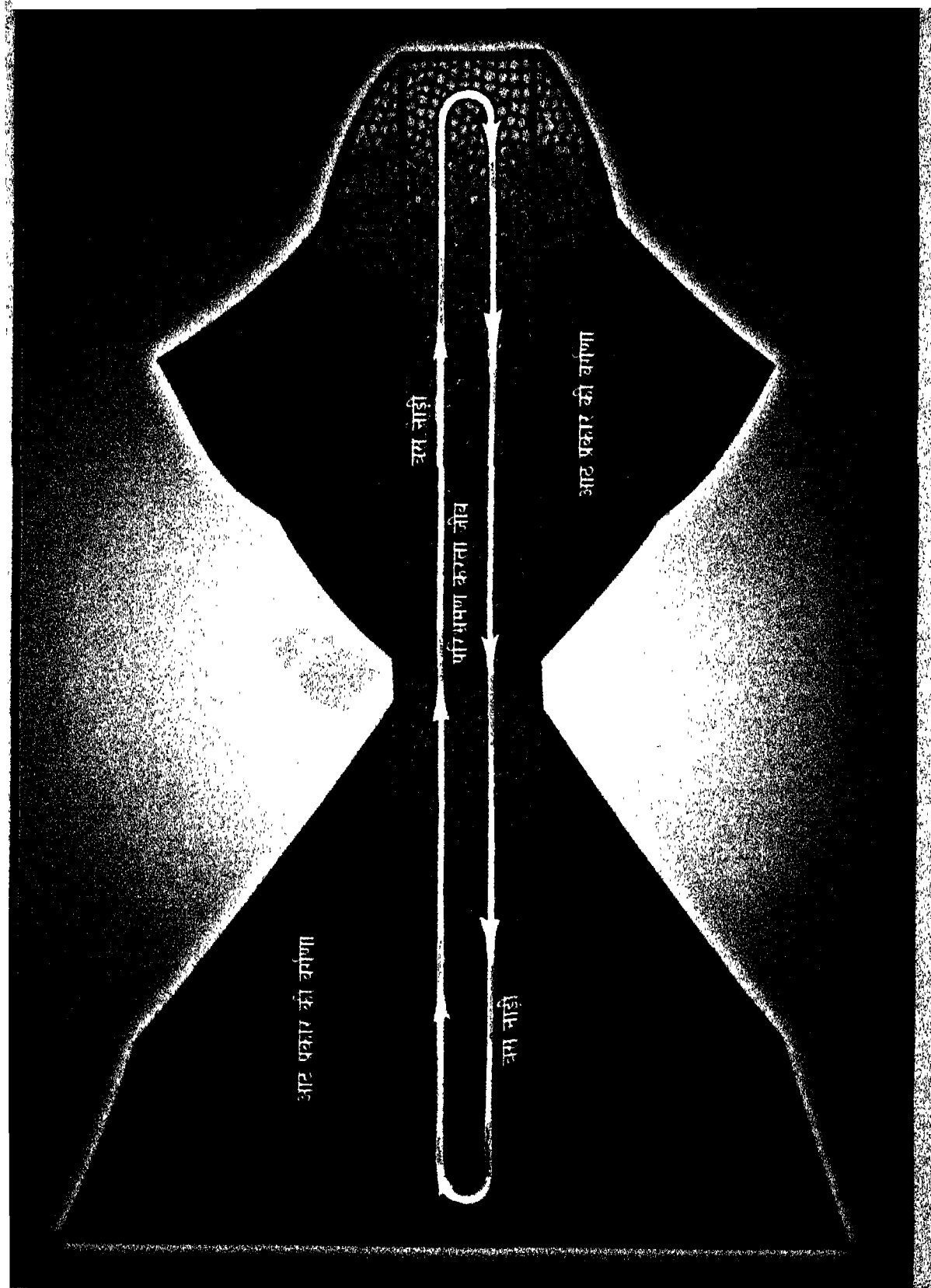
लोक में व्याप्त परमाणु वर्गणा

यह लोक अनन्त परमाणुओं से ठसाठस भरा है। उनमें आठ प्रकार की वर्गणा-पुद्गल समूह हैं। जैसे-(१) औदारिक शरीर, (२) वैक्रिय शरीर, (३) तैजस् शरीर, (४) आहारक शरीर, (५) भाषा, (६) उच्छ्वास, (७) मन, और (८) कर्म वर्गणा। एक जीव भ्रमण करता हुआ सर्वलोक में रहने वाले सर्वपरमाणुओं को (आहारक शरीर वर्गणा को छोड़कर) सातों ही प्रकार की वर्गणाओं के पुद्गलों को ग्रहण कर जितने समय में छोड़े उतने समय को **बादर द्रव्य पुद्गल परावर्तनकाल** कहते हैं।

-सूत्र ५३२, पृष्ठ ४०६

CLASSES OF PARAMANU IN THE UNIVERSE

The *Lok* (occupied space) is packed with infinite *paramanus* (ultimate-particles). Aggregates of these ultimate-particles are classified into eight *varganas* (classes)—(1) *Audarika Sharir* (particles forming gross physical body), (2) *Vaikriya Sharir* (particles forming transmutable body), (3) *Aharak Sharir* (particles forming telemigratory body), (4) *Taijas Sharir* (particles forming fiery body), (5) *Bhasha* (speech-particles), (6) *Uchchhavasa* (breath-particles), (7) *Man* (thought particles), and (8) *Karma* (*karma* particles). Leaving aside the *Aharak* class all other seven classes of particles are acquired and abandoned by a being during the cycles of rebirth. The time lapsed during the process is called ***Badar-pudgal paravartan kaal.***

—Aphorism 532, p. 406

utpalanga, utpala, padmanga, padma, nalinanga, nalina, arthanipuranga, arthanipura, ayutanga, ayut, nayutanga, nayuta, prayutanga, prayuta, chulikanga, chulika, sheershaprahelikanga, sheershaprahelika, palyopam, sagaropam are assimilated in their own form or dimension and according to *Tadubhayasamavatar* (assimilation dependent on self and others both) in an *avasarpini-utsarpini* (one complete cycle of time comprising of a progressive and a regressive time cycle) as well as their own forms or dimensions.

According to *Atmasamavatar* (self-dependent assimilation) an avasarpini-utsarpini is assimilated in its own form or dimension and according to *Tadubhayasamavatar* (assimilation dependent on self and others both) in *pudgalaparavartankaal* as well as its own form or dimension.

According to *Atmasamavatar* (self-dependent assimilation) *pudgalaparavartankaal* is assimilated in its own form or dimension and according to *Tadubhayasamavatar* (assimilation dependent on self and others both) in *atita-anagatakaal* as well as its own form or dimension.

According to *Atmasamavatar* (self-dependent assimilation) *atita-anagatakaal* is assimilated in its own form or dimension and according to *Tadubhayasamavatar* (assimilation dependent on self and others both) in *sarvaddhakaal* as well as its own form or dimension.

This concludes the description of *kaal samavatar* (time-assimilation).

Elaboration—*Samaya* and other units of time have already been discussed in aphorism 202 (Illustrated *Anuyogadvar Sutra,* Part I, pp. 290).

Pudgalaparavartankaal—The time taken by a soul to touch each and every matter particle in the whole universe is called *pudgalaparavartankaal.* It is equivalent to innumerable *avasarpini-utsarpinis.*

The reason for its assimilation in *atita-anagatakaal* (past-future eons) according to *Tadubhaya samavatar* (assimilation dependent on

self and others both) is its enormity. The present is just momentary (one *Samaya*) thus it does not have the capacity to assimilate *pudgalaparavartankaal* within it. Therefore it has to be assimilated into a unit of infinite scale like *atita-anagatakaal* (past-future eons).

There are four main categories of *pudgalaparavartankaal—dravya* (matter), *kshetra* (area), *kaal* (time) and *bhaava* (state or essence). Each of these have two sub-categories—*badar* (gross) and *sukshma* (minute). Thus, in total it has eight categories.

The *Lok* (occupied space) is packed with infinite *paramanus* (ultimate-particles). Based on their properties aggregates of these *paramanus* (ultimate-particles) are classified into eight *varganas* (classes)—(1) *Audarika Sharira* (particles forming gross physical body), (2) *Vaikriya Sharira* (particles forming transmutable body), (3) *Aharak Sharira* (particles forming telemigratory body), (4) *Taijas Sharira* (particles forming fiery body), (5) *Bhasha* (speech-particles), (6) *Uchchhavasa* (breath-particles), (7) *Man* (thought particles), and (8) *Karma* (*karma* particles). Leaving aside the *Aharak* class all other seven classes of particles are acquired and abandoned in the process of *pudgalaparavartan*. *Aharak* body is available only to the highly accomplished sages having knowledge of the fourteen *Purvas* (subtle canon). Such sages are not caught in the cycles of rebirth for more than half *pudgalaparavartankaal*. Therefore this class is not included in the process of *pudgalaparavartan*. (more details in appendix 1, page 481).

भावसमवतार का स्वरूप

५३३. से किं तं भावसमोयारे ?

भावसमोयारे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा–आयसमोयारे य तदुभय समोयारे य।

कोहे आय–समोयारेणं आयभावे समोयरति, तदुभयसमोयारेणं माणे समोयरति आयभावे य। एवं माणे माया लोभे रागे मोहणिज्जे अट्ठकम्मपगडीओ आयसमोयारे आयभावे समोयरंति।

तदुभयसमोयारेणं छव्विहे भावे समोयरंति आयभावे य। एवं छव्विहे भावे जीवे जीवत्थिकाए आयसमोयारेणं आयभावे समोयरति, तदुभयसमोयारेणं सव्वदव्वेसु समोयरति आयभावे य। एत्थं संगहणि गाहा–

कोहे माणे माया लोभे रागे य मोहणिज्जे य।
पगडी भावे जीवे जीवत्थिय सव्वदव्वा य॥१॥

से तं भावसमोयारे। से तं समोयारे। से तं उवक्कमे।

॥ प्रथम उपक्रमद्वार सम्मत्तं ॥

५३३. (प्र.) भावसमवतार क्या है?

(उ.) भावसमवतार दो प्रकार का है। यथा-(१) आत्मसमवतार, और (२) तदुभयसमवतार।

आत्मसमवतार की अपेक्षा क्रोध निजभाव में रहता है और तदुभयसमवतार से मान में और निजभाव में भी समवतरित होता है। इसी प्रकार (१) मान, (२) माया, (३) लोभ, (४) राग, (५) मोहनीय, और (६) अष्टकर्म प्रकृतियाँ आत्मसमवतार की अपेक्षा से आत्मभाव में तथा तदुभयसमवतार की अपेक्षा छह प्रकार के भावों में और आत्मभाव में भी रहती हैं।

इसी प्रकार (औदयिक आदि) छह भाव जीव, जीवास्तिकाय, आत्मसमवतार की अपेक्षा निजभाव में रहते हैं और तदुभयसमवतार की अपेक्षा द्रव्यों में और आत्मभाव में भी रहते हैं। इनकी संग्रहणी गाथा इस प्रकार है-

क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, मोहनीयकर्म, (कर्म) प्रकृति, भाव, जीव, जीवास्तिकाय और सर्वद्रव्य (आत्मसमवतार से अपने-अपने स्वरूप में और तदुभयसमवतार से पररूप और स्व-स्वरूप में भी रहते हैं)॥१॥

यही भावसमवतार है। इसका वर्णन होने पर समवतार और उपक्रम नाम के प्रथम द्वार की वक्तव्यता समाप्त हुई।

विवेचन-क्रोध कषाय आदि जीव के वैभाविक भावों के तथा ज्ञानादि स्वाभाविक भावों के समवतार को भावसमवतार कहते हैं। इसके भी आत्मसमवतार और तदुभयसमवतार ये दो प्रकार हैं। आशय यह है कि क्रोधादि औदयिकभाव रूप होने से उनका भावसमवतार में ग्रहण किया है, अहंकार के बिना क्रोध उत्पन्न नहीं होता है, इसलिए उभयसमवतार की अपेक्षा क्रोध का मान में और अपने निजरूप में समवतार कहा है और आत्मसमवतार की अपेक्षा अपने निजरूप में ही समवतार बताया है। मान का माया में और निजरूप में भी, और आत्मसमवतार की अपेक्षा अपने निजरूप में ही समवतार बताया है। इसी प्रकार माया, लोभ, राग, मोहनीयकर्म, अष्टकर्मप्रकृति आदि जीव का उभयसमवतार एवं आत्मसमवतार समझ लेना चाहिए।

इस क्रम को व्याप्य व्यापक की दृष्टि से इस प्रकार कह सकते हैं-प्रत्येक जीव में भाव होता है, भाव का हेतु है कर्मप्रकृति। कर्म का मुख्य हेतु है मोह। मोह का हेतु है राग, राग का हेतु लोभ, लोभ का हेतु माया, माया का हेतु मान और मान का हेतु है क्रोध। ये सभी भाव एक दूसरे से सम्बन्धित हैं। इसलिए इनका एक भाव से दूसरे भाव में समवतरित होना स्वाभाविक है।

समवतार का वर्णन करने के साथ उपक्रमद्वार की वक्तव्यता पूर्ण हुई।

॥ प्रथम उपक्रमद्वार समाप्त ॥

BHAAVA SAMAVATAR (ASSIMILATION)

533. (Q.) What is this *bhaava samavatar* (assimilation of the state of soul or state-assimilation) ?

(Ans.) *Bhaava samavatar* (assimilation of the state of soul or state-assimilation) is of two types—(1) *Atmasamavatar* (self-dependent assimilation), and (2) *Tadubhayasamavatar* (assimilation dependent on self and others both). (For example—)

According to *Atmasamavatar* (self-dependent assimilation) *krodh* (anger) is assimilated in its own form or state and according to *Tadubhayasamavatar* (assimilation dependent on self and others both) in conceit (*maan*) as well as its own form or state. In the same way, according to *Atmasamavatar* (self-dependent assimilation) (1) *maan* (conceit), (2) *maya* (deceit), (3) *lobha* (greed), (4) *raga* (attachment), (5) *mohaniya karma* (deluding *karma*), and (6) eight *karma prakritis* (species of *karma* by qualitative segregation) are assimilated in their own forms or states and according to *Tadubhayasamavatar* (assimilation dependent on self and others both) in six kinds of states (of the soul) as well as their own form or state.

In the same way, according to *Atmasamavatar* (self-dependent assimilation) six kinds of states of the soul including soul as *jivastikaya* (soul entity) are assimilated in their own forms or states and according to *Tadubhayasamavatar* (assimilation dependent on self and others both) in substances as well as their own form or state. The epitomic verse covering these is—

(According to *Atmasamavatar* or self-dependent assimilation) *krodh* (anger), *maan* (conceit), *maya* (deceit), *lobha* (greed), *raga*

(attachment), *mohaniya karma* (deluding *karma*), eight *karma prakritis* (species of *karma* by qualitative segregation), *bhaava* (state of soul), *jiva* (soul), *jivastikaya* (soul entity) and *sarva dravya* (all entities and substances) are assimilated in their own forms or states and according to *Tadubhayasamavatar* (assimilation dependent on self and others both) in other form or state as well as their own form or state. (1)

This concludes the description of *bhaava samavatar* (assimilation of the state of soul or state-assimilation). This concludes the description of *samavatar* (assimilation). This also concludes the description of *Upakram* (introduction).

Elaboration—The assimilation of the unnatural state of soul caused by attributes like anger and other passions and the natural state attributes like knowledge is called *bhaava samavatar* (assimilation of the state of soul or state-assimilation). This also has two kinds—self-dependent and dependent on others and self both. As anger and other passions are in state of fruition they are included in *bhaava samavatar* (assimilation of the state of soul or state-assimilation). As anger does not manifest itself in absence of conceit, according to the dual assimilation it is assimilated in conceit as well as its own state and according to self-dependent assimilation only in its own state. In the same way conceit, according to the dual assimilation, is assimilated in deceit as well as its own state and according to self-dependent assimilation only in its own state. The same holds good for *maya* (deceit), *lobha* (greed), *raga* (attachment), *mohaniya karma* (deluding *karma*), eight *karma prakritis* (species of *karma* by qualitative segregation), *bhaava* (state of soul), *jiva* (soul) and *jivastikaya* (soul entity).

In other words in a wider perspective it can be stated that—each soul has attitudes or feelings. These attitudes are caused by species of *karmas*. The primary cause of bondage of *karma* is *moha* (fondness) which in turn is caused by attachment. The cause of attachment is greed and that of greed is deceit which is caused by conceit that in turn is caused by anger. All these attitudes are interrelated. Therefore it is natural that one attitude is assimilated in another. With this discussion on *Samavatar* the discussion on the first door of disquisition, *Upakram*, is concluded.

• END OF UPAKRAM : THE FIRST DOOR OF DISQUISITION •

२. निक्षेपद्वार : निक्षेप-प्रकरण
2. NIKSHEP DVAR (APPROACH OF ATTRIBUTION)

निक्षेप निरूपण

५३४. से किं तं निक्खेवे ?

निक्खेवे तिविहे पण्णत्ते। तं जहा—ओहनिप्फण्णे नामनिप्फण्णे सुत्तालावगनिप्फण्णे य।

५३४. (प्र.) निक्षेप क्या हैं ?

(उ.) निक्षेप के तीन प्रकार हैं। यथा-(१) ओघनिष्पन्न, (२) नामनिष्पन्न, और (३) सूत्रालापकनिष्पन्न।

विवेचन—स्थापना आदि चार निक्षेपों का वर्णन भाग १, पृ. २१, सूत्र ८ में किया जा चुका है। यहाँ अन्य प्रकार से निक्षेप के तीन भेद बताये हैं-

(१) **ओघनिष्पन्न**—ओघ का अर्थ है सामान्य। सामान्य रूप में अध्ययन आदि श्रुत नाम से निष्पन्न जो निक्षेप हो, उसे ओघनिष्पन्ननिक्षेप कहते हैं। सामायिक, चतुर्विंशतिस्तव आदि को 'अध्ययन' कहते हैं। इसका वर्णन आगे सूत्र ५३५ से ५९२ तक में किया है।

(२) **नामनिष्पन्न**—श्रुत के ही सामायिक आदि विशेष नामों से निष्पन्न निक्षेप नामनिष्पन्ननिक्षेप कहलाता है। इसका वर्णन सूत्र ५९३ से ६०० तक में है।

(३) **सूत्रालापकनिष्पन्न**—**'करेमि भंते सामाइयं'** इत्यादि सूत्र के पद विभाग से होने वाला निक्षेप सूत्रालापकनिष्पन्न निक्षेप है। सूत्र ६०१ में इसका वर्णन है।

TYPES OF NIKSHEP

534. (Q.) What is this *nikshep* (attribution) ?

(Ans.) *Nikshep* (attribution) is of three kinds—(1) *Ogha nishpanna* (pertaining to general nomenclature), (2) *Naam nishpanna* (pertaining to specific name), and (3) *Sutralapak nishpanna* (pertaining to text recitation).

Elaboration—The four kinds of *nikshep* (attribution) including *sthapana* (notional installation) have been described in aphorism 8 (Illustrated *Anuyogadvar Sutra,* Part I, p. 21). Here three different categories from another angle are discussed—

(1) Ogha-nishpanna (pertaining to general nomenclature)—*Ogha* means general. The attribution of general names to a text or its part is called *Ogha nishpanna nikshep* (attribution pertaining to general nomenclature), for example—*adhyayan* (study or chapter). *Samayik, Chaturvimshati Stava* etc. are called *adhyayan.* These are described in aphorism 535 to 592.

(2) Naam-nishpanna (pertaining to specific name)—The attribution of specific names like *Samayik* to a text or its part is called *Naam nishpanna nikshep* (attribution pertaining to specific name). These are described in aphorism 593 to 600.

(3) Sutralapak-nishpanna (pertaining to text recitation)—The attribution based on specific phrases or parts of verses is called *Sutralapak nishpanna nikshep* (attribution pertaining to text recitation). These are described in aphorism 601 onwards.

(१) ओघनिष्पन्ननिक्षेप का स्वरूप

५३५. से किं तं ओहनिप्फण्णे ?

ओहनिप्फण्णे चउव्विहे पण्णत्ते। तं जहा—अज्झयणे अज्झीणे आए झवणा।

५३५. (प्र.) ओघनिष्पन्ननिक्षेप क्या है ?

(उ.) ओघनिष्पन्ननिक्षेप के चार भेद हैं। उनके नाम हैं—(१) अध्ययन, (२) अक्षीण, (३) आय, और (४) क्षपणा।

विवेचन—सूत्र में ओघनिष्पन्ननिक्षेप के जिन चार प्रकारों का नामोल्लेख किया है, वे चारों सामायिक, चतुर्विंशतिस्तव आदि के ही एकार्थवाची सामान्य नाम हैं।

अध्ययन की निरुक्ति इस प्रकार है—**अज्झप्पस्स आणयणं**—अध्यात्म अर्थात् प्रशस्त स्थिर चित्त को सामायिक आदि में लगाना—इसका नाम है **अध्ययन**। निरन्तर पढ़ते रहने से भी यह ज्ञान कभी क्षीण नहीं होता अतः यह **अक्षीण** है। मुक्ति रूप लाभ (आय) का देने वाला है अतः **आय** है तथा कर्मों का क्षय-निर्जरा करने वाला होने से यह **'क्षपणा'** है।

(1) OGHA-NISHPANNA NIKSHEP

535. (Q.) What is this *Ogha nishpanna nikshep* (attribution pertaining to general nomenclature) ?

(Ans.) *Ogha nishpanna nikshep* (attribution pertaining to general nomenclature) is of four kinds—(1) *Adhyayan* (chapter; concentration of mind), (2) *Akshina* (inexhaustible), (3) *Aaya* (acquisition), and (4) *Kshapana* (eradication).

Elaboration—The four kinds of *Ogha nishpanna nikshep* (attribution pertaining to general nomenclature) mentioned in this aphorism are just general thematic names of the four chapters including *Samayik* and *Chaturvimshati Stava* incorporating some single specific quality.

The meanings of these terms are—*adhyayan* means to direct and concentrate attention to highest degree on practices including *Samayik*. As this knowledge does not diminish even after continued use it is called *akshina* (inexhaustible). As it causes benefit in the form of liberation it is called *aaya* (acquisition). As it causes shedding of *karmas* it is called *kshapana* (eradication).

(क) अध्ययन निरूपण

५३६. से किं तं अज्झयणे ?

अज्झयणे चउव्विहे पण्णत्ते। तं जहा–णामज्झयणे ठवणज्झयणे दव्वज्झयणे भावज्झयणे।

५३६. (प्र.) अध्ययन किसे कहते हैं ?

(उ.) अध्ययन के चार प्रकार हैं, जैसे–(१) नाम-अध्ययन, (२) स्थापना-अध्ययन, (३) द्रव्य-अध्ययन, और (४) भाव-अध्ययन।

(A) ADHYAYAN

536. (Q.) What is this *Adhyayan* (chapter/concentration of mind) ?

(Ans.) *Adhyayan* (chapter/concentration of mind) is of four types—(1) *Naam Adhyayan*, (2) *Sthapana Adhyayan*, (3) *Dravya Adhyayan*, and (4) *Bhaava Adhyayan*.

नाम–स्थापना–अध्ययन

५३७. णाम–ट्ठवणाओ पुव्ववण्णियाओ।

५३७. नाम और स्थापना-अध्ययन का स्वरूप पूर्व वर्णित सूत्र १०-११ जैसा ही जानना चाहिए।

NAAM AND STHAPANA ADHYAYAN

537. *Naam* and *Sthapana adhyayan* (*adhyayan* as name and notional installation) should be taken to be same as *Naam avashyak* and *Sthapana avashyak* (aphorism 10-11).

५३८. से किं तं दव्वज्झयणे ?

दव्वज्झयणे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा—आगमओ णोआगमओ य।

५३८. (प्र.) द्रव्य-अध्ययन क्या है?

(उ.) द्रव्य-अध्ययन के दो प्रकार हैं। यथा-(१) आगम से, और (२) नोआगम से।

DRAVYA ADHYAYAN

538. (Q.) What is this *Dravya adhyayan* (physical aspect of chapter/concentration of mind) ?

(Ans.) *Dravya adhyayan* (physical aspect of chapter/ concentration of mind)) is of two kinds—(1) *Agamatah dravya adhyayan* (physical aspect of *adhyayan* in context of *Agam* or in context of knowledge), and (2) *No-agamatah dravya adhyayan* (physical aspect of *adhyayan* not in context of *Agam* or only in context of action).

५३९. से किं तं आगमतो दव्वज्झयणे ?

आगमतो दव्वज्झयणे जस्स णं अज्झयणे त्ति पदं सिक्खितं ठितं जितं मितं परिजितं जाव जावइया अणुवउत्ता आगमओ तावइयाइं दव्वज्झयणाइं। एवमेव ववहारस्स वि। संगहस्स णं एगो वा अणेगो वा तं चेव भाणियव्वं जाव से तं आगमतो दव्वज्झयणे।

५३९. (प्र.) आगम से द्रव्य-अध्ययन क्या है?

(उ.) जिसने 'अध्ययन' इस पद को सीख लिया है, अपने (हृदय) में स्थिर कर लिया है, जित, मित और परिजित कर लिया है यावत् जितने भी उपयोग से शून्य हैं, वे आगम से द्रव्य-अध्ययन हैं। यह नैगमनय का मत है। इसी प्रकार (नैगमनय जैसा ही) व्यवहारनय का मत है, संग्रहनय के मत से एक या अनेक आत्माएँ एक आगमद्रव्य-अध्ययन हैं, इत्यादि समग्र वर्णन आगमद्रव्य-आवश्यक जैसा ही सूत्र १३ के अनुसार यहाँ जानना चाहिए। यह आगमद्रव्य-अध्ययन का स्वरूप है।

539. (Q.) What is this *Agamatah dravya adhyayan* (physical-*adhyayan* with scriptural knowledge) ?

(Ans.) Physical-*adhyayan* in context of *Agam* is like this—(For instance) a person (an ascetic) has studied, absorbed, retained,

assessed, perfected and memorized the term '*Adhyayan*'. In spite of all this he is devoid of the faculty of contemplating the meaning (spirit). This is *Agamatah dravya adhyayan* (physical-*adhyayan* with scriptural knowledge). This conforms to *Naigam naya*. Same is true for *Vyavahar naya*. According to *Samgraha naya* one or many souls are one or more *Agamatah dravya adhyayan*. (details same as aphorism 13, *Illustrated Anuyogadvar Sutra*, Part I)

५४०. से किं तं णोआगमतो दव्वज्झयणे ?

णोआगमतो दव्वज्झयणे तिविहे पण्णत्ते। तं जहा–जाणयसरीरदव्वज्झयणे, भवियसरीरदव्वज्झयणे, जाणयसरीर–भवियसरीर–वतिरित्ते दव्वज्झयणे।

५४०. (प्र.) नोआगमतःद्रव्य-अध्ययन क्या है ?

(उ.) नोआगमतःद्रव्य-अध्ययन तीन प्रकार का है। यथा–(१) ज्ञायकशरीरद्रव्य-अध्ययन, (२) भव्यशरीरद्रव्य-अध्ययन, और (३) ज्ञायकशरीर-भव्यशरीर-व्यतिरिक्तद्रव्य-अध्ययन।

540. (Q.) What is this *No-agamatah dravya adhyayan* (physical-*adhyayan* without scriptural knowledge) ?

(Ans.) *No-agamatah dravya adhyayan* (physical-*adhyayan* without scriptural knowledge) is of three types—(1) *Jnayak sharir dravya adhyayan*, (2) *Bhavya sharir dravya adhyayan*, and (3) *Jnayak sharir-bhavya sharir-vyatirikta dravya adhyayan*.

५४१. से किं तं जाणगसरीरदव्वज्झयणे ?

जाणगसरीरदव्वज्झयणे अज्झयणेत्तिपयत्थाहिगारजाणयस्स जं सरीरयं ववगत–चुत–चइय–चत्तदेहं जाव अहो ! णं इमेणं सरीरसमुस्सएणं अज्झयणे त्ति पदं आघवियं जाव उवदंसियं ति।

जहा को दिट्ठंतो ?

अयं घयकुंभे आसी, अयं महुकुंभे आसी। से तं जाणगसरीरदव्वज्झयणे।

५४१. (प्र.) ज्ञायकशरीरद्रव्य-अध्ययन क्या है ?

(उ.) अध्ययन पद के अर्थाधिकार के ज्ञायक–जानकार के व्यपगतचैतन्य, च्युत, च्यवित त्यक्तदेह यावत् (जीवरहित शरीर को देखकर कोई कहे)–अहो ! इस शरीर रूप

पुद्गलसंघात ने 'अध्ययन' इस पद का व्याख्यान किया था, यावत् उपदर्शित किया था (वैसा यह शरीर ज्ञायकशरीरद्रव्य-अध्ययन है)।

(प्र.) इस विषय में कोई दृष्टान्त है ?

(उ.) (आचार्य ने उत्तर दिया) जैसे घड़े में से घी या मधु निकाल लिए जाने के बाद भी कहा जाता है—यह घी का घड़ा था, यह मधुकुंभ था। (यह समस्त वर्णन द्रव्यावश्यक में पूर्व वर्णित सूत्र १४-१७ के अनुसार समझें।)

यह ज्ञायकशरीरद्रव्य-अध्ययन का स्वरूप है।

541. (Q.) What is this *Jnayak sharir dravya adhyayan* (physical-*adhyayan* as body of the knower) ?

(Ans.) *Jnayak sharir dravya adhyayan* (physical-*adhyayan* as body of the knower) is explained thus : It is such a body of the knower of the purview of the meaning of *Adhyayan* that is dead, has been killed or has voluntarily embraced death. And seeing such a body someone utters—Oh ! This physical body was the instrument of learning *Adhyayan* (and so on up to...) and affirming it.

(Question asked by a disciple) Is there some analogy to confirm this ?

(Answer by the guru) Yes, for example it is conventionally said that this was a pot of honey or this was a pot of butter even after its contents have been taken out. (details same as aphorism 14-17)

This concludes the description of *Jnayak sharir dravya adhyayan* (physical-*adhyayan* as body of the knower).

५४२. से किं तं भवियसरीरदव्वज्झयणे ?

भवियसरीरदव्वज्झयणे जे जीवे जोणीजम्मणनिक्खंते इमेणं चेव आदत्तएणं सरीरसमुस्सएणं जिणदिट्ठेणं भावेणं अज्झयणे त्ति पयं सेयकाले सिक्खिस्सति ण ताव सिक्खति।

जहा को दिट्ठंतो ?

अयं घयकुंभे भविस्सति, अयं महुकुंभे भविस्सति। से तं भवियसरीरदव्वज्झयणे।

५४२. (प्र.) भव्यशरीरद्रव्य-अध्ययन क्या है ?

(उ.) जन्मकाल प्राप्त होने पर जो जीव गर्भस्थान से बाहर निकला और इसी प्रकार शरीरसमुदाय के द्वारा जिनोपदिष्ट भावानुसार 'अध्ययन' इस पद को सीखेगा, लेकिन अभी-वर्तमान में नहीं सीख रहा है (ऐसा उस जीव का शरीर भव्यशरीरद्रव्याध्ययन कहा जाता है)।

(प्र.) इसका कोई दृष्टान्त है ?

(उ.) जैसे किसी घड़े में अभी मधु या घी नहीं भरा गया है, तो भी उसको यह 'घृतकुंभ होगा', 'मधुकुंभ होगा' कहना। यह भव्यशरीरद्रव्याध्ययन का स्वरूप है। (सूत्र १८ के समान)

542. (Q.) What is this *Bhavya sharir dravya adhyayan* (physical-*adhyayan* as body of the potential knower) ?

(Ans.) On maturity a being comes out of the womb or is born and with its physical body it has the potential to learn *adhyayan* (chapter/concentration of mind), as preached by the Jina, but it is not learning at present. This being is called *Bhavya sharir dravya adhyayan* (physical-*adhyayan* as body of the potential knower).

(Question asked by a disciple) Is there some analogy to confirm this ?

(Answer by the guru) Yes, for example it is conventionally said that this will be a pot of honey or this will be a pot of butter even before filling it with the same. (details same as aphorism 18)

This concludes the description of *Bhavya sharir dravya adhyayan* (physical-*adhyayan* as body of the potential knower).

५४३. से किं तं जाणयसरीर-भवियसरीर-वइरित्ते दव्वज्झयणे ?

जाणयसरीर-भवियसरीर-वइरित्ते दव्वज्झयणे पत्तय-पोत्थयलिहियं। से तं जाणयसरीर-भवियसरीर-वइरित्ते दव्वज्झयणे। से तं णोआगमओ दव्वज्झयणे। से तं दव्वज्झयणे।

५४३. (प्र.) ज्ञायकशरीर-भव्यशरीर-व्यतिरिक्तद्रव्याध्ययन क्या है ?

(उ.) पत्र या पुस्तक में लिखे हुए अध्ययन को ज्ञायकशरीर-भव्यशरीर-व्यतिरिक्तद्रव्याध्ययन कहते हैं।

इस प्रकार से नोआगमद्रव्याध्ययन का और साथ ही द्रव्याध्ययन का वर्णन पूर्ण हुआ।

543. (Q.) What is this *Jnayak sharir-bhavya sharir-vyatirikta dravya adhyayan* (physical-*adhyayan* other than the body of the knower and the body of the potential knower) ?

(Ans.) *Jnayak sharir-bhavya sharir-vyatirikta dravya adhyayan* (physical-*adhyayan* other than the body of the knower and the body of the potential knower) is *adhyayan* (chapter) written on palm-leaves or a book.

This concludes the description of *No-agamatah dravya adhyayan* (physical-*adhyayan* without scriptural knowledge). This also concludes the description of *dravya adhyayan* (physical-*adhyayan*).

भाव–अध्ययन

५४४. से किं तं भावज्झयणे ?

भावज्झयणे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा–आगमतो य णोआगमतो य।

५४४. (प्र.) भाव-अध्ययन क्या है ?

(उ.) भाव-अध्ययन के दो प्रकार हैं–(१) आगम से भाव अध्ययन, एवं (२) नोआगम से भाव अध्ययन।

BHAAVA ADHYAYAN

544. (Q.) What is this *Bhaava adhyayan* (*adhyayan* as essence or perfect-*adhyayan*) ?

(Ans.) *Bhaava adhyayan* (perfect-*adhyayan*) is of two types—*Agamatah bhaava adhyayan* (perfect-*adhyayan* in context of *Agam* or in context of knowledge) and *No-agamatah bhaava adhyayan* (perfect-*adhyayan* not in context of *Agam* or only in context of action).

५४५. से किं तं आगमतो भावज्झयणे ?

आगमतो भावज्झयणे जाणए उवउत्ते। से तं आगमतो भावज्झयणे।

५४५. (प्र.) आगम से भाव-अध्ययन क्या है ?

(उ.) जो अध्ययन के अर्थ का ज्ञायक होने के साथ उसमें उपयोगयुक्त भी हो, उसे आगमतःभाव-अध्ययन कहते हैं।

545. (Q.) What is this *Agamatah bhaava adhyayan* (perfect-*adhyayan* with scriptural knowledge) ?

(Ans.) One who knows *adhyayan* (chapter/concentration of mind) and is sincerely involved with it is called *Agamatah bhaava adhyayan* (perfect-*adhyayan* with scriptural knowledge).

५४६. से किं तं नोआगमतो भावज्झयणे ?

नोआगमतो भावज्झयणे–

अज्झप्पस्साऽऽणयणं, कम्माणं अवचओ उवचियाणं।
अणुवचओ य नवाणं, तम्हा अज्झयणमिच्छंति॥१॥

से तं णोआगमतो भावज्झयणे। से तं भावज्झयणे। से तं अज्झयणे।

५४६. (प्र.) नोआगमतःभाव-अध्ययन क्या है ?

(उ.) नोआगमतःभाव-अध्ययन इस प्रकार है–

अध्यात्म में आने-सामायिक आदि अध्ययन में चित्त को लगाने, उपार्जित पूर्वबद्ध कर्मों का क्षय करने, निर्जरा करने और नवीन कर्मों का बंध नहीं होने देने का कारण होने से (मुमुक्षु महापुरुष) अध्ययन की अभिलाषा करते हैं॥१॥

यह नोआगमतःभाव-अध्ययन का स्वरूप है। भाव-अध्ययन और अध्ययन का वर्णन पूर्ण हुआ।

विवेचन–'अज्झप्पस्साऽऽणयणं' पद की संस्कृत छाया–**अध्यात्ममानयनं**–''अध्यात्मम्-आनयनम्'' है। इसमें अध्यात्म का अर्थ है चित्त और आनयन का अर्थ है लगाना। तात्पर्य यह हुआ कि सामायिक आदि में चित्त का लगाना अध्यात्ममानयन कहा जाता है और इसका फल है–**कम्माणं अवचओ**....। अर्थात् सामायिक आदि में चित्त की निर्मलता होने के कारण कर्मनिर्जरा होती है, नवीन कर्मों का आस्रव-बंध नहीं होता है। अध्ययन का यही अर्थ है।

546. (Q.) What is this *No-agamatah bhaava adhyayan* (perfect-*adhyayan* without scriptural knowledge) ?

(Ans.) *No-agamatah bhaava adhyayan* (perfect-*adhyayan* without scriptural knowledge) is explained as follows—

Adhyayan (chapter/concentration of mind) is instrumental in embracing spiritualism (through concentrating on chapters like *Samayik*), eradication or shedding of acquired and bonded *karmas*

and not allowing acquisition of new *karmas*. Therefore aspirants and sages desire it. (1)

This concludes the description of *No-agamatah bhaava adhyayan* (perfect-*adhyayan* without scriptural knowledge). This also concludes the description of *bhaava adhyayan* (perfect-*adhyayan*).

Elaboration—The phrase *Ajjhappassa anayanam* is transcribed in Sanskrit as—*Adhyatmamanayanam* or *Adhyatmam anayanam*. Here *Adhyatma* means mind and *anyana* means to apply. In other words to concentrate mind on practice of *Samayik* (etc.) is *Adhyatmamanayanam*. The following quartets convey its consequence or fruits—due to the consequent purity shedding of already bonded *karmas* is effected and new *karmas* are not acquired. This is the meaning of *Adhyayan* (chapter/concentration of mind).

(ख) अक्षीण निरूपण

५४७. से किं तं अज्झीणे ?

अज्झीणे चउव्विहे पण्णत्ते। तं जहा—णामज्झीणे ठवणज्झीणे दव्वज्झीणे भावज्झीणे।

५४७. (प्र.) अक्षीण क्या है ?

(उ.) अक्षीण के चार प्रकार हैं। यथा–(१) नाम-अक्षीण, (२) स्थापना-अक्षीण, (३) द्रव्य-अक्षीण, और (४) भाव-अक्षीण।

(B) AKSHINA

547. (Q.) What is this *Akshina* (inexhaustible) ?

(Ans.) *Akshina* (inexhaustible) is of four types—(1) *Naam Akshina*, (2) *Sthapana Akshina*, (3) *Dravya Akshina*, and (4) *Bhaava Akshina*.

नाम-स्थापना-अक्षीण

५४८. नाम-ठवणाओ पुव्ववण्णियाओ।

५४८. नाम और स्थापना-अक्षीण का स्वरूप पूर्ववत् (नाम और स्थापना आवश्यक के समान) जानना चाहिए।

NAAM AND STHAPANA AKSHINA

548. *Naam* and *sthapana akshina* (*akshina* as name and notional installation) should be taken to be same as *Naam avashyak* and *Sthapana avashyak* (aphorism 10-11).

द्रव्य–अक्षीण

५४९. से किं तं दव्वज्झीणे ?

दव्वज्झीणे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा–आगमतो य नोआगमतो य।

५४९. **(प्र.)** द्रव्य-अक्षीण क्या है ?

(उ.) द्रव्य-अक्षीण दो प्रकार का है। यथा–(१) आगम से, और (२) नोआगम से।

DRAVYA AKSHINA

549. (Q.) What is this *dravya akshina* (physical aspect of *akshina*) ?

(Ans.) *Dravya akshina* (physical aspect of *akshina*) is of two kinds—(1) *Agamatah dravya akshina* (physical aspect of *akshina* in context of *Agam* or in context of knowledge), and (2) *No-agamatah dravya akshina* (physical aspect of *akshina* not in context of *Agam* or only in context of action).

५५०. से किं तं आगमतो दव्वज्झीणे ?

आगमतो दव्वज्झीणे जस्स णं अज्झीणे त्ति पदं सिक्खितं ठितं जितं मितं परिजितं तं चेव जहा दव्वज्झीणे तहा भाणियव्वं, जाव से तं आगमतो दव्वज्झीणे।

५५०. **(प्र.)** आगमतःद्रव्य-अक्षीण क्या है ?

(उ.) जिसने अक्षीण इस पद को सीख लिया है, स्थिर, जित, मित, परिजित किया है इत्यादि जैसा द्रव्य-अध्ययन के प्रसंग में कहा है, वैसा ही यहाँ भी समझना चाहिए, यावत् वह आगम से द्रव्य-अक्षीण है।

550. (Q.) What is this *Agamatah dravya akshina* (physical-*akshina* with scriptural knowledge) ?

(Ans.) Physical-*akshina* in context of *Agam* is like this—(For instance) a person (an ascetic) has studied, absorbed (and so on). This is *Agamatah dravya akshina* (physical-*akshina* with scriptural knowledge). (as mentioned in case of *Dravya adhyayan*)

५५१. से किं तं नोआगमतो दव्वज्झीणे ?

नोआगमतो दव्वज्झीणे तिविहे पण्णत्ते। तं जहा—जाणयसरीरदव्वज्झीणे भवियसरीरदव्वज्झीणे जाणयसरीर-भवियसरीर-वतिरित्ते दव्वज्झीणे।

५५१. **(प्र.)** नोआगम से द्रव्य-अक्षीण क्या है ?

(उ.) नोआगम से द्रव्य-अक्षीण तीन प्रकार का है। यथा–(१) ज्ञायकशरीरद्रव्य-अक्षीण, (२) भव्यशरीरद्रव्य-अक्षीण, और (३) ज्ञायकशरीर-भव्यशरीर-व्यतिरिक्तद्रव्य-अक्षीण।

551. (Q.) What is this *No-agamatah dravya akshina* (physical-*akshina* without scriptural knowledge) ?

(Ans.) *No-agamatah dravya akshina* (physical-*akshina* without scriptural knowledge) is of three types—(1) *Jnayak sharir dravya akshina*, (2) *Bhavya sharir dravya akshina*, and (3) *Jnayak sharir-bhavya sharir-vyatirikta dravya akshina.*

५५२. से किं तं जाणयसरीरदव्वज्झीणे ?

जाणयसरीरदव्वज्झीणे अज्झीणपयत्थाहिकारजाणयस्स जं सरीरयं ववगय-चुत-चइत-चत्तदेहं जहा दव्वज्झयणे तहा भाणियव्वं, जाव से तं जाणयसरीरदव्वज्झीणे।

५५२. **(प्र.)** ज्ञायकशरीरद्रव्य-अक्षीण किसे कहते हैं ?

(उ.) अक्षीण पद के अर्थाधिकार के ज्ञाता का व्यपगत, च्युत, च्यवित, त्यक्तदेह आदि जैसा द्रव्य-अध्ययन के संदर्भ में वर्णन किया गया है, उसी प्रकार यहाँ भी जानना चाहिए यावत् यही ज्ञायकशरीरद्रव्य-अक्षीण का स्वरूप है।

552. (Q.) What is this *Jnayak sharir dravya akshina* (physical-*akshina* as body of the knower) ?

(Ans.) *Jnayak sharir dravya akshina* (physical-*akshina* as body of the knower) is explained thus : It is such a body of the knower of the purview of the meaning of *Akshina* (inexhaustible) that is dead, has been killed or has voluntarily embraced death (and so on as mentioned in case of *Dravya adhyayan*).

This concludes the description of *Jnayak sharir dravya akshina* (physical-*akshina* as body of the knower).

५५३. से किं तं भवियसरीरदव्वज्झीणे ?

भवियसरीरदव्वज्झीणे जे जीवे जोणीजम्मणनिक्खंते जहा दव्वज्झयणे, जाव से तं भवियसरीरदव्वज्झीणे।

५५३. (प्र.) भव्यशरीरद्रव्य-अक्षीण किसे कहते हैं ?

(उ.) समय पूर्ण होने पर जो जीव योनि से निकलकर उत्पन्न हुआ आदि पूर्वोक्त भव्यशरीरद्रव्य-अध्ययन के जैसा इस भव्यशरीरद्रव्य-अक्षीण का वर्णन जानना चाहिए, यावत् यह भव्यशरीरद्रव्य-अक्षीण की वक्तव्यता है।

553. (Q.) What is this *Bhavya sharir dravya akshina* (physical-*akshina* as body of the potential knower) ?

(Ans.) On maturity a being comes out of the womb or is born (and so on as mentioned in case of *Dravya adhyayan*).

This concludes the description of *Bhavya sharir dravya akshina* (physical-*akshina* as body of the potential knower).

५५४. से किं तं जाणयसरीर-भवियसरीर-वइरित्ते दव्वज्झीणे ?

जाणयसरीर-भवियसरीर-वइरित्ते दव्वज्झीणे सव्वागाससेढी। से तं जाणयसरीर-भवियसरीर-वइरित्ते दव्वज्झीणे। से तं नोआगमओ दव्वज्झीणे। से तं दव्वज्झीणे।

५५४. (प्र.) ज्ञायकशरीर-भव्यशरीर-व्यतिरिक्तद्रव्य-अक्षीण का क्या स्वरूप है ?

(उ.) सर्वाकाश-श्रेणि ज्ञायकशरीर-भव्यशरीर-व्यतिरिक्तद्रव्य-अक्षीण रूप है।

यह नोआगम से द्रव्य--अक्षीण का वर्णन है और इसका वर्णन करने से द्रव्य-अक्षीण का कथन पूर्ण हुआ।

विवेचन-उपर्युक्त सूत्र ५४७ से ५५४ तक अक्षीण के नाम, स्थापना और द्रव्य इन तीन प्रकारों का वर्णन पूर्वोक्त अध्ययन के प्रसंग में आवश्यक का जैसा किया है, वही और वैसा ही वर्णन यहाँ आवश्यक के स्थान पर अक्षीण शब्द को रखकर कर लेना चाहिए, लेकिन इतना विशेष है कि ज्ञायकशरीर-भव्यशरीर-व्यतिरिक्तद्रव्य-अक्षीण 'सर्वाकाश श्रेणी' रूप है जिसका आशय इस प्रकार है-

सर्वाकाश का अर्थ है-लोकरूप एवं अलोकरूप आकाश, इन दोनों की जो प्रदेशपंक्ति है, वह सर्वाकाश श्रेणी है। इसमें से यदि प्रतिसमय में एक-एक प्रदेश का भी अपहरण किया जाये तो भी अनन्त उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी काल तक भी वह रिक्त नहीं हो सकती। इसलिए इसे (सर्वाकाश श्रेणी को) ज्ञशरीर-व्यतिरिक्तद्रव्याक्षीणरूप बताया गया है।

554. (Q.) What is this *Jnayak sharir-bhavya sharir-vyatirikta dravya akshina* (physical-*akshina* other than the body of the knower and the body of the potential knower) ?

(Ans.) *Jnayak sharir-bhavya sharir-vyatirikta dravya akshina* (physical-*akshina* other than the body of the knower and the body of the potential knower) is a line (of space-points) crossing through whole space (inclusive of *Lok* and *Alok*).

This concludes the description of *No-agamatah dravya akshina* (physical-*akshina* without scriptural knowledge). This also concludes the description of *dravya akshina* (physical-*akshina*).

Elaboration—These aphorisms (547-554) describe the three kinds of *akshina* (*Naam, Sthapana* and *Dravya*) to be same as *Adhyayan*. The only required change is to replace *Adhyayan* with *Akshina*. However, the *No-agamatah dravya akshina* (physical-*akshina* without scriptural knowledge) is described as *Sarvakash shreni*. This is defined as a line of space-points covering the whole space including *Lok* or occupied space and *Alok* or unoccupied space. Even if one space-point is removed every *Samaya* the task will not be completed even in infinite time cycles. This means the line can never be obliterated completely. That is why it is called *Akshina* or inexhaustible.

भाव-अक्षीण

५५५. से किं तं भावज्झीणे ?

भावज्झीणे दुविहे पण्णत्ते। तं तहा—आगमतो य नोआगमतो य।

५५५. (प्र.) भाव-अक्षीण क्या है ?

(उ.) भाव-अक्षीण दो प्रकार का है, यथा-(१) आगम से, और (२) नोआगम से।

BHAAVA AKSHINA

555. (Q.) What is this *Bhaava akshina* (*akshina* as essence or perfect-*akshina*) ?

(Ans.) *Bhaava akshina* (perfect-*akshina*) is of two types—(1) *Agamatah bhaava akshina* (perfect-*akshina* in context of *Agam* or in context of knowledge), and (2) *No-agamatah bhaava akshina* (perfect-*akshina* not in context of *Agam* or only in context of action).

५५६. से किं तं आगमतो भावज्झीणे ?

आगमतो भावज्झीणे जाणए उवउत्ते। से तं आगमतो भावज्झीणे।

५५६. (प्र.) आगम से भाव-अक्षीण क्या है ?

(उ.) जो ज्ञायक उपयोग से युक्त हो-जो जानता हो और उपयोग सहित हो वह आगम की अपेक्षा भाव-अक्षीण है।

यह आगमतः भाव-अक्षीण का वर्णन पूर्ण हुआ।

विवेचन-आगमतः भाव-अक्षीण के प्रसंग में चूर्णिकार तथा वृत्तिकार ने कहा है-एक चतुर्दश पूर्व का ज्ञाता मुनि जो आगम ग्रन्थों के विषय में एकाग्रचित्त है, वह अन्तर्मुहूर्त्त मात्र में असीम पर्यायों को जान लेता है। एक-एक समय में एक-एक पर्याय का अपहार किया जाय तो अनन्त उत्सर्पिणी और अनन्त अवसर्पिणी में भी उनका क्षय नहीं हो सकता। इसे आगमतः भाव-अक्षीण कहा जाता है। (चूर्णि, पृ. ८८)

556. (Q.) What is this *Agamatah bhaava akshina* (perfect-*akshina* with scriptural knowledge)?

(Ans.) One who knows the *Akshina* (inexhaustible) and is sincerely involved with it is called *Agamatah bhaava akshina* (perfect-*akshina* with scriptural knowledge).

Elaboration—In this context the commentators (*Vritti* and *Churni*) state—An ascetic who has acquired the knowledge of *Chaturdash Purva* (the fourteen-part subtle canon) with absolute concentration knows about infinite transformations of things (*paryayas*) within one *antarmuhurt* (less than 48 minutes). If this information is erased at the rate of one *paryaya* (transformation) every *Samaya* it cannot be completely erased even in infinite time cycles. This is called *Agamatah bhaava akshina* (perfect *akshina* with scriptural knowledge). (Churni, p. 88)

५५७. से किं तं नोआगमतो भावज्झीणे ?

नोआगमतो भावज्झीणे-

जह दीवा दीवसतं पइप्पए, दिप्पए य सो दीवो।
दीवसमा आयरिया दिप्पंति, परं च दीवेंति॥२॥

से तं नोआगमतो भावज्झीणे। से तं भावज्झीणे। से तं अज्झीणे।

एक प्रज्वलित दीपक से प्रकाशित अन्य दीपक

चित्र परिचय १९

Illustration No. 19
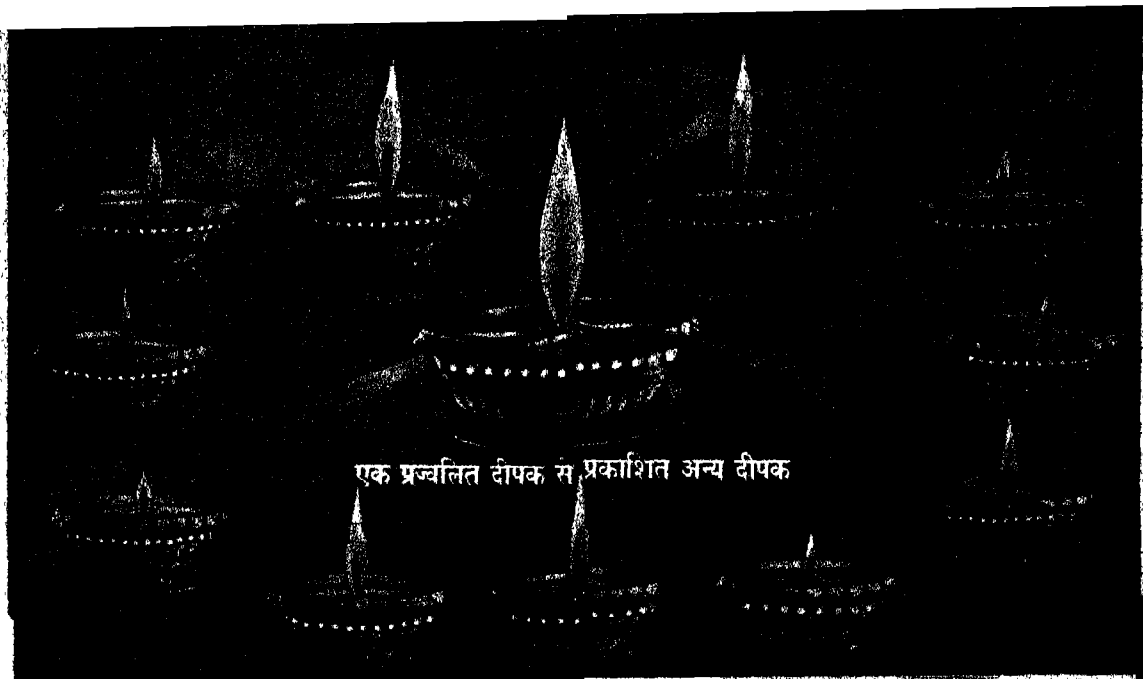
स्वयं प्रकाशित दूसरों को प्रकाशित करता है

जिस प्रकार प्रकाशित एक दीपक अन्य सैकड़ों दीपकों को प्रकाशित कर देता है, उसी प्रकार शास्त्र ज्ञान से स्वयं प्रकाशित आचार्य अपने ज्ञान से अन्य सैकड़ों शिष्यों को ज्ञान दान कर प्रकाशमय बना देते हैं। आचार्य स्वयं भावरूप में अक्षीण (अक्षय) है।

–सूत्र ५५७, पृष्ठ ४२७

NO-AGAMATAH-BHAAVA-AKSHINA

As a lamp continues to emit light even after lighting hundreds of other lamps; in the same way an *acharya*, enlightened by scriptural knowledge, emits light (of knowledge) like a lamp and lights hundreds of other lamps (disciples). Thus in essence *acharya* is *akshina* (inexhaustible).

—Aphorism 557, p. 427

५५७. (प्र.) नोआगम से भाव-अक्षीण क्या है?

(उ.) जैसे दीपक दूसरे सैकड़ों दीपकों को प्रज्वलित करके भी प्रदीप्त रहता है, उसी प्रकार आचार्य स्वयं दीपक के समान देदीप्यमान हैं और दूसरों (शिष्य वर्ग) को देदीप्यमान करते हैं ॥२॥

यह आगमतः भाव-अक्षीण का वर्णन हुआ। यह भाव-अक्षीण तथा अक्षीण का वर्णन पूर्ण हुआ।

विवेचन—नोआगमतः भाव-अक्षीण को समझाने के लिए दीपक का दृष्टान्त दिया है—जैसे एक दीपक से सैकड़ों, हजारों दीपक जलाने पर भी मूल दीपक का प्रकाश क्षीण नहीं होता, उसी प्रकार आचार्य श्रुतज्ञान के आलोक से स्वयं आलोकित होते हैं, वे अपने ज्ञानालोक से सैकड़ों शिष्यों को आलोकित करते हैं तब भी उनका ज्ञान कभी क्षीण नहीं होता।

557. (Q.) What is this *No-agamatah bhaava akshina* (perfect-*akshina* without scriptural knowledge)?

(Ans.) *No-agamatah bhaava akshina* (perfect-*akshina* without scriptural knowledge) is explained as follows—

For instance a lamp continues to emit light even after lighting hundreds of other lamps; in the same way an *acharya* himself emits light (of knowledge) like a lamp and lights other lamps (disciples). (2)

This concludes the description of *No-agamatah bhaava akshina* (perfect-*akshina* without scriptural knowledge). This concludes the description of *bhaava akshina* (perfect-*akshina*). This also concludes the description of *Akshina* (inexhaustible).

Elaboration—The example of a lamp is given to explain *No-agamatah bhaava akshina* (perfect-*akshina* without scriptural knowledge). For instance a lamp continues to emit light even after lighting hundreds and thousands of other lamps; in the same way an *acharya* himself emits light of scriptural knowledge. Even when he enlightens hundreds of his disciples with the light of the lamp of his knowledge, his knowledge is never exhausted.

(ग) आय निरूपण

५५८. से किं तं आए ?

आए चउव्विहे पण्णत्ते। तं जहा—नामाए ठवणाए दव्वाए भावाए।

५५८. (प्र.) आय क्या है ?

(उ.) आय (अप्राप्त की प्राप्ति या लाभ को आय कहते हैं) चार प्रकार की हैं। यथा–(१) नाम-आय, (२) स्थापना-आय, (३) द्रव्य-आय, और (४) भाव-आय।

(C) AAYA (ACQUISITION)

558. (Q.) What is this *Aaya* (acquisition) ?

(Ans.) *Aaya* (acquisition) is of four types—(1) *Naam Aaya*, (2) *Sthapana Aaya*, (3) *Dravya Aaya*, and (4) *Bhaava Aaya*.

नाम-स्थापना-आय

५५९. नाम-ठवणाओ पुव्वभणियाओ।

५५९. नाम और स्थापना-आय का वर्णन पूर्वोक्त नाम और स्थापना आवश्यक के समान जानना चाहिए।

NAAM AND STHAPANA AAYA

559. *Naam* and *Sthapana aaya* (*aaya* as name and notional installation) should be taken to be same as *Naam avashyak* and *Sthapana avashyak* (aphorism 10-11).

द्रव्य-आय

५६०. से किं तं दव्वाए ?

दव्वाए दुविहे पण्णत्ते। तं जहा–आगमतो य नोआगमतो।

५६०. (प्र.) द्रव्य-आय क्या है ?

(उ.) द्रव्य-आय के दो भेद इस प्रकार हैं–(१) आगम से, और (२) नोआगम से।

DRAVYA AAYA

560. (Q.) What is this *Dravya aaya* (physical aspect of *aaya*) ?

(Ans.) *Dravya aaya* (physical aspect of *aaya*) is of two kinds—(1) *Agamatah dravya aaya* (physical aspect of *aaya* in context of *Agam* or in context of knowledge), and (2) *No-agamatah dravya aaya* (physical aspect of *aaya* not in context of *Agam* or only in context of action).

५६१. से किं तं आगमतो दव्वाए ?

जस्स णं आए त्तिपयं सिक्खितं ठितं जाव अणुवओगो दव्वमिति कट्टु, जाव जावइया अणुवउत्ता आगमओ तावइया ते दव्वाया, जाव से तं आगमओ दव्वाए।

५६१. (प्र.) आगम से द्रव्य-आय क्या है?

(उ.) जिसने 'आय' यह पद सीख लिया है, स्थिर कर लिया है किन्तु उपयोगरहित होने से वह द्रव्य है यावत् जितने उपयोगरहित हैं, उतने ही आगम से द्रव्य-आय है, यह आगम से द्रव्य-आय का स्वरूप जानना चाहिए।

561. (Q.) What is this *Agamatah dravya aaya* (physical-*aaya* with scriptural knowledge)?

(Ans.) Physical-*aaya* in context of *Agam* is like this—(For instance) a person (an ascetic) has studied, absorbed (and so on). This is *Agamatah dravya aaya* (physical-*aaya* with scriptural knowledge). (as mentioned in case of *Dravya adhyayan*)

५६२. से किं तं नोआगमओ दव्वाए ?

नोआगमओ दव्वाए तिविहे पण्णत्ते। तं जहा—जाणयसरीरदव्वाए भवियसरीरदव्वाए जाणयसरीर-भवियसरीर-वइरित्ते दव्वाए।

५६२. (प्र.) नोआगमतःद्रव्य-आय क्या है?

(उ.) नोआगमतःद्रव्य-आय के तीन प्रकार हैं। यथा-(१) ज्ञायकशरीरद्रव्य-आय, (२) भव्यशरीरद्रव्य-आय, और (३) ज्ञायकशरीर-भव्यशरीर-व्यतिरिक्तद्रव्य-आय।

562. (Q.) What is this *No-agamatah dravya aaya* (physical-*aaya* without scriptural knowledge)?

(Ans.) *No-agamatah dravya aaya* (physical-*aaya* without scriptural knowledge) is of three types—(1) *Jnayak sharir dravya aaya*, (2) *Bhavya sharir dravya aaya*, and (3) *Jnayak sharir-bhavya sharir-vyatirikta dravya aaya.*

५६३. से किं तं जाणयसरीरदव्वाए ?

जाणयसरीरदव्वाए आयपयत्थाहिकारजाणगस्स जं सरीरगं ववगय-चुत-चतिय-चत्तदेहं सेसं जहा दव्वज्झयणे, जाव से तं जाणयसरीरदव्वाए।

५६३. (प्र.) ज्ञायकशरीरद्रव्य-आय किसे कहते हैं?

(उ.) 'आय' पद के अर्थाधिकार के ज्ञाता का व्यपगत, च्युत, च्यवित, त्यक्त आदि शरीर द्रव्याध्ययन की वक्तव्यता जैसा ही ज्ञायकशरीर नोआगमतःद्रव्य-आय का स्वरूप जानना चाहिए।

563. (Q.) What is this *Jnayak sharir dravya aaya* (physical-*aaya* as body of the knower) ?

(Ans.) *Jnayak sharir dravya aaya* (physical-*aaya* as body of the knower) is explained thus : It is such a body of the knower of the purview of the meaning of *Aaya* (acquisition) that is dead, has been killed or has voluntarily embraced death. (and so on as mentioned in case of *Dravya adhyayan*)

This concludes the description of *Jnayak sharir dravya aaya* (physical-*aaya* as body of the knower).

५६४. से किं तं भवियसरीरदव्वाए ?

भवियसरीरदव्वाए जे जीव जोणीजम्मणणिक्खंते सेसं जहा दव्वज्झयणे, जाव से तं भवियसरीरदव्वाए।

५६४. (प्र.) भव्यशरीरद्रव्य-आय क्या है ?

(उ.) समय पूर्ण होने पर गर्भ से निकलकर जो जन्म को प्राप्त हुआ आदि भव्यशरीरद्रव्य-अध्ययन के वर्णन के समान भव्यशरीरद्रव्य-आय का स्वरूप जानना चाहिए।

564. (Q.) What is this *Bhavya sharir dravya aaya* (physical-*aaya* as body of the potential knower) ?

(Ans.) On maturity a being comes out of the womb or is born (and so on as mentioned in case of *Dravya adhyayan*)

This concludes the description of *Bhavya sharir dravya aaya* (physical-*aaya* as body of the potential knower).

५६५. से किं तं जाणयसरीर-भवियसरीर-वइरित्ते दव्वाये ?

जाणयसरीर-भवियसरीर-वइरित्ते दव्वाये तिविहे पण्णत्ते। तं जहा-लोइए कुप्पावयणिए लोगुत्तरिए।

५६५. (प्र.) ज्ञायकशरीर-भव्यशरीर-व्यतिरिक्तद्रव्य-आय किसे कहते हैं ?

(उ.) ज्ञायकशरीर-भव्यशरीर-व्यतिरिक्तद्रव्य-आय के तीन प्रकार हैं। यथा-(१) लौकिक, (२) कुप्रावचनिक, और (३) लोकोत्तर। (सब वर्णन द्रव्य-आवश्यक के समान समझना चाहिए)

565. (Q.) What is this *Jnayak sharir-bhavya sharir-vyatirikta dravya aaya* (physical-*aaya* other than the body of the knower and the body of the potential knower) ?

(Ans.) *Jnayak sharir-bhavya sharir-vyatirikta dravya aaya* (physical acquisition other than the body of the knower and the body of the potential knower) is of three kinds—(1) *Laukik* (mundane), (2) *Kupravachanik* (pervert or heretik), and (3) *Lokottar* (spiritual). (details as in aphorism 19)

५६६. से किं तं लोइए ?

लोइए तिविहे पण्णत्ते। तं जहा-सचित्ते अचित्ते मीसए य।

५६६. (प्र.) (उभयव्यतिरिक्त) लौकिकद्रव्य-आय क्या है ?

(उ.) लौकिकद्रव्य-आय के तीन प्रकार कहे हैं, जैसे-(१) सचित्त, (२) अचित्त, और (३) मिश्र।

566. (Q.) What is this *Laukik dravya aaya* (mundane physical acquisition) ?

(Ans.) *Laukik dravya aaya* (mundane physical acquisition) is of three types—(1) *Sachitta dravya aaya*, (2) *Achitta dravya aaya*, and (3) *Mishra dravya aaya*.

५६७. से किं तं सचित्ते ?

सचित्ते तिविहे पण्णत्ते। तं जहा-दुपयाणं चउप्पयाणं अपयाणं। दुपयाणं दासाणं, दासीणं, चउप्पयाणं आसाणं हत्थीणं, अपयाणं अंबाणं अंबाडगाणं आये। से तं सचित्ते।

५६७. (प्र.) सचित्त लौकिक-आय क्या है ?

(उ.) सचित्त लौकिक-आय के तीन प्रकार हैं। यथा-(१) द्विपद-आय, (२) चतुष्पद-आय, और (३) अपद-आय। इनमें से दास-दासियों की आय (प्राप्ति) द्विपद-आय है। अश्वों (घोड़ों), हाथियों की प्राप्ति चतुष्पद-आय और आम, आमला के वृक्षों आदि की प्राप्ति अपद-आय है। यह सचित्त आय का स्वरूप है।

567. (Q.) What is this *sachitta dravya aaya* (physical acquisition pertaining to the living) ?

(Ans.) *Sachitta dravya aaya* (physical acquisition pertaining to the living) is of three types—(1) *dvipad* or pertaining to bipeds, (2) *chatushpad* or pertaining to quadrupeds, and (3) *apad* or pertaining to those without feet. Of these, acquisition related to servants and maids is biped acquisition, that related to horses, elephants etc. is quadruped acquisition, and that related to *amla* (hog-plum; *Emblica officinalis*) and other trees or plants is *apad* acquisition.

This concludes the description of *sachitta dravya aaya* (physical acquisition pertaining to the living).

५६८. से किं तं अचित्ते ?

अचित्ते सुवण्ण-रयत-मणि-मोत्तिय-संख-सिलप्पवाल-रत्तरयणाणं (संतसावएज्जस्स) आये। से तं अचित्ते।

५६८. (प्र.) अचित्त-आय क्या है ?

(उ.) सोना, चाँदी, मणि, मोती, शंख, शिला, प्रवाल (मूँगा), रक्तरत्न (माणिक) आदि (सारवान् द्रव्यों) की प्राप्ति अचित्त-आय है।

568. (Q.) What is this *achitta dravya aaya* (physical acquisition pertaining to the non-living) ?

(Ans.) The *aaya* (acquisition) related to gold, silver, beads, pearls, conch-shells, rocks, coral, ruby and other such valuable substances is called *achitta dravya aaya* (physical acquisition pertaining to the non-living).

This concludes the description of *achitta dravya aaya* (physical acquisition pertaining to the non-living).

५६९. से किं तं मीसए ?

मीसए दासाणं दासीणं आसाणं हत्थीणं समाभरियाउज्जालंकियाणं आये। से तं मीसए। से तं लोइए।

५६९. (प्र.) मिश्र (सचित्त-अचित्त उभयरूप) आय किसे कहते हैं ?

(उ.) अलंकारादि से तथा वाद्यों से विभूषित दास-दासियों, घोड़ों, हाथियों आदि की प्राप्ति को मिश्र-आय कहते हैं।

इस प्रकार लौकिक-आय का स्वरूप जानना चाहिए।

569. (Q.) What is this *mishra dravya aaya* (mixed physical acquisition) ?

(Ans.) The *aaya* (acquisition) related to living things like servants, maids, horses, elephants embellished with ornaments and musical instruments (non-living) is called *mishra dravya aaya* (mixed physical acquisition).

This concludes the description of *mishra dravya aaya* (mixed physical acquisition). This also concludes the description of *Laukik dravya aaya* (mundane physical acquisition).

५७०. से किं तं कुप्पावयणिये ?

कुप्पावयणिये तिविहे पण्णत्ते। तं जहा—सचित्ते अचित्ते मीसए य। तिण्णि वि जहा लोइए, जाव से तं कुप्पावयणिये।

५७०. (प्र.) कुप्रावचनिक-आय क्या है ?

(उ.) कुप्रावचनिक-आय भी तीन प्रकार की है, जैसे-(१) सचित्त, (२) अचित्त, और (३) मिश्र। इन तीनों का वर्णन लौकिक-आय के तीनों भेदों के समान जानना चाहिए। यही कुप्रवाचनिक-आय है।

570. (Q.) What is this *Kupravachanik dravya aaya* (pervert physical acquisition) ?

(Ans.) *Kupravachanik dravya aaya* (pervert physical acquisition) is of three types—(1) *Sachitta dravya aaya*, (2) *Achitta dravya aaya*, and (3) *Mishra dravya aaya*. Description of these three should be taken to be same as the three kinds of *Laukik dravya aaya*.

This concludes the description of *Kupravachanik dravya aaya* (pervert physical acquisition).

५७१. से किं तं लोगुत्तरिए ?

लोगुत्तरिए तिविहे पण्णत्ते। तं जहा—सचित्ते अचित्ते मीसए य।

५७१. (प्र.) लोकोत्तरिक-आय क्या है ?

(उ.) लोकोत्तरिक-आय के तीन प्रकार हैं। यथा-(१) सचित्त, (२) अचित्त, और (३) मिश्र।

571. (Q.) What is this *Lokottarik dravya aaya* (spiritual physical acquisition) ?

(Ans.) *Lokottarik dravya aaya* (spiritual physical acquisition) is of three types—(1) *Sachitta dravya aaya*, (2) *Achitta dravya aaya*, and (3) *Mishra dravya aaya.*

५७२. से किं तं सचित्ते ?

सचित्ते सीसाणं सिस्सिणियाणं आये। से तं सचित्ते।

५७२. (प्र.) सचित्त-लोकोत्तरिक-आय क्या है ?

(उ.) शिष्य-शिष्याओं की प्राप्ति सचित्त-लोकोत्तरिक-आय है।

572. (Q.) What is this *sachitta dravya aaya* (physical acquisition pertaining to the living) ?

(Ans.) *Sachitta dravya aaya* (physical acquisition pertaining to the living) is *aaya* (acquisition) of male and female disciples.

This concludes the description of *sachitta dravya aaya* (physical acquisition pertaining to the living).

५७३. से किं तं अचित्ते ?

अचित्ते पडिग्गहाणं वत्थाणं कंबलाणं पायपुंछणाणं आये। से तं अचित्ते।

५७३. (प्र.) अचित्त-लोकोत्तरिक-आय क्या है ?

(उ.) अचित्त पात्र, वस्त्र, पादप्रोंच्छन (रजोहरण) आदि की प्राप्ति अचित्त-लोकोत्तरिक-आय है।

573. (Q.) What is this *achitta dravya aaya* (physical acquisition pertaining to the non-living) ?

(Ans.) The *aaya* (acquisition) related to begging-bowls, dress, ascetic-broom etc. and other such non-living things is called *achitta dravya aaya* (physical acquisition pertaining to the non-living).

This concludes the description of *achitta dravya aaya* (physical acquisition pertaining to the non-living).

५७४. से किं तं मीसए ?

मीसए सीसाणं सिस्सिणियाणं सभंडोवकरणाणं आये। से तं मीसए। से तं लोगुत्तरिए, से तं जाणयसरीर-भवियसरीर-वइरित्ते दव्वाए। से तं नोआगमओ दव्वाए। से तं दव्वाए।

५७४. (प्र.) मिश्र लोकोत्तरिक-आय क्या है ?

(उ.) भांडोपकरणादि सहित शिष्य-शिष्याओं की प्राप्ति 'मिश्र-आय' है। यही लोकोत्तरिक-आय का स्वरूप है। यही ज्ञायकशरीर-भव्यशरीर-व्यतिरिक्तद्रव्य-आय है। यही नोआगमतःद्रव्य-आय है। यही द्रव्य-आय है।

574. (Q.) What is this *mishra dravya aaya* (mixed physical acquisition) ?

(Ans.) The *aaya* (acquisition) related to male and female disciples equipped with bowls and other ascetic equipment is called *mishra dravya aaya* (mixed physical acquisition).

This concludes the description of *mishra dravya aaya* (mixed physical acquisition). This also concludes the description of *Lokottarik dravya aaya* (spiritual physical acquisition). This concludes the description of *Jnayak sharir-bhavya sharir-vyatirikta dravya aaya* (physical acquisition other than the body of the knower and the body of the potential knower). This concludes the description of *No-agamatah dravya aaya* (physical acquisition without scriptural knowledge) as well as *Dravya aaya* (physical acquisition).

भाव-आय

५७५. से किं तं भावाए ?

भावाए दुविहे पण्णत्ते। तं जहा-आगमतो य नोआगमतो य।

५७५. (प्र.) भाव-आय क्या है ?

(उ.) भाव-आय दो प्रकार की हैं, जैसे-(१) आगम से, और (२) नोआगम से।

BHAAVA AAYA

575. (Q.) What is this *bhaava aaya* (acquisition as essence or perfect acquisition) ?

(Ans.) *Bhaava aaya* (acquisition as essence) is of two types—(1) *Agamatah bhaava aaya* (acquisition as essence in context of *Agam* or in context of knowledge), and (2) *No-agamatah bhaava aaya* (acquisition as essence not in context of *Agam* or only in context of action).

५७६. से किं तं आगमतो भावाए ?

आगमतो भावाए जाणए उवउत्ते। से तं आगमतो भावाए।

५७६. (प्र.) आगम से भाव-आय क्या है ?

(उ.) 'आय' पद के ज्ञाता और साथ ही उसके उपयोग से युक्त जीव आगम से भाव-आय हैं।

576. (Q.) What is this *Agamatah bhaava aaya* (acquisition as essence with scriptural knowledge) ?

(Ans.) One who knows *aaya* (acquisition) and is sincerely involved with it is called *Agamatah bhaava aaya* (*aaya* as essence with scriptural knowledge).

५७७. से किं तं नोआगमतो भावाए ?

नोआगमतो भावाए दुविहे पण्णत्ते। तं जहा—पसत्थे य अप्पसत्थे य।

५७७. (प्र.) नोआगम से भाव-आय क्या है ?

(उ.) नोआगम से भाव-आय के दो प्रकार हैं। यथा—(१) प्रशस्त, और (२) अप्रशस्त।

577. (Q.) What is this *No-agamatah bhaava aaya* (acquisition as essence without scriptural knowledge) ?

(Ans.) *No-agamatah bhaava aaya* (acquisition as essence without scriptural knowledge) is of two kinds—(1) *Prashast* (noble), and (2) *Aprashast* (ignoble).

५७८. से किं तं पसत्थे ?

पसत्थे तिविहे पण्णत्ते। तं जहा—णाणाए दंसणाए चरित्ताए। से तं पसत्थे।

५७८. (प्र.) प्रशस्त नोआगमभाव-आय किसे कहते हैं ?

(उ.) प्रशस्त नोआगमभाव-आय तीन प्रकार की हैं। यथा-(१) ज्ञान-आय, (२) दर्शन-आय, और (३) चारित्र-आय।

578. (Q.) What is this *Prashast No-agamatah bhaava aaya* (noble acquisition as essence without scriptural knowledge) ?

(Ans.) *Prashast no-agamatah bhaava aaya* (noble acquisition as essence without scriptural knowledge) is of three kinds—(1) *Jnana aaya* (acquisition of knowledge), (2) *Darshan aaya* (acquisition of perception or faith), and (3) *Charitra aaya* (acquisition of conduct).

This concludes the description of *Prashast no-agamatah bhaava aaya* (noble acquisition as essence without scriptural knowledge).

५७९. से किं तं अपसत्थे ?

अपसत्थे चउव्विहे पण्णत्ते। तं जहा—कोहाए माणाए मायाए लोभाए। से तं अपसत्थे। से तं णोआगमतो भावाए। से तं भावाए। से तं आये।

५७९. (प्र.) अप्रशस्त नोआगमभाव-आय किसे कहते हैं ?

(उ.) अप्रशस्त नोआगमभाव-आय के चार प्रकार हैं। यथा-(१) क्रोध-आय, (२) मान-आय, (३) माया-आय, और (४) लोभ-आय। यही अप्रशस्तभाव-आय है। इस प्रकार से नोआगमभाव-आय और भाव-आय एवं आय की वक्तव्यता का वर्णन सम्पूर्ण हुआ।

579. (Q.) What is this *Aprashast no-agamatah bhaava aaya* (ignoble acquisition as essence without scriptural knowledge) ?

(Ans.) *Aprashast no-agamatah bhaava aaya* (ignoble acquisition as essence without scriptural knowledge) is of of four kinds—(1) *Krodh aaya* (acquisition of attitude of anger), (2) *Maan aaya* (acquisition of attitude of conceit), (3) *Maya aaya* (acquisition of attitude of deceit), and (4) *Lobh aaya* (acquisition of attitude of greed).

This concludes the description of *Aprashast no-agamatah bhaava aaya* (ignoble acquisition as essence without scriptural

knowledge). This concludes the description of *No-agamatah bhaava aaya* (perfect acquisition without scriptural knowledge). This concludes the description of *bhaava aaya* (perfect acquisition). This also concludes the description of *Aaya* (acquisition).

(घ) क्षपणा का निरूपण

५८०. से किं तं झवणा ?

झवणा चउव्विहा पण्णत्ता। तं जहा–नामज्झवणा ठवणज्झवणा दव्वज्झवणा भावज्झवणा।

५८०. (प्र.) क्षपणा क्या है ?

(उ.) क्षपणा (कर्मनिर्जरा, क्षय या अपचय) के भी चार प्रकार हैं। यथा–(१) नाम-क्षपणा, (२) स्थापना-क्षपणा, (३) द्रव्य-क्षपणा, और (४) भाव-क्षपणा।

(D) KSHAPANA

580. (Q.) What is this *Kshapana* (eradication) ?

(Ans.) *Kshapana* (eradication) is of four types—(1) *Naam kshapana*, (2) *Sthapana kshapana*, (3) *Dravya kshapana*, and (4) *Bhaava kshapana.*

नाम-स्थापना-क्षपणा

५८१. नाम-ठवणाओ पुव्वभणियाओ ?

५८१. नाम और स्थापना-क्षपणा का वर्णन पूर्ववत् (नाम-स्थापना-आवश्यक के अनुसार) जानना चाहिए।

NAAM AND STHAPANA KSHAPANA

581. *Naam* and *Sthapana kshapana* (*kshapana* as name and notional installation) should be taken to be same as *Naam avashyak* and *Sthapana avashyak* (aphorism 10-11).

द्रव्य-क्षपणा

५८२. से किं तं दव्वज्झवणा ?

दव्वज्झवणा दुविहा पण्णत्ता। तं जहा–आगमतो य नोआगमतो य।

५८२. (प्र.) द्रव्य-क्षपणा क्या है ?

(उ.) द्रव्य-क्षपणा दो प्रकार की है। यथा-(१) आगम से, और (२) नोआगम से।

DRAVYA KSHAPANA

582. (Q.) What is this *dravya kshapana* (physical aspect of eradication) ?

(Ans.) *Dravya kshapana* (physical aspect of eradication) is of two kinds—(1) *Agamatah dravya kshapana* (physical aspect of *kshapana* in context of *Agam* or in context of knowledge) and (2) *No-agamatah dravya kshapana* (physical aspect of *kshapana* not in context of *Agam* or only in context of action).

५८३. से किं तं आगमतो दव्वज्झवणा ?

आगमतो दव्वज्झवणा जस्स णं झवणेति पदं सिक्खियं ठितं जितं मितं परिजियं, सेसं जहा दव्वज्झयणे तहा भाणियव्वं, जाव से तं आगमतो दव्वज्झवणा।

५८३. (प्र.) आगमद्रव्य-क्षपणा किसे कहते हैं ?

(उ.) जिसने 'क्षपणा' यह पद सीख लिया है, स्थिर, जित, मित और परिजित कर लिया है, इत्यादि वर्णन द्रव्याध्ययन के समान है। यह आगम से द्रव्य-क्षपणा जानना चाहिए।

583. (Q.) What is this *Agamatah dravya kshapana* (physical-*kshapana* with scriptural knowledge) ?

(Ans.) Physical *kshapana* in context of *Agam* is like this—(For instance) a person (an ascetic) has studied, absorbed, retained, assessed, perfected and memorized the term '*Kshapana*'. (and so on as mentioned in context of *Dravya adhyayan*)

५८४. से किं तं नोआगमओ दव्वज्झवणा ?

नोआगमओ दव्वज्झवणा तिविहा पण्णत्ता। तं जहा—जाणयसरीरदव्वज्झवणा भवियसरीरदव्वज्झवणा जाणयसरीर-भवियसरीर-वइरित्ता दव्वज्झवणा।

५८४. (प्र.) नोआगम से द्रव्य-क्षपणा क्या है ?

(उ.) नोआगम से द्रव्य-क्षपणा के तीन प्रकार हैं। यथा- (१) ज्ञायकशरीरद्रव्य-क्षपणा, (२) भव्यशरीरद्रव्य-क्षपणा, और (३) ज्ञायकशरीर-भव्यशरीर-व्यतिरिक्तद्रव्य-क्षपणा।

584. (Q.) What is this *No-agamatah dravya kshapana* (physical-*kshapana* without scriptural knowledge) ?

(Ans.) *No-agamatah dravya kshapana* (physical-*kshapana* without scriptural knowledge) is of three types—(1) *Jnayak sharir dravya kshapana*, (2) *Bhavya sharir dravya kshapana*, and (3) *Jnayak sharir-bhavya sharir-vyatirikta dravya kshapana.*

५८५. से किं तं जाणयसरीरदव्वज्झवणा ?

जाणयसरीरदव्वज्झवणा झवणापयत्थाहिकार–जाणयस्स जं सरीरयं ववगय–चुय–चइय–चत्तदेहं, सेसं जहा दव्वज्झयणे, जाव य से तं जाणयसरीरदव्वज्झवणा।

५८५. (प्र.) ज्ञायकशरीरद्रव्य-क्षपणा क्या है ?

(उ.) क्षपणा पद के अर्थाधिकार के ज्ञाता का व्यपगत, च्युत, च्यवित, त्यक्त शरीर इत्यादि सर्व वर्णन द्रव्याध्ययन के समान जानना चाहिए। यह ज्ञायकशरीरद्रव्य-क्षपणा का स्वरूप है।

585. (Q.) What is this *Jnayak sharir dravya kshapana* (physical-*kshapana* as body of the knower) ?

(Ans.) *Jnayak sharir dravya kshapana* (physical-*kshapana* as body of the knower) is explained thus : It is such a body of the knower of the purview of the meaning of *Kshapana* (eradication) that is dead, has been killed or has voluntarily embraced death (and so on as mentioned in context of *Dravya adhyayan*).

This concludes the description of *Jnayak sharir dravya kshapana* (physical-*kshapana* as body of the knower).

५८६. से किं तं भवियसरीरदव्वज्झवणा ?

भवियसरीरदव्वज्झवणा जे जीवे जोणीजम्मणणिक्खंते आयत्तएणं, जिणदिट्ठेणं भावेणं ज्झवण त्ति पयं सेयकाले सिक्खिस्सति, ण ताव सिक्खइ।

को दिट्ठंतो ?

जहा अयं घयकुंभे भविस्सति, अयं महुकुंभे भविस्सति। से तं भवियसरीरदव्वज्झवणा।

५८६. (प्र.) भवियशरीरद्रव्य-क्षपणा किसे कहते हैं ?

(उ.) समय पूर्ण होने पर जो जीव उत्पन्न हुआ और प्राप्त हुए शरीर से जिनोपदिष्ट भाव के अनुसार भविष्य में 'क्षपणा' पद सीखेगा, किन्तु अभी नहीं सीख रहा है, ऐसा वह शरीर भवियशरीरद्रव्य-क्षपणा है।

(प्र.) इसके लिए दृष्टान्त क्या है ?

(उ.) जैसे किसी घड़े में अभी घी अथवा मधु नहीं भरा गया है, किन्तु भविष्य में भरे जाने की अपेक्षा अभी से यह घी का घड़ा होगा, यह मधुकलश होगा, ऐसा कहना।

586. (Q.) What is this *Bhavya sharir dravya kshapana* (physical-*kshapana* as body of the potential knower) ?

(Ans.) On maturity a being comes out of the womb or is born and with its physical body it has the potential to learn the term *Kshapana* (eradication), as preached by the *Jina,* but it is not learning at present. This being is called *Bhavya sharir dravya kshapana* (physical-*kshapana* as body of the potential knower).

(Question asked by a disciple) Is there some analogy to confirm this ?

(Answer by the guru) Yes, for example it is conventionally said that this will be a pot of honey or this will be a pot of butter even before filling it with the same. (details same as aphorism 18)

This concludes the description of *Bhavya sharir dravya kshapana* (physical-*kshapana* as body of the potential knower).

५८७. से किं तं जाणयसरीर-भवियसरीर-वइरित्ता दव्वज्झवणा। जहा-जाणयसरीर-भवियसरीर-वइरित्ते दव्वाए तहा भाणियव्वा, जाव से तं जाणयसरीर-भवियसरीर-वइरित्ता दव्वज्झवणा। से तं नोआगमओ दव्वज्झवणा। से तं दव्वज्झवणा।

५८७. (प्र.) ज्ञायकशरीर-भव्यशरीर-व्यतिरिक्तद्रव्य-क्षपणा क्या है ?

(उ.) ज्ञायकशरीर-भव्यशरीर-व्यतिरिक्तद्रव्य-क्षपणा का स्वरूप ज्ञायकशरीर-भव्यशरीर-व्यतिरिक्तद्रव्य-आय के समान जानना चाहिए। यह नोआगमद्रव्य-क्षपणा और द्रव्य-क्षपणा का वर्णन हुआ।

587. (Q.) What is this *Jnayak sharir-bhavya sharir-vyatirikta dravya kshapana* (physical eradication other than the body of the knower and the body of the potential knower) ?

(Ans.) *Jnayak sharir-bhavya sharir-vyatirikta dravya kshapana* (physical eradication other than the body of the knower and the body of the potential knower) is same as *Jnayak sharir-bhavya sharir-vyatirikta dravya aaya* (physical acquisition other than the body of the knower and the body of the potential knower).

This concludes the description of *No-agamatah dravya kshapana* (physical-*kshapana* without scriptural knowledge). This also concludes the description of *dravya kshapana* (physical eradication).

भाव-क्षपणा

५८८. से किं तं भावज्झवणा ?

भावज्झवणा दुविहा पण्णत्ता। तं जहा—आगमतो य णोआगमतो य।

५८८. (प्र.) भाव-क्षपणा क्या है ?

(उ.) भाव-क्षपणा दो प्रकार की है, जैसे-(१) आगम से, और (२) नोआगम से।

BHAAVA KSHAPANA

588. (Q.) What is this *Bhaava kshapana* (*kshapana* as essence or perfect-*kshapana*) ?

(Ans.) *Bhaava kshapana* (perfect-*kshapana*) is of two types—(1) *Agamatah bhaava kshapana* (perfect-*kshapana* in context of *Agam* or in context of knowledge), and (2) *No-agamatah bhaava kshapana* (perfect-*kshapana* not in context of *Agam* or only in context of action).

५८९. से किं तं आगमओ भावज्झवणा ?

आगमओ भावज्झवणा झवणापयत्थाहिकारजाणए उवउत्ते। से तं आगमतो भावज्झवणा।

५८९. (प्र.) आगम से भाव-क्षपणा क्या है ?

(उ.) 'क्षपणा' इस पद के अर्थाधिकार का उपयोगयुक्त ज्ञाता आगम से भाव-क्षपणा है।

589. (Q.) What is this *Agamatah bhaava kshapana* (perfect-*kshapana* with scriptural knowledge)?

(Ans.) On who knows the term *Kshapana* (eradication) and is sincerely involved with it is called *Agamatah bhaava kshapana* (perfect-*kshapana* with scriptural knowledge).

५९०. से किं तं णोआगमतो भावज्झवणा ?

णोआगमतो भावज्झवणा दुविहा पण्णत्ता। तं जहा—पसत्था य अप्पसत्था य।

५९०. (प्र.) नोआगम से भाव-क्षपणा क्या है ?

(उ.) नोआगम से भाव-क्षपणा दो प्रकार की है। यथा-(१) प्रशस्तभाव-क्षपणा, और (२) अप्रशस्तभाव-क्षपणा।

590. (Q.) What is this *No-agamatah bhaava kshapana* (eradication as essence without scriptural knowledge)?

(Ans.) *No-agamatah bhaava kshapana* (eradication as essence without scriptural knowledge) is of two kinds—(1) *Prashast* (noble), and (2) *Aprashast* (ignoble).

५९१. से किं तं पसत्था ?

पसत्था चउव्विहा पण्णत्ता। तं जहा—कोहज्झवणा माणज्झवणा मायज्झवणा लोभज्झवणा। से तं पसत्था।

५९१. (प्र.) प्रशस्तभाव-क्षपणा क्या है ?

(उ.) नोआगम से प्रशस्तभाव-क्षपणा चार प्रकार की है। यथा-(१) क्रोध-क्षपणा, (२) मान-क्षपणा , (३) माया-क्षपणा, और (४) लोभ-क्षपणा। यह प्रशस्तभाव-क्षपणा का स्वरूप है।

591. (Q.) What is this *Prashast no-agamatah bhaava kshapana* (noble eradication as essence without scriptural knowledge)?

(Ans.) *Prashast no-agamatah bhaava kshapana* (noble eradication as essence without scriptural knowledge) is of four kinds—(1) *Krodh kshapana* (eradication of attitude of anger),

(2) *Maan kshapana* (eradication of attitude of conceit), (3) *Maya kshapana* (eradication of attitude of deceit), and (4) *Lobh kshapana* (eradication of attitude of greed).

This concludes the description of *Prashast no-agamatah bhaava kshapana* (noble eradication as essence without scriptural knowledge).

५९२. से किं तं अप्पसत्था ?

अप्पसत्था तिविहा पण्णत्ता। तं जहा–नाणज्झवणा दंसणज्झवणा चरित्तज्झवणा। से तं अप्पसत्था। से तं नोआगमओ भावज्झवणा। से तं भावज्झवणा। से तं झवणा। से तं ओहनिप्फण्णे।

५९२. (प्र.) अप्रशस्तभाव-क्षपणा क्या है ?

(उ.) अप्रशस्तभाव-क्षपणा तीन प्रकार की है। यथा-(१) ज्ञान-क्षपणा, (२) दर्शन-क्षपणा, और (३) चारित्र-क्षपणा। यही अप्रशस्तभाव-क्षपणा है।

इस प्रकार से नोआगमभाव-क्षपणा, भाव-क्षपणा, क्षपणा और साथ ही ओघनिष्पन्ननिक्षेप का वर्णन पूर्ण हुआ।

विवेचन–यहाँ क्षपणा के प्रसंग में क्रोध, मान, माया, लोभ के क्षय को प्रशस्त इसलिए माना गया है कि क्रोधादि भाव संसार वृद्धि के कारण हैं, अतएव संसार के कारणभूत इन क्रोधादि का क्षय प्रशस्त/शुभ होने से प्रशस्तभाव-क्षपणा है और इससे विपरीत ज्ञानादि का क्षय अप्रशस्त है क्योंकि आत्म-गुणों की क्षीणता संसार का कारण है।

592. (Q.) What is this *Aprashast no-agamatah bhaava kshapana* (ignoble eradication as essence without scriptural knowledge) ?

(Ans.) *Aprashast no-agamatah bhaava kshapana* (ignoble eradication as essence without scriptural knowledge) is of attitude of three kinds—(1) *Jnana kshapana* (eradication of knowledge), (2) *Darshan kshapana* (eradication of perception or faith), and (3) *Charitra kshapana* (eradication of conduct).

This concludes the description of *Aprashast no-agamatah bhaava kshapana* (ignoble eradication as essence without scriptural knowledge). This concludes the description of *No-agamatah bhaava kshapana* (perfect-*kshapana* without scriptural

knowledge). This concludes the description of *bhaava kshapana* (perfect eradication). This also concludes the description of *Kshapana* (eradication) as well as *Ogha-nishpanna nikshep* (attribution pertaining to general nomenclature).

Elaboration—The reason for accepting anger, conceit, deceit and greed as noble in context of eradication is that these passions are the cause of cycles of rebirth and their eradication is noble. The eradication of knowledge and other virtues is opposite of this and therefore ignoble.

(२) नामनिष्पन्ननिक्षेप का स्वरूप

५९३. से किं तं नामनिप्फण्णे ?

नामनिप्फण्णे सामाइए। से समासओ चउव्विहे पण्णत्ते। तं जहा—णामसामाइए ठवणासामाइए दव्वसामाइए भावसामाइए।

५९३. (प्र.) (निक्षेप का द्वितीय भेद) नामनिष्पन्ननिक्षेप क्या है ?

(उ.) नामनिष्पन्न सामायिक है। वह सामायिक संक्षेप में चार प्रकार का है। यथा—(१) नाम-सामायिक, (२) स्थापना-सामायिक, (३) द्रव्य-सामायिक, और (४) भाव-सामायिक।

(2) NAAM-NISHPANNA NIKSHEP

593. (Q.) What is this *Naam nishpanna nikshep* (attribution pertaining to specific name) ?

(Ans.) *Naam nishpanna nikshep* (attribution pertaining to specific name) is *Samayik* (practice of equanimity). In brief *Samayik* (practice of equanimity) is of four kinds—(1) *Naam samayik*, (2) *Sthapana samayik*, (3) *Dravya samayik*, and (4) *Bhaava samayik*.

नाम-स्थापना-सामायिक

५९४. णाम-ठवणाओ पुव्वभणियाओ।

५९४. नाम-सामायिक और स्थापना-सामायिक का स्वरूप पूर्ववत् (नाम-स्थापना-आवश्यक के समान) है।

NAAM AND STHAPANA SAMAYIK

594. (Q.) What is this *Naam and Sthapana samayik* (*Samayik* as name and notional installation) ?

(Ans.) *Naam* and *Sthapana samayik* (*Samayik* as name and notional installation) should be taken to be same as *Naam avashyak* and *Sthapana avashyak* (aphorism 10-11).

द्रव्य-सामायिक

५९५. दव्वसामाइए वि तहेव, जाव से तं भवियसरीरदव्वसामाइए।

५९५. भव्यशरीरद्रव्य-सामायिक तक द्रव्य-सामायिक का वर्णन भी द्रव्य-आवश्यक के समान है।

DRAVYA SAMAYIK

595. The description of *Dravya samayik* (physical aspect of equanimity) up to *Bhavya sharir dravya samayik*, is also same as *Dravya avashyak*.

५९६. से किं तं जाणयसरीर-भवियसरीर-वइरित्ते दव्वसामाइए ?

जाणयसरीर-भवियसरीर-वइरित्ते दव्वसामाइए पत्तय-पोत्थयलिहियं। से तं जाणयसरीर-भवियसरीर-वइरित्ते दव्वसामाइए। से तं णोआगमतो दव्वसामाइए। से तं दव्वसामाइए।

५९६. (प्र.) ज्ञायकशरीर-भव्यशरीर-व्यतिरिक्तद्रव्य-सामायिक क्या है ?

(उ.) पत्र में अथवा पुस्तक में लिखित 'सामायिक' पद ज्ञशरीर-भव्यशरीर-व्यतिरिक्तद्रव्य-सामायिक है।

यह नोआगमद्रव्य-सामायिक एवं द्रव्य-सामायिक की वक्तव्यता है।

596. (Q.) What is this *Jnayak sharir-bhavya sharir-vyatirikta dravya samayik* (physical-*samayik* other than the body of the knower and the body of the potential knower) ?

(Ans.) *Jnayak sharir-bhavya sharir-vyatirikta dravya samayik* (physical-*samayik* other than the body of the knower and the body of the potential knower) is the term (including the text) *Samayik* (practice of equanimity) written on palm-leaves or a book.

This concludes the description of *No-agamatah dravya samayik* (physical-*samayik* without scriptural knowledge). This also concludes the description of *dravya samayik* (physical-*samayik*).

५९७. से किं तं भावसामाइए ?

भावसामाइए दुविहे पण्णत्ते। तं.–आगमतो य नोआगमतो य।

५९७. (प्र.) भाव-सामायिक क्या है ?

(उ.) भाव-सामायिक के दो प्रकार हैं। यथा–(१) आगमतःभाव-सामायिक, और (२) नोआगमतःभाव-सामायिक।

BHAAVA SAMAYIK

597. (Q.) What is this *Bhaava samayik* (*samayik* as essence or perfect-*samayik*) ?

(Ans.) *Bhaava samayik* (perfect-*samayik*) is of two types—(1) *Agamatah bhaava samayik* (perfect-*samayik* in context of *Agam* or in context of knowledge), and (2) *No-agamatah bhaava samayik* (perfect-*samayik* not in context of *Agam* or only in context of action).

५९८. से किं तं आगमतो भावसामाइए ?

आगमतो भावसामाइए भावसामाइयपयत्थाहिकारजाणए उवउत्ते। से तं आगमतो भावसामाइए।

५९८. (प्र.) आगमतःभाव-सामायिक क्या है ?

(उ.) सामायिक पद के अर्थाधिकार का उपयोगयुक्त ज्ञायक आगम से भाव-सामायिक है।

598. (Q.) What is this *Agamatah bhaava samayik* (perfect-*samayik* with scriptural knowledge) ?

(Ans.) One who knows *Samayik* (practice of equanimity) and is sincerely involved with it is called *Agamatah bhaava samayik* (perfect-*samayik* with scriptural knowledge).

५९९. (अ) से किं तं नोआगमतो भावसामाइए ?

नोआगमतो भावसामाइए–

जस्स सामाणिओ अप्पा संजमे णियमे तवे।
तस्स सामाइयं होइ, इइ केवलिभासियं ॥३॥

जो समो सव्वभूएसु, तसेसु थावरेसु य।
तस्स सामाइयं होइ, इइ केवलिभासियं ॥४॥

५९९. (अ) (प्र.) नोआगमतःभाव-सामायिक का क्या स्वरूप है?

(उ.) जिसकी आत्मा संयम, नियम और तप में समाहित-लीन है (-जागरूक है), उसी को सामायिक होती है, ऐसा केवली भगवान का कथन है ॥३॥

जो सर्व भूतों-त्रस, स्थावर आदि प्राणियों के प्रति समभाव धारण करता है, उसी को सामायिक होती है, ऐसा केवली भगवान ने कहा है ॥४॥

विवेचन-सामान्य रूप में समभाव की आराधना को सामायिक कहा जाता है। वह सामायिक दो प्रकार का है-एक यावज्जीवन और दूसरा अन्तर्मुहूर्त्त का। यावज्जीवन सामायिक मुनियों का और अन्तर्मुहूर्त्त सामायिक गृहस्थ श्रावक का। प्रस्तुत सूत्र में नोआगमतःभाव-सामायिक का जो स्वरूप है-वह सामायिक कर्त्ता की उदात्त निर्मल चित्तवृत्तियों का परिचायक है। यहाँ सामायिक और सामायिक करने वाले को अभेद मानकर सामायिक का वर्णन किया गया है। यह वर्णन यावज्जीवन सामायिकधारी (श्रमण) से सम्बन्ध रखता है।

इन दो गाथाओं में सामायिक का लक्षण एवं उसके अधिकारी का संकेत किया है।

संयम-मूलगुणों, **नियम**-उत्तरगुणों, **तप**-अनशन आदि तपों में निरत एवं त्रस, स्थावररूप सभी जीवों पर समभाव का धारक सामायिक का अधिकारी है। जिसका फलितार्थ यह हुआ-संयम, नियम, तप, समभाव का समुदाय सामायिक है। यही समस्त जिनवाणी का सार है।

599. (a) (Q.) What is this *No-agamatah bhaava samayik* (perfect-*samayik* without scriptural knowledge)?

(Ans.) *No-agamatah bhaava samayik* (perfect-*samayik* without scriptural knowledge) is explained as follows—

Kevali (omniscient) has said that *Samayik* is deemed to have manifested only in him who (whose soul) is engaged (with all awareness and sincerity) in self-restraint, self-regulation and austerities. (3)

Kevali (omniscient) has said that *Samayik* is deemed to have manifested only in him who (whose soul) is equanimous (evenly disposed) towards all beings, mobile and immobile. (4)

Elaboration—Generally speaking, practice of equanimous attitude is called *samayik*. This is of two kinds—life-long and for a duration of *antarmuhurt* (less than 48 minutes). The life-long *samayik* (practice of equanimity) is meant for ascetics and the *antarmuhurt samayik* (practice of equanimity) for householders. The description of *samayik* (practice of equanimity) in this aphorism conveys the liberal and pious attitude of the person involved in the practice of *samayik*. This is a description that assumes *samayik* (practice of equanimity) and its practitioner to be inseparable and it refers to ascetics who practice the life-long *samayik* (practice of equanimity).

The following two verses detail the attributes of *samayik* (practice of equanimity) and person qualified to indulge in the practice.

सामायिक के अधिकारी के नाम

(ब) जह मम ण पियं दुक्खं, जाणिय एमेव सव्वजीवाणं।
न हणइ न हणावेइ य, सममणती तेण सो समणो॥५॥

णत्थि य से कोइ वेसो पिओ, व सव्वेसु चेव जीवेसु।
एएण होइ समणो, एसो अन्नो वि पज्जाओ॥६॥

(ब) जैसे मुझे दुःख प्रिय नहीं है, वैसे ही सभी जीवों को भी दुःख प्रिय नहीं है, ऐसा जानकर जो न स्वयं किसी प्राणी की घात करता है, न दूसरों से करवाता है और न घात करने की अनुमोदना करता है, किन्तु सभी जीवों को अपने समान (सम) मानता है, वही समण (श्रमण) कहलाता है॥५॥

जिसको किसी जीव के प्रति द्वेष नहीं है और न राग है, इस कारण वह सम मन वाला होता है। यह समन (श्रमण) का दूसरा पर्यायवाची नाम है॥६॥

PERSON QUALIFIED FOR SAMAYIK

(b) As suffering is not dear to me, so is it for all beings; knowing this he neither kills any being, nor causes killing or approves of killing. Instead, he considers all beings to be like his own self and therefore he is called a *shraman* (equal). (5)

He who neither has aversion nor attachment for any being, is therefore possessed of equanimous attitude (a *shraman*). This is another interpretation of the term *shraman*. (6)

(स) उरग–गिरि–जलण–सागर–नहतल–तरुगणसमो य जो होइ।
भमर–मिग–धरणि–जलरुह–रवि–पवणसमो य सो समणो॥७॥

(स) जो (श्रमण) सर्प, गिरि, अग्नि, सागर, आकाश-तल, वृक्षसमूह, भ्रमर, मृग, पृथ्वी, कमल, सूर्य और पवन के समान है, वही समण है॥७॥

विवेचन–श्रमण का आचार भी विचारों के समान होता है, इस तथ्य का गाथोक्त उपमाओं द्वारा स्पष्टीकरण किया है।

श्रमण के लिए प्रयुक्त उपमाएँ–समण (श्रमण) के लिए प्रयुक्त उपमाओं के साथ समानता के अर्थ में 'सम' शब्द जोड़कर उनका भाव इस प्रकार जानना चाहिए–

(१) **उरग (सर्प) सम**–सर्प स्वयं घर नहीं बनाता, दूसरों के बनाये हुए बिल में रहता है, इसी प्रकार अपना घर नहीं होने से परकृत गृह में निवास करने के कारण साधु को उरग की उपमा दी है।

(२) **गिरिसम**–परीषहों और उपसर्गों को सहन करने में पर्वत के समान अडोल–अविचल होने से साधु गिरिसम हैं।

(३) **ज्वलन (अग्नि) सम**–तपोजन्य तेज से समन्वित होने के कारण साधु अग्निसम हैं।

(४) **सागरसम**–जैसे सागर अपनी मर्यादा को नहीं तोड़ता, इसी प्रकार साधु भी अपनी आचारमर्यादा का उल्लंघन नहीं करता। अथवा समुद्र जैसे रत्नों का भण्डार होता है, वैसे ही साधु भी ज्ञानादि रत्नों का भण्डार होने से सागरसम हैं।

(५) **नभस्तलसम**–जैसे आकाश सर्वत्र अवलंबन से रहित है, उसी प्रकार साधु भी किसी प्रसंग पर दूसरों का आश्रय–अवलंबन–सहारा नहीं लेते।

(६) **तरुगणसम**–जैसे वृक्ष, उसको सींचने वाले पर राग और काटने वाले पर द्वेष नहीं करते इसी प्रकार साधु भी निन्दा–प्रशंसा, मान–अपमान में समवृत्ति वाले होते हैं।

(७) **भ्रमरसम**–जैसे भ्रमर अनेक पुष्पों से थोड़ा–थोड़ा रस लेकर अपनी उदरपूर्ति करता है, उसी प्रकार साधु भी अनेक घरों से थोड़ा–थोड़ा–सा आहार ग्रहण करके उदर भर लेते हैं।

(८) **मृगसम**–जैसे मृग हिंसक पशुओं, शिकारियों आदि से सदा चौकन्ना रहता है, उसी प्रकार साधु भी संसारभय से सदा उद्विग्न और पापों से सावधान रहने के कारण मृगसम हैं।

(९) **धरणिसम**–पृथ्वी जैसे सब कुछ सहन करती है, इसी प्रकार साधु भी कष्ट, तिरस्कार, ताड़ना आदि को समभाव से सहन करने वाले होते हैं।

(१०) **जलरुहसम**–जैसे कमल पंक–(कीचड़) में पैदा होकर भी उससे निर्लिप्त रहता है, उसी प्रकार साधु भी कामभोगमय संसार में रहते हुए भी उससे अलिप्त रहते हैं।

दूध
20

चित्र परिचय २०

Illustration No. 20
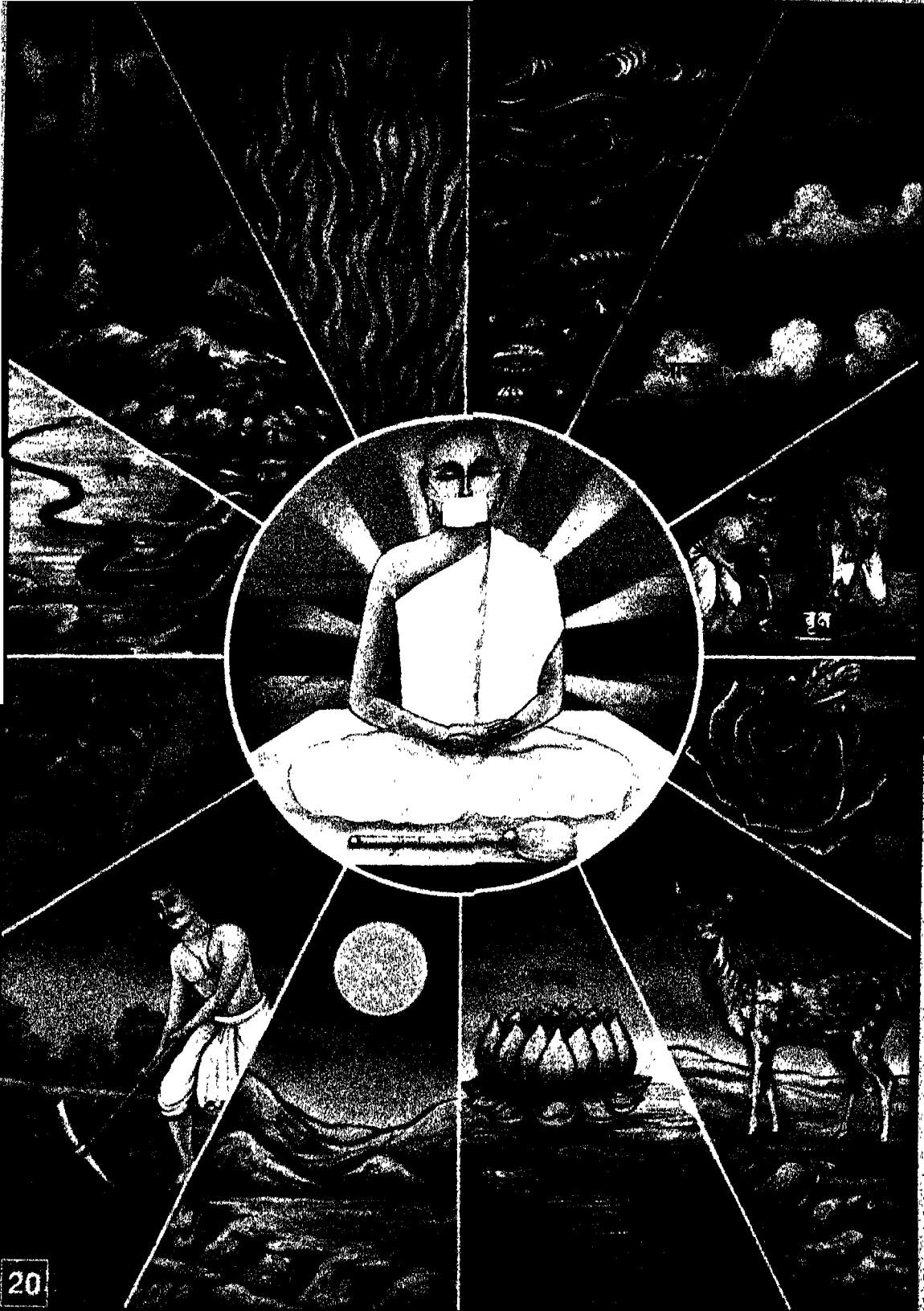
श्रमण को बारह उपमा

समता साधक श्रमण का जीवन इन बारह उपमाओं से शोभित है–

(१) सर्प के समान अनिकेत, (२) पर्वत के समान अकम्प, (३) अग्नि समान तेजोदीप्त, (४) सागरसम मर्यादापालक व गुणरत्न भण्डार, (५) आकाश समान पराश्रयरहित, (६) वृक्षतुल्य समवृत्ति, (७) भ्रमर समान गुणवृत्ति, माधुकरी करने वाला, (८) मृग समान सतत सावधान, (९) पृथ्वीतुल्य क्षमाशील, सहिष्णु, (१०) कमल समान निर्लेप, (११) रवि समान ज्ञानालोक से दीप्त, (१२) पवन समान अप्रतिबद्ध विहारी।

–सूत्र ५९९ (स.), पृष्ठ ४५१

TWELVE METAPHORS FOR A SHRAMAN

A *shraman* practicing equanimity is endowed with twelve qualities explained by these metaphors—

(1) Without a dwelling like a snake, (2) Unshakable like a mountain, (3) Resplendent like fire, (4) Non-violater of limits and a treasure-house of gems like sea, (5) Independent like sky, (6) Equanimous like a cluster of trees, (7) Collects food in bits like a Bumble-bee, (8) Ever alert like a deer, (9) Tolerant and forgiving like earth, (10) Unspoiled like lotus, (11) Radiant (with light of knowledge) like the sun, (12) Free-moving like air.

—Aphorism 599 (c.), p. 451

(११) रविसम-सूर्य अपने प्रकाश से समान रूप में सभी क्षेत्रों को प्रकाशित करता है, इसी प्रकार साधु अपने ज्ञानरूपी प्रकाश को देशना द्वारा सर्वसाधारण को समान रूप से प्रदान करने वाले होने से रविसम हैं।

(१२) पवनसम-जिस प्रकार वायु की सर्वत्र अप्रतिहत गति होती है, उसी प्रकार साधु भी सर्वत्र अप्रतिबद्ध विचरणशील होने से पवनसम हैं।

TWELVE METAPHORS

(c) One who is like a snake, mountain, fire, sea, sky, a cluster of trees, bumble-bee, deer, earth, lotus, the sun and air is called a *shraman* (ascetic). (7)

Elaboration—The conduct of a *shraman* (ascetic) has to conform to his thoughts. This fact has been clarified by listing metaphors in the aforesaid verse.

Suitable metaphors—Adding the word 'like', the listed metaphors are explained as follows—

(1) Like snake—A snake does not make a dwelling hole, it lives in a hole made by others. In the same way an ascetic has no dwelling of his own, he lives in a house made by others. That is why an ascetic is like a snake.

(2) Like mountain—While enduring afflictions an ascetic is unshakable like a mountain. That is why an ascetic is like a mountain.

(3) Like fire—As a consequence of his austerities, an ascetic is resplendent with an aura. That is why an ascetic is like fire.

(4) Like sea—As sea does not transgress its limit, an ascetic does not transgress his code of conduct. Also, as an ocean is a treasure-house of gems, an ascetic is a treasure-house of virtues like knowledge. That is why an ascetic is like a sea.

(5) Like sky—As sky does not need any support, an ascetic does not depend on any outside support in any matter. That is why an ascetic is like sky.

(6) Like a cluster of trees—A tree has no attachment for the person who waters it and no aversion for a person who cuts it. In the same way an ascetic is equanimous in face of praise and criticism or honour and insult. That is why an ascetic is like a cluster of trees.

(7) Like bumble-bee—As a bumble-bee survives on pollen collected in bits from many flowers, so does an ascetic by collecting food in bits from many households. That is why an ascetic is like a bumble-bee.

(8) Like deer—A deer is always alert and apprehensive of hunters and animals of prey. In the same way an ascetic is always alert and apprehensive of sins and cycles of rebirth. That is why an ascetic is like a deer.

(9) Like earth—As earth is tolerant of all types of pain, so is an ascetic of all reprimands and insults by others. That is why an ascetic is like the earth.

(10) Like lotus—Although sprouting in slime a lotus remains untouched by it. In the same way an ascetic although living in this world abounding in vices remains unspoiled. That is why an ascetic is like a lotus.

(11) Like the sun—The sun enlightens every area with its light. In the same way through his discourse an ascetic enlightens, without any reservations, the masses with the light of his knowledge. That is why an ascetic is like the sun.

(12) Like air—Like the unchecked movement of air everywhere, an ascetic also has free movement everywhere; he is always itinerant. That is why an ascetic is like air.

प्रकारान्तर से श्रमण का निर्वचन

(द) तो समणो जइ सुमणो, भावेण य जइ ण होइ पावमणो।
सयणे य जणे य समो, समो य माणाऽवमाणेसु॥

से तं नोआगमतो भावसामाइए। से तं भावसामाइए। से तं सामाइए। से तं नामनिप्फण्णे॥

(द) (पूर्वोक्त उपमाओं से उपमित) श्रमण तभी श्रमण है जब वह सु-मन हो, और भाव से भी पापी मन वाला न हो। जो माता-पिता आदि स्वजनों में एवं परजनों में समभावी हो, एवं मान-अपमान में समभाव का धारक हो।

यह नोआगमतः भाव-सामायिक, भाव-सामायिक, सामायिक तथा नामनिष्पन्ननिक्षेप है।

(d) Only he is a *shraman* who has purity of attitude and is not evil even in his thoughts, who is evenly disposed in his behaviour with relatives (including parents) and unknown people as also equanimous in face of honour and insult.

This concludes the description of *No-agamatah bhaava samayik* (perfect-*samayik* without scriptural knowledge). This also concludes the description of *bhaava samayik* (perfect-*samayik*). This concludes the description of *Samayik* (equanimity) as well as *Naam nishpanna nikshep* (attribution pertaining to specific name).

(३) सूत्रालापकनिष्पन्ननिक्षेप

६००. से किं तं सुत्तालावगनिप्फण्णे ?

सुत्तालावगनिप्फण्णे इदाणिं सुत्तालावगनिप्फण्णे निक्खेवं इच्छावेइ, से य पत्तलक्खणे वि ण णिक्खिप्पइ, कम्हा ? लाघवत्थं। इतो अत्थि ततिये अणुओगद्दारे अणुगमे त्ति, तहिं णं णिक्खित्ते इहं णिक्खित्ते भवति इहं वा णिक्खित्ते तहिं णिक्खित्ते भवति, तम्हा इहं ण णिक्खिप्पइ तहिं चेव णिक्खिप्पिस्सइ। से तं निक्खेवे।

॥ द्वितीय निक्षेपद्वार सम्मत्तं ॥

६००. (प्र.) सूत्रालापकनिष्पन्ननिक्षेप क्या है ?

(उ.) इस समय सूत्रालापकनिष्पन्ननिक्षेप की प्ररूपणा करने की इच्छा है और अवसर भी प्राप्त है किन्तु आगे अनुगम नामक तीसरे अनुयोगद्वार में इसी का वर्णन किये जाने से लाघव (ग्रन्थ संक्षेप) की दृष्टि से अभी निक्षेप नहीं करते हैं, क्योंकि पाठ का विस्तार न हो इस दृष्टि से, वहाँ पर निक्षेप करने से यहाँ निक्षेप हो गया और यहाँ निक्षेप किये जाने से वहाँ पर निक्षेप हुआ समझ लेना चाहिए। इसीलिए यहाँ निक्षेप नहीं करके वहाँ पर ही इसका निक्षेप किया जायेगा।

यह निक्षेपप्ररूपणा का वर्णन है।

॥ द्वितीय निक्षेपद्वार समाप्त ॥

(3) SUTRALAPAK-NISHPANNA NIKSHEP

600. (Q.) What is this *Sutralapak nishpanna nikshep* (attribution pertaining to text recitation) ?

(Ans.) Although there is a desire and opportunity to describe *Sutralapak nishpanna nikshep* (attribution pertaining to text recitation), it is not being detailed here for the sake of brevity as it will be mentioned in due course in the third door of disquisition titled *Anugam*. For the sake of brevity when the *nikshep* has been made at that place it should be taken as having been made here as well and when the *nikshep* has been made at this place it should be taken as having been made there as well. That is why instead of this place the *nikshep* will be made there.

This concludes the description of *nikshep* (attribution).

● END OF NIKSHEP : THE SECOND DOOR OF DISQUISITION ●

३. अनुगमद्वार
3. ANUGAM DVAR (APPROACH OF INTERPRETATION)

अनुगम निरूपण

६०१. से किं तं अणुगमे ?

अणुगमे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा–सुत्ताणुगमे य निज्जुत्तिअणुगमे य।

६०१. (प्र.) अनुगम क्या है ?

(उ.) अनुगम के दो भेद हैं। वे इस प्रकार हैं–(१) सूत्रानुगम, और (२) निर्युक्त्यनुगम।

विवेचन–आचार्य श्री आत्माराम जी म. ने वृत्ति व चूर्णि के आधार पर अनुगम के दो अर्थ किये हैं–

(१) सूत्र के अनुकूल अर्थ या विवेचन करना।

(२) गुरु द्वारा सूत्रानुसारी अर्थ की वाचना प्रदान करना।

सूत्रानुगम–सूत्र के व्याख्यान अर्थात् पदच्छेद आदि करके उसकी व्याख्या करना।

निर्युक्त्यनुगम–निर्युक्ति अर्थात् सूत्र के साथ पूर्ण रूप में सम्बद्ध अर्थों को स्पष्ट करना। नाम, स्थापना आदि प्रकारों द्वारा विभाग करके विस्तार से सूत्र की व्याख्या करने की पद्धति निर्युक्त्यनुगम है।

'निर्युक्ति' में दो शब्द हैं–**निर्युक्ति**–अर्थ तथा **युक्ति**–स्पष्ट रूप से प्रतिपादन। इसमें मध्यवर्ती युक्ति शब्द का लोप होने से 'निर्युक्ति' शब्द बना है। **निश्चितोक्तिनिर्युक्ति** (विभा.)–निश्चित उक्ति निर्युक्ति है। सूत्र का अर्थ करना अनुगम है। अर्थात् सूत्रानुसारी अर्थ करना निर्युक्त्यनुगम है।

DEFINING ANUGAM

601. (Q.) What is this *Anugam* (interpretation) ?

(Ans.) *Anugam* (interpretation) is of two kinds—(1) *Sutranugam,* and (2) *Niryuktanugam.*

Elaboration—Based on the commentaries (*Vritti* and *Churni*) Acharya Atmaram ji M. has given two meanings of *Anugam* (interpretation)—

(1) To interpret and elaborate in accordance with the text/aphorism.

(2) To give a discourse about interpretation and elaboration given by the *guru.*

Sutranugam (interpretation of *sutra*)—to interpret a text/aphorism by defining its constituents (parsing).

Niryuktanugam (contextual elaboration)—to elaborate the meaning of text/aphorism by clarifying words in proper context. The process of providing detailed elaboration employing various approaches like name, attribution etc.

The term *'niryukti'* is made up of two words—*nir-yukti* (meaning) and *yukti* (clear and logical interpretation). While compounding, the middle *'yukti'* disappears (*nir-yukti + yukti = nir-yukti*). To give appropriate meaning is called *niryukti.* To explain or interpret a *sutra* (text/aphorism) is *Anugam.* Thus to explain or interpret a *sutra* (text/aphorism) in accordance with appropriate context is *Niryuktanugam* (contextual elaboration).

निर्युक्त्यनुगम

६०२. से किं तं निज्जुत्तिअणुगमे ?

निज्जुत्तिअणुगमे तिविहे पण्णत्ते। तं जहा—निक्खेवनिज्जुत्तिअणुगमे उवग्घायनिज्जुत्तिअणुगमे, सुत्तप्फासियनिज्जुत्तिअणुगमे।

६०२. (प्र.) निर्युक्त्यनुगम क्या है ?

(उ.) निर्युक्त्यनुगम तीन प्रकार का है। यथा-(१) निक्षेपनिर्युक्त्यनुगम, (२) उपोद्घातनिर्युक्त्यनुगम, और (३) सूत्रस्पर्शिकनिर्युक्त्यनुगम।

NIRYUKTANUGAM

602. (Q.) What is this *Niryuktanugam* ?

Ans. *Niryuktanugam* (contextual elaboration) is of three kinds—(1) *Niskhep Niryuktanugam* (contextual elaboration through attribution), (2) *Upodghat Niryuktanugam* (contextual elaboration through introduction), and (3) *Sutrasparsh Niryuktanugam* (contextual elaboration embracing the *sutra*).

निक्षेपनिर्युक्त्यनुगम

६०३. से किं तं निक्खेवनिज्जुत्तिअणुगमे ?

निक्खेवनिज्जुत्तिअणुगमे अणुगए।

६०३. (प्र.) निक्षेपनिर्युक्त्यनुगम क्या है?

(उ.) निक्षेप की निर्युक्ति का अनुगम पूर्ववत् जानना चाहिए।

विवेचन—नाम, स्थापना, द्रव्य आदि के भेद से प्रस्तुत विषय को स्पष्ट करने के लिए किया जाने वाला अनुगम-व्याख्या निक्षेपनिर्युक्त अनुगम है। (चूर्णि)

NISKHEP NIRYUKTANUGAM

603. (Q.) What is this *Niskhep Niryuktanugam* (contextual elaboration through attribution)?

(Ans.) *Niskhep Niryuktanugam* (contextual elaboration through attribution) is as already mentioned (aphorism 7 and 8, *Illustrated Anuyogadvar Sutra,* Part I).

This concludes the description of *Niskhep Niryuktanugam* (contextual elaboration through attribution).

Elaboration—The interpretation made through the four components of attribution including *Naam* and *Sthapana* (name and notional installation) is called *Niskhep Niryuktanugam* (contextual elaboration through attribution).

उपोद्घातनिक्षेपनिर्युक्त्यनुगम

६०४. से किं तं उवग्घायनिज्जुत्तिअणुगमे ?

उवग्घायनिज्जुत्तिअणुगमे इमाहिं दोहिं दारगाहाहिं अणुगंतव्वे। तं जहा—

उद्देसे १ निद्देसे य २ निग्गमे ३ खेत्त ४ काल ५ पुरिसे य ६।

कारण ७ पच्चय ८ लक्खण ९ नये १० समोयारणा ११ ऽणुमए १२ ॥१॥

किं १३ कइविहं १४ कस्स १५ कहिं १६ केसु १७

कहं १८ किच्चिरं हवइ कालं १९।

कइ २० संतर २१ मविरहियं २२ भवा २३

ऽऽगरिस २४ फासण २५ निरुत्ती २६ ॥२॥

से तं उवग्घायनिज्जुत्तिअणुगमे।

६०४. (प्र.) उपोद्घातनिक्षेपनिर्युक्त्यनुगम क्या है?

(उ.) उपोद्घातनिक्षेपनिर्युक्त्यनुगम का स्वरूप गाथा में बताये क्रम से इस प्रकार जानना चाहिए—(१) उद्देश, (२) निर्देश, (३) निर्गम, (४) क्षेत्र, (५) काल, (६) पुरुष, (७) कारण, (८) प्रत्यय, (९) लक्षण, (१०) नय, (११) समवतार, (१२) अनुमत, (१३) किम्–क्या, (१४) कितने प्रकार की, (१५) किसको, (१६) कहाँ पर, (१७) किसमें, (१८) किस प्रकार–कैसे, (१९) कितने काल तक, (२०) कितनी, (२१) अन्तरकाल (विरहकाल), (२२) अविरह (निरन्तरकाल), (२३) भव, (२४) आकर्ष, (२५) स्पर्शन, और (२६) निर्युक्ति। अर्थात् इन प्रश्नों का उत्तर उपोद्घातनिक्षेपनिर्युक्त्यनुगम रूप है।

विवेचन—जिस सूत्र की जिस प्रसंग में जो व्याख्या करनी हो, उसकी पृष्ठभूमि तैयार करना उपोद्घात है। उपोद्घात के अर्थ का कथन उपोद्घातनिक्षेपनिर्युक्त्यनुगम है। इसके २६ द्वार इस प्रकार हैं–

(१) **उद्देश**—सामान्य रूप से नाम का कथन करना। जैसे–'अध्ययन'।

(२) **निर्देश**—विशेष नाम का कथन करना निर्देश है। जैसे–सामायिक।

(३) **निर्गम**—वस्तु के निकलने के मूल स्रोत की खोज करना निर्गम है। जैसे–सामायिक कहाँ से निकली। अर्थ रूप में तीर्थंकरों से और सूत्र रूप में गणधरों से सामायिक निकली।

(४) **क्षेत्र**—किस क्षेत्र में सामायिक की उत्पत्ति हुई ? सामान्य से समयक्षेत्र में और विशेषापेक्षया पावापुरी के महासेनवन (प्रथम समवरसण) में।

(५) **काल**—किस काल में सामायिक की उत्पत्ति हुई ? वर्तमान काल की अपेक्षा वैशाख शुक्ला एकादशी के दिन प्रथम पौरुषीकाल में उत्पत्ति हुई।

(६) **पुरुष**—किस पुरुष से सामायिक निकली ? सर्वज्ञ पुरुषों ने सामायिक का प्रतिपादन किया है, अथवा व्यवहारनय भरतक्षेत्र की अपेक्षा इस अवसर्पिणी काल में सर्वप्रथम भगवान ऋषभदेव ने और वर्तमान में अर्थ की अपेक्षा श्रमण भगवान महावीर ने अथवा सूत्र की अपेक्षा गौतमादि गणधरों ने प्रतिपादन किया।

(७) **कारण**—किस कारण गौतमादि गणधरों ने भगवान से सामायिक का श्रवण किया ? संयतिभाव की सिद्धि के लिए अथवा समता धर्म को जनता तक पहुँचाने के लिए।

(८) **प्रत्यय**—किस प्रत्यय (मूल कारण) से भगवान ने सामायिक का उपदेश दिया ? जनता को समता धर्म में दीक्षित करने के लिए भगवान ने सामायिक का प्रवचन किया।

(९) **लक्षण**—सामायिक का लक्षण क्या है ? सम्यक्त्व-सामायिक का लक्षण तत्त्वार्थ की श्रद्धा, श्रुत-सामायिक का, जीवादि तत्त्वों का परिज्ञान और चारित्र-सामायिक का सर्वसावद्ययोगविरति है।

(१०) **नय**—नैगमादि नयों के मत से सामायिक कैसे होती है ? जैसे–व्यवहारनय से पाठरूप सामायिक और तीन शब्दनयों से जीवादि वस्तु का ज्ञानरूप सामायिक होती है।

(११) **समवतार**–किस सामायिक का समवतार किस करण में होता है? द्रव्यार्थिकनय की अपेक्षा से गुणप्रतिपन्न जीव सामायिक है अतः उसका समवतार द्रव्यकरण में होता है। पर्यायार्थिकनय की दृष्टि से सम्यक्त्व, श्रुत, देशविरति और सर्वविरति जीव के गुण हैं, अतः उनका समवतरण भावकरण में होता है। भावकरण के दो भेद हैं–श्रुतकरण और नोश्रुतकरण। श्रुत-सामायिक का समवतार मुख्यतः श्रुतकरण में होता है। शेष तीनों सामायिकों–सम्यक्त्व-सामायिक, देशविरति-सामायिक और सर्वविरति-सामायिक का समवतार नोश्रुतकरण में होता है।

(१२) **अनुमत**–कौन नय किस सामायिक को मोक्षमार्ग रूप मानता है? जैसे–नैगम, संग्रह और व्यवहारनय तप-संयमरूप चारित्र-सामायिक को, निर्ग्रन्थप्रवचनरूप श्रुत-सामायिक को और तत्त्वश्रद्धानरूप सम्यक्त्व-सामायिक को, इन तीनों सामायिकों को मोक्षमार्ग मानते हैं। सर्वसंवररूप चारित्र के अनन्तर ही मोक्ष की प्राप्ति होने से ऋजुसूत्र, शब्द, समभिरूढ़ तथा एवंभूत, ये चारों नय संयमरूप चारित्र-सामायिक को ही मोक्षमार्ग रूप मानते हैं।

(१३) **किम्**–सामायिक क्या है? द्रव्यार्थिकनय के मत से सामायिक जीवद्रव्य है और पर्यायार्थिकनय के मत से सामायिक जीव का गुण है।

(१४) **कितने प्रकार की**–सामायिक कितने प्रकार की है? सामायिक तीन प्रकार की है–(१) सम्यक्त्व-सामायिक, (२) श्रुत-सामायिक, और (३) चारित्र-सामायिक।

(१५) **किसको**–किस जीव को सामायिक प्राप्त होती है? जिसकी आत्मा संयम, नियम और तप में सन्निहित होती है तथा जो जीव त्रस और स्थावर–समस्त प्राणियों पर समताभाव रखता है, उस जीव को सामायिक प्राप्त होती है।

(१६) **कहाँ**–सामायिक कहाँ-कहाँ होती है? सम्यक्त्व-सामायिक और श्रुत-सामायिक की प्राप्ति तीनों लोकखण्डों–ऊर्ध्व, अधः और तिर्यग्लोक में होती है। देशविरति सामायिक की प्राप्ति केवल तिर्यग्लोक में होती है। सर्वविरति सामायिक की प्राप्ति तिर्यग्लोक के एक भाग–मनुष्यलोक में होती है।

(१७) **किसमें**–सामायिक किस-किस में होती है? नैगमनय के अनुसार सामायिक केवल मनोज्ञ द्रव्यों में ही सम्भव है। क्योंकि वे मनोज्ञ परिणाम के कारण बनते हैं। शेष नयों के अनुसार सब द्रव्यों में सामायिक सम्भव है।

(१८) **कैसे**–जीव सामायिक कैसे प्राप्त करता है? मनुष्यत्व, आर्यक्षेत्र, जाति, कुल, रूप, आरोग्य, आयुष्य, बुद्धि, धर्मश्रवण, धर्मावधारण, श्रद्धा और संयम, इन लोकदुर्लभ बारह स्थानों की प्राप्ति होने पर जीव सामायिक को प्राप्त करता है। अथवा श्रुत-सामायिक की प्राप्ति मतिज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण तथा दर्शनमोह के क्षयोपशम से होती है। सम्यक्त्व-सामायिक की प्राप्ति दर्शन सप्तक के क्षयोपशम, उपशम और क्षय से होती है। देशविरति-सामायिक की प्राप्ति अप्रत्याख्यानावरण के क्षय, क्षयोपशम व उपशम से होती है। सर्वविरति-सामायिक की प्राप्ति प्रत्याख्यानावरण के क्षय, क्षयोपशम व उपशम से होती है।

(१९) कितने काल तक–सामायिक रह सकती है? अर्थात् सामायिक का कालमान कितना है? सम्यक्त्व और श्रुत-सामायिक की उत्कृष्ट स्थिति कुछ अधिक छियासठ सागरोपम और चारित्र-सामायिक की देशोन पूर्वकोटि वर्ष की तथा जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की है।

(२०) कति–सामायिक के प्रतिपत्ता–प्राप्त करने वाले कितने होते हैं?

सम्यक्त्व–सामायिक व देशविरति–सामायिक के प्रतिपत्ता एक काल में, उत्कृष्टतः क्षेत्र पल्योपम के असंख्येय भाग में जितने आकाश-प्रदेश होते हैं, उतने होते हैं। देशविरत–सामायिक के प्रतिपत्ता से सम्यक्त्व–सामायिक के प्रतिपत्ता असंख्येय गुण अधिक होते हैं, जघन्यतः एक अथवा दो प्रतिपत्ता उपलब्ध होते हैं।

श्रुत–सामायिक के प्रतिपत्ता श्रेणी के असंख्यातवें भाग में जितने आकाश–प्रदेश होते हैं उत्कृष्टतः उतने होते हैं। जघन्यतः एक अथवा दो होते हैं। सर्वविरति के प्रतिपत्ता उत्कृष्टतः सहस्रपृथक् (दो से नौ हजार) तथा जघन्यतः एक अथवा दो होते हैं। विशेष विवरण के लिए द्रष्टव्य विशेषावश्यकभाष्य गाथा, २७६४ से २७७४।

(२१) अन्तर–सामायिक का अन्तर (विरह) काल (पुनः प्राप्ति में व्यवधान) कितना होता है? सामान्य श्रुत–सामायिक में जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त का और उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकाल का है। एक जीव की अपेक्षा सम्यक् श्रुत, देशविरति, सर्वविरतिरूप सामायिक का अन्तरकाल जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट देशोन अर्धपुद्‌गलपरावर्तकालरूप है।

(२२) निरन्तरकाल–बिना अन्तर के लगातार कितने काल तक सामायिक सम्यक्त्व–सामायिक ग्रहण करने वाले होते हैं? सम्यक्त्व और श्रुत–सामायिक के प्रतिपत्ता अगारी (गृहस्थ) निरन्तर उत्कृष्टतः आवलिका के असंख्यातवें भाग काल तक होते हैं और चारित्र–सामायिक वाले आठ समय तक होते हैं। जघन्यतः समस्त सामायिकों के प्रतिपत्ता दो समय तक निरन्तर बने रहते हैं।

(२३) भव–कितने भव तक सामायिक रह सकती है? पल्य के असंख्यातवें भाग तक सम्यक्त्व और देशविरति–सामायिक, आठ भव पर्यन्त चारित्र–सामायिक और अनन्तकाल तक श्रुत–सामायिक होती है।

(२४) आकर्ष–सामायिक के आकर्ष (उपलब्धि) एक भव में या अनेक भवों में सामायिक कितनी बार ग्रहण किया जा सकता है? तीनों सामायिकों (सम्यक्त्व, श्रुत और देशविरत–सामायिक) एक भव में उत्कृष्ट से सहस्रपृथक्त्व २ से ९ हजार बार तक और सर्वविरति के शतपृथक्त्व २०० से ९०० बार तक होते हैं। जघन्य से समस्त सामायिकों का आकर्ष एक भव में एक ही होता है तथा अनेक भवों की अपेक्षा सम्यक्त्व व देशविरति–सामायिकों के उत्कृष्ट असंख्य सहस्रपृथक्त्व और सर्वविरति के सहस्रपृथक्त्व आकर्ष होते हैं।

(२५) स्पर्श–सामायिक करने वाले कितने क्षेत्र का स्पर्श करते हैं? सम्यक्त्व तथा सर्वविरति सामायिक वाले जीव उत्कृष्टतः समस्त लोकाकाश का स्पर्श करते हैं तथा जघन्यतः लोक के असंख्यातवें भाग का। शेष सामायिक वाले जीव तीन से चौदह रज्जु प्रमाण क्षेत्र का स्पर्श करते हैं।

(२६) निरुक्ति—सामायिक की निरुक्ति क्या है ? सम्यग्दृष्टि, अमोह, शोधि, सद्भाव, दर्शन, बोधि, अविपर्यय, सुदृष्टि इत्यादि सामायिक के नाम हैं। अर्थात् सामायिक का पूर्ण वर्णन ही सामायिक की निरुक्ति है। (विशेष वर्णन मलधारीया वृत्ति तथा आचार्य आत्माराम जी कृत विवेचन (पृ. २१०-२१७ देखें) ॥१-२॥

UPODGHAT NIRYUKTANUGAM

604. (Q.) What is this *Upodghat Niryuktanugam* (contextual elaboration through introduction) ?

(Ans.) *Upodghat Niryuktanugam* (contextual elaboration through introduction) is to be known (as answers to the points mentioned) in the following order—(1) *uddesh*, (2) *nirdesh*, (3) *nirgam*, (4) *kshetra*, (5) *kaal*, (6) *purush*, (7) *kaaran*, (8) *pratyaya*, (9) *lakshan*, (10) *naya*, (11) *samavatar*, (12) *anumat*, (13) *kim*, (14) *katividham*, (15) *kasya*, (16) *kutra*, (17) *keshu*, (18) *katham*, (19) *kiyachchiram bhavati kaalam*, (20) *kati*, (21) *saantaram*, (22) *avirahitam*, (23) *bhavah*, (24) *akarsh*, (25) *sparshana*, and (26) *niruktih*.

This concludes the description of *Upodghat Niryuktanugam* (contextual elaboration through introduction).

Elaboration—To prepare the background for assigning the right meaning in specified context to a *sutra* (text/aphorism) is called *upodghat* (introduction). To detail the process associated with this term is called *Upodghat Niryuktanugam* (contextual elaboration through introduction). It has 26 *dvars* (approaches) explained in context of *Samayik* (practice of equanimity) as follows—

(1) Uddesh—to assign a general name or title, e.g.—*adhyayan* (chapter).

(2) Nirdesh—to assign a particular name or title, e.g.—*Samayik* (the first chapter of *Avashyak Sutra*).

(3) Nirgam—to find out the original source. For example the original source of *Samayik* (practice of equanimity) as concept is *Tirthankars* (*Bhagavan* Mahavir) and that of *Samayik* as text is *Ganadharas* (Sudharma Swami).

(4) Kshetra—to find out the place of origin. For example, in general terms *Samayik* (practice of equanimity) has its origin in a specific time

sector and in specific terms its origin is at Mahasenavan in Pavapuri (during the first *Samavasaran* of *Bhagavan* Mahavir).

(5) Kaal—to find out the time of origin. In the present cycle of time in the period of influence of the twenty fourth *Tirthankar, Samayik* (practice of equanimity) came into existence during the first quarter of the eleventh day of the bright half of the month of *Vaishakh.*

(6) Purush—to find out the human source. The omniscients propagated *Samayik* (practice of equanimity). From *Vyavahar naya* (particularized viewpoint) it was *Bhagavan* Risabhadeva who gave *Samayik* (practice of equanimity) for the first time during this regressive cycle of time. The present form of *Samayik* (practice of equanimity) was given by *Bhagavan* Mahavir as concept and by Gautam and other *Ganadhars* as text.

(7) Kaaran—to find out the reason of learning. Gautam and other *Ganadhars* learned *Samayik* (practice of equanimity) from *Bhagavan* Mahavir in order to practice and perfect the attitude of equanimity themselves and also to spread the religion of equanimity for the benefit of masses.

(8) Pratyaya—to find out the inspiring cause of preaching. Inspired by the need to initiate masses into the religion of equanimity, *Bhagavan* Mahavir gave the sermon of *Samayik* (practice of equanimity).

(9) Lakshan—defining the characteristic of the theme. The characteristic of *Samyaktva samayik* (*samayik* as righteousness) is faith in fundamental reality, that of *Shrut samayik* (*samayik* as scriptural knowledge) is the knowledge of soul and other fundamentals and that of *Charitra samayik* (*samayik* as conduct) is abandoning all sinful attitudes and activities.

(10) Naya—applying *nayas* (viewpoints). According to *Vyavahar naya* (particularized viewpoint) *samayik* refers to reading and reciting the text. According to three *Shabd nayas* (verbal viewpoints) it is the knowledge of fundamentals like soul.

(11) Samavatar—to find out about compatible assimilation. According to *Dravyarthik naya* (existent material aspect) a virtuous being is *samayik,* therefore it has compatible assimilation with *dravya-karan* (physical means). From *paryayarthik naya* (transformational aspects) righteousness, knowledge of the canon, partial detachment and

complete detachment are attributes of soul, therefore they have compatible assimilation with *bhaava-karan* (mental means). *Bhaava-karan* in turn has two kinds—*shrut-karan* (scriptural means) and *noshrut-karan* (non-scriptural means). *Shrut samayik* (sermon of the omniscient) is mainly included in *shrut-karan*. The remaining three *samayiks* (righteousness, partial detachment and complete detachment) are included in *noshrut-karan*.

(12) Anumat—finding which *naya* accepts which *samayik* as the path to liberation. *Naigam, Samgraha* and *Vyavahar nayas* (co-ordinated, generalized and particularized viewpoints) accept *charitra samayik* (ascetic-discipline), *shrut samayik* (sermon of the omniscient) and *samyaktva samayik* (faith in the fundamentals) as the path to liberation. As liberation is attained only after following ascetic conduct, the remaining four *nayas* accept only *charitra samayik* (ascetic-discipline) as the path to liberation.

(13) Kim—spelling out the desired object. (What is *samayik* ?) According to *dravyarthik naya* (existent material aspect) *samayik* is soul entity and according to *paryayarthik naya* (transformational aspect) it is the attribute of soul.

(14) Katividham—defining the kinds. *Samayik* is of three kinds—(1) *Samyaktva samayik* (faith in the fundamentals), (2) *Shrut samayik* (sermon of the omniscient), and (3) *Charitra samayik* (ascetic-discipline).

(15) Kasya—defining the possessor. A being who is engaged in self-restraint, self-regulation and austerities and has equanimous attitude towards all beings is said to be endowed with *samayik* (practice of equanimity).

(16) Kutra—defining the place. *Samyaktva samayik* (faith in the fundamentals) and *Shrut samayik* (sermon of the omniscient) can be attained in upper, lower and middle regions (*urdhva, adho* and *tiryak Loks*). *Deshavirati samayik* (partial detachment *samayik*) can be attained only in the middle region. *Sarvavirati samayik* (complete detachment *samayik*) can only be attained in a particular area of the middle region called *manushya Lok* (the region where humans live).

(17) Keshu—defining the scope. According to *Naigam naya* (co-ordinated viewpoint) the scope of *samayik* (practice of equanimity) is limited to the objects of desire because fondness for a thing in one's

attitude is created by desire. According to all other *nayas* the scope of *samayik* (practice of equanimity) extends to all substances.

(18) Katham—defining the conditions. A being attains *samayik* (practice of equanimity) when he satisfies the twelve rare conditions—human birth, birth in the area known as Aryakshetra, higher caste and family, physical perfection, good health, wisdom, listening to sermons, accepting religion, faith in religion and self-restraint. In *karmic* terms—*Shrut samayik* (sermon of the omniscient) is attained on extinction-cum-pacification of *Mati jnanavaran* (*karma* that veils sensory knowledge), *Shrut jnanavaran* (*karma* that veils scriptural knowledge) and *Darshan mohaniya* (*karma* that deludes perception or faith) *karmas*. *Samyaktva samayik* (faith in the fundamentals) is attained on extinction-cum-pacification, extinction and pacification of the septet of *Darshanavaran karmas* (*karmas* that veil true perception and faith). *Deshavirati samayik* (partial detachment *samayik*) is attained on extinction-cum-pacification, extinction and pacification of *Apratyakhyanavaran karma* (*karma* that hinders non-renunciation). *Sarvavirati samayik* (complete detachment *samayik*) is attained on extinction-cum-pacification, extinction and pacification of *Pratyakhyanavaran karma* (*karma* that hinders renunciation).

(19) Kiyachchiram Bhavati Kaalam—specifying minimum and maximum duration. The maximum duration of *Samyaktva* and *Shrut samayik* (faith in the fundamentals and sermon of the omniscient) is a little more than sixty six *sagaropam*. That of *Charitra samayik* (ascetic-discipline) is less than *Purvakoti* years. The minimum duration is one *antarmuhurt* (less than forty eight minutes) for all.

(20) Kati—specifying the number of possessors. At any given moment the maximum number of possessors of *Samyaktva samayik* (faith in the fundamentals) and *Deshavirati samayik* (partial detachment *samayik*) is equal to the number of space-points in innumerable fraction of one *kshetra-palyopam* (see discussion on metaphoric numbers). The number of possessors of *Samyaktva samayik* (faith in the fundamentals) is innumerable times more than that of possessors of *Deshavirati samayik* (partial detachment *samayik*). As regards the minimum number, it is one or two.

The maximum number of possessors of *Shrut samayik* (sermon of the omniscient) is equal to the number of space-points in innumerable part

of one *Shreni* (see discussion on metaphoric numbers). The maximum number of possessors of *Sarvavirati samayik* (complete detachment *samayik*) is *sahasra prithakatva* (two to nine thousand). As regards the minimum number, it is one or two. (for more details see *Visheshavashyak Bhashy,* a verses 2764 to 2774)

(21) Saantaram—specifying intervening period. In general the minimum and maximum intervening period between loosing and regaining *samayik* (practice of equanimity) are *antarmuhurt* and infinite time respectively. In context of a single being it is *antarmuhurt* and less than *Ardhapudgalparavartan kaal* respectively.

(22) Avirahitam—specifying uninterrupted possession. The possessors of *Samyaktva samayik* (faith in the fundamentals) and *Shrut samayik* (sermon of the omniscient) among householders have uninterrupted existence for a maximum period of innumerable fraction of an *Avalika*. For those possessing *Charitra samayik* (ascetic-discipline) this period is eight *Samaya*. The minimum period for all kinds of *samayiks* is two *Samayas*.

(23) Bhavah—specifying the number of births. The duration of *Samyaktva samayik* (faith in the fundamentals) and *Deshavirati samayik* (partial detachment *samayik*) is innumerable fraction of *Palya* (see discussion on metaphoric numbers), that of *Charitra samayik* (ascetic-discipline) is eight births and that of *Shrut samayik* (sermon of the omniscient) is infinite time.

(24) Akarsh—specifying the instances of accepting. All the three *samayiks* counted together can be accepted for a maximum of *sahasra prithakatva* (2000 to 9000) times during one birth. This number for *Sarvavirati samayik* (complete detachment *samayik*) is *shat prithakatva* (200-900). The minimum number for all the *samayiks* is one in one birth. With reference to many births this number is innumerable *sahasra prithakatva* for *Samyaktva* and *Deshavirati samayik* and *sahasra prithakatva* for *Sarvavirati samayik* (complete detachment *samayik*).

(25) Sparshana—specifying the area in contact. Beings who have attained *Samyaktva* and *Sarvavirati samayik* come in contact with a maximum of the whole *Lokakash* (occupied space) and a minimum of innumerable fraction of that. The beings who have attained other levels of *Samayik* come in contact with three to fourteen *Rajju* area (see discussion on metaphoric numbers).

(26) Niruktih—giving the etymology. The etymology of the term *Samayik* is based on the following words—*samyagdrishti* (right perception), *amoha* (free of fondness), *shodhi* (purity), *sadbhava* (goodwill), *darshan* (philosophy), *bodhi* (enlightenment), *aviparyaya* (absence of ambiguity), *sudrishti* (good attitude) etc. This means that the complete description of *samayik* is its etymology. (for more details see *Maladhariya Vritti* and Commentary by Acharya Atmaram ji M., p. 290-297) (1-2)

सूत्रस्पर्शिकनिर्युक्त्यनुगम

६०५. से किं तं सुत्तप्फासियनिज्जुत्तिअणुगमे ?

सुत्तप्फासियनिज्जुत्तिअणुगमे सुत्तं उच्चारेयव्वं अक्खलियं अमिलियं अवच्चामेलियं पडिपुण्णं पडिपुण्णघोसं कंठोट्ठविप्पमुक्कं गुरुवायणोवगयं। तो तत्थ णज्जिहिति ससमयपयं वा परसमयपयं वा बंधपयं वा मोक्खपयं वा सामाइयपयं वा णोसामाइयपयं वा। तो तम्मि उच्चारिता समाणे केसिंचि भगवंताणं केइ अत्थाहिगारा अहिगया भवंति, केसिंचि य केइ अणहिगया भवंति, ततो तेसिं अणहिगयाणं अत्थाणं अभिगमणत्थाए पदेणं पदं वण्णइस्सामि—

संहिता या पदं चेव, पदत्थो पदविग्गहो।
चालणा य पसिद्धि य, छव्विहं विद्धि लक्खणं॥३॥

से तं सुत्तप्फासियनिज्जुत्तिअणुगमे। से तं निज्जुत्तिअणुगमे। से तं अणुगमे।

॥ अनुगमद्वार सम्मत्तं ॥

६०५. (प्र.) सूत्रस्पर्शिकनिर्युक्त्यनुगम क्या है ?

(उ.) (जिस सूत्र की व्याख्या की जा रही है उस सूत्र के प्रत्येक अंग को स्पर्श करने वाली निर्युक्ति का प्रतिपादन करना सूत्रस्पर्शिकनिर्युक्त्यनुगम है।) इस अनुगम में अस्खलित, अमिलित, अव्यत्याम्रेडित, प्रतिपूर्ण, प्रतिपूर्णघोष, कंठोष्ठविप्रमुक्त तथा गुरुवाचनोपगत रूप से सूत्र का उच्चारण करना चाहिए। (इन शब्दों की व्याख्या सूत्र १४ के अनुसार समझें) इस प्रकार से सूत्र का उच्चारण करने से ज्ञात होगा कि यह स्वसमयपद है, यह परसमयपद है, यह बंधपद है, यह मोक्षपद है अथवा यह सामायिकपद है, यह नोसामायिकपद है। सूत्र का निर्दोष विधि से उच्चारण किये जाने पर कितने ही साधु भगवन्तों को अर्थाधिकार ज्ञात हो जाते हैं, कितनेक को अर्थाधिकार (तत्त्व का रहस्य)

अनधिगत रहते हैं–ज्ञात नहीं होते हैं। इसलिए उन अनधिगत अर्थों का अधिगम ज्ञान कराने के लिए एक-एक पद की प्ररूपणा (व्याख्या) करूँगा। जिसकी व्याख्या करने की विधि के यह छह प्रकार हैं–

(१) संहिता, (२) पदच्छेद, (३) पदों का अर्थ, (४) पदविग्रह, (५) चालना, और (६) प्रसिद्धि ॥३॥

यही सूत्रस्पर्शिकनिर्युक्त्यनुगम है। इस प्रकार से निर्युक्त्यनुगम और अनुगम की वक्तव्यता का वर्णन पूर्ण हुआ।

विवेचन–वृत्तिकार ने सूत्र का लक्षण इस प्रकार बताया है–

''अप्पग्गंथमहत्थं बत्तीसा दोसविरहियं जं च।
लक्खणजुत्तं सुत्तं अट्ठहि य गुणेहि उववेयं॥''

अर्थात् जो अल्पग्रन्थ (अल्प अक्षर वाला) और महार्थयुक्त (अर्थ की अपेक्षा महान्–अधिक विस्तार वाला) हो तथा बत्तीस प्रकार के दोषों से रहित, आठ गुणों से सहित और लक्षणयुक्त हो, उसे सूत्र कहते हैं।

सूत्र के आठ गुण ये हैं–

''निद्दोसं सारवंतं च हेउजुत्तमलंकियं।
उवणीयं सोवयारं च मियं महुरमेव च॥''

(१) **निर्दोष**–दोषों से रहित।

(२) **सारवान्**–सारयुक्त।

(३) **हेतुयुक्त**–अन्वय और व्यतिरेक हेतुओं से युक्त।

(४) **अलंकारयुक्त**–उपमा, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों से विभूषित।

(५) **उपनीत**–उपनय से युक्त अर्थात् दृष्टान्त को दार्ष्टन्तिक में घटित करने वाला।

(६) **सोपचार**–भाषा के सौष्ठव व सौन्दर्य से युक्त।

(७) **मित**–थोड़े अक्षरों में अधिक भावयुक्त।

(८) **मधुर**–सुनने में मनोहर और मधुर वर्णों से युक्त।

अनधिगतार्थ की बोध विधि–सूत्र के उच्चारण करने पर भी अनधिगत–अप्राप्त अर्थ के अर्थाधिकारों का परिज्ञान कराने की व्याख्या विधि इस प्रकार है–

(१) **संहिता**–अस्खलित रूप से पदों का उच्चारण करना।

(२) **पद**–एक-एक पद का निरूपण करना।

(३) **पदार्थ**–प्रत्येक पद का अर्थ करना। जैसे–**करेमि** = करता हूँ, इस क्रियापद से सामायिक करने की उन्मुखता का बोध होता है, '**भंते** ! भगवन् ! यह पद गुरुजनों को आमंत्रित करने के अर्थ का बोधक है।

(४) **पदविग्रह**–संयुक्त पदों का विभाग रूप विस्तार करना और अनेक पदों का एक पद समास करना है।

(५) **चालना**–प्रश्नोत्तरों द्वारा सूत्र और अर्थ को स्पष्ट करना।

(६) **प्रसिद्धि**–सूत्र और उसके अर्थ की विविध युक्तियों द्वारा स्थापना करना प्रसिद्धि है।

व्याख्या के इन षड्विध लक्षणों में से सूत्रोच्चारण और पदच्छेद करना सूत्रानुगम का कार्य है। सूत्रानुगम द्वारा यह कार्य किये जाने के बाद सूत्रालापकनिक्षेप–सूत्रालापकों को नाम, स्थापना आदि निक्षेपों में निक्षिप्त करता है, अर्थात् सूत्रालापकों को नाम–स्थापना निक्षेपों में सूत्रालापकनिक्षेप विभक्त करता है। पदविग्रह, चालना और प्रसिद्धि यह सब सूत्रस्पर्शिकनिर्युक्ति के विषय हैं। इस प्रकार जब सूत्र व्याख्या का विषयभूत बनता है, तब सूत्र, सूत्रानुगम, सूत्रालापकनिक्षेप और सूत्रस्पर्शिकनिर्युक्त्यनुगम ये सब एक जगह मिल जाते हैं।

स्वसमयपद–स्वसिद्धान्तसम्मत जीवादिक पदार्थ प्रतिपादक–बोधक पद।

परसमयपद–परसिद्धान्तसम्मत प्रकृति, ईश्वर आदि का प्रतिपादन करने वाला पद।

बंधपद–परसमय सिद्धान्त के मिथ्यात्व का प्रतिपादक पद। क्योंकि वह कर्मबंध एवं कुवासना का हेतु होने से बंधपद कहलाता है।

मोक्षपद–प्राणियों के सद्बोध का कारण होने से तथा समस्त कर्मक्षय रूप का प्रतिपादक होने से स्वसमय मोक्षपद कहलाता है। अथवा–

प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेश के भेद से चार प्रकार के बंध का प्रतिपादन करने वाला पद बंधपद तथा कृत्स्न कर्मक्षयरूप मोक्ष का प्रतिपादकपद मोक्षपद कहलाता है।

॥ अनुगमद्वार समाप्त ॥

SUTRASPARSH NIRYUKTANUGAM

605. (Q.) What is this *Sutrasparsh Niryuktanugam* (contextual elaboration embracing the *sutra*) ?

(Ans.) *Sutrasparsh Niryuktanugam* (contextual elaboration embracing each and every component of the *sutra* under consideration) is made as follows—In this *Anugam* (elaboration) the recitation should be without skipping syllables (*askhalit*); without mixing up of different phrases (*amilit*); without combining different phrases and aphorisms (*avyatyamredit*) and rendered

eloquently (*pratipurna*); in perfect accent (***pratipurnaghosh***); emanating from vocal cords and lips (***kanthoshthavipramukta***) and as acquired through the discourse of the *guru* (*guruvachanopagat*) (also see aphorism 14). By doing so one will know if that is an expression concerning one's own doctrine or an expression concerning other's doctrine or an expression concerning bondage or an expression concerning liberation or an expression concerning *samayik* or an expression concerning *nosamayik*. On such recitation some ascetics understand the meaning and to some others the meaning remains unknown. Therefore, in order to explain the meaning of those unknown interpretations I will explain the terms one by one. The procedure of this elaboration is as follows—

(1) *Samhita* (perfect elocution), (2) *Padachhed* (parsing), (3) *Padarth* (paraphrasing), (4) *Padavigraha* (expounding compound words), (5) *Chalana* (anticipation of objections), and (6) *Prasiddhi* (validation). (3)

This concludes the description of *Sutrasparsh Niryuktanugam* (contextual elaboration embracing the *sutra*). This concludes the description of *Niryuktanugam* (contextual elaboration). This also concludes the description of *Anugam* (interpretation).

Elaboration—The commentator (*Vritti*) has defined *sutra* (aphorism/text) as follows—

That which encompasses extremely wide meaning in few letters (words), is free of thirty two faults, has eight qualities and other required attributes is called a *sutra* (aphorism/text).

The eight qualities are as follows—

(1) Nirdosh—without faults.

(2) Saaravan—meaningful.

(3) Hetuyukt—following a system of syntax and parsing.

(4) Alankarayukt—embellished with style, metaphor and rhetoric etc.

(5) Upaneet—with suitable and appropriate examples.

(6) Sopachar—with eloquence and beauty of language.

(7) Mit—having brevity.

(8) Madhur—having sweetness of utterance and meaning.

The procedure of explaining the meaning not understood even after proper recitation is as follows—

(1) Samhita—to recite the words correctly and without any distortion.

(2) Pada—disjunction and parsing of each word.

(3) Padarth—paraphrasing. For example *Karemi bhante* has two words. *Karemi* is the verb combined with subject and means 'I do'. This conveys the intention of indulging in *Samayik* (practice of equanimity). *Bhante* is a term of address for elders and seniors.

(4) Padavigraha—to expound compound words as well as to make compound words.

(5) Chalana—anticipation of objections; also to explicate meaning in question-answer style.

(6) Prasiddhi—validation; to establish the correct meaning by supporting logic.

Of these six parts of elaboration the first two are covered in *sutranugam*. After this, attribution (name, notional installation etc.) of the selected phrase is done; this covers the third part. The last three parts are covered in *Sutrasparsh Niryuktanugam* (contextual elaboration embracing the *sutra*). Thus when a *sutra* (aphorism/text) is selected for elaboration, *Sutra, Sutranugam, Sutralapak nikshep* and *Sutrasparsh Niryuktanugam* are brought together.

Svasamayapad—an expression concerning one's own doctrine, viz. soul and other entities.

Parasamayapad—an expression concerning other's doctrine, viz. nature, God the creator etc.

Bandhpad—an expression concerning bondage. An expression of the falsity of other's doctrine is called bandhpad. This is because it is the cause of bondage.

Mokshapad—an expression concerning liberation. As it is the cause of enlightenment, shedding of *karmas* and consequent liberation, the expression of one's own doctrine (Jain) is called an expression concerning liberation.

● END OF ANUGAM : THE THIRD DOOR OF DISQUISITION ●

४. नयद्वार
4. NAYA DVAR (APPROACH OF VIEWPOINTS)

नयनिरूपण की भूमिका

६०६. (अ) से किं तं णए ?

सत्त मूलणया पण्णत्ता। तं जहा–णेगमे संगहे ववहारे उज्जुसुए सद्दे समभिरूढे एवंभूते। तत्थ गाहा–

१. णेगेहिं माणेहिं मिणइ त्ति णेगमस्स य निरुत्ती।
सेसाणं पि नयाणं लक्खणमिणमो सुणह वोच्छं॥१॥

२. संगहियपिंडियत्थं संगहवयणं समासओ बिंति।
३. वच्चइ विणिच्छियत्थं ववहारो सव्वदव्वेसुं॥२॥

४. पच्चुप्पन्नग्गाही उज्जुसुओ णयविही मुणेयव्वो।
५. इच्छइ विसेसियतरं पच्चुप्पण्णो णओ सद्दो॥३॥

६. वत्थूओ संकमणं होइ अवत्थुं णये समभिरूढे।
७. वंजण–अत्थ–तदुभयं एवंभूओ विसेसेइ॥४॥

६०६. (अ) (प्र.) नय क्या है?

(उ.) मूल नय सात हैं। वे इस प्रकार हैं–(१) नैगमनय, (२) संग्रहनय, (३) व्यवहारनय, (४) ऋजुसूत्रनय, (५) शब्दनय, (६) समभिरूढ़नय, और (७) एवंभूतनय।

नैगम आदि सात नयों के लक्षण–जो अनेक प्रमाण से वस्तु के स्वरूप को जानता है, या अनेक प्रकार से वस्तु–स्वरूप का निर्णय करता है (वह नैगमनय है)। यह नैगमनय की निरुक्ति–व्युत्पत्ति है। शेष नयों के लक्षण कहूँगा, जिनको तुम सुनो॥१॥

सम्यक् प्रकार से गृहीत और पिंडित (एकत्रित) अर्थ को जो संक्षेप में बताता है, वह संग्रहनय का वचन है। व्यवहारनय सर्वद्रव्यों के विषय में निश्चय (विशेष–भेद रूप में निश्चय) करने के निमित्त प्रवृत्त होता है॥२॥

ऋजुसूत्रनय प्रत्युत्पन्नग्राही (वर्तमानकालभावी पर्याय को ग्रहण करने वाला) है। शब्दनय (ऋजुसूत्रनय की अपेक्षा सूक्ष्मतर विषय वाला होने से) पदार्थ को विशेषतर मानता है॥३॥

समभिरूढ़नय के अनुसार वस्तु का अन्यत्र संक्रमण अवस्तु है। अर्थात् एक शब्द का दूसरे पर्यायवाची शब्द में गमन अवास्तविक हो जाता है। एवंभूतनय व्यंजन (शब्द) और अर्थ एवं तदुभय को विशेष रूप से स्थापित करता है॥४॥

विवेचन–संग्रह और व्यवहार में अन्तर यह है कि संग्रह सामान्यग्राही होने से अभेद को मुख्यता देता है, जबकि व्यवहार विशेषग्राही होने से भेद को ग्रहण करता है।

ऋजुसूत्र और शब्दनय में अन्तर यह है कि ऋजुसूत्र मात्र वर्तमान पर्याय को ग्रहण करता है, जबकि शब्दनय वर्तमान पर्याय को लिंग और वचन के भेद में विशेष रूप में ग्रहण करता है।

समभिरूढ़नय एक शब्द के पर्यायवाची शब्दों को वास्तविक नहीं मानता। उदाहरणस्वरूप, घट, कुट, क्रय ये घट के पर्यायवाची हैं, किन्तु इस नय के अनुसार घट को तभी घट कहा जाता है जब वह जल भरने की क्रिया में प्रयुक्त है। जो टेढ़ा-मेढ़ा कुटिल है उसे कुट कहा जायेगा और जिसे भूमि पर रखकर भरा जाता है उसे ही 'क्रथ' कहना चाहिए। प्रवृत्ति के अनुसार शब्द का वाच्यार्थ भी भिन्न-भिन्न होता है।

नयों के विविध भेद–आव. नि. में प्रत्येक नय के सामान्य व निक्षेप भेद करके नयों के कुल सात सौ भेद बताये हैं।

प्रथम के तीन नय-नैगम, संग्रह और व्यवहार द्रव्यार्थिकनय हैं। बाकी तीन पर्याय का ग्रहण करने के कारण पर्यायार्थिकनय कहे जाते हैं।

प्रथम चार नयों में अर्थ प्रधान है और शब्द गौण है, इसलिए इन्हें अर्थनय तथा शेष तीन को शब्दनय माना है। (वि. भा. २२६२)

लोकप्रसिद्ध अर्थ को स्वीकार करने वाले विचार को व्यवहारनय कहा जाता है। जैसे-भौंरा काला है। निश्चयनय परमार्थ को मानता है, वह कहता है भौंरा केवल काला ही नहीं, पाँच वर्ण वाला है।

हेय और उपादेय अर्थ को जानना ज्ञाननय है और उपादेय अर्थ में प्रवृत्ति करना क्रियानय है।

ये सभी नय जब परस्पर एक-दूसरे से सापेक्ष रहते हैं, एक को स्वीकार करके दूसरे का विरोध नहीं करते तब सम्यक् नय है। एक-दूसरे से निरपेक्ष होने पर ये मिथ्यानय हो जाते हैं। सम्यक् मिथ्यानय को समझाने के लिए जिनभद्रगणि ने दो दृष्टान्त दिए हैं। जैसे-सात अंधे व्यक्ति हाथी के एक-एक अवयव का स्पर्श करने पर उसके एक-एक अवयव को ही हाथी मानने लग जाते हैं तो वह मिथ्यानय है और जब कोई आँख वाला सम्पूर्ण अवयवों के समुदाय को हाथी बताता है तब वह सम्यक् नय है।

जैसे-रत्नावली हार के पृथक्-पृथक् मनक (रत्न) हार नहीं कहलाते किन्तु सभी रत्न एक सूत्र में पिरोये जाने पर ही 'हार' कहलाते हैं।

नय स्वरूप को विशेष रूप में समझाने के लिए सूत्र ४७४-४७६ में प्रस्थक आदि के तीन दृष्टान्त किये जा चुके हैं। (विस्तृत वर्णन के लिए श्री ज्ञान मुनि कृत टीका, भाग २, पृ. ९४६ से ९९० देखें)

DEFINING NAYA

606. (a) (Q.) What is this *Naya* (viewpoint) ?

(Ans.) There are seven basic *Nayas* (viewpoints)—(1) *Naigama naya* (co-ordinated viewpoint), (2) *Samgraha naya* (generalized viewpoint), (3) *Vyavahara naya* (particularized viewpoint), (4) *Rijusutra naya* (precisionistic viewpoint or that related to specific point or period of time), (5) *Shabd naya* (verbal viewpoint or that related to language and grammar), (6) *Samabhirudha naya* (conventional viewpoint or that related to conventional meaning and ignoring etymological meaning), and (7) *Evambhuta naya* (etymological viewpoint or that related to words used in original derivative sense and significance).

Attributes of Seven Nayas—That which validates a thing with the help of various evidences is *Naigam*—this is the etymology of *Naigam.* I will now define the remaining *nayas* also, please listen. (1)

That which expresses briefly the general condensed meaning is the statement of *Samgraha naya.* The *Vyavahara naya* proceeds to expresses the determinate meaning in respect of all substances. (2)

The *Rijusutra* variety of *naya* is to be known as comprehending only the immediately present reality (present mode of a thing). The *Shabd naya* goes for even more precision. (3)

In the *Samabhirudha naya* shifting of a thing from one place to another or of a meaning from one word to a synonym is unreal. The *Evambhuta naya* distinguishes between the word, its meaning and both of them (word-cum-meaning). (4)

Elaboration—The difference between *Samgraha* and *Vyavahar* is that being involved with generalities, *Samgraha* gives importance to similarities whereas *Vyavahar,* being involved with specialities, lays stress on dissimilarities.

The difference between *Rijusutra* and *Shabd* is that whereas *Rijusutra* deals with the present form only, *Shabd* accepts the present form precisely on the basis of gender and case.

Samabhirudh does not accept synonyms as real. For example *ghat, kut* and *kraya* are synonyms of pitcher. But according to this *naya* a pitcher can be called *ghat* only when it is in the process of being filled. Only that pitcher can be called *kut* which is uneven in shape; and only that pitcher is called *kraya* which is placed on the floor and then filled. The meaning of a word also changes with its use.

Other categories of *nayas*—Dividing *nayas* into general and special categories, *Avashyak Sutra* states seven hundred categories of *nayas*.

First three *nayas*, i.e. *Naigam, Samgraha* and *Vyavahar* are called *Dravyarthik nayas* (existent material aspects). The remaining three are called *Paryayarthik nayas* (transformational aspects) because they cover *paryayas* (modes).

First four *nayas* lay emphasis on meaning (*arth*) therefore they are called *Arth nayas*. The remaining *nayas* are called *Shabd nayas* (verbal viewpoints). (*Visheshavashyak Bhashya* 2262)

The viewpoint that accepts popular meaning is called *Vyavahar naya* (conventional viewpoint). For example bumble-bee is black. *Nishchaya naya* (transcendental viewpoint) is more specific, it says a bumble-bee has five colours not just black.

To know the acceptable and non-acceptable meanings is *Jnana naya* (conceptual viewpoint) and to get involved with the acceptable meaning is *Kriya naya* (practical viewpoint).

When all these *nayas* remain relative to each other and do not shift towards isolation by accepting one and rejecting other they are called *samyak nayas*. When they become absolute and are not relative any more, they become *Mithya nayas* (false viewpoint). To explain this Jinabhadra Gani has given two examples. When seven blind persons touch seven different parts of an elephant and each considers only that part which he has touched as elephant, it is *Mithya naya*. But when a person with perfect vision accepts the combination of all these seven parts as elephant it is *Samyak naya*.

The other example is—each single bead of a necklace cannot be separately called a necklace but when strung in a thread the combination of these several beads is called a necklace.

Another elaboration of *nayas* has already been given in aphorism 474-476 with examples like *Prasthak*. For more details refer to *Tika* of *Anuyogadvar Sutra* by Shri Jnana Muni, p. 946-990.

नयवर्णन के लाभ

(ब) **णयम्मि गिण्हियव्वे अगिण्हियव्वम्मि चेव अत्थम्मि।**
जइयव्वमेव इइ जो उवएसो सो नओ नाम॥५॥

सव्वेसिं पि नयाणं बहुविहवत्तव्वयं निसामेत्ता।
तं सव्वनयविसुद्धं जं चरणगुणट्ठिओ साहू॥६॥

से तं नये।

सोलससयाणि चउरुत्तराणि गाहाण जाण सव्वग्गं।
दुसहस्समणुट्ठुभछंदवित्तपरिमाणओ भणियं॥७॥

नगरमहादारा इव कम्मद्दाराणुओगवरदारा।
अक्खर–बिन्दू–मत्ता लिहिया दुक्खक्खयट्ठाए॥८॥

॥ अनुयोगद्वारसूत्रम् सम्मत्तं ॥

(ब) इन नयों द्वारा हेय और उपादेय अर्थ का ज्ञान प्राप्त करके तदनुकूल प्रवृत्ति करनी चाहिए। यह जो उपदेश है वही (ज्ञान) नय कहलाता है॥५॥

इन सभी नयों की अनेक प्रकार की वक्तव्यता को सुनकर समस्त नयों से विशुद्ध सम्यक्त्व, चारित्र (और ज्ञान) गुण में स्थित होने वाला साधु (मोक्षसाधक हो सकता) है॥६॥

इस प्रकार नय–अधिकार की प्ररूपणा जानना चाहिए। साथ ही अनुयोगद्वारसूत्र का वर्णन समाप्त होता है।

विवेचन–उपर्युक्त दो गाथाओं में नयवर्णन से प्राप्त लाभ का उल्लेख है।

'जितने वचनमार्ग हैं, उतने ही नय हैं' इस सिद्धान्त के अनुसार नयों के अनेक भेद हैं, जैसे–नैगम, संग्रह आदि सात भेद, अर्थनय एवं शब्दनय, द्रव्यार्थिक–पर्यायार्थिक, ज्ञान–क्रिया, निश्चय–व्यवहार आदि भेद। पदार्थों में जो उपादेय हों उन्हें ग्रहण करना और जो हेय हों उनका त्याग करना तथा ज्ञेय (जानने योग्य) हों उन्हें मध्यस्थ भाव से जानना चाहिए।

ज्ञाननय—ज्ञाननय का मंतव्य है कि ज्ञान के बिना किसी कार्य की सिद्धि नहीं होती है। ज्ञानी पुरुष ही मोक्ष के फल का अनुभव करते हैं। अन्धा पुरुष अन्धे के पीछे-पीछे गमन करने से वांछित लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सकता है। ज्ञान के बिना पुरुषार्थ की सिद्धि नहीं होती है। सभी व्रतादि एवं क्षायिक सम्यक्त्व आदि अमूल्य पदार्थों की प्राप्ति ज्ञान से होती है। अतएव सबका मूल कारण ज्ञान है।

क्रियानय—क्रियानय का कथन है कि सिद्धि प्राप्त करने का मुख्य कारण क्रिया ही है। हेय, उपादेय और ज्ञेय का ज्ञान करके क्रिया करनी चाहिए। इस कथन से क्रिया की ही सिद्धि होती है। इसलिए क्रिया मुख्य और ज्ञान गौण है। मात्र ज्ञान से जीव सुख नहीं पाते। तीर्थंकर देव भी अन्तिम समय पर्यन्त क्रिया के ही आश्रित रहते हैं। इसलिए सबका मुख्य कारण क्रिया ही है। यह क्रिया का मंतव्य है। किन्तु किसी भी एकान्त पक्ष में मोक्ष-प्राप्ति का अभाव है। इसलिए अब मान्य पक्ष प्रस्तुत करते हैं—

सर्व नयों के नाना प्रकार के वक्तव्यों को सुनकर-नयों के परस्पर विरोधी भावों को सुनकर जो साधु ज्ञान और क्रिया में स्थित है वही मोक्ष का साधक होता है। केवल ज्ञान और केवल क्रिया से कार्यसिद्धि नहीं होती है। जैसे क्रिया से रहित ज्ञान निष्फल है वैसे ही ज्ञान से रहित क्रिया भी कार्यसाधक नहीं है। यथा-पंगु और अंधे भागते हुए भी सुमार्ग को प्राप्त नहीं होते, इसी प्रकार अकेले ज्ञान और अकेली क्रिया से सिद्धि नहीं होती, अपितु दोनों के समुचित समन्वय से सिद्धि प्राप्त होती है।

लिपिकार का वक्तव्य—अनुयोगद्वारसूत्र की कुल मिलाकर सोलह सौ चार (१,६०४) गाथाएँ हैं तथा दो हजार (२,०००) अनुष्टुप छन्दों का परिमाण है॥७॥

जैसे महानगर में प्रवेश करने के लिए मुख्य चार द्वार हैं उसी प्रकार अनुयोगद्वार के उपक्रम, निक्षेप, अनुगम और नय ये चार द्वार हैं। इस सूत्र में अक्षर, बिन्दु और मात्राएँ जो लिखी गई हैं, ये सब जन्म-मरण के दुःखों का क्षय करने के लिए हैं॥८॥

॥ अनुयोगद्वारसूत्र समाप्त ॥

BENEFITS OF NAYAS

(b) One should acquire the knowledge of the acceptable and non-acceptable with the help of these *nayas* and then act accordingly. It is this teaching that is called (*Jnana*) *naya* (view point of knowledge). (5)

Having listened to the manifold explication of all *nayas*, one who establishes himself in righteousness and conduct (also knowledge) that are pure from all angles (*nayas*) can become a true ascetic (aspirant of liberation). (6)

This concludes the description of *Naya* (viewpoint). This concludes *Anuyogadvar Sutra.*

Elaboration—The aforesaid aphorisms mention the benefits of this description of *nayas.*

According to the theory that 'as many are the paths of speech (words and their combinations) so are the numbers of nayas', there are numerous kinds of *nayas.* Some of those discussed here are—the seven basic *nayas* including *Naigam* and *Samgraha, Arth naya* and *Shabd naya* (verbal viewpoint), *Dravyarthik* and *Paryayarthik, Jnana* and *Kriya, Nishchaya* and *Vyavahar* etc. One should accept the right and good, reject the wrong and bad, and try to understand with impartiality that which is worth knowing.

Jnana Naya—*Jnana naya* maintains that nothing can be accomplished in absence of knowledge. Only an accomplished sage can experience the fruit of liberation. A blind person following a blind never reaches his destination. Without knowledge endeavour fails to achieve anything. It is knowledge that helps acquire precious things like practice of vows, righteousness leading to shedding of *karmas* and spirituality. Therefore, knowledge is at the root of all spiritual activity.

Kriya Naya—*Kriya naya* maintains that liberation is accomplished mainly by action. 'One should acquire the knowledge of the acceptable and non-acceptable with help of these *nayas* and then act accordingly.' This statement confirms the importance of action. Only knowledge does not lead to happiness. Even *Tirthankars* depend on action till their last moment. Therefore action is at the root of all spiritual accomplishment. This is the perspective of *Kriya naya* but one-sidedness or absolutism does not lead to liberation. Therefore the truly acceptable view is as follows—

Having listened to the manifold explication of all *nayas,* one who establishes himself in righteousness and conduct (also knowledge) that are pure from all angles (*nayas*) can become a true ascetic (aspirant of liberation). Knowledge or action in isolation fail to accomplish anything. As knowledge without application is useless so is action without knowledge. *Neither a lame nor a blind can reach their destination*

individually in spite of all their efforts. But when they join their hands they accomplish the desired. In the same way knowledge and action exclusive of each other fail but when in judicious combination, they succeed.

Conclusion by the Scribe—In this *Anuyogadvar Sutra* there is a total of 1,604 *gathas* which is equivalent to 2,000 *Anushtup Chhands* (meters). (7)

The four *dvars* (doors or approaches) including *Upakram, Nikshep, Anuyog* and *Naya* are like huge gates of a great city. The letters, dots and *matras* (short vowels or vowel marks) written in this *Sutra* are all directed towards salvation from the sufferings of life and death. (8)

● END OF NAYA : THE FOURTH DOOR OF DISQUISITION ●

● END OF ANUYOGDVAR SUTRA ●

परिशिष्ट
APPENDIX

परिशिष्ट १
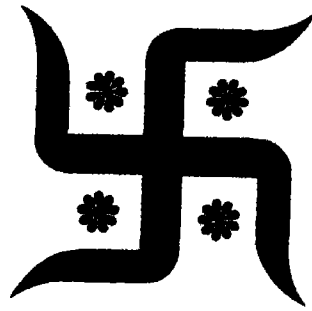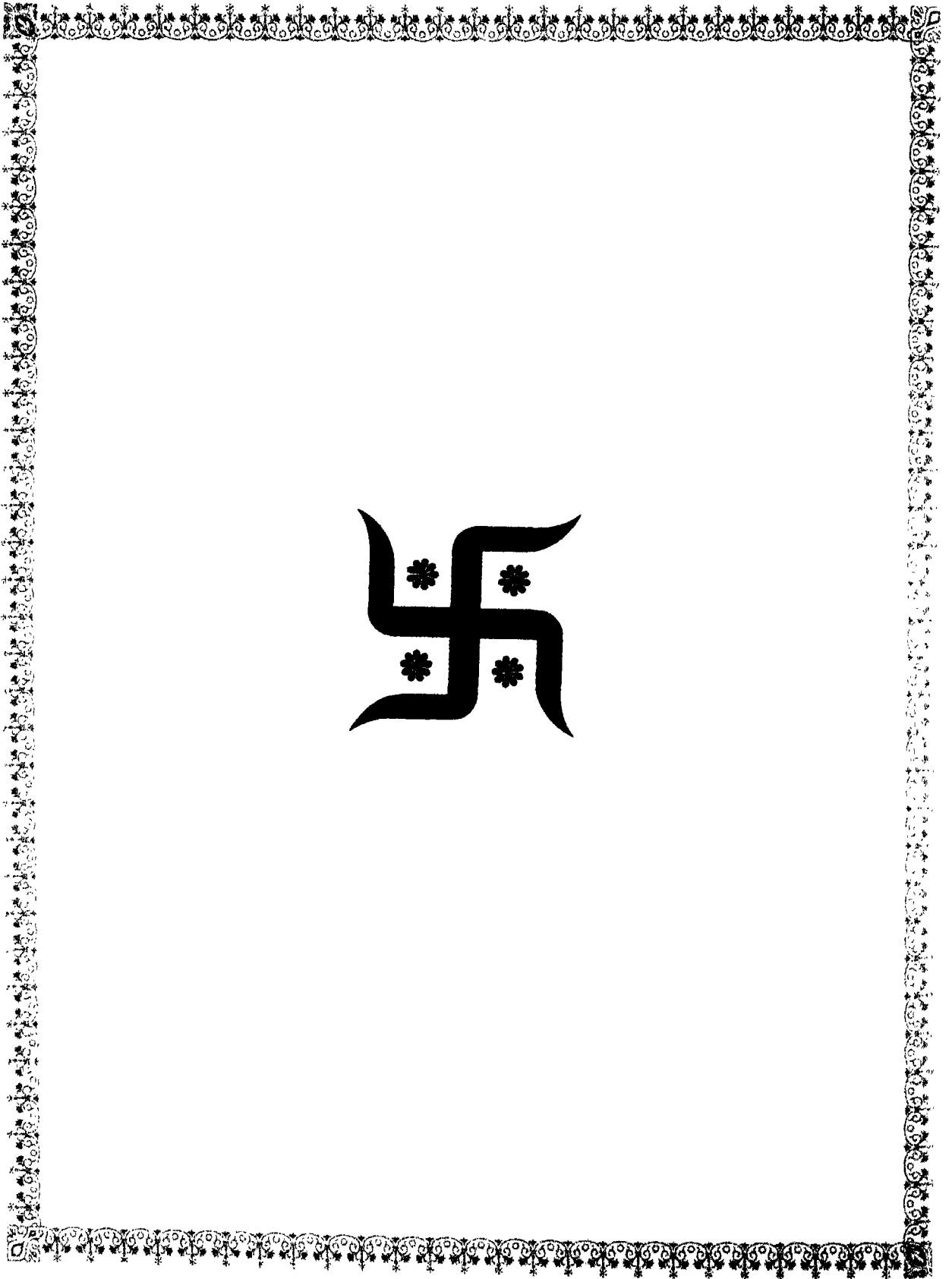
आठ प्रकार का पुद्गल परावर्तन

(सूत्र ५३२ के विवेचन का स्पष्टीकरण)

१/१. **बादर द्रव्य पुद्गलपरावर्तन**–सर्वलोक में रहने वाले सर्वपरमाणुओं को एक जीव औदारिक आदि सातों ही वर्गणाओं के पुद्गलों को ग्रहण कर जितने समय में छोड़े उतने समय को बादर द्रव्य पुद्गल परावर्तन कहते हैं।

२/२. **सूक्ष्म द्रव्य पुद्गलपरावर्तन**–ऊपर कथित सातों ही वर्गणाओं का एक जीव अनुक्रम से स्पर्श कर परित्याग करता है।

लोक में जितने भी औदारिक वर्गणा के पुद्गल हैं सबसे पहले जीव उनका स्पर्श करता है। औदारिक वर्गणा के पुद्गलों का स्पर्श करते समय बीच में अन्य वर्गणाओं के पुद्गलों का स्पर्श होता है उनकी गणना नहीं की जाती है। औदारिक वर्गणा के सारे पुद्गलों का स्पर्श करने के बाद वैक्रिय शरीर की सारी वर्गणाओं का स्पर्श करता है। सातों वर्गणाओं को इस क्रम से स्पर्श करने में जितना समय लगता है उसे सूक्ष्म द्रव्य पुद्गलपरावर्तन कहा जाता है।

३/१. **बादर क्षेत्र पुद्गलपरावर्तन**–मेरु पर्वत से आरम्भ होकर अलोक तक आकाशप्रदेशों की असंख्यात श्रेणियाँ समस्त दिशाओं और विदिशाओं में फैली हुई हैं। उनय सब आकाश प्रदेशों को एक जीव जन्म और मृत्यु से स्पर्श करता है। बाल के अग्र भाग जितना स्थान भी नहीं छोड़ता, उसे बादर क्षेत्र पुद्गलपरावर्तन कहते हैं।

४/२. **सूक्ष्म क्षेत्र पुद्गलपरावर्तन**–मेरु पर्वत से लेकर अलोक तक आकाश प्रदेशों की असंख्यात श्रेणियाँ निकली हुई हैं। उनमें से प्रत्येक श्रेणी पर अनुक्रम से जन्म-मरण करते-करते लोक के अन्त यानी अलोक तक बीच के एक भी प्रदेश को छोड़े बिना सब प्रदेशों का स्पर्श करे। एक के बाद उससे लगी हुई दूसरी श्रेणी पर, तत्पश्चात् तीसरी श्रेणी पर और फिर चौथी श्रेणी पर, इस प्रकार असंख्यात आकाश श्रेणियों में अनुक्रम से जन्म-मरण करके स्पर्श करे। तब सूक्ष्म क्षेत्र पुद्गलपरावर्तन होता है। एक श्रेणी का स्पर्श करते-करते और अनुक्रम से उसे पूरा करने से पहले अगर अन्य श्रेणी का स्पर्श करे या उसी श्रेणी के आगे-पीछे का स्पर्श करे तो वह श्रेणी गिनती में नहीं आती। अन्य श्रेणी का स्पर्श व्यर्थ समझना चाहिए। श्रेणी का स्पर्श करना तभी सार्थक है जब मेरु से आरम्भ करके अनुक्रम से सब आकाश प्रदेशों को लोक के अन्त तक स्पर्श करें।

५/१. **बादर काल पुद्गलपरावर्तन**–समय, आवलिका (असंख्य समय), श्वासोच्छ्वास, स्तोक, लव, मुहूर्त्त, अहोरात्र पक्ष, मास, ऋतु, अयन, संवत्सर, युग, पूर्व (सत्तर लाख छप्पन हजार वर्ष), पल्य, सागर, अवसर्पिणीकाल, उत्सर्पिणीकाल, कालचक्र–इन सब कालों को जन्म-मरण के द्वारा स्पर्श करने पर बादर काल पुद्गलपरावर्तन होता है।

६/२. सूक्ष्म काल पुद्गलपरावर्तन–समय से लेकर कालचक्र पर्यन्त अनुक्रम से जन्म-मरण करके स्पर्श करे। जैसे पहले अवसर्पिणी काल लगे तो उसके पहले समय में जन्म लेकर मरे। फिर दूसरी बार जब अवसर्पिणी काल लगे तो उसके दूसरे समय में जन्म लेकर मरे। इस प्रकार करते-करते जब आवलिका का काल पूरा हो तब तक ऐसा करें। उसके बाद जो अवसर्पिणी काल आये तब उसकी पहली आवलिका में जन्म लेकर मरे, इस तरह समय के अनुसार स्तोक पूरा होने तक आवलिका में अनुक्रम से जन्म ले और मरे। इसी प्रकार स्तोक, लव आदि सब कालों में अनुक्रम से जन्म-मरण करके स्पर्श करे तब काल से सूक्ष्म पुद्गलपरावर्तन होता है।

७/१. बादर भाव पुद्गलपरावर्तन–पाँच वर्ण (काला, पीला, नीला, लाल और श्वेत) दो गन्ध, पाँच रस, आठ स्पर्श–इन बीस प्रकार के समस्त पुद्गलों का जन्म-मरण करके स्पर्श करे तो भाव से बादर पुद्गलपरावर्तन होता है।

८/२. सूक्ष्म भाव पुद्गलपरावर्तन–लोक में जितने भी काले वर्ण के पुद्गल हैं उन सबका अनुक्रम से जन्म-मरण करके स्पर्श करे। जैसे पहले एक गुण काले पुद्गल का स्पर्श करे, फिर दो गुण काले पुद्गल का स्पर्श करे, इस प्रकार अनन्त गुण काले पुद्गल का स्पर्श करे, काले वर्ण के पुद्गल का स्पर्श करते-करते यदि बीच में अन्य वर्ण (पीला, नीला आदि) वाले पुद्गल का स्पर्श करे तो उनकी स्पर्शना गिनती में नहीं गिनी जाती। जहाँ तक स्पर्शना हुई थी वहाँ से आगे स्पर्शना करने पर वह गिनती में आती है। इस प्रकार अनुक्रम से वर्ण, गंध, रस और स्पर्श के २० प्रकारों का आरम्भ से अन्त तक स्पर्शना करने पर भाव से सूक्ष्म पुद्गलपरावर्तन कहलाता है।

उपर्युक्त आठ प्रकार के परावर्तन करने पर एक पुद्गलपरावर्तन होता है। यह पुद्गलपरावर्तन अनन्त उत्सर्पिणी और अनन्त अवसर्पिणी काल के बराबर है। (अनु. आचार्य महाप्रज्ञ जी सूत्र ६१६ का टिप्पण–पृष्ठ ३४७-३४८)

●●

परिशिष्ट २

अनध्याय काल

(स्व. आचार्यप्रवर श्री आत्माराम जी म. द्वारा सम्पादित नन्दीसूत्र से उद्धृत)

स्वाध्याय के लिए आगमों में जो समय बताया गया है, उसी समय शास्त्रों का स्वाध्याय करना चाहिए। अनध्याय काल में स्वाध्याय वर्जित है।

मनुस्मृति आदि स्मृतियों में भी अनध्याय काल का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। वैदिक लोग भी वेद के अनध्यायों का उल्लेख करते हैं। इसी प्रकार अन्य आर्ष ग्रन्थों का भी अनध्याय माना जाता है। जैनागम भी सर्वज्ञोक्त, देवाधिष्ठित तथा स्वरविद्या संयुक्त होने के कारण, इनका भी आगमों में अनध्याय काल वर्णित किया गया है। जैसे–

दसविधे अंतलिक्खिते असज्झाए पण्णत्ते, तं जहा—उक्कावाते, दिसिदाघे, गज्जिते, विज्जुते, निग्घाते, जुवते, जक्खालित्ते, धूमिता, महिता, रयउग्घाते।

दसविहे ओरालिते असज्झातिते, तं जहा—अट्ठी, मंसं, सोणिते, असुतिसामंते, सुसाणसामंते, चंदोवराते, सूरोवराते, पडने, रायवुग्गहे, उवस्सयस्स अंतो ओरालिए सरीरगे।

—स्थानांगसूत्र, स्थान १०

नो कप्पति निग्गंथाण वा, निग्गंथीण वा चउहिं महापाडिवएहिं सज्झायं करित्तए, तं जहा—आसाढपाडिवए, इंदमहपाडिवए, कत्तिअपाडिवाए सुगिम्हपाडिवए। नो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा, चउहिं संझाहिं सज्झायं करेत्तए, तं जहा—पडिमाते, पच्छिमाते, मज्झण्हे, अड्ढरत्ते। कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीण वा चाउक्कालं सज्झायं करेत्तए, तं जहा—पुव्वण्हे अवरण्हे, पओसे, पच्चूसे।

—स्थानांगसूत्र, स्थान ४, उद्देश २

स्थानांगसूत्र के अनुसार, दस आकाश से सम्बन्धित, दस औदारिक शरीर से सम्बन्धित, चार महाप्रतिपदा, चार महाप्रतिपदा की पूर्णिमा और चार सन्ध्या; इस प्रकार बत्तीस अनध्याय काल माने गए हैं, जिनका संक्षेप में निम्न प्रकार से वर्णन है। जैसे–

आकाश—सम्बन्धी दस अनध्याय

१. **उल्कापात-तारापतन**—यदि महत् तारापतन हुआ है तो एक प्रहर पर्यन्त शास्त्र-स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

२. **दिग्दाह**—जब तक दिशा रक्तवर्ण की हो अर्थात् ऐसा मालूम पड़े कि दिशा में आग-सी लगी है, तब भी स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

३. गर्जित–बादलों के गर्जन पर एक प्रहर पर्यन्त स्वाध्याय न करे।

४. विद्युत्–बिजली चमकने पर एक प्रहर पर्यन्त स्वाध्याय न करे।

किन्तु गर्जन और विद्युत् का अस्वाध्याय चातुर्मास में नहीं मानना चाहिए। क्योंकि वह गर्जन और विद्युत् प्रायः ऋतु-स्वभाव से ही होता है। अतः आर्द्रा से स्वाति नक्षत्र पर्यन्त अनध्याय नहीं माना जाता।

५. निर्घात–बिना बादल के आकाश में व्यन्तरादिकृत घोर गर्जना होने पर या बादलों सहित आकाश में कड़कने पर दो प्रहर तक अस्वाध्याय काल है।

६. यूपक–शुक्ल पक्ष में प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया को सन्ध्या की प्रभा और चन्द्रप्रभा के मिलने को यूपक कहा जाता है। इन दिनों प्रहर रात्रि पर्यन्त स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

७. यक्षादीप्त–कभी किसी दिशा में बिजली चमकने जैसा, थोड़े-थोड़े समय पीछे जो प्रकाश होता है वह यक्षादीप्त कहलाता है। अतः आकाश में जब तक यक्षाकार दीखता रहे तब तक स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

८. धूमिका-कृष्ण–कार्तिक से लेकर माघ मास तक का समय मेघों का गर्भमास होता है। इसमें धूम्र वर्ण की सूक्ष्म जलरूप धुंध पड़ती है। वह धूमिका-कृष्ण कहलाती है। जब तक वह धुंध पड़ती रहे, तब तक स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

९. मिहिकाश्वेत–शीतकाल में श्वेत वर्ण की सूक्ष्म जलरूप धुंध मिहिका कहलाती है। जब तक यह गिरती रहे, तब तक अस्वाध्याय काल है।

१०. रज-उद्घात–वायु के कारण आकाश में चारों ओर धूलि छा जाती है। जब तक यह धूलि फैली रहती है, स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

उपरोक्त दस कारण आकाश-सम्बन्धी अस्वाध्याय के हैं।

औदारिक शरीर–सम्बन्धी दस अनध्याय

११-१२-१३. हड्डी, माँस और रुधिर–पंचेन्द्रिय, तिर्यंच की हड्डी, माँस और रुधिर यदि सामने दिखाई दें, तो जब तक वहाँ से यह वस्तुएँ उठाई न जाएँ, तब तक अस्वाध्याय है। वृत्तिकार आसपास के ६० हाथ तक इन वस्तुओं के होने पर अस्वाध्याय मानते हैं।

इसी प्रकार मनुष्य-सम्बन्धी अस्थि, माँस और रुधिर का भी अनध्याय माना जाता है। विशेषता इतनी है कि इनका अस्वाध्याय सौ हाथ तक तथा एक दिन-रात का होता है। स्त्री के मासिक धर्म का अस्वाध्याय तीन दिन तक। बालक एवं बालिका के जन्म का अस्वाध्याय क्रमशः सात एवं आठ दिन पर्यन्त का माना जाता है।

१४. अशुचि–मल-मूत्र सामने दिखाई देने तक अस्वाध्याय है।

१५. **श्मशान**—श्मशान भूमि के चारों ओर सौ-सौ हाथ पर्यन्त अस्वाध्याय माना जाता है।

१६. **चन्द्र-ग्रहण**—चन्द्र-ग्रहण होने पर जघन्य आठ, मध्यम बारह और उत्कृष्ट सोलह प्रहर पर्यन्त स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

१७. **सूर्य-ग्रहण**—सूर्य-ग्रहण होने पर भी क्रमशः आठ, बारह और सोलह प्रहर पर्यन्त अस्वाध्याय काल माना गया है।

१८. **पतन**—किसी बड़े मान्य राजा अथवा राष्ट्र-पुरुष का निधन होने पर जब तक उसका दाह-संस्कार न हो, तब तक स्वाध्याय नहीं करना चाहिए अथवा जब तक दूसरा अधिकारी सत्तारूढ़ न हो, तब तक शनैः-शनैः स्वाध्याय करना चाहिए।

१९. **राजव्युद्ग्रह**—समीपस्थ राजाओं में परस्पर युद्ध होने पर जब तक शान्ति न हो जाए, तब तक और उसके पश्चात् भी एक दिन-रात्रि स्वाध्याय नहीं करे।

२०. **औदारिक शरीर**—उपाश्रय के भीतर पंचेन्द्रिय जीव का वध हो जाने पर जब तक कलेवर पड़ा रहे, तब तक तथा १०० हाथ तक यदि निर्जीव कलेवर पड़ा हो तो स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

अस्वाध्याय के उपरोक्त १० कारण औदारिक शरीर-सम्बन्धी कहे गये हैं।

२१-२८. **चार महोत्सव और चार महाप्रतिपदा**—आषाढ़-पूर्णिमा, आश्विन-पूर्णिमा, कार्तिक-पूर्णिमा और चैत्र-पूर्णिमा ये चार महोत्सव हैं। इन पूर्णिमाओं के पश्चात् आने वाली प्रतिपदा को महाप्रतिपदा कहते हैं। इनमें स्वाध्याय करने का निषेध है।

२९-३२. **प्रातः, सायं, मध्याह्न और अर्ध-रात्रि**—प्रातः सूर्य उगने से एक घड़ी पहले तथा एक घड़ी पीछे। सूर्यास्त होने से एक घड़ी पहले तथा एक घड़ी पीछे। मध्याह्न अर्थात् दोपहर में एक घड़ी आगे और एक घड़ी पीछे एवं अर्ध-रात्रि में भी एक घड़ी आगे तथा एक घड़ी पीछे स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

●●

APPENDIX 3

TECHNICAL TERMS
ANUYOGADVARA SUTRA PART I

The alphabetical index of technical terms according to aphorism number

(B)

(D)

(E)

(G)

(H)

(I)

(J)

(K)

(L)

(M)

(N)

(P)

(R)

(S)

(T)

(U)

(V)

(Y)

APPENDIX

TECHNICAL TERMS
ANUYOGADVARA SUTRA PART II

The alphabetical index of technical terms according to aphorism number

(C)

(D)

dravya aaya (physical aspect of aaya) (558, 560)

dravya adhyayan (physical aspect of chapter/concentration of mind) (536, 538, 583, 585)

dravya akshina (physical aspect of akshina) (547, 549)

dravya kshapana (physical aspect of eradication) (580, 582)

dravya pramana (physical aspect of validity) (282, 292)

dravya pramana (standard of physical measurement) (313, 314)

dravya samavatar (physical aspect of assimilation) (527, 529)

dravya samayik (physical aspect of equanimity) (593, 596)

dravya samkhya/shankh (physical aspect of samkhya/shankh) (477, 481)

dravya samyoga (association with substance) (272)

dravya samyoga nama (name derived due to association with substance) (273)

dravya-adhyayan (550, 552, 553, 561, 563, 564)

dravya-avashyak (596)

dravya-karan (physical means) (604)

dravyarthik naya (existent material aspect) (474, 604, 606)

dravyarthik nigods (dormant beings in the form of clusters of infinite minute plant-bodied beings) (514)

drisht sadharmyavat anumaan (inference by known generic or common characteristics) (440, 448)

Drishtivad Shrut parimaan samkhya (number as measure of the corpus of scriptures called Drishtivad) (493, 495)

Drishtivada (extinct subtle Jain canon also known as the Fourteen Purvas) (398, 469)

driti (a large leather flask) (321)

dritikar (maker of leather water-bags) (304)

dron (4 adhaks) (318, 335)

dron-mukh (a city connected by both waterways and roads) (267, 475)

droni (335)

dukham-dukham (343-3)

dukham-dukhamaj (278)

dukham-sukham (343)

dukham-sukhamaj (278)

dukhamaj (278)

durabhi gandh guna pramana (standard of validation by bad smell-attribute) (431)

Dvadashanga Ganipitak (the twelve-part canon compiled by Ganadhars) (470)

dvandva (coordinative) (294)

dvandva samasa (coordinative compound) (295)

dvar (door; approach) (336, 360, 606)

dvatrinshika (measurement of weight equal to one thirty second part of a mani or eight pals) (530)

dvatrinshika (thirty-second fraction) (320)

dveeps (360)

dvigu (numeral) (294)

dvigu samasa (numeral compound) (298)

dvindriya (two-sensed) (350, 386, 409)

dvipad (having two legs; pertaining to bipeds) (271, 567)

(E)

edha (311)

eka bhava (one birth) (487)

eka shesh (collective) (294)

(G)

(H)

(I)

(J)

(L)

(M)

(N)

panchanad (298)

panchendriya tiryanch-yonik (five-sensed animal) (351, 387, 410)

pandurang 288)

Pank-prabha land (the fourth hell) (347, 383)

pankh (wings) (271)

param (ultimate) (342)

paramanu (ultimate-particle) (315, 339, 340, 342, 343-5, 532)

paramanu pudgal (ultimate-particle of matter or one space-point) (315, 402, 403)

paramparagam (scriptural knowledge acquired through lineage) (470)

parasamavatar (assimilation dependent on others) (527, 530)

parasamaya vaktavyata (explication of doctrine of others) (521, 523, 524, 525)

parasamayapad (605)

parigrihit (married or formally accepted as consorts). (391)

parihar (austerities) (472)

pariharavishuddhi charitra (472)

pariharavishuddhi charitra guna pramana (standard of validation by attributes of conduct of higher austerities leading to purity) (472)

pariharik (472)

parijit (482)

parikha (a moat or trench with narrow bottom and wide top) (336)

parimaan samkhya (samkhya or number as measure or extent) (477, 493)

parimandal samsthana guna pramana (standard of validation by circular-plate structure-attribute) (434)

parit anant (lower infinite) (503, 504)

parit asamkhyat (lower innumerable) (499, 500)

parivrajak (288)

Parshvanath (472)

paryapt badar ap-kayik (fully developed gross water-bodied) (385)

paryapt badar chaturindriya (fully developed gross four-sensed) (350)

paryapt badar dvindriya (fully developed gross two-sensed) 350, 385)

paryapt badar prithvikayik (fully developed gross earth-bodied) (370, 385)

paryapt badar tejaskayik (fully developed gross fire-bodied) (385)

paryapt badar trindriya (fully developed gross three-sensed) (350)

paryapt badar vanaspatikayik (fully developed gross plant-bodied) (385)

paryapt badar vayukayik (fully developed gross air-bodied) (385)

paryapt chaturindriya (fully developed four-sensed) (386)

paryapt garbhavyutkrantik bhuj-parisarp sthalachar-panchendriya tiryanch-yonik (fully developed limbed reptilian terrestrial five-sensed animals born out of womb) (351, 387)

paryapt garbhavyutkrantik chatushpad sthalachar-panchendriya tiryanch-yonik (fully developed quadruped terrestrial five-sensed animals born out of womb) (351, 387)

paryapt garbhavyutkrantik jalachar-panchendriya tiryanch-yonik (fully developed aquatic five-sensed animals born out of womb) (351, 387)

paryapt garbhavyutkrantik khechar-panchendriya tiryanch-yonik (fully developed aerial five-sensed animal born out of womb) (351, 387)

(R)

(S)

samayik charitra guna pramana (standard of validation by attributes of conduct of abstinence from all sinful activities including killing of living beings) (472)

sambaha (a castle like settlement atop hill) (267)

sameep (302)

sameep nama (name associated with proximity) (307)

samgraha naya (generalized viewpoint) (474, 475, 476, 483, 491, 525, 539, 604, 606)

samhita (perfect elocution) (605)

samkh (477)

samkhya (number) (477)

samkhya (symbol) (496)

samkhya pramana (standard of validity of samkhya) (427, 477)

Samkhya school (524)

samkhyat (countable numbers) (497, 498, 508, 510)

sammurchhim (of asexual origin; of minute size spontaneously born in excreted fluids) (387, 423)

sammurchhim bhuj-parisarp sthalachar-panchendriya tiryanch-yonik (limbed reptilian terrestrial five-sensed animals of asexual origin) (351, 387)

sammurchhim chatushpad sthalachar-panchendriya tiryanch-yonik (quadruped terrestrial five-sensed animals of asexual origin) (351, 387)

sammurchhim jalachar-panchendriya tiryanch-yonik (aquatic five-sensed animals of asexual origin) (351, 387)

sammurchhim khechar-panchendriya tiryanch-yonik (aerial five-sensed animals of asexual origin) (351, 387)

sammurchhim manushyas (human beings of asexual origin) (352, 388)

sammurchhim panchendriya tiryanch-yonik (five-sensed animals of asexual origin) (387)

sammurchhim ur-parisarp sthalachar-panchendriya tiryanch-yonik (non-limbed reptilian terrestrial five-sensed animals of asexual origin) (351, 387)

samosaranam (266)

samparaya (passions) (472)

samprati-samabhirudha naya (476)

samprati-shabda naya (present verbal viewpoint) (476)

samsthana guna pramana (standard of validation by structure-attributes) (429, 434)

samudga (with mudga) (265)

samudra (with mudra) (265)

samudras (360)

samvaha (a castle like settlement atop hill) (475)

samvatsar (year) (365, 367, 532)

samyagdrishti (right perception) (604)

samyak nayas (606)

samyaktva-samayik (samayik as righteousness) (604)

samyoga (302)

samyoga nama (name associated with a relationship) (306)

samyogena nama (name derived from association) (263, 272)

samyooth (302)

samyooth nama (name associated with authorship) (308)

Sanatkumar kalp (dimension) (355, 391)

sanghat samkhya (494)

sanghats (aggregates of ultimate-particles) (366)

sanklishyamanak (tending to deteriorate) (472)

(V)

Vitarag (without attachment)

vitasti (balisht or bittabhar or the distance between tip of thumb and tip of little finger when fully stretched, it is approximately 12 anguls) (332, 335, 345, 359)

vivarddhi (286)

vrishabhah (bull) (297)

vritta samsthana (circular-ring structure) (434)

vyanjans (marks like mole) (334)

Vyantar (interstitial) (368)

vyavahar (370)

vyavahar kshetra palyopam (392, 394)

vyavahar naya (particularized viewpoint; conventional viewpoint; phenomenal viewpoint) (474, 475, 476, 483, 491 525, 527, 539, 604, 606)

vyavahar paramanu (empirical ultimate-particle of matter) (340, 342, 343, 344)

Vyavahar Sutra (494)

vyavaharik addha palyopam (377, 378, 379)

vyavaharik addha palyopam and sagaropam (380)

vyavaharik addha sagaropam (378, 379)

vyavaharik kshetra palyopam and sagaropam (395)

vyavaharik kshetra sagaropam (394)

vyavaharik uddhar palyopam (370, 372, 394)

vyavaharik uddhar palyopam and sagaropam (373)

vyavaharik uddhar sagaropam (372)

(Y)

yajna (525)

Yama (286)

yamal-pad (multiples of 8) (423)

yan (vehicle) (336)

yathakhyat charitra guna pramana (standard of validation by attributes of conduct defined as perfect) (472)

yava (339)

yavamadhya (344)

yavatkathit (life-long) (472)

yojan (four kosa or eight miles) (332, 335, 336, 345, 348, 349, 350, 351, 355, 359, 361, 372, 374, 378, 379, 381, 394, 396, 421, 405, 424, 508)

yojan-prithakatva (two to nine yojan) (351)

yug (359, 365, 367, 532)

yug (yoke) (324, 335, 345)

yugya (palanquin) (336)

yuka (339, 344)

yukt anant (infinite raised to the power of itself) (503, 505)

yukt asamkhyat (innumerable raised to the power of itself) (501)

yukti (clear and logical interpretation) (601)